अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Two Novel Additions to Fungal Genus *Cladosporium* Link ex Fries 12
(Varun Raj Yadav, N.K. Verma, A.N. Rai)

06. Assessment of impact of cement dust on soil properties around Satna Cement factory 17
(Anita Dubey)

07. Obesity Can Be Cured By Yoga And Traditional Exercise (Dr. Rajesh Masatkar) 19

08. Screening of Antifungal and Antibacterial Activity of Essential oil from *22*
Blumea membranacea (S.C Mehta, S.S Rawat)

09. Geomorphology Of Vidisha Block, District Vidisha, M.P., India - Application Of 24
Remotely Sensed Data (Trishna Somkuwar)

10. Synthesis of natural product catharanthus roseus (Dr. Sushama Singh Majhi) 27

11. Micro- And Nanofabrication Techniques (Dr. Neeraj Dubey) 29

12. Rain Water Harvesting- A Water Conservation Technique (Dr. Sadhna Goyal) 31

13. गिद्ध पक्षी के विलुप्त होने के कारण श्वानों (कुत्तों) की संख्या में वृद्धि हो रही है एवं व्यवहार में भी परिवर्तन हो रहा है 32
(डॉ. कृष्ण कुमार यादव)

14. स्वास्थ्य पर कहर – खानपान का धीमा जहर (डॉ. साधना जैन) 36

(Home Science / गृह विज्ञान)

15. Malnutrition Among The Rural Infants Of Chhindwara District (M.P.) 39
(Pradeep Kumar Shrivastava, Saurabh Shrivastava)

16. Child With Fever: Case Studychild's Name: Rileys /O Kayla (Manju Jain, Neha Agrawal) 42

17. Human Rights And Globalization (Sangeeta Rachiyata) 45

18. ग्रामीण हस्तकलाओं के प्रति महिला उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण का अध्ययन गोरखपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में 47
(डॉ. दीपशिखा पाण्डेय)

19. प्रतिभाशाली बालकों की व्यक्तित्व –आवश्यकताओं का अध्ययन (अन्तिमबाला पाण्डेय) 52

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

20. Recruitment-Selection Process ICICI Prudential Life Insurance Companies (Dr. Jyoti Jain) 54

21. **Scope of Media in the Promotion of Tourism Industry in India 57**
(Dr. Kaustubh Jain, Prem Shankar Dwivedi)

22. **E-Waste Management : A New Business Opportunity (Dr. Sudhir Mahajan, Dr. Manoj Mahajan) 61**

23. **On the Determinants of Profitability of Indian Life Insurers - An Empirical Study 64**
(Dr. N. K. Patidar, Nidhi Saxena)

24. म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. एल. एन. शर्मा) 66

25. स्वरोजगार सृजन में रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना का योगदान (म.प्र. के रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में) 72
(डॉ. लक्ष्मण परवाल, गुंजन घोचा)

26. म.प्र. सरकार के राजस्व व्ययों की प्रवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सी.पी. पँवार) 77

27. निजीकरण पश्चात् सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों के समक्ष बढ़ती चुनौतियाँ (डॉ. आर. के.विपट, प्रो. अर्चना मुजमेर) 82

28. पन्ना जिले के पर्यटन स्थल एवं रोजगार की भावी संभावनाऐं (प्रदीप कुमार रावत) 85

29. मध्यप्रदेश के सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. बी. एस. मक्कड़, अजय बख्तरिया) 88

30. वित्तीय साक्षरता एवं वित्त प्रबंधन (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) (डॉ. प्रियंका श्रीवास्तव) 91

31. 'भारत के ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर' सरकारी योजना के माध्यम से (डॉ. राजू रैदास) 93

32. मध्यप्रदेश के प्रमुख समाचार पत्र और उनकी स्थिति (डॉ. प्रतापराव कदम, मेधा पाठ) 96

33. राष्ट्रीयकृत सड़क यात्री परिवहन सेवाओं का विश्लेषण (डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़) 99

34. लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास में वनोपज पर आधारित उद्योगों का योगदान (डॉ. सुमन यादव) 101

35. डिजीटल इंडिया का प्रभाव - संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ (मनोज जैन) 103

36. प्राचीन भारत में प्रबंध व्यवस्था (डॉ. अंतिमबाला जैन) 105

(Economics / अर्थशास्त्र)

37. **Solid Waste Management & Its Impacts : A Case of Gwalior Municipal Corporation 107**
(Sunil Sharma, Dr. Kamlesh Kumar Shrivastava)

38. **Micro-Finance For Rural Entrepreneurship Development & Rural Industrialization 109**
(Nisar Ahmad Wani, Dr. Pavan Kumar Shrivasta)

39. जनजातीय परिवारों पर समाज विकास योजनाओं के प्रभाव का एक अध्ययन 111
(बड़वानी जिले की वरला तहसील के संदर्भ में) (डॉ. प्रकाशचंद्र रांका, हिरालाल खर्ते)

40. मध्यप्रदेश की बैगा जनजाति-विकास की समस्याएं और सुझाव (डॉ. महेश कुमार धुर्वे) 114

41. भारत में प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का प्रभाव एवं संभावनाएँ (विक्रम बामनिया, डॉ. एम. एल. पाटीदार) 117

42. उज्जैन जिले के कृषि विकास में सहकारी बैंको का योगदान (पूजा चन्द्रावत, डॉ. सारा अत्तारी) 119

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

43. गाँधी जी के ग्राम स्वराज की वर्तमान पंचायती राज में प्रासंगिकता (डॉ. वर्चसा सैनी) 121

44. नरसिंहपुर के स्वाधीनता सेनानी (डॉ. नितिन सहारिया) 124
45. बन्दी उत्पीड़न, एक विश्वव्यापी समस्या (डॉ. संजय कुमार मिश्रा) 127
46. नागालैण्ड के बेमिसाल उत्सव (डॉ. राजेन्द्र सिंह चंदेल) 130
47. पंचायतीराज अवधारणा आवश्यकता एवं महत्व (डॉ. शोभा राठौर) 133
48. सूचना का अधिकार (डॉ. अनिल कुमार जैन, बल्लु सिंह मुवेल) 135
49. लोकतंत्र में महिलाओं की राजनीतिक भूमिका -छत्तीसगढ़ के संदर्भ में (अनिल किशोर वर्मा, डॉ. मनीषा शर्मा) 137
50. मध्यप्रदेश की राजनीति में जातियों की भूमिका (शम्भू सिंह सिसोदिया) 139
51. भारत-अमेरिका सम्बन्ध नव शीत युद्ध के संदर्भ में (डॉ. संजय मिश्र) 141
52. भारत में विकास का सच - आंकड़ों के आईने (डॉ. अनिल कुमार जैन) 143

(History / इतिहास)

53. History of Kol Tribes of Madhya Pradesh (Dr. Aditi Pitaniya) 145
54. वीर तेजाजी की लौकिक धारणा (बनवारी लाल यादव) 147
55. भारत छोड़ो आंदोलन का क्षेत्रीय अध्ययन(मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रुक्मणी परते) 150
56. व्यक्तिगत सत्याग्रह एवं बालाघाट जिला (डॉ. संकेत कुमार चौकसे) 153
57. चन्द्र सिंह गढ़वाली - योजनाकार के रूप में (डॉ. पूनम भट्ट) 155
58. भारतीय-राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की सहभागिता (डॉ. पद्मा सक्सेना) 157

(Sociology / समाजशास्त्र)

59. The Changing Pattern of Agrarian Social Structure in Independent India (Amit Kumar Sharma) 158
60. भारतीय समाज में अल्पसंख्यक समुदाय की प्रस्थितियाँ (डॉ. नीलम महाडिक) 161
61. आदिवासी महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूह की भूमिका (झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. सुमा थंकाचन) 164
62. 'बैगा समुदाय के पारिवारिक संरचना पर संचार का प्रभाव' एक समाजशास्त्रीय अध्ययन - (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में) (राफिया आबिद (ज्योति सिंह)) 167
63. ग्रामीण समाज में परिवर्तन एवं विकास के विविध आयाम -एक समाजशास्त्रीय मूल्यांकन (राहुल पाण्डेय) 169
64. भारत में आपदा प्रबन्धन (डॉ. अनामिका प्रजापति) 172
65. भारत में बालश्रम की समस्या (नेहा) 175
66. महिलाओं के पुलिस से संबंधित अधिकार (ऋचा एस. मेहता) 177

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

67. Badal Sircar : An Able Theatre Man (Jeetendra Singh Rajawat) 179
68. A study of Feminine consciousness in Anita Desai's Cry the Peacock and Bye-Bye Black Bird (Dr. Mani Mohan Mehta, Saurabh Mehta) 182
69. Literature : As The Result Of Rebel (Dr. Pallavi Sharma) 184

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

70. भवानी प्रसाद के काव्य में जीवन-मूल्य (डॉ. विजय कुमार पाण्डेय) 186
71. रंगमंच का शिल्पकार - नाटककार मोहन राकेश (डॉ. रंजना मिश्रा) 189
72. मृदुला गर्ग और मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में शहरी एवं ग्रामीण परिवेश (डॉ. नरेन्द्र कुमार) 191
73. निराला के काव्य में आधुनिकता (डॉ. वारिश जैन) 193
74. कबीर काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य - प्रेम और भक्ति (डॉ. अनसूया अग्रवाल) 195
75. स्त्री मुक्ति की आकांक्षा (डॉ. मीनाक्षी पुरोहित) 197

(Sanskrit / संस्कृत)

76. काव्यलक्षण की भिन्नता में 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' की समीक्षा (प्रो. के.आर. सूर्यवंशी) 199
77. वैदिक वाङ्मय में पर्यावरण संरक्षंण (डॉ. बाल कृष्ण प्रजापति) 202

(Music / संगीत)

78. अवन्तिका की सांगीतिक परम्परा (डॉ. कमलेश राठौर) 205

(Education / शिक्षा)

79. शासकीय एवं अशासकीय हाईस्कूल के विद्यार्थियों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन (ग्वालियर शहर के सन्दर्भ में) (विभा तिवारी, डॉ. रमा त्यागी) 207
80. कक्षा दसवीं के विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान पाठ्यचर्या के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन(मन्दसौर जिले के संदर्भ में) (दिलीप सिंह राठौर, डॉ. जयदीप महार) 212
81. दिव्यांगों के प्रति परिवार तथा समाज का दृष्टिकोण एवं सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन (मनीषा सक्सेना, अमृता ब्राह्मणे) 216
82. उच्चतर माध्यमिक स्तर पर महिला एवं पुरूष शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन (विजय पराशर, डॉ. सपना शर्मा) 219
83. लहर कार्यक्रम की वस्तुस्थिति का अध्ययन (डॉ. दीपा त्रिवेदी) 222

84. उच्च-शिक्षा की चुनौतियाँ (विशेष संदर्भ – उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय) (सुनील कुमार सिकरवार)....... 225
85. शिक्षण में नाट्यकला की भूमिका – गिजुभाई बधेका की प्रांसगिकता (नरेन्द्र कुमार गुप्ता, प्रमोद कुमार सेठिया) . 228

(Law/ विधि)

86. Social circumstances\status\condition on Killing of Girl Foetus (Dr. Narendra Sharma)................230
87. Human Rights Laws In India (Chirag Banthiya) 233
88. पर्यावरण संरक्षण के विधिक प्रावधानों के क्रियान्वयन का परिदृश्य एवं सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका – (प्रासंगिक अधिनियमों के व्यावहारिक क्रियान्वयन के विशेष संदर्भ में) (रश्मि शर्मा) 235
89. प्रतिकर के माध्यम से अपराध पीड़ित महिलाओं को सामाजिक न्याय दिलाने में उच्चतम न्यायालय की भूमिका (कृष्ण वल्लभ विश्वकर्मा) 238

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

90. Comparison Of Physical Fitness And Academic Achievement Between Government Sports School And Public School Of Rajasthan (Dr. Seema Gurjar, Gajender Sharma) 241

(Others / अन्य)

91. फिल्म गजनी की प्रचार रणनीति और उसका व्यवसाय (लखन रघुवंशी) 243
92. Plight Of 1947 Due To Partition (Rachna Mathur) 245
93. कर्मचारियों का कार्यमापन एव नियंत्रण की तकनीक (डॉ. आलोक कुमार यादव) 247
94. Post-structuralism According to Jacques Derrida 2016 (Dr. Surendra Kumar Sao) 249
95. नयी कविता : युग की मांग (डॉ. जगमोहन सिंह गुर्जर) 251
96. भारत में अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति की समीक्षा (डॉ. हरिचरण मीना) 253
97. A Study of Application of Mobile Ad hoc Networks (MANETs) (Dharmendra Kumar Meena) 256
98. भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय (डॉ. हनुमान प्रसाद मीना) 258
99. राजस्थान में सूखा व अकाल : समस्या तथा समाधान (डॉ. राजेन्द्र प्रसाद).. 262
100. Photocatalytic Properties of Titanium Dioxide (Mukesh Kumar Mehta)..265

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01)	डॉ. मनीषा ठाकुर	फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02)	श्री अशोककुमार	एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03)	प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू	वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04)	श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी	सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05)	प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा	पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06)	प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव	शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07)	प्रो. डॉ. एन.एस.राव.	संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08)	प्रो. डॉ. अनूप व्यास.	(पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09)	प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे	संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10)	प्रो. डॉ. संजय भयानी.	अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11)	प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम	अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12)	प्रो. डॉ. बी.एस. झरे .	प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13)	प्रो. डॉ. राकेश शर्मा	अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14)	प्रो. डॉ. संजय खरे	प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15)	प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय	परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16)	प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा	प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17)	प्रो. अखिलेश जाधव	प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18)	प्रो. डॉ. कमल जैन	प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19)	प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से	प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20)	प्रो.डॉ. वन्दना जैन	प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21)	प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार	प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22)	प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी	सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23)	प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव	अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24)	प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे	प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25)	प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया	प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26)	प्रो. डॉ. विवेक पटेल	प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27)	प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी	प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28)	प्रो. डॉ. आर.के. गौतम	प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29)	प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा	प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30)	प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी	प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31)	प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे	विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32)	प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता	पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33)	प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़	अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34)	प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा	विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35)	प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार	प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36)	प्रो.डॉ. के.एल. साहू	प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37)	प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन	प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38)	प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित	एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे....................संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा .... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन ....प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. नत्वरलाल गुप्ता ....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता ....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

*** विज्ञान संकाय ***

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:-........................ (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) **प्रो.डॉ. नीरज दुबे,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:-......................... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:-............ (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:-............ (1) **अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

*** वाणिज्य संकाय ***

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

*** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ***

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

*** विधि संकाय ***

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

*** कला संकाय ***

अर्थशास्त्र:-..................... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन**, शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. उमा लवानिया**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- .... (1) **प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन**, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) **प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला**, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. कला जोशी**, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:-.......................... (1) **प्रो. डॉ. अजय भार्गव**, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव**, शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:-........................ (1) **प्रो. डॉ. नवीन गिडियन**, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- .... (1) **प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव**, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कामना वर्मा**, प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सरोज कोठारी**, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- .... (1) **प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय**, शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव**, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक)**, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर**, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

**** गृह विज्ञान संकाय ****

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... (1) **प्रो.डॉ. प्रगति देसाई**, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मधु गोयल**, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. संध्या वर्मा**, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:-................. (1) **प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर**, अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. आभा तिवारी**, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... (1) **प्रो. डॉ. मंजु शर्मा**, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा**, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

**** शिक्षा संकाय ****

शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर**, महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) **प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर**, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. नीना अनेजा**, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) **प्रो. डॉ. सतीश गिल**, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

**** आर्किटेक्चर संकाय ****

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. किरण पी. शिंदे**, प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

**** शारीरिक शिक्षा संकाय ****

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला**, अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

**** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ****

ग्रन्थालय विज्ञान .... (1) **डॉ. अनिल सिरौठिया**, शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01)	प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02)	प्रो. श्रीमती विजया वधवा	शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03)	डॉ. सुरेंद्र शक्तावत	ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04)	प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर	शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05)	श्री आशीष द्विवेदी	शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06)	प्रो. डॉ. मनोज महाजन	शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07)	श्री उमेश शर्मा	कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08)	प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09)	प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार	शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10)	प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित	जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11)	प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार	शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12)	प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा	शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13)	प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया	शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14)	प्रो. डॉ. अभय पाठक	शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15)	प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान	शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16)	प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान	शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17)	प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र	शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18)	प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन	शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19)	प्रो. डॉ. कमला चौहान	शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20)	प्रो. डॉ.आभा दीक्षित	शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21)	प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी	शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22)	प्रो. डॉ. डी.सी. राठी	स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23)	प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े	शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24)	प्रो. डॉ. संजय पंडित	शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25)	प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता	शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26)	प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना	शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27)	प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे	पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28)	प्रो. डॉ. भारती जोशी	आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29)	प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी	शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30)	प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट	शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31)	प्रो. डॉ. संजय प्रसाद	शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32)	प्रो. डॉ. मीना मटकर	सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33)	प्रो. मोहन वास्केल	शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34)	प्रो. डॉ. नितिन सहारिया	शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35)	प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया	शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36)	प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी	शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37)	प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी	महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38)	प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा	श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39)	प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40)	प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव	शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41)	प्रो. डॉ. अनूप मोघे	शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42)	प्रो. डॉ. हेमलता चौहान	शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43)	प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44)	प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45)	प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर	शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46)	प्रो. डॉ. आर.के. यादव	शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47)	प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे..................................शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल............................शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल...............................शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा..................................शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल.....................................शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल...................................शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा.................................शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे.................................शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित................................छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव ....अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई..................................शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन............................वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ....एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा...............................पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया...............................हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल................................शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Two Novel Additions to Fungal Genus *Cladosporium* Link ex Fries

Varun Raj Yadav* N.K. Verma ** A.N. Rai ***

Abstract - survey for the collection of hyphomycetous fungi from the forest plants of Sagar, Madhya Pradeshresulted into the gathering of enormous specimen. The detailed morphotaxonomic treatment was given to some of the interesting fungal specimens which resulted into the description and illustration of two new species namely *Cladosporium bignoniacearum* on *Arrabidaea macrophylla* K. Schum in Engl. et Prant. (Bignoniaceae) and*Cladosporium combretaearum* on *Terminalia tomentosa*, W. & A. (Combretaceae).

Keywords - biodiversity, *Cladosporium*,taxonomy

Materials & methods - Specimens of dried were collected during the course of field trips. Detailed observations of morphological characters were carried out by means of an Olympus CX31 light microscope using oil immersion (1000×). Specimens for microscopic observation were prepared by hand sectioning. Water and lactophenol were used as mounting media. Measurements were made of 30 conidia, hila, and conidiophores and of 15 stromata. Line drawings were prepared at a magnification of 1000×. Morphotaxonomic determinations were made with the help of standard literature and available resident expertise. The holotype has been deposited in Herbarium CryptogamiaeIndiaeOrientalis (HCIO), Indian Agricultural Research Institute, New Delhi, India; and an isotype was retained in the herbarium of Department of Botany, Dr. H.S. Gour University for further reference.

Result and discussion - *Cladosporiumbignoniacearum* sp. nov. Maculae amphigenosae, quasi irregularis, et parvaesedtranseunsmagnae et coalescentes cum aetae in acetataapicalis superficies ad foliiumatrae, Coloniaeamphiphyllosae, plerumqueepiphyllosaetamquae puncta tenuissima, griseoatrae. Mycelium hypharum, immersum angustum, septata laevia, ramosum stromata presins, bene evoluta, stroma cellulae irregularis, immersum, psudoparenchymatosa, fuco olivacea, 15-23 mm in dimetro. Conidiophora pleremque caespitosa im compactus fasiculis, interdum solitaria vel faciculata ex duo, macronematosa, mononematosa, septata usque 12 transversae septata, erecta vel suberecta, laevia, eramosa, pallide olivacea, recta vel flexuosa, geniculata, nodesa swellings presentia, 11-296 X 2-14 mm in dimetro. Cellulae conidiogenosae, incorporatae, terminales et intercalares, polyblasticae, sympodiales cicatricatae, fuco cicatricis, distincto et crassata. Conidia, catenata (im catenin ramosis) vel solitaria, sicca, cylindrata, ellipsiformia, fusiformea, ovata, globosa vel sub globosa, doliiformia, basim roundata vel obconicotruncata, laevia usque 3 transversae septata, hilo distincto et crassata, interdum uncrassata vel medio olivacea, 1-14 X 1-6 mm.

Lesions amphigenous, almost irregular and small but becoming large and coalescing with age to cover major portion of the leaf surface, black. Colonies amphiphyllous, predominantly epiphyllous, shown by very fine, distinct dots, greyish black. Mycelium of hyphae immersed, narrow, septate, smooth, branched. Stromata present, well developed, stroma cells irregularly arranged, immersed, psudoparenchymatous dark olivaceous, 15-23 mm in diam. Conidiophores mostly caespitose (in compact fascicles), sometimes solitary or in groups of two, macronematous, mononematous, septate up to 12 transversely septate, erect to suberect, smooth, unbranched, light olivaceous, straight to flexuous, geniculate, nodose swellings present, 11-296 X 2-14 mm in diam. Conidiogenous cells, integrated, terminal and intercalary, polyblastic, sympodial, cicatrized, scars dark, distinct and thickened. Conidia catenate (in branched chains) to solitary, dry, cylindrical, ellipsoidal, fusiform, ovoid, spherical or subspherical, doliiform, base rounded to obconicotruncate, smooth, up to 3 transversely septate, hila distinct and thickened, sometimes unthickened to mid olivaceous, 1-14X1-6 mm.

On dry leaves of *Arrabidaeamacrophylla*K. Schum in Engl. et Prant. (Bignoniaceae) Mar. 2004, Botanical garden Dr. H.S. Gour University, Sagar, (M.P.) India, leg. V.R. Yadav, S.U. Herb. No. VRR-74 Holotypus, HCIOIsotypus, 49,267. The survey of literature reveals that a large number of *Cladosporium* species have been described on a variety of hosts families. However *C. cazaliae* Tiwari (Ph.D. Thesis,

***Department of Botany, Dr. H.S. Gour University, Sagar (M.P.) INDIA**
**** Department of Botany, Dr. H.S. Gour University, Sagar (M.P.) INDIA**
****** Department of Botany, Dr. H.S. Gour University, Sagar (M.P.) INDIA**

2007) described on the host family Bignoniaceae and *C. gallicola*Sutton (Ellis, 1976) are found comparable to the authors' collections (Table 1).

A critical observation very clearly shows that the proposed fungus is altogether distinct and different with *C. cazaliae* and *C. gallicola* in heaving very clear symptoms, amphiphyllous, predominantly epiphyllous colonies, compact fascicles, sometimes solitary or in groups of two, nodose swelling, up to 12 transversely septate, light olivaceous, excessively long and wide unbranched conidiophores, having long as against all tabular species and wider (to *C. cazaliae*), hila distinct and thickened sometimes unthickened with mid olivaceous conidia.

The over allmorphotaxonomic characters of *C. bignoniceae*cannot be accommodated with earlier recorded species of *Cladosporium* and therefore, merit its disposal as a new species. It is also noteworthy that none *Cladosporium* species is described on the host.

***Cladosporium combretaearum* sp. nov.**

Maculae reddo per colomies. Colonia hypophyllosae, parvae fasciculata tamquam puncta tenuissima, extendentes pertotam superficiem folii, confertim situs, velutinae, confertus cum massa de conidia, viridulus, atra. Mycelium hypharum, superficiale, angustum, laevia ramosum, septata, olivacea brunnea, repentis. Stramata praesens, superficiale, irregularis psudoparenchymatosa, fuco brunnea, usque 14×23 µm in dimetro. Conidiophora plerumque caespitosa in laxix, fascicles, interdum solitaria, macronematosa, mononematosa, septata, plerumque eramosum, raro ramosum, erecta vel sub erecta, recta vel interdum flexuosa, laevia, midio olivacea vel brunnea, usque 6 transversae septata, 11.5-230 × 3-9 µm. Cellulae condiogenosae incorporatae, terminales et intercalares, polyblasticae, sympodiales. Conidia variabilis ir ambitus, solitaria, interdum catenata, sicca, cylindrata vel obclavatocylindrata, interdum clavatocylindrata, diverse figurae, doliiformia ellipsiformia, fusiformia, globosa vel sub globosa, ovata, lemoniformia, lenticularis apicem obtusa basim, roundata, obconicotruncata vel sub truncata 0-3 transversae septata, hilo fuco, pallide vel midio olivacea, 3-29×3-6 µm.

Lesions represented by colonies. Colonies hypophyllous, represented by small fine dots in groups covering the whole leaf lamina, closely placed, velvety, over loaded with mass of conidia, greenish black. Mycelium of hyphae superficial, narrow, smooth branched, septate, olivaceous brown, repent hyphae present. Stromata present, superficial, irregular, psudoparenchymatous, dark brown, up to 14 X 23 mm in diam. Conidiophores mostly caespitose (in loose fascicles), sometimes solitary, macronematous, mononematous, septate, mostly unbranched, rarely branched, erect to suberect, straight to sometimes flexuous, smooth, mid olivaceous to brown, up to 6 transversely septate, 11.5-230X3-9 mm. Conidiogenous cells integrated, terminal and intercalary, polyblastic, sympodial. Conidia variable in size, solitary, sometimes catenate, dry, cylindric to obclavatocylindric, sometimes clavatocylindric, variously shape, doliiform, ellipsoidal, fusiform, spherical or subspherical, ovoid, limoniform, lenticular, apices obtuse, bases rounded, obconicotruncate to subtruncate 0-3 transversely septate, hila dark, light to mid olivaceous 3-29 X 3-6 mm.

On dry leaves of *Terminalia tomentosa*, W. & A. (Combretaceae) Oct. 2005, Rahatgarh, Sagar (M.P.) India, leg. V.R. Yadav, S.U. Herb. No. VRR-68 Holotypus, HCIOIsotypus 49, 264.

A thorough survey of literature shows that a large number of *Cladosporium*species are validly recorded on a variety and hosts of other substrates. However, amongst the described species a close examination of morphotaxonomic features shows that only to species *C. rounakae*Parihar (Ph.D. Thesis 2007) &*C. nigrellum*Ellis &Everh.(Ellis, 1976), are found comparable (Table 1). It is also to be noted that *C. rounakae*is recorded on the host family (Combretaceae).A critical look of the table 2reveals that our species is almost dissimilar with *C. rounakae* and*C. nigrellum* in presence of caespitose (in loose fascicles), up to 6-transversely septate, shorter conidiophores with 0-3 transversely septate, light to mid olivaceuos, large & thinner conidia as against comparing species.Looking to the foregoing discussions it is gathered that the differences are to such an extent giving the liberty to describe it as a new species of *Cladosporium.*It is further to be added that no *Cladosporium*has ever been reported on the host genus.

Acknowledgments - The authors are grateful to The Curator, HerbariumCryptogamiaeIndiaeOrientalis (Indian AgriculturalResearch Institute) New Delhi for depositing thefungal specimens and their accession and the Head,Department of Botany, Dr HS Gour University, Sagarfor providing necessary facilities. The financialassistance received through UGC, New Delhi to NKV is also gratefully acknowledged.

References :-

1. Parihar, S. A foliicolousmycotaxonomic survey and study of fungi at and around Sagar. 2007 Ph.D. Thesis, Department of Botany, Dr.H.S. Gour University, Sagar, Madhya Pradesh, India.
2. Tiwari, V. A fungal diseases of the plants from Sagar University campus: A survey and mycological Study. 2007 Ph.D. Thesis, Department of Botany,Dr.H.S. Gour University, Sagar, Madhya Pradesh, India.
3. Ellis, M.B. More Dematiaceous Hyphomycetes1976, CMI, Kew England.

See Table in next page

Table 1: Comparative account of *Cladosporiumbignoniacearum*sp. nov. with related species.

Species	Spots & Colonies	Stromata	Condiophores			Conidia		
			Colour&Septation	Size	Structure	Colour&Septation	Size	Structure
C. gallicola	Colonies effuse, dark olivaceous, velvety.		Brown, dark at the base, paler at the apex.	Up to 250 μ long, 5-9 μ thick.	Straight or slightly flexuous, simple or branched septate, smooth or minutely verruculose.	Pale olivaceous, mostly without septa although occasionally 1 septate.	3-12 × 2-7μ	Catenate to solitary, subglobose, ellipsoidal or fusiform, smooth or verruculose.
C. cazaliae	Colonies hypophyllous in the form of dots, black.	Well developed, immersed black, up to 22μ in diam.	Mid olivaceous .	90-272 × 3-3.5 μm	Caespitose, septate, macronematous, mononematous, branched, erect to suberect, smooth, swollen at the apex, geniculate.	Mid olivaceous, 0-3 transversely septate.	3-12 × 3 μm	Solitary to catenate, variously shaped, dry, acropleurogenous, subcylindric to obclavote, ovoid, smooth, spherical or subspherical, hila dark.
C. bignoniacearum sp. nov.	Colonies amphiphyllous predominantly epiphyllous very fine dots, greyish black.	Well developed, immersed, psudoparen-chymatous, dark olivaceous, 15-23 μm in diam.	Light olivaceous , up to 12 transversely septate.	11-296 × 2-14 μm	Mostly caespitose in compact fascicles, and sometimes solitary or in groups of two, unbranched, straight to flexuous, geniculate, nodose swellings present.	Mid olivaceous, 0-3 transversely septate.	1-14 × 1-6 μm	Catenate (in branched chains) to solitary, dry, cylindrical, ellipsoidal, fusiform, ovoid, spherical or subspherical, doliiform, base rounded to obconicotruncate, smooth, hila, distinct thickened sometimes unthickened.

Table 2: Comparative account of *Cladosporiumcombretaearum* sp. nov. with related species.

Species	Spots & Colonies	Stromata	Condiophores			Conidia		
			Colour&Septation	Size	Structure	Colour&Septation	Size	Structure
C.nigrellum	Colonies effuse, dark olivaceous or blackish brown, velvety.		Reddish brown, paler near the apex.	Up to 250µ long, 5-9 µm thick.	Flexuous, smooth.	Very pale to mid pale brown, 0-3 septate.	5-15 × 4-7 µ	Simple or branched chain, cylindrical, ellipsoidal, fusiform or limoniform, smooth.
C. rounakae	Colonies hypophyllous, effuse, represented by black dots.	Immersed to superficial, irregular, psudoparenchymatous, dark brown.	Mid olivaceous , up to 5 transversely septate.	3-280 × 3-7 µm	Caespitose in small fascicles, solitary, macronematous, mononematous, septate, branched, straight, sometimes flexuous, distinctly nodose, smooth.	Light olivaceous , 0-2 transversely septate.	4-26 × 3-7 µm	Simple, catenate in branched chain, solitary cylindrical, doliiform, ellipsoidal, fusiform, spherical or subspherical, apices obtuse, base rounded, smooth, hila dark, distinct and thickened.
C. combretaearum sp. nov.	Colonies hypophyllous, velvety greenish black.	Superficial, irregular, psudoparenchymatous, dark brown, up to 14-23 µm in diam.	Mid olivaceous to brown, up to 6 transversely septate.	11.5-230 × 3-9 µm	Mostly caespitose (in loose fascicles), sometime solitary, septate, mostly unbranched rarely branched, erect to suberect, straight to sometime flexuous, smooth.	Light to mid olivaceous , 0-3 transversely septate.	3-29 × 3-6 µm	Variable in size, solitary sometimes catenate, dry, cylindric to obclavatocylindric, sometimes clavatocylindric, variously shaped, doliiform ellipsoidal, fusiform, spherical or subspherical, ovoid, limoniform, lenticular, apices obtuse, bases rounded obconicotruncate to subtruncate, hila dark.

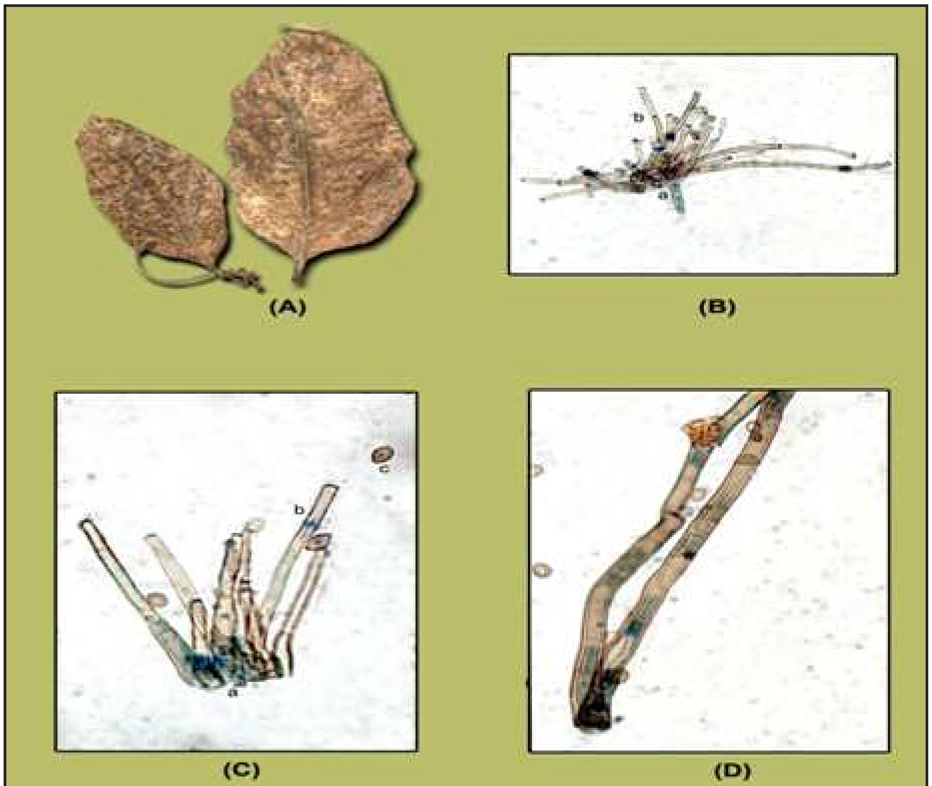

(A) (B) (C) (D)

Plate 1: ***Cladosporium bignoniacearum*** **sp. nov. on** ***Arrabidaea macrophylla***
(A) Symptom (B) a; Stroma, b; Conidiophores (400X) (C) a; Stroma cells, b; Conidiophores, c; Conidia (1000X) (D) Conidiophores (1000X)

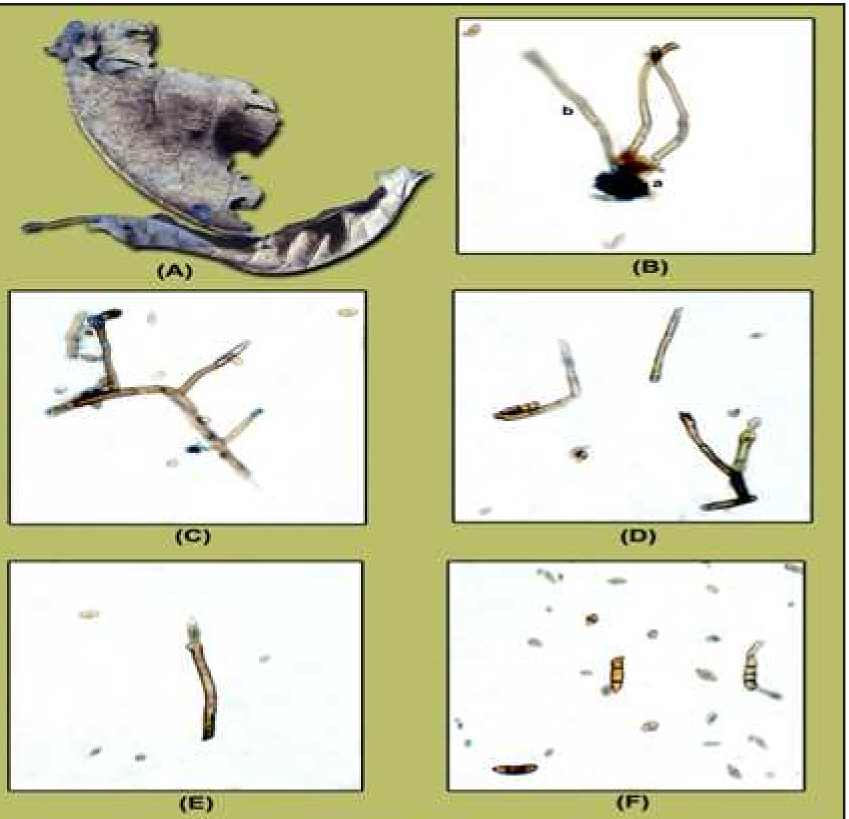

(A) (B) (C) (D) (E) (F)

Plate 2: ***Cladosporium combretaearum*** **sp. nov. on** ***Terminalia tomentosa***
(A) Symptom (B) a; Stroma cells, b; Conidiophores (400X) (C) Conidiophores arising from mycelium (400X) (D) Branched conidiophore (400X) (E) Conidiophore showing conidiogenesis (400X) (F) Variation of conidia (400X)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Assessment of impact of cement dust on soil properties around Satna Cement factory

Anita Dubey *

Abstract - The environment is affected in a large scale by the resulting byproducts in the manufacture of cement. A cement industry is one of the main beneficiaries of the infrastructure boom which is generally established near limestone deposits. Cement is one of the core industries that plays a vital role in the imbalances of the environment and produces air, water and soil pollution. According to the Global Cement Directory 2015, India had 174 integrated cement plants, 155 of which were active, with production capacity in excess of 301Mt/yr. Soil samples were collected from different distances and places around Satna cement factory.

Introduction - India has become the second largest producer of cement in the world next only to China both in quality and technology. Cement production (weight: 2.41%) increased by 1.4 % in July, 2016 over July, 2015. Its cumul- ative index during April to July, 2016-17 increased by 4.6 % over the corresponding period of previous year. Cement industry is one of the core industries to country development that comprises mainly four major segments viz. housing, infrastructure, commercial and institutional and industrial segments. Cement demand in Indian is likely to increase to 600 million tons per annum by 2015. Raw materials used in cement making industries sometimes contain trace amount of toxic elements like mercury, lead, chromium, thallium, cadmium, iodine and other heavy metals. Off plant pollution, in plant pollution, application generated & fugitive emissions are pollution causing activities of cement manufacture. Industrial pollution has been reported as a major cause of environmental degradation. A study was conducted to investigate the impact of cement dust pollution on physico- chemical and microbiological properties of surrounding soil from Satna Cement Factory of Madhya Pradesh. This study was carried out to know the effect of pollutants of cement industry viz. sulphur dioxide SO_2, nitrogen oxide NO_x, carbon dioxide CO_2 and PM on the properties of soil. Expansion of more cement plants to meet the requirement for construction of building causes the alarming increase in dust emission from cement factories. The dust escaping from cement factories is often transported by wind and deposited in areas close to the factory. Satna is in the limestone belts of India. As a result, it contributes around 8%–9% of India's total cement production. A cement plant is generally established near limestone deposits. There is an abundance of dolomite and limestone in Satna district of M.P. and the city has 10 cement factories producing and exporting cement to other parts of the country. Satna is situated in the Vindhyachal plateau of Madhya Pradesh state. The district is located in between 23.58 degree North Latitude to 25.12 degree North Latitude and 80.21 degree East Longitude to 81.23 East Longitude. The District is situated about 305 meters above the mean sea level. Limestone is the major mineral available in the district abundantly, which is concentrated in Raghuraj Nagar, Maihar and Amarpatan. Cement production is highly energy intensive.

Chemical composition of cement is as: Lime 63%, silica 22%, alumina 06%, Iron oxide 03%, Gypsum 01 to 04%

The forms of cement produced are Ordinary Portland cement(OPC), Portland pozzolana cement(PPC) and Portland slag cement(PSG). The raw materials needed to produce cement (calcium carbonate, silica, alumina, and iron ore) generally extracted from limestone rock, chalk, shale, or clay, are obtained by either extraction or blasting. These naturally occurring minerals are then crushed through a milling process. Both physical degradation and chemical contamination of soils caused by industrial activity, agricultural chemicals or improper disposal of waste. Physical degradation includes erosion, compaction and structural damage resulting from construction activities and mining. In the same manner chemical problems result from waste disposal activities, discharge of liquid effluents and industrial emissions [1].

Adverse effect of cement dust on human health - Thickening and cracking of skin, severe akin damage from chemical burns can observe in contact with the dust. Silica exposure can lead to lung injuries [2]. Cement dust causes chronic lung diseases and carcinoma of the lungs, stomach and colon [3]. Both organic and inorganic contaminants are important in soil. The most prominent organic chemical groups are fuel hydrocarbon, poly nuclear aromatic hydrocarbons (PAHS), polychlorinated biphenyls (PCBs), chlorinated aromatic compounds, detergents, and pesticides. Inorganic species include nitrates, phosphates and heavy metals like cadmium, chromium and lead, inorganic acids and radionuclide. The sources of these contaminants are industrial waste materials, agricultural runoffs, acidic precipitates and radioactive fallout [4]. The major sources of environmental pollution are pollutants released from different industries. The dust, produced during the manufacture of cement is considered one of the most hazardous pollutants which

---

*Govt. M.L.B.Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

adversely affect the surrounding environment. One of the primary producers of carbon dioxide (a major Greenhouse gas) is the cement industry. Excessive use of concrete causes damage to the most fertile layer of the earth. There are so many broken cement structures left behind unattended all over Asia, which are unsuitable for the environment. Concrete is used to create hard surfaces contributing surface runoff that can cause soil erosion, pollution of water and flooding [5].

Material and method - Soil samples were collected from 100cm, 300 cm, 500cm and 1 km away from the factory. To describe the status of the pollutions of soil by industrial activities, relevant data sets were surveyed and reviewed. Soil pH was determined by glass electrode pH meter in 1:2 soil water suspensions . Electrical conductivity was measured in the supernatant liquid of 1:2 soil water suspensions by conductivity meter. Soil pH expresses soil acidity. Most crops grow best when the soil pH is between 6.0 and 8.2. The plant-available forms of nitrogen are ammonium-N (NH_4 -N) and nitrate-N (NO_3 -N). The availability of most micronutrients decreases as pH increases.

Table 1: Component of soil

Component of soil	%
Organic mineral matter	45
Organic matter	05
Soil water	25
Soil air	25

Table 2: Available N P K Status of soils

Availble Nutrient	High	Low	Medium
N(Nitrogen)	63.10%	25.57%	11.33%
P(Phosphorous)	42.33%	37.66%	20.01%
K(Potassium)	12.93%	36.65%	50.42%

Result and discussion - Data of the pH of different soil samples varied from 7.84 to 8.12 showed that soil of the study area were alkaline type and having decreasing ph with the increase in distance from the factory. Calcium carbonate content of soil decreases with increase in distance. The higher content of $CaCO_{3\ near}$ cement factory is due to higher dust fall. The data given in the table clearly showed gradual decrease in organic carbon content from 1.0 to 0.67 in accordance to distance from the site. Phosphorus showed a positive trend towards the increment of the distance. Cement dust causes increase in potassium and nitrogen content in the soil.

Conclusion - On the basis of the analytical result obtained it can be concluded that the physical and chemical constituents of the soil are usually altered because of the contact with cement dust. The cement dust tends to be highly alkaline due to its high calcium carbonate content. Hence it is revealed that soil contaminated by cement will have high pH value. The impact is observed most within the radius of 0-5km from the plant. Soil samples were found to be alkaline type and having decreasing pH with the increase of distance. Total hardness as $CaCO_3$ decreases with the increase in distance. Heavy metals are not detected in the samples.

Acknowledgement - Author would like to thank the University Grant Commission for the financial support. Author is grateful to Director, Creative Enviro Services, Bhopal and Scan Research lab for providing necessary facilities for instrumentation. Special thanks to the Principal, Govt. M. L. B. Girls College Bhopal for her kind co-operation and valuable suggestions during the study.

References:-

1. www.importantindia.com/11080/essay-on-soil-pollution/
2. https://www.osha.gov/publication/concrete_manu facturinf.html
3. www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/15448758
4. Soil pollutioninformation www.encyclopedia.com/doc/1G2-3408100231.html
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Environmental_impact _of_concrete
6. B. K. Sharma, Analytical chemistry , 2nd option, 2006, p-104.

Table 3:Physico chemical analysis of soil

S.	Test Parameters	Unit /%	Method No.	Distance- 500 m from Satana Cement factory	Distance –300 m from Satana Cement factory	Distance –100 m from Satana Cement factory
1	pH	-	IS-2720 Part -26 B	7.84	8.07	8.12
2	Electrical Conductivity	µmhos /cm	IS-2720 Part -21	253.10	192.2	
3	Texture	-	IISS	Sandy Clay Loam	Sandy Clay	Sandy Clay
4	Grain Size Analysis	%	IS- 2270 (1985)	Sandy - 28% Clay - 24% Loam - 58%	Sandy - 47% Clay - 51% Loam - 2%	Sandy- 40% Clay - 54% Loam- 7%
5	Water Content	%	IS- 2720 (Part-2)	1.20	6.47	6.26
6	Calcium (as $CaCO_3$)	%	IS- 2720 (Part-23)	27.43	28.43	32.08
7	Soluble Sulphate	%	IS- 2720 (Part-27)-A	0.5	0.47	0.46
8	Organic Matter	%	IS- 2720 (Part-22)	0.67	0.68	1.0
9	Phosphorous	Kg/ha	IBM- 2012	92.57	24.19	22.23
10	Potassium	Kg/ha	IISS	514.98	588.0	590.2
11	Nitrogen	Kg/ha	US- EPA Method - 351.3	790.3	803.60	830.34
12	Water Holding Capacity	%	IISS	64.4	51.00	63.0

Obesity Can Be Cured By Yoga And Traditional Exercise

Dr. Rajesh Masatkar *

Abstract - Obesity is one of the biggest health problems in the world. It travels with various other diseases, which combined kill millions of people per year. These diseases include diabetes, cardiovascular, cancer, stroke, dementia and various others. For avoiding obesity from our life, it is very necessary to maintained physically, daily routine of life style and takes nutritive food for our healthy life.

Keywords - Obesity, BMI, Asana, Yoga, Pranayam

Introduction - Obesity is medically defined as a condition where your Body Mass Index (BMI) is higher than 30. People with BMI in the range between 25 and 30 are considered overweight while those with BMI above 30 are considered obese. The healthy range for BMI is between 18.5 and 25. Once you figure out your BMI, then you know in what range you fall. If your BMI is above 25, then you should look at weight loss programs and if your BMI is above 30, then you should seriously consider taking advice from yoga instructor for weight reduction. This is important because obesity is known to cause or increase the possibility of many other medical conditions like diabetes, coronary heart disease, hypertension, obstructive sleep disorders, osteoarthritis of the joints, etc. The first step in dealing with the problem is figuring out the root cause of your obesity. One can do this by consulting your doctor or a nutritionist.

Objective :

1. To save the people from other different diseases related to obesity.
2. To saves the time of people from unnecessary treatments.
3. To increases the economical status of the people.
4. To reduces the cost of treatment.
5. To make the people of the country healthy and strong.
6. To make the people of the country useful in the development of our nation.
7. To minimize the intake of medicines related to obesity.

Methodology – To solve the above problem, I focused on four things, that are breathing exercise, traditional exercise, daily routine of life style and food habit of the people.

Cause of Obesity – Some of the common causes of obesity listed in brief.

1. Consumption of food containing excess fat.
2. Excessive consumption of caffeine.
3. Pregnancy.
4. Eat too much of junk food and following an unhealthy diet
5. Hot drinks, coffee, tea, chocolate, spicy foods.
6. Due to side effect of allopathic medicine.
7. Physical inactivity.
8. Smoking and alcohol.
9. Any time eating or overeating.
10. Tobacco.
11. Genetics.
12. Hormone problems like Insulin, Leptin.
13. Disease and syndrome.
14. pH balance of the body.

Result – From the above listing causes it is clear that due to the indiscipline life style obesity problem may occur. For solving the above problem I have divided this study into four parts.

A. Breathing Exercise
B. Traditional Exercise
C. Daily Routine of Life
D. Nutritive Food

A. Breathing Exercise - Breathing exercise is very helpful in maintaining our health. There are three main popular breathing exercises present in yoga, their names are given below.

1. Bhastrika Pranayam
2. Kapal Bhati Pranayam
3. Anulom Vilom Pranayam

By practicing these three breathing exercise daily for 15 min. to 30 min. each in morning time or evening time. During performing these breathings exercise your stomach must be empty.. Due to these breathings exercise oxygen level in our body may get increased and metabolic activities get balanced. Degenerate cells may get start to regenerate. Digestion and absorption of nutritive food also increase in our body.

B Traditional Exercise - By doing traditional exercise metabolic activities of body becomes normal and excessive fat get burn. If fat get burns than automatically BMI of person comes to normal parameter. Due to the balance metabolic

---

*Assistant Professor (Botany) Govt. Degree College, Nainpur, Dist. Mandla (M.P.) INDIA

activities obesity never increases. For maintaining metabolic activities following traditional exercise should be follows properly.

1. Surya Namaskar
2. Dand Baithak
3. Running
4. Yoga Asanas

1. Surya Namaskar - By doing surya namaskar daily body gets flexible. If you practice daily surya namaskar minimum 30 and maximum 100 times than your body get fit within 2 or 3 months.

2. Dand Baithak - It is actual traditional exercise. There are several Dand and Baithak. These exercises are hard to do but it is helpful in making body strong and muscular. By doing these exercise our BMI Body Mass Index comes in normal parameter and also increases the absorbing power of different types of vitamins, minerals and salts in our body.

3. Running - Running is a good exercise. Its make our respiratory system strong. If you runs 2 to 3 km daily means your body get fit. While running do not take breathe through mouth. It is very harmful for our health because several micro-organisms directly enter into our stomach. If you do not take care of this means your hard work goes to wastage. It shows negative result to you.

4. Yoga Asana - Yoga asana is our traditional exercise. It makes our body more flexible and strong. There are several asanas. You may practice according to your needs such as Bhuangasana, Sarvangasana, Chakarasana, Mandukasana, Vajarasana, Gaumukhasana, Markatasana, Matsyasana, Dhanurasana, Paschimottanasana, Trikonasana, Halasana and etc. For getting maximum benefit you can do these each asanas for 5-5 min daily. According to your strength.

C. Daily Routine of Life - Daily routine means work of our daily life such as get up time, sleeping time, eating time, drinking water time and etc. it should be in proper time. According to my knowledge, A person may follow following daily routine time for his healthy life.

1. Get up early in the morning around 5:00 AM.
2. Drink 2-3 tumbler of warm water.
3. After that go for fresh.
4. Than do breathing exercise for one hour.
5. After that do some traditional physical exercise and asanas.
6. After exercise take rest for 5 to 10 min.
7. After rest take bath and breakfast which contain low fat.
8. After that according to your work you follow your routine
9. Take lunch between 11 to 11.45 am or fixed the time of your lunch whatever it may be.
10. After 1 hour 30 min. of lunch drink water.
11. After that drink water in a regular interval of 2 hours.
12. After that around 4 to 5 pm. take some juices or fruits. According to the season.
13. In last fixed time for dinner also.
14. After 1-2 hours of dinner take one tumbler of milk (with low fat) and go for bed.
15. In this way we have completed simple daily routine of life after taking 7-8 hour night sleeping.

By following above routine you become healthy.

D. Nutrition Food- For maintaining our health food is an important factor in our life. Following direction are helpful in maintaining healthy life.

1. Eat nutritive foods and avoid junk, fast food.
2. Eat fresh cooked food and fruits as possible as you can.
3. Eat salads during lunch and dinner time daily.
4. Take germinate grams and moongs in breakfast.
5. Eat low fat containing curd during lunch.
6. After one hour of lunch drink whey.
7. Around 4 to 5 pm take some fresh fruits.
8. Avoid warehouse repine fruits and pesticides used fruits
9. Buy fresh fruits from market such as Guava, Papaya, and Water melon from villager and eat according to the season.
10. Avoid excessive intake of sugar, salt, maida and fried items in your diets.
11. Eat little jaggery (Gud) instead of sugar.

Nutritive food provides balance diet to our body. It is enough to keep us healthy.

Discussion - Depending on timing of breathing exercise its shows effect on health of a person. If a person can do 15 min, 30 min or 1 hour daily yoga than their effect will be different on their body. According to their bodies' nature, normal person can perform 15 min breathing exercise daily. Person having some problem can do 30 min. breathing exercise. If a person suffering from some specific disease than he can perform 1hour breathing exercises daily.

Traditional exercise strengthening our body. After practicing traditional exercise absorbing of vitamins, minerals and salts are increasing in our body. Normal person can do easily whole exercise. If a person having some problem can do less exercise for 1 or 2 years. After that he will be performing more exercise because his bone and muscle get stronger than before. Due to traditional exercise calcium deposition level increase in our body. According to daily routine of time table keeps you healthy for forever. Body's health depends on type of food we take. Junk and acidic food may cause obesity and other several diseases in human beings and also degenerate our body cells fastly.

Findings :

1. By doing daily yoga and traditional exercise body remain healthy and fat get burn properly.
2. Yoga provides sufficient oxygen to the body and mental relaxations or peace to the mind.
3. Traditional exercise gives sufficient strength to the body.
4. Due to regular exercise absorption of calcium, vitamins and other minerals increase in our body.
5. Due to absorption of calcium body become very strong.
6. Strong and energetic body are the symbols of good health.
7. Acidic food is responsible for deposition of fat in our body.

Suggestions :

1. If we are doing regular yoga, traditional exercise and asanas from childhood than your body remain healthy forever.
2. Avoid excessive intake of sugar, salts, maida, fried item, junk foods, and cold drinks in our diets.
3. Eat fresh cooked food and fresh fruits.
4. Take alkaline food in your diet.
5. Give time to your body for doing yoga and traditional exercise, than you will see you have lots of time for doing your works and achieving your goals.
6. By doing yoga and traditional exercise every family, society and young generation remain healthy.
7. Young generation is the future of our nation. If they have strong body and sharp mind than our nation become develops very fastly.

Conclusion – Initials stage obesity can be cured permanently by following above methodology Due to obesity person are not able to do work properly in their daily life. In this way person loss his valuable time and also suffer his development side of life. This loss bears not only his family, but indirect this effect comes on our society, state and our nation, because progress of any nation is totally dependent on the citizens of the country.

References :–

1. Pt. Shri Ram Sharma (2012) Chiryouvan Avam Shashavat Soundary Akhand Jyoti Sansthan, Mathura.
2. Swami Ramdev (2005) Yoga Sadhana V Yoga Chikitasa Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
3. Swami Ramdev (2005) Pranayam Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
4. http://www.nhlbi.nih.gov/health/health-topics/topics/obe/causes
5. https://authoritynutrition.com/10-causes-of-weight-gain/
6. http://www.medicinenet.com/obesity_weight_loss/page3.htm
7. http://www.foxnews.com/story/2006/06/28/10-causes-obesity-other-than-over-eating-inactivity.html
8. http://www.yogicwayoflife.com/obesity-and-yoga-management/
9. http://food.ndtv.com/health/yoga-for-weight-loss-6-ways-to-get-back-in-shape-770131

http://www.mindbodygreen.com/0-5118/8-Ways-Yoga-Can-Promote-Weight-Loss.html

****

Screening of Antifungal and Antibacterial Activity of Essential oil from *Blumea membranacea*

S.C Mehta * S.S Rawat **

Abstract - *Blumea membranacea*is an erect, strong aromatic, glandular hairy annual or biennial herbaceous plant found throughout India. It is belongs to family Asteraceae. These plants were selected for the screening of antifungal and antibacterialproperty. The leaves ofthis plantwere exhaustively extracted by soxhlet apparatus with n-hexanesolvents. The extracts were subjected to antibacterial andantifungalscreening by using the disc diffusion method. The bacterial andfungal strains used in this research work were *Escherichia coli, Bacillus subtilis, Pseudomonas aruginosa, Klebsiella pneumoniae, Staphylococcusaureus, Aspergillus niger,Alterneria,Candida albicans,Fusarium Species*. The agar diffusion assayantibacterial and antifungal activity were estimated. The zones of inhibition were measured by scaling and represented by tables.

Key words - *Blumea membranacea,wound healing activity, antibacterial and antifungal activity, Asteraceae.*

Introduction - The medicinalplant *Blumea membranacea* (Local name Jangli bhang or almish) grows in bare land, in shady and sunny situations with teak forest.The essential oil of the *Blumea membranacea* produces a marked and long-lasting fall in the blood pressure of anaesthetized dogs (Mehta SC. *et al.,* 1986). The essential oil also shows significant antifungal andantibacterial activity (Geda A. andBokadia MM. 1979). The plant has been distributed throughout the India specially tropics and subtropical regions. Almost all parts of this plant are being used in traditional medicine to treat various diseases(Chitra Shenoy*et al*2009). The leaves of these plants have been utilized as a stimulant, carminative, sudorific, galactogogue and as a cure for parasitic cutaneous diseases (CSIR, New Delhi, 1964). Crude leaf extract is also used as a relief to colic and stomachache. Leaves and twigs are considered to be antispasmodic and used in antirheumatic and antisudorific baths, an anti-inflammatory, antifertility agent (Kirtikar KR and Basu BD 1991), and also applied as an antiseptic in burns, wounds, and various skin complaints. The decoction of the roots is highly valued as appetizer and is reported to contain urosolic acid, a natural HIV-integrase inhibitor (ChatterJee A and Pakrashi SC. 1997). Fumes of the dried leaves are also used to repel mosquitoes and control insect pests of stored grains. Though there is no scientific evidence to support the wound healing effect of *Blumea membranacea*, tribal men continue to use the plant in the treatment of wound.

Materials and Methods - The present work is mainly based on information gathered from the interview and questionnaires' with the "Tribal and local people" on the plants having medicinal importance to them. Relevant plants were collected from the study area, identified, and preserved at the Herbarium of the Department of Botany, Govt Arts & Science College Ratlam, District Ratlam.

The present investigation is divided into two parts:

Part I. Interview with Tribal and local people, collection, identification and preservation of plants - First step was interviewingwith Tribal and local people about the plants they used in their daily life. Collections were made throughout the year and particular care was taken not to miss the flowering stages or the fruits. During collection, attempts were made to know the local names of the plants. All field data observed with herbarium specimen e.g. date, collection number, habitat, uses, and distribution were recorded. Herbarium sheets were prepared in multiple sets for future study. The medicinal plants were collected freshly from study area. The whole plants were washed and air-dried under the shade, then cut in to small pieces, powdered by a mechanical grinder and passed through 40-mesh sieve and stored for future use.

Preparation of plant extract;the dried powdered plant leaves of *Blumea membranacea*were extracted successively with n-hexane extractedin Soxhlet apparatus (Wallis 1985).

Part II. Study of antibacterial and antifungal activities - The antimicrobial and antifungal activity of the plant leaf extract was determined against 4 bacterial and 4 fungal species. These microorganisms were collected from Department of Biotech & Microbiology Govt. arts & science college Ratlam (M.P.). Bacterial and fungal strains were tested on soyabean casein digest agar and Sabouraud dextrose agar, respecively. Sterilized paper discwere loaded with leaf extract of *Blumea membranacea*and applied on

---

*.Professor (Botany) Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora, District Ratlam (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Govt. P.G. College, Sailana, District Ratlam (M.P.) INDIA

the surface of agarPetri plates.

The commercially available streptomycin (10mg) drug and Clotrimazole cream were loaded on Petri plates as a control to check the comparison of antibacterial and antifungal activity with different crude extracts of medicinal plants. The maximum antibacterialand antifungal activity observed from experimental bacterial and fungal species. The diameter of the zones of inhibition was measured by scale in mm. All Petri dishes will be incubated at 37° C for 18 h- 24 h for bacteria; and at 25 for 24h for fungal species. Studies performed in triplicate, and mean value calculated.

Results and discussion - These plant species are used to treat various diseases and disorder categories, with the highest number of species used for gastro-intestinal disorders, followed by treat various illnesses. The whole herb used in tuberculosis, uterus and vagina piles asthma, leukoderma, dysentery, vomiting, urinary, discharges pain in the rectum. We found that the Bhils of Ratlam district use plant leaf powder in doses of 20g twice a day in chronic skin diseases. Plant extract used for glandular swelling of the neck. The antibacterial activity was calculated and the maximum diameter of the zones of inhibition was measured in *Escherichia coli* (14mm) and minimum diameter of the zones of inhibition in *Pseudomonas aruginosa* (7.66mm). The antifungal activity was observed and the maximum diameter of the zones of inhibition in *Fusarium Species* (12.66 mm), and the minimum diameter of the zones of inhibition in *Aspergillus*niger(10.66mm) were recorded.

Conclusion - This study illustrates the importance of traditional medicines in the treatment and management of human diseases and ailments in tribal people. Traditional medicines still play an important role in basic health care of local communities in Ratlam District (M.P).In conclusion, we can say that *Blumea membranacea* contains chemical constituents having antimicrobial activity. Traditional uses of this plant and suggest for further investigation and isolation of biologically active constituents responsible for the activity n–hexane extract of *Blumea membranacea* exhibited significant antibacterial and antifungal activity against*Escherichia coli*and*Staphylococcus aureus*as well as *Fusarium Species* and *Candida albicans*respectively. For protection and conservation of this species, we need to cultivate this wild verity and display the various medicinal importances.

References :-

1. Chatterjee A and Pakrashi SC. "The Treatise on Indian Medicinal Plants" Vol-5, PID, New Delhi, 1997:15.
2. Geda A, Bokadia MM, Antifungal activity of the essential oil of Blumea membranacea DC, indian drug Pharm Ind, 14: 21-22, (1979)
3. Kirtikar KR, Basu BD. Indian medicinal plants. In: Blatter E, Caius JF, Mhaskar KS, editors. 2nd ed. Vol-2. Allahabad India: Lalit Mohan Basu; 1981. pp. 1346-8.
4. Kirtikar KR and Basu BD. "Indian medicinal plants", Vol. 3, Singh B &Singh, M.P. Publishers, India, 1991: 2032.
5. Mehta SC, Vardhan H, Saxena SP,Some pharmacological actions of the essential oil of Blumea membranacea. Indian. physiol Pharmacol, 30: 149-54, (1986).
6. Wallis TE, Textbook of Pharamcognosy, 5th Edn, CBS Publishers and Distributors: Delhi; 1985, 252.
7. The Wealth of India (Raw Materials), Vol. V, CSIR, New Delhi, 1964:159.

1. Antibacterial and antifungal activity showsof*Blumea membranacea* leaf extract.

S.	Name of Becterial species	Diameter Zone of inhibition Mean(mm) ±	Name of Fungal Species	Diameter Zone of inhibitionMean(mm) ±
1.	*Staphylococcus aureus*	13.33	*Aspergillus niger*	10.66
2.	*Escherichia coli*	14.00	*Alterneria*	11.00
3.	*Pseudomonas aruginosa*	07.66	*Candida albicans*	11.33
4.	*Bacillus subtilis*	12.33	*Fusarium Species*	12.66
	Control plate of (*Streptomycin)*	14.33	Control plate of (Clotrimazole cream)	15.03

****

Geomorphology Of Vidisha Block, District Vidisha, M.P., India - Application Of Remotely Sensed Data

Trishna Somkuwar * Dr. R.S. Raghuwanshi **

Abstract - Vidisha Block is situated in the central part of Madhya Pradesh The area is represented by a variety of geological formations includes Vindhayan sedimentaries and Deccan trap Basalts. Different geomorphic units present in the study area have been identified and demarcated by using Satellite – IRS 1D, LISS III data on 1:50,000 scale. The synoptic view of satellite imagery facilitates better appreciation of geomorphology and helps in mapping of different landforms and their assemblage. The significant geomorphological units like Mesa, Buttes, Escarpments and Ridges etc. have been identified in the area under investigation.

Key – words - Geology, Landforms, Remote sensing, GIS.

Introduction - Vidisha Block is situated in the central part of Madhya Pradesh and covers an area of about 1066 sq. km. and falls on the Survey of India (SOI) toposheet numbers 55E/10, 55E/11, 55E/13, 55E/14, 55E/15, 55I/2 and 55I/3, between latitudes 23° 30' to 23° 45' North and the longitude 77° 30' to 78° 05' East. The advances in the satellite remote sensing techniques have truly revolutionized the geomorphological study of the earth's surface. The field observations indicate the presence of various geological formations associated with different structural features and landforms, which may be useful to trace the history of evolution and the geotectonic setting of the region. A good deal of literature is made available on various aspects of geomorphological applications by different wokers namely Thornbury (1964), Clarke (1966), Robinson (1968), Nautiyal (1994), Nag (2005), Lokesha, Gopalkrishna and Mahesh (2007), Bhagat and Verma (2006), Kumar and Kumar (2010), Preeja et al. (2011) and others.

Geology - The study area is a part of Vindhyan basin occupied by the rocks of Vindhyan Supergroup of Bhander, Rewa and Kaimur group of Late Proterozoic age and a small part is occupied by the rocks of Deccan traps of Cretaceous to Eocene volcanicity. Laterite occurs as isolated capping over the Deccan trap. It is brick red to yellow brown in colour, massive, bouldery and cavernous in nature. Small patches of laterite are present in the eastern part of the study area and major part is occupied by alluvium and soil.

Satellite Data Used - Remote Sensing data have been used for the generation of geomorphological map on 1:50,000 scale. Integration of GIS can serve as a useful tool for selecting and demarcating the groundwater potential zones. Satellite imagery IRS 1D, LISS III, No. of bands 4, Resolution 23.5 m, Swath 141 x 141 Km.

Geomorphology - Geomorphological studies are absolutely essential in various resource surveys like land, water, environment and for planning , development and utilization of renewable and non renewable resources. Geomorphology is a science of evolution of development of landforms resulting from erosional and depositional earth processes (Holmes, 1978). The evolution of land forms is a combined effect of climate, lithology and structural scenario of an area (Worocester, 1971). In early days, geomorphological mapping used to be carried out by conventional ground surveys using topographic maps. With the advancement of technology, the aerial photographs with stereocapability have been found advantageous in geomorphological studies. In recent past, satellite remote sensing provided better observation and more systematic analysis of various geomorphic units / landforms. Due to its synoptic view, multispectral nature and repetitive coverage, remote sensing has made it possible to map on various landforms commen- surate with their size and complexity besides understanding their dynamic changes.

The advances in the Satellite Remote sensing techniques have truly revolutionized the geomorphological study of the earth surface. The resource evaluation of the earth through the technique of remote sensing is primarily based on the quantitative and qualitative analysis of these landforms.

The geomorphic evolution of an area depends upon the factors like lithology, climate, hydrological, topographical and climatological characters of the area.

A variety of landforms have been identified by making use of various image interpretation elements like tone, texture, pattern, shape, size, shadow, association, land use, etc.,alongwith the other spectral, spatial and temporal signatures.

---

* Department of Geology, Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Department of Geology, Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

A detailed geomorphological map of the study area has been prepared by the visual interpretation of Satellite – IRS 1D, LISS III, No. of bands 4, Resolution 23.5m. on 1:50,000 scale followed by detailed field check, as shown in Fig.1 and Image interpretation characters of various geomorphic units of study area is tabulated in Table 1.

The landforms of the area can be broadly divided into three main categories which includes structural landform, denudational landform and depositional landform.

Table 1 & Fig. 1 (See in next page)

Conclusion - The geomorphological map portrays the forms of the surface, the nature and properties of the surface materials and indicate the kind and magnitude of the processes involved. Geomorphological mapping allows an improved understanding of watershed management, groundwater exploration, land use planning, landscape ecological planning etc. (Fairbridge, 1968). A detailed geomorphological map is one of the principal means of studying the morphology, genesis, distribution and age of forms, help to interpret the geomorphic history of any evolved landscape. The synoptic coverage and high precision of remotely sensed data, coupled with marked cost effectiveness and time efficiency of the data acquisition and analysis procedures have made satellite based geomorphological mapping an extremely effective tool for management of natural resources in recent times (Srinivasan, 1988). The study area is mainly covered by the rocks of Vindhyan Supergroup i.e. Sandstones and Shales and basaltic lava flows of Deccan Trap igneous activity. A very small percentage of the total area is constituted of the Laterite and Alluvium.

In the area under investigation a variety of landforms such as mesa, butte etc. has been observed. Basaltic terrain is occupied by mesas occur in western part near Pardi and Ghiriyakheda village, while butte occurs in the central part near Bhiyakheri and Jafarkhedi locality. Geomorphic units like cuesta, ridge, pediment, hill and escarpment have been reported in Vindhyans Sandstones of the study area. Units like pediplain, active flood plain, younger alluvial plain, valley fills etc. are the remarkable geomorphic units of Recent Alluvium in the area.

References:

1. Bhagat, S.N. and Verma, P.K. (2006) Relation between lineaments and tectonics in parts of Vindhyan basin, Madhya Pradesh, Photonirvachak, Jour. Indian Soc. Remote Sensing, vol.34, no.2, pp.203-207.
2. Clarke, J.I. (1966) Morphometry from maps, in Dury, G.H. (ed.), Essays in Geomorphology, Heinmann, London, pp.235-274.
3. Fairbridge and Rhodes, W. (1968) The Encyclopedia of Geomorphology, pp. 388-403.
4. Holmes, A. (1978) Principles of Physical Geology, IIIrd Ed. (Revised by Doris L, Holmes), Pub. E.L.B.S and Nelson, London.
5. Kumar, B. and Kumar, U. (2010) Integrated approach using RS & GIS techniques for mapping of groundwater prospects in Lower Sanjai Watershed, Jharkhand. International Jour. of Geomatics and Geosciences, vol. 1 (3), pp.587-598.
6. Lokesha, N., Gopalkrishna, G.S. and Mahesh, M.J. (2007) Hydrogeomorphological studies in Kallambella watershed, Tumkur district, Karnataka state, India Using Remote Sensing and GIS. Journal of the Indian Society of Remote Sensing, vol. 35 (1), pp. 107-115.
7. Nag, S.K. (2005) Application of lineament density and hydrogeomorphology to delineate groundwater potential zones of Baghmundi block in Purulia district, West Bengal. Photonirvachak, J. Indian Soc. Remote Sensing, vol. 33 (4), pp.521-529.
8. Nautiyal, M.D. (1994) Morphometric Analysis of a Drainage Basin Using Aerial photographs. A Case study of Khairkula Basin District Dehradun, U.P. Photonirvachak ,Journ. of Indian Soc. of Remote Sensing, vol. 22 (4), pp.251-262.
9. Preeja, K.R., Sabu,J., Jobin,T. and Vijith,H. (2011) Identification of groundwater potential zones of a Tropical River Basin (Kerala, India) using remote sensing and GIS techniques. Journal of the Indian Society of Remote Sensing, vol. 39(1), pp.83-94.
10. Robinson, G. (1968) A Consideration of relation of geomorphology and geography. Prof. Geographer, vol. 12 (2), pp. 5-15.
11. Srinivasan, P. (1988) Use of remote Sensing techniques for detail hydrogeomorphological investigations in part of Narmadasagar Command Area, M.P. , J. Indian Soc. Remote Sensing, vol. 16 (1), pp. 55-62.
12. Worocester, P.G. (1971) A Textbook of geomorphology. 2nd Ed, D.Van Nostrand Co. Inc. New York.

Table 1 - Image interpretation characters of various geomorphic units of the area

Geomorphic features	Tone	Lithostratigraphy	Structure	Description
Escarpment	Dark reddish brown	Associated with Vindhyans / Deccan trap	Straight or curvilinear escarpments which are identified as faults scarps	High- relief, straight or curvilinear with steep slopes. Escarpment identified as fault scarps.
Mesa/Butte	Light yellowish brown	Flat-topped lands of Deccan trap /Vindhyans.	Nearly circular but some times in elliptical,smaller in exent.	Moderate to high relief, isolated flat topped table lands.
Pediments	Dark brown	Composed of basalt/ sandstone.	Criss-crossed by fractures and lineaments	Low relief, broad, gently sloping, erosional surface covered with their black cotton soil.
Pediplain	Medium to dark grey,sometimes reddish due to cultivation	Composed of soils.	Flat land fractured and jointed.	Low to moderate relief
Alluvial plain and Flood plain	Bright red for cropland towhite /grey for fallow land and flood plain arepinkish coloured	Consist of gravel, clay, silt sand and clay of varying lithology.	Gently sloping tract produce by deposition of alluvium material	Low relief, alluvium composed of clay, silt,sand and boulder beds as, unconsolidated material over a flat gently undulating land surface and flood plain along the river
Residual hill	Light greyish to greenish	Relicts hills, represented by Vindhyan sandstone	Coarse texture, shape and size-irregular and rounded	High relief, relict hill which have undergone the process of denudation, act as runoff zone.
Ridge	Brown to dark	This unit represents Vindhyan sandstone.	Coarse texture, Shape linear, contiguous pattern.	High relief, acts as a barrier as well as carrier for groundwater flow represents areas of high runoff.

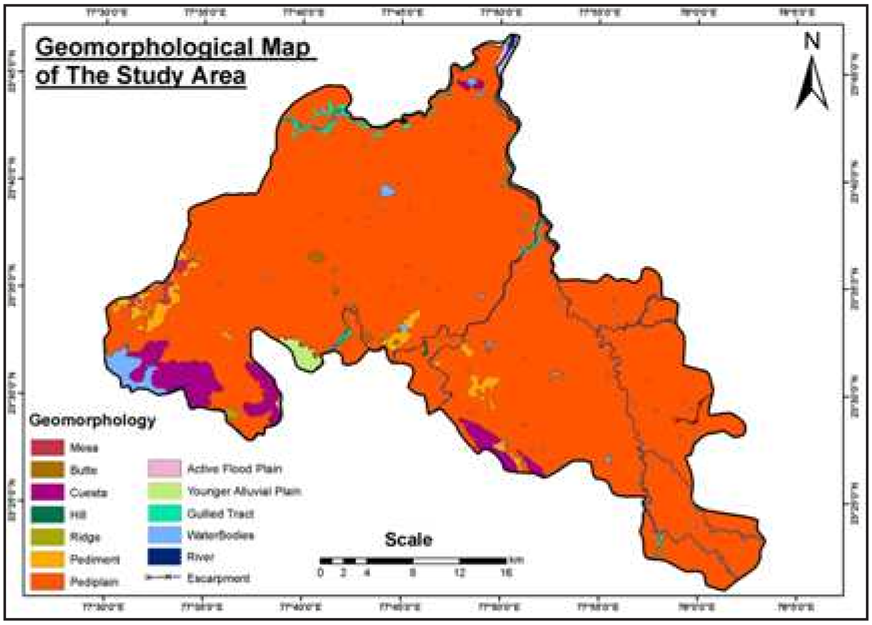

Fig. 1 Geomorphological map of the study area

Synthesis of natural product catharanthus roseus

Dr. Sushama Singh Majhi *

Abstract - Pharmacognosy provides the tools to identify select and process natural products destined for medicinal use. Usually, the natural product compound has some form of biological activity and that compound is known as the active principle - such a structure can act as a lead compound. Many of today's medicines are obtained directly from a natural source. On the other hand, some medicines are developed from a lead compound originally obtained from a natural source. This means the lead compound, Can be produced by total synthesis, or can be a starting point for a semi synthetic compound, or can act as a template for a structurally different total synthetic compound. This is because most biologically active natural product compounds are secondary metabolites with very complex structures. This has an advantage in that they are extremely novel compounds but this complexity also makes many lead compounds' synthesis difficult and the compound usually has to be extracted from its natural source - a slow, expensive and inefficient process. As a result, there is usually an advantage in designing simpler analogues.

Keyword- Natural products, Active principle, Natural source, Synthetic compound.

Introduction - Not all natural products can be fully synthesized and many natural products have very complex structures that are too difficult and expensive to synthesize on an industrial scale. These include drugs such as penicillin, morphine, and paclitaxel Such compounds can only be harvested from their natural source - a process which can be tedious, time consuming, and expensive, as well as being wasteful on the natural resource. For example, one yew tree would ham to be cut down to extract enough paclitaxel from its bark for a single dose. Furthermore, the number of structural analogues that can be obtained from harvesting is severely limited.

Synthesis - A further problem is that isolates often work differently than the original natural products which have synergies and may combine, say, antimicrobial compounds with compounds that stimulate various pathways of the immune system. Many higher plants contain novel metabolites with antimicrobial and antiviral properties. However, in the developed world almost all clinically used chemotherapeutics have been produced by in vitro chemical synthesis. Exceptions, like taxol and vincristine, were structurally complex metabolites that were difficult to synthesize in vitro. Many non-naturals, synthetic drugs because severe side effects that were not acceptable except as treatments of last resort for terminal diseases such as cancer. The metabolites discovered in medicinal plants may avoid the side effect of synthetic drugs, because they must accumulate within living cells. Semi synthetic procedures can sometimes get around these problems. This often involves harvesting a biosynthetic intermediate from the natural source, rather than the final compound itself. The intermediate could then be converted to the final product by conventional synthesis. This approach can have two advantages. First, the intermediate may be more easily extracted in higher yield than the final product itself second; it may allow the possibility of synthesizing analogues of the final product. The semi synthetic penicillin's are an illustration of this approach. Another recent example is that of paclitaxel. It is manufactured by extracting 10- deacetylbaccatin III from the needles of the yew tree, then carrying out a four-stage synthesis. For thousands of year, natural products have played an important role throughout the world in treating and preventing human diseases. Natural product medicines have come from various source materials including terrestrial plants, terrestrial microorganisms, marine organisms, and terrestrial vertebrates and invertebrates. The importance of natural products in modern medicine has been discussed in recent reviews and reports. The value of natural products in this regard can be assessed using 3 criteria. The rate of introduction of new chemical entities of wide structural diversity, including serving as templates for semi synthetic and total synthetic modification, the number of diseases treated or prevented by these substances, and their frequency of use in the treatment of disease.

An analysis of the origin of the drugs developed between 1981 and 2002 showed that natural products or natural product-derived drugs comprised 28% of all new chemical entities (NCEs) launched onto the market.? In addition, 24% of these NCEs were synthetic or natural mimic compounds, based on the study of pharmacophores related to natural products.[1] This combined percentage (52% of all NCEs) suggests that natural products are important sources for new drugs and are also good lead compounds suitable for further modification during drug development The large

---

* Assistant Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

proportion of natural products in drug discovery has stemmed from the diverse structures and the intricate carbon skeletons of natural products. Since secondary metabolites from natural sources have been elaborated within living systems, they are often perceived as showing more "drug-likeness and biological friendliness than totally synthetic molecules, making them good candidates for further drug development. Scrutiny of medical indications by source of compounds has demonstrated that natural products and related drugs are used to treat 87% of all categorized human diseases (48/55), including as antibacterial, anticancer, anticoagulant, ant parasitic, and immunosuppressant agents, among others. There was no introduction of any natural products or related drugs for 7 drug categories (anesthetic, antianginal, antihistamine, anxiolytic, cheater and antidote, diuretic, and hypnotic) during 1981 to 2002. In the case of antibacterial agents, natural products have made significant contributions as either direct treatments or templates for synthetic modification. Of the 90 drugs of that type that became commercially available in the United States or were approved worldwide from 1982 to 2002, -79% can be traced to a natural product origin. Frequency of use of natural products in the treatment and/or prevention of disease can be measured by the number and/or economic value of prescriptions, from which the extent of preference and/or effectiveness of drugs can be estimated indirectly. According to a study by Grifo and colleagues, 84 of a representative 150 prescription drugs in the United States fell into the category of natural products and related drugs. They were prescribed predominantly as anti allergy/pulmonary/respiratory agents, analgesics, cardiovascular drugs, and for infectious diseases. Another study found that natural products or related substances accounted for 40%, 24%, and 26%, respectively, of the top 35 worldwide ethical drug sales from 2000, 2001, and 2002 of these natural product based drugs, paclitaxel (ranked at 25 in 2000), a plant- derived anticancer drug, had sales of $1.6 billion in 2000. The sales of 2 categories of plant-derived cancer chemotherapeutic agents were responsible for approximately one third of the total anticancer drug sales worldwide, or just under $3 billion dollars in 2002; namely, the taxanes, paclitaxel and docetaxel, and the camptothecin derivatives, irinotecan and topotecan. This short review covers new drug derived from natural sources launched in the 6 year period from 2000 to 2005, and drug candidates from natural sources in clinical trials during the same time period arranged according to their origin (terrestrial plants, terrestrial microorganisms, marine organisms, and other natural sources). For drug candidates in clinical trials, only examples of new chemical templates of potential cancer chemotherapeutic drugs will be mentioned.

References :-

1. Butler MS. Natural products to drugs: natural products derived compounds in clinical trials. Nat Prod Rep. 2005;22:162-195. PubMed DOI: 10.1039/b402985m
2. Dewick PM. Medicinal Natural Products: A Biosynthetic Approach. 2nd ed. Chichester, UK: John Wiley & Sons; 2002.
3. Fabricant DS, Farnsworth NR. The value of plants used in traditional medicine for drug discovery. Environ Health Perspect. 2001; 109:69-75. PubMed.
4. Kinghom AD. The discovery of drugs from higher plants. In: Gullo VP, ed. The Discovery of Natural Products with Therapeutic Potential. Boston, MA: Butterworth-Heinemann; 1994:81108.
5. Deleu D. Hanssens Y, Northway MG. Subcutaneous apomorphine: an evidence-based review of its usein Parkinson's disease. Drugs Aging. 2004;21:687-709. PubMed DOI: 10.2165/00002512-200421110-00001
6. Koumis T, Samuel S. Tiotropium bromide: a new long-acting bronchodilator for the treatment of chronic obstructive pulmonary disease. Clin Ther. 2005; 27:377-392. PubMed DOI: 10.1016/j.clinthera. 2005.04.006
7. Hall MG, Wilks MF, Provan WM, Eksborg S, Lumholtz B. Pharmacokinetics and pharmacodynamics of NTBC [2- (2- nitro- 4- fluoromethyl – benzoyl) -1, 3-cyclohexanedione] and mesotrione, inhibitors of 4-hydroxyphenyl pyruvate dioxygenase (HPPD) following a single dose to healthy male volunteers. Br J Clin Pharmacol. 2001; 52:169-177. PubMed DOI: 10.1046/j.0306-5251.2001.01421.x
8. Mitchell G. Bartlett DW, Fraser TEM, et al. Mesotrione: a new selective herbicide for use in maize. Pest Manag Sci. 2001; 57:120-128. PubMed DOI: 10.1002/1526 4998(200102)57:2<120:: AID-PS254>3.0.00 2-E
9. Howes M-JR, Perry NSL, Houghton PJ. Plants with traditional uses and activities, relevant to the management of Alzheimer's disease and other cognitive disorders. Phytother Res. 2003;17:1-18. PubMed DOI: 10.1002/ptr.1280
10. Heinrich M, Teoh HL. Galanthamine from snowdrop—the development of a modem drug against Alzheimer's disease from local Caucasian knowledge. J Ethnopharmacol. 2004;92:147162. PubMed DOI: 10.1016/]

****

Micro- And Nanofabrication Techniques

Dr. Neeraj Dubey*

Introduction - Micro- and nanofabrication techniques have revolutionized the pharmaceutical and medical fields as they offer the possibility for highly reproducible mass-fabrication of systems with complex geometries and functionalities, including novel drug delivery systems and bionsensors. The principal micro- and nanofabrication techniques are described, including photolithography, soft lithography, film deposition, etching, bonding, molecular self assembly, electrically induced nanopatterning, rapid prototyping, and electron, X-ray, colloidal monolayer, and focused ion beam lithography. Application of these techniques for the fabrication of drug delivery and biosensing systems including injectable, implantable, transdermal, and mucoadhesive devices is described.

Micro fabrication techniques were developed for applications in the semiconductor industry and are, consequently, not specific for biological or medical applications. Nonetheless, both micro- and nanofabrication have offered a number of possibilities for the study of chemical, biological, & physical processes at the cellular and molecular scale, and for the design of synthetic devices capable of interacting with biological systems at these levels.

Some of the advantages of micro- and nanofabricated devices include the ability to control the features to the nanometer scale for reproducible mass production of structures and devices, the ability to miniaturize already-existing systems for the study of cellular or molecular processes, the capacity of including electronics within structural devices through the use of the well-developed semiconductor techniques, and the high throughput possible with some of the micro- and nanofabrication methods.

Micro fabrication techniques - A number of techniques are used for the fabrication of micron-scale devices. Some of these techniques have been adopted from the well-established field of semiconductors, but others have been specifically developed for micro fabrication. The micro fabrication process utilizes these techniques in a sequential manner to produce the desired structure.These structures can be built within the bulk of a sub strate material in what is known as bulk micromachining, or on the surface of the substrate through surface micromachining. In most cases, however, a combination of bulk & surface micromachining is utilized in the fabrication of the desired sys tem.

The most important micro fabrication techniques are photolithography, soft lithography, film deposition, etching, and bonding. Photolithography is used to transfer a user-generated shape onto a material through the selective exposure of a light sensitive polymer. Soft lithography encompasses three different techniques which are all based on the generation and utilization of the mold of a microstructure out of poly. Film deposition, as its name suggest, consists of the formation of micron-thick films on the surface of a substrate. Etching selectively removes materials from the surface of the micro device by either chemical or physical processes. Finally, bonding adheres substrates together with or without the use of intermediary layers.

Photolithography - Photolithography is one of the most readily employed micro fabrication techniques and is used to create patterns into a material. The photolithographic technique has been reviewed thoroughly previously. The photolithographic process consists of a number of steps in which a desired pattern is generated on the surface of a substrate through exposure of regions of a light-sensitive material to ultraviolet (UV) light.

In the first step, a substrate material, such as silicone or glass, is coated with a layer of a photo resist, or light-sensitive polymer. A photo mask, made by patterning with an opaque material the desired shape on a glass dish or other transparent material, is placed on top of the substrate and photoresist. This assembly is then irradiated with UV light, thus exposing the sections of the photoresist not covered by the opaque regions of the photo mask. Depending on the type of photo resist utilized, the photo resist polymer will undergo one of two possible transformations upon exposure to light. When light illuminates a positive photo resist, the exposed regions break down and become more soluble in a developing solution. As a result, the exposed photoresist can be removed when in contact with the developing solution. A negative photoresist, on the other hand, becomes cross linked upon exposure to light, thus becoming insoluble in the developing solution. Consequently, upon contact with the developing solution, only the parts not exposed to light will be removed.

The resulting photoresist patterns are then used to protect the covered substrate from etching, or from the deposition of compounds or biomolecules on its surface. After the desired process is completed, the photoresist can be removed, leaving the pattern design on the substrate. The technique used for photoresist removal usually consists of sonication in an organic solvent, and may consequently be undesirable for a number of systems, specially those containing biological molecules. As an alternative, water-soluble photoresists have been developed; however, concerns about the efficiency of water-soluble photoresist removal have been reported.

One of the most commonly used photoresist is SU-8, originally developed by IBM, and currently marketed by MicroChem Corporation, and SOTEC Microsystems. This

---

*Professor & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce P.G. College, Sagar (M.P.) INDIA

negative photo-resist is crosslinked upon exposure of near UV energy in the range of 350 to 400 nm, and can be developed with a number of substances including propyleneglycol monoether acetate, ethyl acetate and diacetone alcohol. One of the main advantages of SU-8 is that it permits generation of tall structures, of more than 1000 ìm in height.

Photolithography has reached wide acceptance in the field of microfabrication because of the high resolution and variety of pattern attributes that are possible to obtain, both of which depend on the characteristics of the photomask. Nonetheless, this technique has the limitation of requiring clean room processing.

Nanofabrication techniques - Nanofabrication utilizes principles similar to those of microfabrication for the generation of patterns or devices at the nanoscale level, ie, of sizes ranging from 1 to 100 nm. Some authors consider sizes of up to 1000 nm to be within the realm of nanostructures. Various microfabrication techniques have been utilized to achieve features within this range. Soft lithographic techniques, for example, have been employed for the production of features with a resolution of less than 200 nm through the use of materials stiffer than PDMS for the fabrication of the stamp. Features of less than 40 nm have been produced with conventional photolithography utilizing light of 193-nm wavelength.

Micro- and nanofabrication techniques have enabled the scientific and medical community to expand the applications of already-existing devices through miniaturization, and to create completely new devices with use of the increased control of size, morphology, topology, and functionality offered by these techniques. These novel micro- and nanodevices have been able to contribute immensely to the fields of cell biology, molecular biotechnology, and medicine. It is now possible to study the interactions of biomaterials with biological systems at the cellular and molecular scale, and to design new synthetic systems that are able to alter physiological responses by capitalizing on these findings. Applications of micro and nanodevices in the medical and pharmaceutical field are the focus of this section.

Drug delivery devices - Micro- and nanofabrication techniques offer a range of possibilities for the preparation of peptide, protein, drug, or gene delivery devices. The ability to control the size, architecture, topography, and functionality of drug delivery vehicles could result in the fabrication of systems that behave in highly predictable manner both in vitro and in vivo, thus surpassing the capabilities of current drug delivery systems.

Injectable micro- and nanodevices - The fabrication of injectable self-assembled micro reservoirs for controlled drug delivery was recently reported .The design of these micro reservoirs consists of metallic cylindrical containers within which the drug was loaded. The metallic cylinders, made of biocompatible metals such as titanium or gold, were capped with degradable or non-degradable temperature sensitive polymeric membranes on both ends. These membranes could either degrade or become more permeable at high temperatures. Drug release could then be controlled externally through the application of electromagnetic radiation at the site of pathology. Therapeutic effect was a result of the synergistic combination of drug delivery at the site of pathology, and heating of the metallic walls of the micro reservoirs above viable temperatures upon application of the electromagnetic radiation. Microfabrication of this system is achieved through deposition of two metal layers onto a flat silicon substrate and sacrificial layer by thermal evaporation deposition. Drugs are immobilized onto the exposed metallic surface either chemically or physically. Photolithography and wet etching techniques are then employed to form a large number of independent squared elements. Upon etching of the sacrificial layer between the silicon substrate and the metal layers, the internal stress on the metal causes it to roll into cylindrical configuration. Cylinders as small as 1.5 microns in diameter and 5 microns in length, with walls of tens of nm in thickness were reported.

Multilayered nanoparticles prepared by atom-by-atom or layer-by-layer self assembly for the delivery of drugs or genes have been developed. These systems offer the possibility to combine multiple sequential functional layers that guide the particles through the drug delivery process one layer at a time. For example, sequential layers can be loaded with targeting molecules, membrane entrance molecules, intracellular targeting molecules, and active agents such as drugs and genes for targeted intracellular delivery.

Adaptation of micro- and nanofabrication techniques derived from the semiconductor industry has led to the creation of novel devices for use in the medical and pharmaceutical fields. These systems promise to offer improved characteristics including enhanced control of feature geometry, size and complexity, feasible mass production, portability, and miniaturization. In addition, because these techniques enable the production of devices at the cellular and sub-cellular levels, they open the doors to the creation of new strategies for the study and manipulation of molecules, cells, and tissues, thus providing new avenues for the investigation of pathological mechanisms and novel treatment options. This paper describes some of the main micro- and nanofabrication techniques that have been published in the literature and examples of how these techniques have revolutionized the fields of drug delivery and diagnostics.

References :-

1. Andersson H, van den Berg A. Microfabrication and microfluidics for tissue engineering: state of the art and future opportunities. Lab on a Chip. 2004; 4:98–103.
2. Becker H, Gärtner C. Polymer microfabrication methods for microfluidic analytical applications. Electrophoresis. 2000; 21:12–26.
3. Chabri F, Bouris K, Jones T, et al. Microfabricated silicon microneedles for nonviral cutaneous gene delivery. Br J Dermatol. 2004; 150:869–77.
4. Gates BD, Xu Q, Stewart M, et al. New approaches to nanofabrication: molding, printing and other techniques. Chem Rev. 2005; 105:1171–96.
5. Lu Y, Chen S. Micro and nano-fabrication of biodegradable polymers for drug delivery. Adv Drug Del Rev. 2004; 56:1621–33.
6. Pizzi M, De Martiis O, Grasso V. Fabrication of self assembled micro reservoirs for controlled drug release. Biomed Microdevices. 2004; 6:155–8.

Rain Water Harvesting- A Water Conservation Technique

Dr. Sadhna Goyal *

Introduction - Water is an essential natural resource for sustaining life and environment. The available water resources are under tremendous pressure due to the increased demands and time is not for when water, which we have always thought to be available in abundance and free gift of nature, will become a scare commodity. Conservation and prevention of water resources are urgently required to be done. Water management has always been practiced in our communities since ancient times but today this has to be done on priority basis. The ministry of water resources in India is endeavoring to make rain water harvesting a part of every day life in our villages and cities as a peoples movement and this will go to a long way in the management of ground water as a sustainable resources.Over exploitation or excessive pumping ither locally or over large areas to meet increasing water demands. Miss use of ancient means of water conservation like ponds, tanks. Drying up of the wells, deteoration in ground water quality, ingress of sea water in coastal area.

Central ground water board implemented the first water harvesting and Recharge project in 1976 in Haryana. The number of wells and bore wells for irrigation in the country has increased. More than 80%of rural and50% of urban industrial and irrigation water requirements in the country are made from groundwater. In Madhya Pradesh more than thousands check dams, 1050 tanks and 110 community life irrigation schemes have been implemented.The result drought proofing achieved and food production increased by 38% in the past 5 years.Rain water harvestingessentially means collecting rain water on the roof of building and storing it under ground for later use not only rain water harvesting increases water availability it also checks the declining water table. Every drop of water has tobe saved and this will ensure water isnot wasted. Rain water harvesting is not only simple but economical too. Theprocess of rain water harvesting is environmental friendly, helps improve ground water quality, helps meet increasing demand for water, particularly in urban areas andprevent flooding of roads.Proposed policy measures- At least one roof top rain water harvesting structure for every 200 square meter plot in urban areas, revive all village ponds and ban construction of irrigation wells. The action plan- National and state level water harvesting perspective plans, harvest and recharge city storm water in towns, provide rural drinking water and recycle secondary treated waste water.

The method and technique include :

1. Roof top rain water harvesting and its recharge to under ground through existing wells.
2. Harvesting run off in the catchments by constructing structure.
3. Impounding surplus run off in the village catchments and water sheds in village ponds.
4. Recharging treated urban and industrial effluents under ground by using it for direct irrigation.

Objectives of rain water harvesting :

1. To restore suppliesform the aquifers depleted due to over exploitation.
2. Tostore excesswater for use at subsequent times.
3. To improve physical and chemical quality of ground water.
4. To reduce storm water run off and soil erosion.
5. Toprevent salinity ingraced in coastal areas.
6. To recycle urban and industrial waste waters
7. To convert the traditional water harvesting structures into ground water recharge facilitieswith minor scientific modifications and redesigning.

The expected advantages of rain water harvesting are :

1. Rise in ground waterlevels
2. Increase availability of waterfrom wells
3. To prevent decline in water levels
4. Reduction in water hazards and soil erosion
5. Improvement in water quality
6. Arresting sea water ingress
7. Upgrading the social and environment status

Rainwater harvesting is the accumulation and deposition of rainwater for reuse on-site, rather than allowing it to run off.Rainwater can be collected from rivers or roofs, and in many places the water collected is redirected to a deep pit (well, shaft, or borehole), a reservoir with percolation, or collected from dew or fog with nets or other tools. Its uses include water for gardens, livestock, irrigation, domestic use with proper treatment, & indoor heating for houses etc. The harvested water can also be used as drinking water, longer-term storage & for other purposes such as groundwater recharge.

Conclusion - It is better to care for ground water before it becomes rare.

References :-

1. “Believes in past, lives in future”. The Hindu. India. 17 July 2010.
2. ”Rainwater Harvesting - Controls in the Cloud”. *SmartPlanet*. Retrieved11 January 2015.
3. B.K. Sharma environmantal chemistry 2001
4. “Rainwater tanks”. Greater Wellington Regional Council. 28 April 2016. Retrieved 31 August 2016

***Professor (Chemistry) Govt. M.V.M.,Bhopal (M.P.) INDIA**

गिद्ध पक्षी के विलुप्त होने के कारण श्वानों (कुत्तों) की संख्या में वृद्धि हो रही है एवं व्यवहार में भी परिवर्तन हो रहा है

डॉ. कृष्ण कुमार यादव *

प्रस्तावना – प्रकृति के इस चक्र में साफ – सफाई का काम करने वाले गिद्धों की संख्या पिछले एक दशक में एकाएक घट गई है। गिद्ध लगभग सम्पूर्ण दक्षिण एशिया से विलुप्त हो रहे है। आज गिद्ध पक्षी की 97 प्रतिशत आबादी विलुप्त हो चुकी है। और जो बची है वह भी आत्यधिक तेजी से समाप्त हो रही है।

सड़ते हुये जानवरों को कई दिनों तक सड़ते हुऐ देखना अब क्षेत्र में आम बात हो गई है जिससे कुत्तों की संख्या बढ़ रही है, जिससे क्षेत्र में रेबीज, एनथ्रेक्स व कालरा जैसी संक्रामक बीमारियाँ बढ़ रही है।

सम्पूर्ण विश्व में रेबीज के कारण होने वली मौतों में भारत में सबसे ज्यादा मौतें होती है, इसके साथ–साथ मृत पशुओं के शव संक्रामक रोग एनथ्रेक्स फैलने का एक प्रमुख स्त्रोत है **(जार्ज 1994, जॉन 1996 विजेन्द्र कुमार 2002)**। गिद्धों की कम होती संख्या से श्वानों को भरपूर भोजन उपलब्ध हो रहा है। जिसके कारण उनकी संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है और उनका व्यवहार भी हिंसक होता जा रहा है। जिसके कारण श्वानों के काटने की घटना में वृद्धि हो रही है, जिससे मनुष्यों में रेबीज नामक संक्रामक रोग होने का खतरा भी बढ़ रहा है। इस कारण स्थान विशेष की जन्म व मृत्यु दर भी प्रभावित होती है।(Prkash–2003)। भारत में आऐ दिन प्रमुख समाचार पत्रों में श्वानों के काटने के समाचार प्रमुखता के साथ प्रकाशित हो रहे है। **(दैनिक नई दुनिया, 27 नवंबर 2011, 8 जून 2003,)** सम्पूर्ण विश्व में सबसे ज्यादा रेबीज व श्वानों के काटने की घटनाऐं भारत में ही होती है। **(APCRI,2004)**इसके अलावा संक्रामक रोग भी बढ़ते है। गिद्ध पक्षी मृत पशुओं के शवों को खाकर उनके संक्रमण से होने वाले रोग Brucellosis and Brucellaजो कि पशुओं के संपर्क में आने व उनका मांस भक्षण करने के कारण होती है एवं इनके कारण मनुष्य के शरीर का आंतरिक तंत्र प्रभावित होता है को रोकते है। (T.B.)और एनथ्रेक्स जैसी संक्रामक बीमारियों का संचार भी मानवों में गिद्धों के न होने से बढ़ रहा है। (Sawant et 2006)

अध्ययन क्षेत्र – यह अध्ययन मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र में किया गया जिसे भारत वर्ष के मध्य जिसे भारत का हृदय भी कहा जाता है में 210 56' से 250 6'25' उत्तरी अक्षांश व 740 30' से 780 30' पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है। इसका क्षेत्रफल 9311.20 वर्ग कि.मी. है तथा जनसंख्या लगभग 1.96 करोड़ हैं। इसकी लंबाई 530 कि.मी. व चौड़ाई 390 कि. मी. है। कर्क रेखा लगभग इसके मध्य से होकर गुजरती है यह म.प्र. के 4 संभागों के 15 जिलों व 105 तहसीलें समाहित किये हुऐ है। **(चित्र देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

उद्देश्य –

- गिद्ध पक्षी के समाप्त होने के कारण होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करना।
- अध्ययन क्षेत्र में श्वानों (कुत्तों) में हो रहे संख्यात्मक परिर्वनों का अध्ययन करना।
- श्वानों (कुत्तों) के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन व उसके मानव समुदाय पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

विधि तंत्र – प्रस्तावित शोध विलुप्त होते गिद्धों का भौगौलिक विश्लेषण के अंतर्गत प्रमुख विषय के पर्यावरणीय, सामाजिक, आर्थिक विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी, संरक्षण, वनस्पतिय आदि एवं उससे जुड़े पक्षों को समाहित करने के लिये परम्परागत शोध प्रविधियों का उपयोग आवश्यकता अनुसार किया गया चूंकि सम्पूर्ण मालवा क्षेत्र में गिद्धों का पतन हो चुका है एवं इनकी उपस्थिति सिर्फ कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है। विस्तृत रूप से अध्ययन क्षेत्र में आने वाले 15 16 जिले में सर्वे कार्य व भ्रमण कार्य किया गया। जिसमें ग्रामिण व शहरी समुह, मृत पशुओं को फैंकने के स्थानों, बूचड़खाने, कत्लखाने, व गिद्ध पक्षी के पूर्व आवास वाले स्थलों का भ्रमण किया गया व उनके समीपवर्ती क्षेत्रों में मानवीय बसाहटों में प्रश्नोउत्तरी, के माध्यम से जानकारी एकत्र कि गई तत्पश्चात् गिद्धों के आवासों वाले क्षेत्रों श्वानों की संख्यात्मक आंकड़ो का सकंलन कर उनका अध्ययन किया गया है।

श्वानों की संख्या में वृद्धि व उनके व्यवहार में परिवर्तन आ रहा है

सम्पूर्ण म.प्र. में वर्ष 1997 में श्वानों की संख्या 11,21,247 थी। जो बढ़कर वर्ष 2003 में 15,22,848 हो गई अर्थात 6 वर्षो में श्वान 35.80 %की दर से बढ़े। अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीणों से लिये गये साक्षात्कार व एकत्र किये गये आकड़ों से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में विगत कुछ वर्षो में गिद्धों की कम होती संख्या के कारण अन्य मांस भक्षकों जिनमें श्वान प्रमुख है कि संख्या विगत वर्षो में आश्चर्यजनक रूप से बढ़ी है। जिसका कारण ग्रामीणों के अनुसार श्वानों को भोजन सहज, सरल, व अत्यधिक मात्रा में आसानी से उपलब्ध होना है। क्योंकि मृत पशुओं को खाने वाले गिद्ध अब तेजी से विलुप्त होते जा रहे है, श्वानों की संख्या में वृद्धि के कारण उनके व्यवहार में भी परिवर्तन हो रहा है वे अब पहले से ज्यादा हिंसक हो गये है और भोजन की पूर्ती न होने पर ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में वे पालतू पशुओं व मनुष्यों को काटकर अपना शिकार बना रहे जिससें कुत्तों के काटने के प्रकरणों में वृद्धि हो रही है, विशेषकर मनुष्यों व पालतू पशुओं के नवजात शिशुओं को अकेला पाकर श्वान अपना शिकार बनाते है।इस तथ्य की प्रमाणिकता के लिये गिद्ध पक्षियों के आवास के निकट चयनित ग्रामों में श्वानों (कुत्तों) की संख्या के लिये द्वितीय स्तर के आंकड़ों को 3 वर्षो तक एकत्र कर उनका विश्लेषण

---

* रिसर्च ऐसोसिएट, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद, भोपाल (म.प्र.) भारत

किया गया जिन्हे यहाँ तालिकाबद्ध किया गया है।

आरेख के आंकड़ों से इस तथ्य की स्पष्ट तौर पर पुष्टि होती है कि मालवा क्षेत्र में श्वानों की संख्या में बेहताशा वृद्धि हो रही है,वर्ष 2003 में इनकी जनसंख्या 1,02,503 थी, जो 2007 में 66 प्रतिशत बढ़कर 1,54,920 हो गई वर्ष 2012 के लिये यह जनसंख्या लगभग 1,92,756 प्रक्षेपित की गई है। सम्पूर्ण मालवा में धार जिला सबसे अधिक श्वानों की संख्या धारित करने वाला जिला है, जबकि मन्दसौर व गुना जिले द्वितीय व तृतीय स्थान पर आते है। सबसे कम श्वानों की संख्या वाले जिलों में रायसेन, इन्दौर, नीमच, सीहोर, सम्मिलित है।

मालवा क्षेत्र – श्वानों के काटने की संख्या व मनुष्यों की मृत्युकी संख्या (2005–2011)**(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता है कि मालवा क्षेत्र के विभिन्न जिलों में श्वानों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है। जिसके कारण भोपाल जिले में वर्ष 2005 में 4 व वर्ष 2011 में 5 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई जबकि यहां श्वानों के द्वारा वर्ष 2005 में 950 तथा वर्ष 2011 में 2419 को काटा गया, इसी प्रकार विदिशा जिले में वर्ष 2005 में 3 व वर्ष 2011 में 4 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई जबकि यहां श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 260 व वर्ष 2011 में 620 लोगों को काटा गया, रायसेन जिले में वर्ष 2005 में एक भी व्यक्ति की मृत्यु नहीं हुई जबकि वर्ष 2011 में 2 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई जबकि यहाँ श्वानों के द्वारा वर्ष 2005 में 220 व वर्ष 2011 में 570 व्यक्तियों को काटा गया, देवास जिले में वर्ष 2005 में 1, वर्ष 2011 में 2 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 520 व वर्ष 2011 में 1320 लोगों को काटा गया, गुना जिले में वर्ष 2005 में 2 वर्ष 2011 में 3 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 480 थी व वर्ष 2011 में 1320 लोगों को काटा गया, राजगढ़ जिले में वर्ष 2005 में 1, वर्ष 2011 में 2 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई। जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 920 व वर्ष 2011 में 1165 लोगों को काटा गया, शाजापुर जिले में वर्ष 2005 में 0, वर्ष 2011 में 1 व्यक्ति की मृत्यु श्वान के काटने के कारण हुई। जबकि यहां श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 745 व वर्ष 2011 में 1320 लोगों को काटा गया, सीहोर जिले में वर्ष 2005 व वर्ष 2011 में 1 भी व्यक्ति की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण नहीं हुई। जबकी यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 217 व वर्ष 2011 में 840 लोगों को काटा गया, उज्जैन जिले में वर्ष 2005 में 4, वर्ष 2011 में 4 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई। जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 1850 थी व वर्ष 2011 में 2489 लोगों को काटा गया, रतलाम जिले में वर्ष 2005 में 2, वर्ष 2011 में 4 व्यक्तियों की मृत्यु श्वान के काटने के कारण हुई जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 331 व वर्ष 2011 में 675 लोगों को काटा गया, मन्दसौर जिले में वर्ष 2005 में 1, वर्ष 2011 में 4 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई। जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 1720 व वर्ष 2011 में 2580 लोगों को काटा गया, नीमच जिले में वर्ष 2005 में 2, वर्ष 2011 में 3 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 720 व वर्ष 2011 में 1430 लोगों को काटा गया, धार जिले में वर्ष 2005 में 4, वर्ष 2011 में 5 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई। जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 1530 थी व वर्ष 2011 में 2720 लोगों को काटा गया, झाबुआ जिले में वर्ष 2005 में 3, वर्ष 2011 में 4 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई। जबकि यहां श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 745 व वर्ष 2011 में 1321 लोगों को काटा गया, इन्दौर जिले में वर्ष 2005 में 4, वर्ष 2011 में 4 व्यक्तियों की मृत्यु श्वानों के काटने के कारण हुई। जबकि यहाँ श्वानों द्वारा वर्ष 2005 में 490 थी व वर्ष 2011 में 950 लोगों को काटा गया, इस प्रकार सम्पूर्ण मालवा क्षेत्र में वर्ष 2005 में 11698 व्यक्तियों को श्वानों द्वारा काटा गया जिसमें से 31 की व वर्ष 2011 में 22649 में से 47 की मृत्यु हुई।

निर्ष्कष– अध्ययन क्षेत्र में वर्ष 2005 में 11968 व्यक्तियों को कुत्तों ने काटा जिसमें से 31 की मृत्यु हो गई थी। जबकी 2011 में 22649 व्यक्तियों को कुत्तों ने काटा जिसमें से 47 लोगों की मृत्यु हुई।

मालवा क्षेत्र में श्वानों की संख्या में बेहताशा वृद्धि हो रही है,वर्ष 2003 में इनकी जनसंख्या 1,02,503 थी, जो 2007 में 66 प्रतिशत बढ़कर 1,54,920 हो गई वर्ष 2012 के लिये यह जनसंख्या लगभग **1,92,756** प्रक्षेपित की गई है। सम्पूर्ण मालवा में धार जिला सबसे अधिक श्वानों की संख्या धारित करने वाला जिला है, जबकी मन्दसौर व गुना जिले द्वितीय व तृतीय स्थान पर आते है। सबसे कम श्वानों की संख्या वाले जिलों में रायसेन, इन्दौर, नीमच, सीहोर, सम्मिलित है।

सम्पूर्ण म.प्र. में वर्ष 1997 में श्वानों की संख्या 11,21,247 थी, जो बढ़कर वर्ष 2003 में 15,22,848 हो गई अर्थात 6 वर्षो में श्वान 35.80 %की दर से बढ़े। अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीणों से लिये गये साक्षात्कार व एकत्र किये गये आकड़ों से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में विगत कुछ वर्षो में गिद्धों की कम होती संख्या के कारण अन्य मांस भक्षकों जिनमें श्वान प्रमुख है कि संख्या विगत वर्षो में आश्चर्यजनक रूप से बढ़ी है जिसका कारण ग्रामीणों के अनुसार श्वानों को भोजन सहज, सरल, व अत्यधिक मात्रा में आसानी से उपलब्ध होना है। क्योंकि मृत पशुओं को खाने वाले गिद्ध अब तेजी से विलुप्त होते जा रहे है, श्वानों की संख्या में वृद्धि के कारण उनके व्यवहार में भी परिवर्तन हो रहा है वे अब पहले से ज्यादा हिंसक हो गये है और ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में वे पालतू पशुओं व मनुष्यों को काटकर अपना शिकार बना रहे जिससें कुत्तों के काटने के प्रकरणों में वृद्धि हो रही है, विशेषकर मनुष्यों व पालतू पशुओं के नवजात शिशुओं को अकेला पाकर श्वान अपना शिकार बनाते है।

कुंजी शब्द –श्वान (कुत्ता), बोर्ट लिमन, टॉकसिन बोट्रलिम्स गेस्ट्रोइन ,टैक्सटाइन, नर्वस डिस आर्डर , रेबीज, एनथ्रेक्स, बूचड़खाने, कत्लखाने, (T.B.)कालरा

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. www.wikipedia.Org/wiki/ redhooded, vulture.
2. wwww.pereginefund.org
3. www.arkive.org/ species
4. दैनिक नईदुनिया, 27 नवम्बर 2011 व 8 जून 3003.
5. APCRI: 2004 (Association for Prevention and control of Rabies in India. Assessing burdan of rabies in India: Report of the natioan multi centric survey, may2004, Banglore India.
6. Ministry of Agriculture (2003), 17th livestock census . www.dhd.nic.in
7. Alter (2000), Ruxton and Houston (2004).

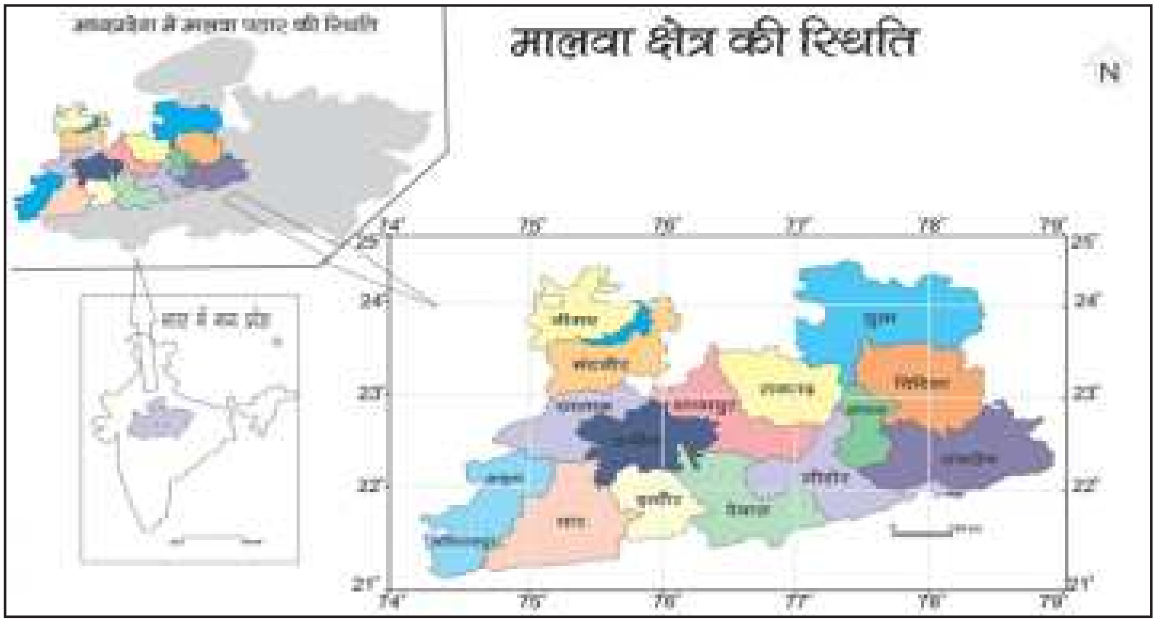

मालवा क्षेत्र : श्वानों के काटने संख्या व मनुष्यों की मृत्यु की संख्या (2005–2011)

क्र.	जिला	मृतकों की संख्या व वर्ष			
		2005	मृतकों की संख्या	2011	मृतकों की संख्या
1.	भोपाल	950	4	2419	5
2	विदिशा	260	3	620	4
3.	रायसेन	220	0	570	2
4.	देवास	520	1	1230	2
5.	गना	480	2	1320	3
6.	राजगढ	920	1	1165	2
7.	शाजापर	745	0	1320	1
8.	सीहोर	217	0	840	0
9.	उज्जैन	1850	4	2489	4
10.	रतलाम	331	2	675	4
11.	मन्दसौर	1720	1	2580	4
12.	नीमच	720	2	1430	3
13.	धार	1530	4	2720	5
14.	झाबुआ	745	3	1321	4
15.	इन्दौर	490	4	1950	4
16.	कुल	11968	31	22649	47

स्त्रात: म.प्र. स्वास्थ्य सांख्यिकीय विभाग का प्रकाशन (2005–2011)

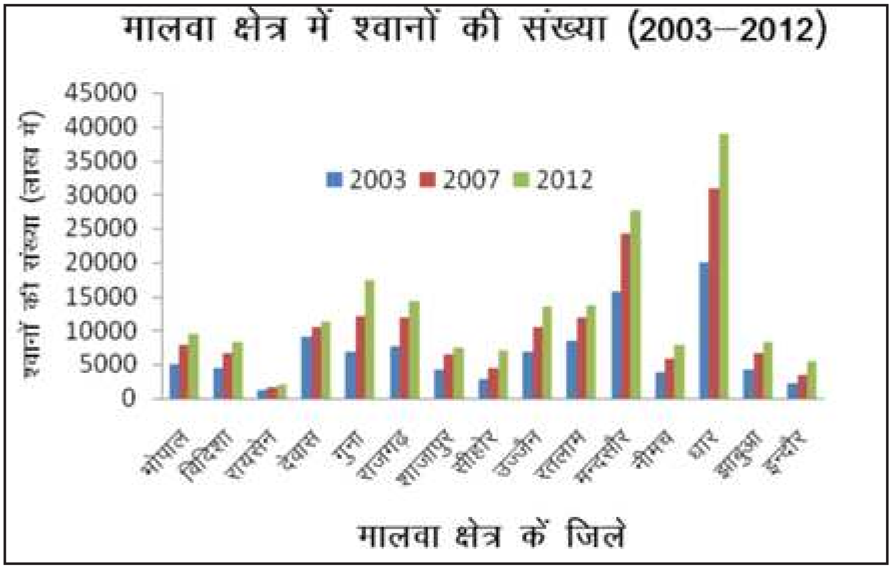
मालवा क्षेत्र में श्वानों की संख्या (2003–2012)

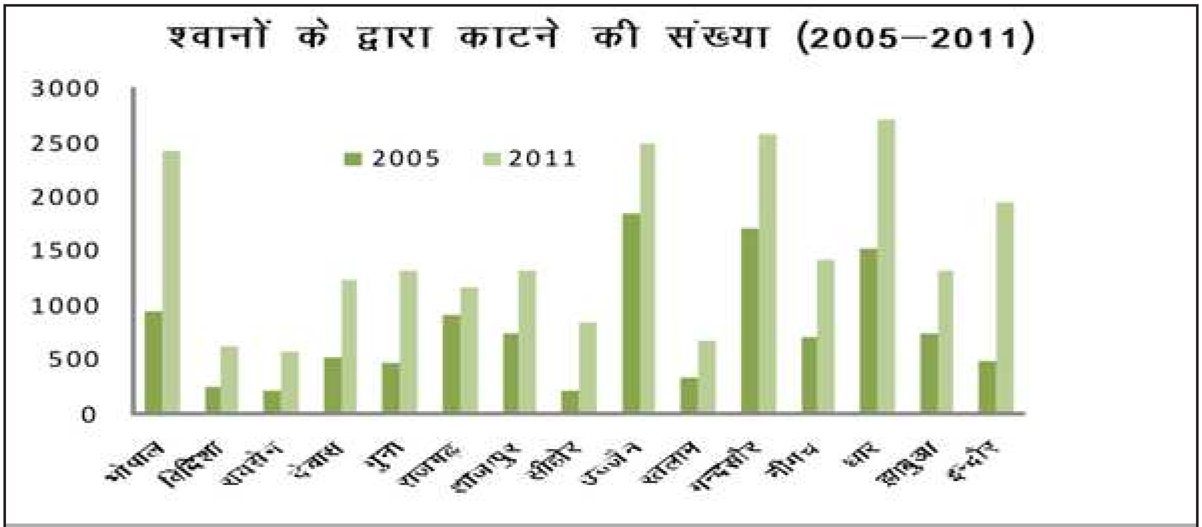
श्वानों के द्वारा काटने की संख्या (2005–2011)

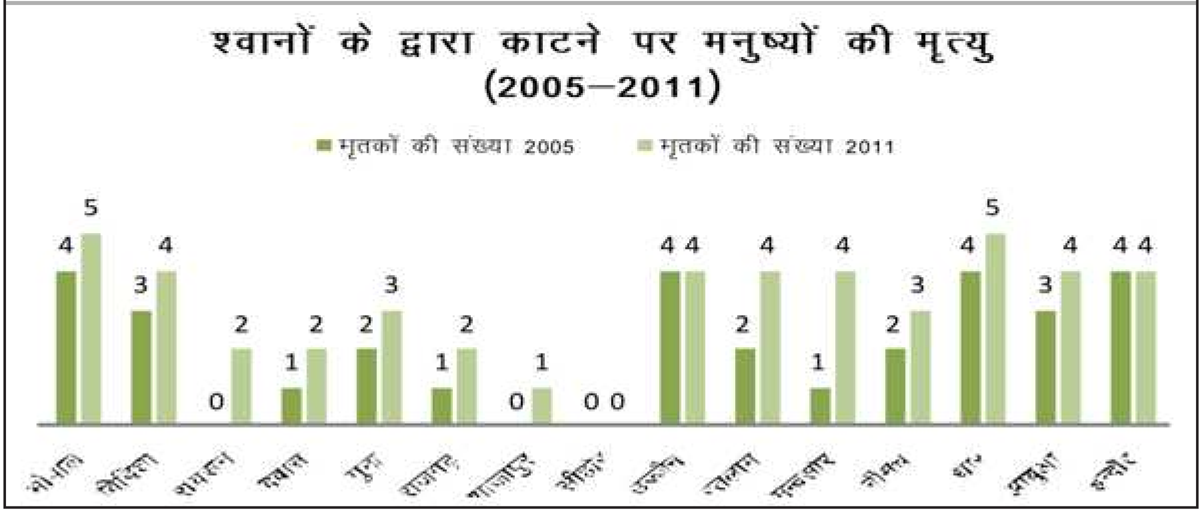
श्वानों के द्वारा काटने पर मनुष्यों की मृत्यु (2005–2011)

****

स्वास्थ्य पर कहर - खानपान का धीमा जहर

डॉ. साधना जैन *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध आलेख में खान–पान से होने वाले स्वास्थ्य संकट के विभिन्न कारकों, कारणों, उपाय व सुझावों का वर्णन है। कैसे धीरे–धीरे खतरनाक, जहरीले, रसायन और अखाद्य पदार्थ हमारे जीवन पर कब्जा करते जा रहे है और हमारी खाद्य श्रंखला को प्रभावित कर रहे हैं, यह सब किसके लालच का परिणाम है ? यह जानना जरूरी है, क्योंकि इस पूरी प्रक्रिया की मानवीय और आर्थिक कीमत बहुत भयानक और डरावनी होने वाली है, इस लिए समय रहते चेतना जरूरी है

प्रस्तावना – बीत गया वो जमाना जब नल का पानी शुद्ध और पीने के लायक होता था, सुबह नीद खुलते ही जिस चाय या कॉफी से एक नये दिन की शुरूआत होती थी उससे हमे कोई आशंका नहीं थी। हमारी थालियो में परौसे जाने वाली सब्जियॉ तथा अन्य खाद्य पदार्थ परीक्षण के पैमाने पर सही हैं या नहीं इसके लिए दिमाग नही खपाना पड़ता था। जलवायु के बदलाव, औद्योगिक प्रदूषण, जलग्रहण क्षेत्रों और तालाबों और जलाशयों में कमी, मिलावट, आधुनिक लाईफ स्टाइल के कारण खानपान की गुणवत्ता दिनो–दिन घटती जा रही है। हो सकता है जिस कॉफी से आप दिन की शुरूआत कर रहे है, उसमें मिट्टी स्टार्च मिला हो, चाय में कृत्रिम रंग या कोलतार हो, **सेव का रस –** इसमें पेटुलिन नाम का फंगस हो सकता है। एक गिलास **ठंडा दूध –** इसमें एंटीबायोटिक जेंटामायसिन या कीटनाशक बोरिक एसिड या कोई प्रिजर्वेटिव हो सकता है। फलो के रस या दूध वगैरह में पानी की मिलावट या चावल में पत्थरों के मिलावट के बाद अब ज्यादा खतरा जानलेवा कीटनाशकों और डी0एन0ए0 में बदलाव कर देने वाले कार्सिनोजंस की मिलावट का है। खतरनाक रसायन हमारी रसोई के रास्ते जीवन और शरीर में प्रवेश कर चुके है। हमारे सिर पर भयावह स्वास्थ्य संकट का साया मॅडरा रहा हैं। क्या हैं ये खतरनाक पदार्थ ? कैसे यह हमारा खान–पान के जरिये प्रभावित करते है इसी का अध्ययन है ये शोध आलेख।

जहर भरे प्याले – दिन के आपके पहले पेय में क्या है ?

कॉफी – सामान्य मिलावटी तत्व में कॉफी के स्वाद वाली मिट्टी, स्टार्च और इमली, खजूर या तेंदू के बीज का बुरादा हो सकता हैं।

प्रभाव – डायरिया, पेट में गड़बड़, सुस्ती, जोड़ों में दर्द, एंटीबायोटिक के प्रति प्रतिरोध से लेकर किडनी , स्नायुतंत्र को नुकसान और कैंसर।

संतरे का रस – बीट शुगर से लेकर येलो 6, सनसेट येलो या सुडान 1 रंग की मिलावट जो कई देशों में प्रतिबंधित है।

प्रभाव – कैंसर उत्पत्ति के कारक

चाय – सामान्य मिलावटी तत्वों में इस्तेमाल की हुई चाय की पत्तिया, लोहे का बुरादा, कोलतार का रंग, धूल, रेत।

प्रभाव – लीवर की गड़बड़ी से लेकर त्वचा और फेफड़े का कैंसर।

दूध – जानलेवा रसायन जैसे एंटीबायोटिक सेंटामायसिन, कीटनाशनक बोरिक एसिड और प्रिजर्वेटिव फॉर्मेलिन।

प्रभाव – लाइलाज संक्रमण, किडनियो में खराबी, कैंसर वाले जीन का सक्रिय करण।

बोतलबंद पानी – ब्रोमेट जैसे खतरनाक रसायन पाए गए है और यहां तक सायनाइड और आर्सेनिक के अंश भी पाये गये है।

प्रभाव – जबरदस्त कार्सिनोजेनिक।

सेब का रस – सड़े हुए सेबो से बने ऐसे उत्पादो में सामान्य तौर पर खतरनाक फंगस पेटुलिन पाया जाता हैं।

प्रभाव – हैलुसिनेशन, चक्कर से लेकर उलटी और कैंसर।

अपने खाने पर नजर रखे – ठेलों पर सजी हुई हरी सब्जियों को देखकर उन्हें खाने के लिए लोगो का मन ललचा जाता है। वे उन्हें खरीदकर घर ले जाते है और अच्छी तरह धोकर, पकाकर खाते है। हमारे मन में अच्छी सब्जी के खाने का संतोष होता है, लेकिन उन्हें जरा भी एहसास नहीं होता कि वह गंदे नालो के किनारे पैदा हो रही है और उसमें जहरीले कीटनाशको का छिड़काव किया गया है। उन्हें नहीं पता कि नालों के किनारे गंदगी में उगाई जा रही हरी सब्जियॉ खाने से अनेक गम्भीर बीमारियॉ हो रही है। सब्जी विक्रेताओं को स्वास्थ्य से क्या लेना–देना ? गंदे पानी से सीचना, कीटो का मारने वाले पेस्टीसाइड्स और इंसेक्टीसाइड्स का धड़ल्ले इस्तेमाल, बूस्टर्स का उपयोग, इससे चाहे किडनी खराब हो या लीवर उन्हे क्या फर्क पड़ता है।

विभिन्न प्रकार के कीटनाशक हैं – इन्सेक्टिसाइड, हर्बीसाइड, रोडेन्टिसाइड, बैक्टिरियासाइड, फंजीसाइड, लार्वीसाइड है। जानलेवा कीटनाशक होते है – एक्रीसाइड, एल्जीसाइड, एंटीफीडेंट, एंट्रेक्टेंट, एविसाइड, मॉल्यूसिसाइड, नमाटिसाइड।

सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (2014) के अनुसार सबसे ज्यादा व्यय खाने पर होता है। सबसे ऊपर इस सूची में अनाज और दाले है। उसके बाद फलो और सब्जियों की बारी आती है। फिर दूध, अण्डा, मछली, तेल बगैरह आते है। स्नैक्स और नास्ते की हिस्सेदारी 04 प्रतिशत है। जानवरों को दिये जाने वाले एंटीबायोटिक फलो और सब्जियों को आकर्षक बनाने के लिए कॉपर सल्फेट, ऑक्सीटोसिन हारमोन्स आदि हमे रोजाना नये–नये खतरो से रूबरू कराता है इसके बावजूद न कही गुस्सा है, न कोई शिकवा और शिकायत। भारत में न्यूनतम मानक और डाटाबेस नहीं है। हम अब भी उन रसायनो का इस्तेमाल करते है। जो अमेरिका में साठ के दशक में प्रतिबंधित कर दिऐ गए थे। हमारी प्रयोगशालाओ में भी अत्याधुनिक तकनीक नही और प्रशिक्षित पेशेवर लोग नहीं है। नतीजतन, खाद्य निर्माता अपने मानक गढ़ लेते है और उसे लेबल पर लिख देते है।

जहर की चेतावनी – भारत में हर पांच में से एक खाद्य नमूना गुणवत्ता

---

* प्राध्यापक (प्राणीशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.) भारत

परीक्षण में नाकाम।

वर्ष	जॉचे गये नमूनो की संख्या	नाकाम हुए नमूनो की संख्या	दण्डित किये जाने वालो की संख्या
2011-12	64593	8469	1256
2012-13	69949	13571	3845
2013-14	72200	10380	3175
2014-15	49290	8247	764

जून 2015 तक

स्त्रोत – उपभोक्ता मामलों का मंत्रालय, एफएसएसएआई, 14 राज्यों के ऑकड़े

खाने में जालसाजी का हिसाब – यह है जालसाजी जब खेत से लेकर कारखाने, बाजार और आपकी रसोई तक फैली खाद्य आपूर्ति श्रंखला में कही भी पैसे बनाने के लिए जब कोई अस्वीकार्य प्रक्रियाओं और पदार्थो के प्रति आंखे मूद लेता हो, मिलावट कर देता हो या बदलाव कर देता हो। मिलावट या घपला में पतला किया हुआ दूध, खाद्य पदार्थो में छेड़छाड़, गलत जानकारी या लेबल, दूसरे उत्पाद की मिलावट आदि आते है, जिसके अंतर्गत दण्ड या जुर्माना दिया जाता है, जो निम्न प्रकार होता है।

- मौत के मामलो में 07 साल की जेल से लेकर उम्रकैद तक और 10 लाख रू0 तक जुर्माना।
- असुरक्षित खाने के चलते हुए गम्भीर नुकसान के मामले में 06 साल की जेल और 05 लाख रू0 का जुर्माना।
- मामूली नुकसान के लिए 01 साल की कैद और 03 लाख रू0 का जुर्माना।
- गलत जानकारी के लिए 06 माह की कैद और 01 लाख रू0 जुर्माना।

खाद्य पदार्थो में 264 खास मिलावटी तत्व शामिल होते है इनमें टॉप 10 प्रदूषक की श्रेणी इस प्रकार है –

कीटनाशक	34.5%
पैथोजन	22.2%
कचरा	15.7%
माइकोटॉक्सिन	10.2%
रसायन/ऐडिटिव	04.5%
जहरीली धातु	03.4%
एंटीबायोटिक	02.2%
नियामको का उल्लंघन	02.2%
मादक पदार्थ	01.4%
सड़न	01.4%

स्त्रोत – ग्लोबल फूड सोर्स मॉनिटरिंग कम्पनी 'फूड सेंट्री' द्वारा जारी खाद्य पदार्थ उल्लंघन की रैंकिंग नवंबर 2014।

कितना सुरक्षित आपका पानी –पानी की निरंतर होती जा रही कमी के कारण हमे भूजल के पानी पर निर्भर होना पड़ रहा है, जो न केवल दूषित होता है बल्कि इसमें कई घुलनशील अशुद्धिया भी होती है हालांकि वॉटर ट्रीटमेंट प्लांट सुरक्षित पेयजल अधिनियम के स्तरों के अनुकूल होते फिर भी यह पानी हमारे नल तक पहुँचते-पहुँचते रास्ते में प्रदूषित हो जाता है। वर्तमान में लगातार पानी में घुली हुई खतरनाक अशुद्धियों में वृद्धि होती जा रही है। इसके कारण है।

- **जंग –** ट्रीटमेंट प्लांट से निकलते समय तो पानी शुद्ध होता है लेकिन जब यह जंग लगे पाइपो के जरिये मीलो का सफर करता है तो उस दौरान पाइप की जंग पानी में घुल जाती है। ज्यादातर नल का पानी रोज 02 से 05 घण्टों से ज्यादा नहीं आता। इस वजह से पाइप लाइन्स ज्यादातर समय खाली रहती है इससे उनमें जंग लगने की सम्भावना बढ़ जाती है। और जब हम ये अशुद्ध पानी पीते है तो सेहत संबंधी परेशानियॉ भी बढ़ जाती हैं।
- **पेस्टिसाइड्स –** ये खतरनाक रसायन होते है, जिनका उपयोग फसलों की उत्पाद बढ़ाने, अनचाही घास और दूसरी हानिकारक चीजों से बढ़ाने के लिए होता है आज पस्टिसाइड्स भी जमीन के नीचे पानी में मिलकर हमारे पीने के पानी को प्रदूषित कर रहे है।
- **आर्सेनिक –** इसमें न कोई महक होती है और न कोई स्वाद। ये भी हमारे पीने के पानी की सप्लाई में शामिल हो जाता है। इसके सेवन त्वचा को नुकसान पहुँचता है, शरीर के संचार प्रणाली में बाधा आती है और फेफड़ो और गुर्दे का कैंसर भी बढ़ जाता है।
- **फ्लोराइड –** यह मुख्य कुदरती प्रदूषक है जो पीने के पानी में पाया जाता है। कम स्तर का फ्लोराइड होना दांतो के लिए लाभदायक होता है लेकिन इसका ज्यादा होना सेहत के लिए खतरनाक है।
- **सीसा –** कई पुराने घरो ओर बिल्डिगों में ऐसे नल और पाइप होते है जिनसे सीसा बड़ी असानी से पीने के पानी में पहुँच जाता है इसका बुरा प्रभाव तुरंत तो नहीं पड़ता पर समय गुजरने के साथ पता चलता है इससे लकवा, गुर्दे की परेशानी और कैंसर जैसी भयानक बीमारियॉ हो जाती है।
- **भारी धातुएं –** पारा, जस्ता, तांबा और कैडमियम जैसी भारी धातुए अक्सर पानी में औद्योगिक कचरे के जरिए आती है। अगर ये धातुए ज्यादा हो तो विभिन्न बीमारियों के साथ दिमाग को भी खतरा पहुँचा सकती है।
- **बैक्टीरिया और वायरस –** स्टोर किए गए पानी में बैक्टीरिया और वायरस हो सकते है इसका नतीजा हैजा, पेचिश, दस्त, और टाइफाइड जैसी बीमारिया हो सकती है।

निष्कर्ष और सुझाव – सब्जियों को पकाने से पहले निम्न सावधानियॉ रखे

- अगर पत्तियॉ कटी है तो सब्जी न खरीदे।
- सब्जी को अच्छे से देखे उसमें कोई कीड़ा तो नही है।
- सब्जी को खरीदते समय उसे सूंघ कर देखे।
- अगर खट्टी बास आती है तो उसे न बनाए।
- सब्जियों को तीन-चार बार पानी से धो ले।
- सूखने के बाद अगर कोई दाग दिखता है तो फिर से धो ले।
- सब्जी के अंदर काले दाग दिखने पर उसे उपयोग न करे
- यदि संभव हो तो सब्जी को पहले उबाले फिर बनाए।
- कीटनाशकों के दुष्प्रभाव को देखते हुए प्राकृतिक पदार्थो से बने कीटनाशकों का प्रयोग करे। हरियाणा के ईश्वर ने नीम की पत्तियों, नीम के तेल चिरायता, कनेर, गुड और गौ-मूत्र से मिलाकर एक कीटनाशक का अविष्कार किया है जिससे फसल बढ़ती भी खूब है और उनमें कीड़े भी नहीं लगते, इससे जानवर भी फसल को नहीं खाते। इस कीटनाशी का नाम 'कमाल' है। कमाल बनाने के लिए पॉच-पॉच नीम की पत्तियॉ, आक, धतूरा, मिर्च बूटी, चिरायता कुटकी और गुड और गौ-मूत्र का उपयोग किया जाता है।

- भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) को एक कॉर्पोरेट इकाई के तौर पर गठित किया गया है इसके पास मुकदमा करने का अधिकार है और इस पर मुकदमा भी किया जा सकता है। इसका मुख्यालय दिल्ली में और देशभर में इसके क्षेत्रीय कार्यालय है। यह केन्द्रीय परामर्श समिति और वैज्ञानिक समिति जैसी विभिन्न कमेटियों के माध्यम से काम करता है। इसके माध्यम से हम मिलावट, गलत लेबलिंग, खाद्य पदार्थो में छेड़छाड, एक्सपायरी में गड़बड़ी आदि का रोकने के लिएउपभोक्ताओ को ज्यादा सचेत रहना होगा, ज्यादा पारदर्शिता की मांग करनी होगी यह उपभोक्ता का अधिकार है।

  खाद्य परीक्षण प्रयोगशालाओं की संख्या में बढ़ोत्तरी, पर्याप्त स्टॉफ, अणुजीवविज्ञान विश्लेषण के लिये विशेषज्ञों की नियुक्ति आदि भी अत्यंत आवश्यक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. www.toxicsaction.org.
2. https//en.wkipedia.org.
3. https//www.google.co.in
4. इण्डिया टुडे 24 जून 2015।
5. पत्रिका - दैनिक समाचार पत्र - 05 मई 2013, 9 जनवरी 2015, 10 अगस्त 2016, 2 सितंबर 2016
6. दैनिक भास्कर - दैनिक समाचार पत्र 12 दिसंबर 2015

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Malnutrition Among The Rural Infants Of Chhindwara District (M.P.)

Pradeep Kumar Shrivastava * Saurabh Shrivastava **

Abstract - The present investigation was carried out in twenty two villages of Chhindwara district of south central part of Madhya Pradesh which lies between 21°28' to 22°49' North latitude, and 78°10' to 79°24' East longitude.

The malnutrition is one of the major problem in developing countries. The malnutrition in the various forms was found among half of the children of the study area. For the purpose of the study the data were collected on the basis of nutritional status of about 440 children below the age of 5 years of 220 families from different parts of the district.

An attempt has been made in this study to categories malnutrition among the tribal and non-tribal children. In the study area four grades (Normal, I,II and III) have been discussed in detail, and suggestions have been made to improve the food habits, education and awareness about the nutrition among the females.

Introduction - Malnutrition in its various forms is very depressing health problem of the world today affecting over one half of the population. A report by the World Hunger Org. in 2015, indicated that about 7.3 billion people suffer from malnutrition. Malnutrition is an underlying cause of death of 2.6 million children each year a third of child deaths globally.[1, 2] 1 in 4 of the world's children are stunted[3] ; in developing countries this is as high as one in three.[4] This means their bodies fail to develop fully as a result of malnutrition. Undernutrition accounts for 11 per cent of the global burden of disease and is considered the number one risk to health worldwide.[4] A report by World Bank, South Asia has the largest number of malnourished children in the world. Malnutrition rates in several South Asian countries are much higher than those in Africa. Under-nutrition prevalence rates for India, Pakistan, Bangladesh and Afghanistan range between 38 per cent to 51 per cent. Prevalence rates in Sub-Saharan African countries are about 26 per cent.

The study area (Chhindwara district) in Jabalpur division is situated on the Satpura plateau in south central part of the state (M.P.), and lies between latitudes 21°28' to 22°49' north and longitudes 78°10' to 79°24' east.

Methodology - In the present study, an attempt has been made to assess, the nutritional status of the rural population of twenty-two villages of Chhindwara district. For measuring the nutritional status, 440 children (below 5 years) of 220 families (Two children of each family) amongst the tribal and non-tribal villages.

On the basis of weight for age, the nutritional status of each child was classified into four categories of malnutrition (Normal grade, I grade, II grade and III grade). Grades are referred here in terms of percentile Normal grade-above 90th percentile of the reference weight, I grade 90-75 percentile, II grade 75-60 percentile and III grade below 60 percentile of the reference weight. This classification scheme was adopted from growth rate chart prepared by the National Institute of Nutrition, Hyderabad.

Result - The table shows the status of malnutrition in different villages of the study area. On an average 47.27 percent children of the study area were found to have Normal grade Malnutrition, which is higher in comparison to I, II and III grade of Malnutrition, while minimum percentage of malnutrition was found in the III grade which was 1.36%.

Normal Grade Malnutrition - The highest percentage of normal-grade of nutrition was found in Jamuniya Khurd Village (80 percent against the average of 47.27 percent). The lowest percentage was found in Sagoniya Village (30 percent).

Normal grade of nutrition in children of tribal and non-tribal villages was found to be 50.83 percent and 43.00 percent respectively. Normal grade of nutrition among the children was found to be between 30 to 40 percent in 36.36 per cent village between 41 to 50 per cent in 36.36 per cent village and above 51 per cent in remaining 27.27 per cent village. **(Table No. 1)**

I Grade Malnutrition - I grade malnutrition is found in all villages. The percentage of this type of malnutrition in sagoniya and singnna villages is comparatively high (40 percent in each against average of 27.04 per cent). Under this grade the lowest percentage was found in Jamuniya Khurd village (15 percent). In 27.27 percent villages of study area the percentage was found to be in between 5-20 percent; in 50 percent villages it was found between 20-30 percent and in 22.72 percent villages it was found above 30 percent.

---

* C-11, Dr. Hari Singh Gour University Campus, Sagar (M.P.) INDIA
** Ward No. 5, Damoh Road, Pathariya, Distt. Damoh (M.P.) INDIA

II Grade Malnutrition - Like normal grade of nutrition and I grade of malnutrition, II grade of malnutrition was also found in villages of study area. Its average percentage is 24.31 which is below the normal grade and I grade of malnutrition. The percentage of this type of malnutrition is comparatively higher in two tribal villages i.e. Ambada Khurd and Majiya par (35 percent in each) while it is lowest in Jamuniya Khurd (5 percent).

Children under II grade of malnutrition are found to be in between 5-10 percent in 13.63 percent villages, between 10-20 percent in 27.27 percent villages, between 20-30 percent in 50 percent villages and above 30 percent in two villages i.e. Majiyapar and Ambada Khurd.

III Grade Malnutrition - III grade of malnutrition was found only in 36.36 percent villages of the study area, and in the remaining villages it was not found. The percentage of III grade malnutrition was highest in 10 percent children, in each villages namely charai kalan, Temnikalan, Bargabodi and Deor Khapa the average percentage of this grade of malnutrition was 1.36 percent, which is very low against normal, I and II grade malnutrition.

Discussion - On the basis of the results and field observation, it was found that most of children who where malnourished where found from low income families and belonged to the lower castes.

The food practices of rural people are deeply rooted in their culture, which controls the choice and use of food, while income, food availability and marketing facilities influence the food preferences of the individual, customs and traditions dictate the manner in which food should be procured, stored, cooked, served and eaten. Eventually distinctive food preferences and prejudices are formed. The interaction of the effect produced by the social factor and the individual factor ultimately results in malnutrition.

Demographical variable of family size and birth interval suggest that children in small size families and with moderate spacing are generally healthy. Low food availability and high infection tendencies as a results of crowding generally lead to poor nutritional status.

The cause of Malnutrition to poverty, ingnorante, traditional beliefs unhygienic and insaitary conditions insufficient utilization of local low cast and easily available foods. cooking methods, undesirable food habits and foods.

Conclusion - The analysis of malnutrition among children of the study area reveals that a total of 53% children were suffering from malnutrition of grade I, II & III. It was found that the prevalence of grade I, II and III were higher among non-tribal villages.

References :-

1. R E Black, L H Allen, Z A Bhutta, et al (2008) ‘Maternal and child undernutrition : global and regional exposures and health consequences’. The Lancet, 2008, Jan 19, 371 (9608), 243-60.
2. UN Inter-agency Group for Child Mortality Estimation (2011) Levels & Trends in Child Mortality : Report 2011, New York : UNICEF.
3. M de Onis, M Blossne and E Borghi (2011) ‘Prevalence of stunting among pre-school children 1990-2020’. Growth Assessment and Surveillance Unit, Public Health Nutrition 2011, Jul. 14:1-7.
4. R E Black, L H Allen, Z A Bhutta, et al (2008) ‘Maternal and child undernutrition : global and regional exposures and health consequences’. The Lancet, 2008, Jan 19, 371 (9608), 243-60.

Table No. 1 - Status Of Malnutrition In Children In Selected Villages Of Chhindwara District (M.P.)

Tribal Villages					
S.N.	**Name of villages**	**Grade of malnutrition in children(in percent)**			
		NormalGrade	**I Grade**	**II Grade**	**IIIGrade**
1.	Panth	60	20	20	-
2.	Anjanpur	55	20	25	-
3.	Saliwada	45	30	25	-
4.	Rajthari	70	20	10	-
5.	Jamuniya Khurd	80	15	5	-
6.	Sona-pipree	60	30	10	-
7.	Sagoniya	30	40	25	5
8.	Machhera	50	25	20	5
9.	Majiyapar	40	25	35	-
10.	Singnna 35	40	20	5	
11.	Bargabodi	40	25	25	10
12.	Ambada Khurd	45	20	35	-
	Average	**50.83**	**25.83**	**21.25**	**2.08**

Non Tribal Villages

S.N.	Name of villages	Grade of malnutrition in children(in percent)			
		NormalGrade	I Grade	II Grade	IIIGrade
1.	Boriya	50	25	25	-
2.	Sajwa	45	25	30	-
3.	Hingpani	40	35	25	-
4.	Charai Kalan	35	35	20	10
5.	Khajri fulsa	45	35	20	-
6.	Temnikalan	55	20	15	10
7.	Ulhavadi	45	25	30	-
8.	Pipariya Lakkha	45	30	25	-
9.	Jam	35	30	30	5
10.	Deor Khapa	35	25	30	10
	Average	**43.00**	**28.50**	**25.00**	**3.50**

Grade Of Malnutrition In Children Of Study Area (In Per Cent)

NormalGrade	I Grade	II Grade	IIIGrade
50.83	**25.83**	**21.25**	**2.08**
43.00	**28.50**	**25.00**	**3.50**
47.27	**27.04**	**24.31**	**1.36**

Tribal Village
Average - Non-Tribal Village
Study Area

* * *

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Child With Fever: Case Studychild's Name: Rileys /O Kayla

Manju Jain * **Neha Agrawal** **

Abstract - This case study, is being performed on an 18 month old male. This child is suffering from restlessness, and is unable to sleep. He has slight allergies problems. Careful case study of the patient reveals how his allergy has grown up to become the serious disease, i.e. allergic rhinitis

Introduction - Genetics A **genetic disorder** is a genetic problem caused by one or more abnormalities in the genome, especially a condition that is present from birth and some develop later during the life time. Most genetic disorders are quite rare and affect one person in every several thousands or millions.

Genetic disorders may be hereditary, passed down from the parents' genes. In other genetic disorders, defects may be caused by new mutations or changes to the DNA. In such cases, the defect will only be passed down if it occurs in the germ line. The same disease, such as some forms of cancer, diabetes, hypertension, many blood diseases, AIDs may be caused by an inherited genetic condition in some people, by new mutations in other people, and mainly by environmental causes in other people. Whether, when and to what extent a person with the genetic defect or abnormality will actually suffer from the disease is almost always affected by the environmental factors and events in the person's development. These gene disorder may be single gene disorder[6] is the result of a single mutated gene or may be multiple gene disorder due crossing over and mutations.. Over 4000 human diseases are caused by single-gene defects.[4

The mutation may be autosomal, X linked recessive, X inked dominant, Y linked and mitochondrial. Some types of recessive gene disorders confer an advantage in certain environments when only one copy of the gene is present.[1]

History of the child - This child is an 18 month old male. Initial examination has been done by his mother, and she has discovered that the child is suffering from fever and is having difficulty in sleeping. Any associated symptoms are unknown in the child. Severity of the problem is unknown to the mother. The child was born in 34 weeks gestation time via c-section. At the time of birth, his weight was 5lb 1oz. His mother had gestational diabetes and preeclampsia. 8 weeks ago this child's location had been shifted from his father's house to his grandparents' house. The child is quite active and plays vigorously indoors and outdoors. He has healthy habits and brushes his teeth twice everyday. He takes proper meals.

This is the child's first hospitalization and reports say that he has had certain allergies. No surgery has been done on him till now. He has only had certain vaccinations, but the mother is unaware of the vaccinations which have been done. Also, there are no neurological, lymphatic, respiratory, musculoskeletal, genitourinary or cardiac disorders. Health history of this child's mother is known but that of the father is unknown.

The mother has given the following medications to the child: - Cetirizine, 1/2 teaspoon daily prn congestion/ rhinorrhea with a max daily dose of 1 teaspoon/5mL and a children's chewable multivitamin daily.

History of the child's mother - The child's mother is 25 years old. She is a smoker and started smoking at the age of 16. 25 months ago, she had quit smoking. She had suffered from gestational diabetes and had pre-eclampsia. Rest of the health record of this lady is fine. Her mother has a history of hyperlipidemia, Type IIDM and hypertension. Her father is also having history of hypertension, hyperlipidemia, and MI with stents.

History of the child's father - He was a smoker as well. May be he smoked in the house around children.

Red flags in the historical data :

1. First of all, both parents of the child are smokers. This will definitely have ill-effect on the growth of fetus. Even if the mother quitted smoking at the time of pregnancy, still it seems that the father had been smoking all around; in front of pregnant mother, lactating mother and the newborn. Ill effects of tobacco smoke include blockage in the respiratory tract, and edema. The given child's condition can be suspected of this fact.
2. Second, the family environment is not good. Parents have recently separated. Studies (*Wang et.al. 2016*) have revealed that lifestyle, and behavior observed in front of child has pronounced effect in increasing rhinitis.

Gathering history of a small child - There are many important aspects about gathering history on a small child, which have been learnt from the present study.

*Govt. Girls Nodal College, Vidisha (M.P.) INDIA
** Govt. Girls Nodal College, Vidisha (M.P.) INDIA

1. While gathering the history, complete child information should be taken into account. History not only includes the parents (father and mother) of the child, but it also includes the grandparents (both maternal and paternal). Even the smallest piece of information can be highly valuable. For e.g. the maternal grandparents of the child had hypertension. Physical examination reveals pale mucosa, which is a symptom of being anemic. Now, if both the past and present aspects are combined, it reveals that the child may have a heart disease.

Information that should always be taken into account - Now, if a child whom one has not seen before is admitted, then the following information should be gathered.

1. Initial details of the child, like name, address, parents name and occupation etc.
2. Environment of the child. This includes family environment and the area of residence of the child.
3. Complete medical history of the child.
4. History of child's parents (father and mother): This should include parents' occupation and occupational habits as well.
5. Details about siblings (if any). This should include the health record of the siblings since birth. If the sibling is suffering from any genetic disorder, then it's details should be gathered separately by creating a family pedigree.
6. History about parents' parents i.e. the grandparents of the child.
7. It should also be checked whether the problem/ case of child is similar to any family member or not. If yes, this should be taken into account separately.

What data is most important to include in this particular case?

There are many important data which is important and should be included in the particular case.

1. First, information about the father has not been included.
2. Second, vaccination record of the child should be included and is not there. May be, the allergy from which the child is suffering are being caused by the vaccinations given to the child.

Which historical data that might be gathered on a well-child exam can be left out?

Since the child is not suffering from any genetic disorder, so the pedigree analysis data can be and has been ruled out completely. None of the family members of the lady, mentioned in the case study, are suffering from any genetic disorder till now. Similarly the father is also not having any genetic/Mendelian disorder.

Physical examination of the child - The blood pressure, temperature and heart rate of the child is normal.BMI of the child is 17.9 (95 percentile). HEENT (head, ear, eye, nose and throat) examination is also normal.

Tympanic membranes of the child are intact. EAC was unremarkable. Nares are patent. All these are normal symptoms. But the mucosa is pale. And rhinorrhea is observed. Neck is supple. This is also a normal symptom. "Heart RRR without murmur" is observed. This is normal. Thyroid is also shown to be within normal limits.

Cardiopulmonary reports state that "lungs CTA throughout, RR even and unlabored, peripheral pulses regular and equal, radial and pedal pulses intact bilaterally.Cardiopulmonary examination of the child is normal.

Now, let's take an account of gastrointestinal examination. A rounded abdomen signifies slow digestion. It means that food is moving slowly through the gut."Soft, non-tender, slightly round, active bowel sounds, and without masses or organomegaly"—all these points signify that the child is not suffering from abdominal pain.

Genitourinary examination states that both testes are present. So, this part of the report is also normal.

Musculoskeletal reveals that the child is able to run in room and climb on exam table. These symptoms state that there is no musculoskeletal problem also.

At last is the Cognitive Development report, which states that the child *"Verbalizes five words which include~ Mama, dada, drink, juice, and no~ Does babble~ Majority of speech is unintelligible, able to feed self and is not potty trained."* These are also normal symptoms.

Differential diagnoses - First of all, the child is weak and underweight. BMI calculations reveal this fact.

Second, the child is having pale mucosa. So, it is suspected that the child can be anemic or may be having a heart disease. For checking this, complete cardiac examination of the child is essential. But the cardiac examination reports given here are normal. Further complete cardiac examination including ECG is recommended.

Third, the child is having rhinorrhea, i.e. runny nose. Further, mild cobblestoning has also been observed in pharynx. Tonsils are also slightly enlarged. Primary tooth eruption is occurring. This suspects that the child is suffering from **rhinitis or allergic rhinitis.** Sometimes supple neck signifies enlarged lymph nodes. In this patient, mild anterior cervical lymphadenopathy bilaterally has also been observed. The lymph nodes of the patient have been swollen. This is another cause of rhinitis.

Yellow color in tooth incisor occurs in adults due to consumption of tobacco products. Now, here this color is showing the effect of parents smoking habits on the child. The child's examination should be done by a trained ENT specialist, along with the pediatrician. If problems still persist after treatment, cardiac examination is recommended.

One factor which has been slightly ignored in treatment and is the most important is the home environment of the child. Studies (*Wang et.al. 2016*) have revealed that lifestyle, and behavior observed in front of child has pronounced effect in increasing rhinitis. This home environment includes the smoking habits of the parents of this child, Riley.

Conclusion - This disease could be the result of continuous exposure to smoke also food habits may lead to this kind of disease. Pale mucosa can only because he is rhinitic patient.The treatment of genetic disorders is an ongoing battle with over 1800 gene therapy clinical trials having been completed, are going on, and some have been approved worldwide(Ginn Samantha et. al.,2012)Despite this, most treatment options revolve around treating the symptoms of the disorders in an attempt to improve patient quality of life.

References: -

1. Adebola*et.al*. (2016) "Health related quality of life and its contributory factors in allergic rhinitis patients in Nigeria." *AurisNasus Larynx*: 43(2)-171-5
2. Kazi, R. (2002) "Hemangioma of External Auditory Canal." *The internet journal of Otorhinolaryngology:* 2(1).
3. Baroody, M.F. (2016) "Non-allergic Rhinitis: Mechanism of Action" *Immunology and Allergy Clinics of North America. In press.*
4. Dilek et.al (2016) "Nasal Fluid secretory Immunoglobulin A levels in children with AllergicRhinitis", *International Journal of Pediatric Otorhinolaryngology*, 83:41-6.
5. Wang *et.al.* (2016) "Home environment: Lifestyle, behavior and rhinitis in childhood."*International Journal of Hygiene and Environmental Health,* 219(2):220-31.
6. *"Genetic link to 4,000 diseases".*
7. *Ginn, Samantha L.; Alexander, Ian E.; Edelstein, Michael L.; Abedi, Mohammad R.; Wixon, Jo (February 2013). "Gene therapy clinical trials worldwide to 2012 - an update".The Journal of Gene Medicine.* ***15*** *(2): 65–77. doi:10.1002/jgm.2698.*

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Human Rights And Globalization

Sangeeta Rachiyata *

Introduction - The history of mankind is marked by efforts to ensure respect for the dignity of human beings. Freedom from want, fear and insecurity is our basic condition to be a human. But the impact of globalization as it becomes evident in economic sphere ha not left social and political fear untouched. One would agree that socialism does not generate wealth to the extent capitalism does New economic policy under mantra of globalization has led to accelerated economic growth in the world. It is argued that more the wealth, higher the standard of life. But the question that arises is for whom? Since in all likelihood, one may visualize an unequal society where a few live in luxury and a large number of people do not have access to the basic amenities of life like food, water, shelter, protection against deadly disearses and extreme whether. Due to the efforts of The United Nation, its Specialized Agencies and regional organization, a comprehensive international system of Human Rights promotion and protection is set up. But as the globalization sets in, the reality of its multiple failures have come in glare more sharply than before.

Globalization - The word "Globalization" is now used widely to sum up today's world order. It was used in general sense to refer to international relations; to links between institution, between peoples, to the clash of cultures and today the term increasingly meant the mercerization of the world's economics. There had been enormous growth and the integration of economies. But it has also many negative impacts in developing societies. The rising property and unemployment, the maltreatment of the Dalit's and women, rampant child labour, illiteracy, high dropout of children from school, burgeoning corruption, non-transparent bureaucracy and unaccountable police force-all have come to stand out in light of fruits of Globalization. Globalization has substantially contributed to the intensification of debt, poverty and economic crisis in the developing world.

In globalization, the concept of human welfare is materialistic and individualistic. Its faith is in the trickle down process of material benefits through the free market system. Richard Barnet of the Institute of policy studies describes globalization in terms of four increasing webs of global commercial activity: global cultural bazaar, the global shopping mall, the global financial network, the global workplace. The global cultural bazaar promotes the notion of uniform cultural values and products through the vehicle of advertising. Media has become a powerful player in the globalization process. It is true that globalization is a package of transnational flows of people, production, investment, information, ideas and authority (not new but stronger and faster) As such, globalization is not a warm and human force but it is based on selfishness and on exploitation of resources.

Human Rights - Human beings are born equal dignity and right. These are moral claims which are inalienable and inherent in all human individuals by virtue of their humanity alone. These claims are articulated and formulated in what we today call human rights. The concept of "Human Rights" first appeared in a national context, in the French and United State constitutions and subsequently in most national constitutions. Recently, there had been a further break through in the development of human rights. The Geneva decision marked a global acceptance of responsibility for human rights. Historically, different kinds of rights had emerged at different times. In the eighteenth and nineteenth centuries, civil and political rights had dominated the discourse. By the end of the nineteenth centaury and into the twentieth, welfare rights began to emerge. And more recently rights to a clean environment to peace and similar concepts had come to the forefront.

The situation of human rights has improved in general in modern world compared to previous centuries. The rights of women and children are better recognized and safe guarded then in earlier time. Freedom of expression, freedom of religious belief and worship are considered universal human rights. All these are advances of human race during recent centuries. It is in the context of general improvement of the situation that we reflect on the impact of globalization on human rights. The advancement of science and its application to life can advance the improved of persons for a fuller human life. In this century, education, travel and communications have improved understanding among people and spread the acknowledgement of human rights as everyone's due throughout the world.

Impact of Globalization of Human Rights - The contemporary world is defined by Globalization. Globalizations have its winners and losers. With the

---

* Lecturer (Home Science) CH. B.R.G. Govt. Girls P.G. College, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

expansion of trade market, foreign investment, developing countries have seen the gaps among themselves widen. The increasing mobility of jobs has created global work places and this has boosted international labour migration. Because of this more people are crossing border in search of jobs and in most condition they are forced to work in inhuman conditions for lower wages. In many cases, liberalization has been accompanied by greater inequality and people are left trapped in utter poverty. Meanwhile, in many industrialized countries, unemployment has soared to level not seen for many years income disparity to levels not recorded since last century. The collapse of he economies of the Asian Tigers are examples of this. The Human Development Report of 1997 revealed that poor countries and poor people too often find their interests neglected as a result of globalization.

Globalization is also connected with the human rights problem of refugees, women, minorities, Dalit's, child labour and the people affected by the terrorist related activities. As a result of globalization, new human rights problems may result from the integration of markets, the shrinking of states, increased transnational flows such as migration, the spread of cultures of intolerance and the decision making processes of new or growing global institutions. Increasing levels of migration worldwide make growing numbers of refugees and undocumented labourers vulnerable to abuse by sending and receiving states, as well as transnational criminal networks. As a result, we can say that human rights are adversely affected by globalization. It is true that so many international norms and institution are developed for the protection for human rights. But still the assaults on fundamental human dignity continue. So the question is that how can new opportunities be used to offset new problems?

The Challenge Ahead - Although globalization of the economy has been characterized as a locomotive for productivity, opportunity, technical progress and uniting the world, it ultimately causes increased impoverishment, social disparities and violations of human rights. There is no doubt that globalization has led to the marginalization of a large number of already vulnerable section of society. So the challenge before state is not how to fight Globalization but how to manage it with good governance. It is the task of the governance to promote and protect the human rights of the citizens. While human rights have been universalized and internationalized and some international mechanisms to monitor their observance has been formulated, it is the state remains the chief authority to implement them. More important is the fact that the ensure the protection of the human rights within the country.

Thus, Human rights have become an integral part of the process of globalization if many ways. The western countries are increasingly using their views of human rights concept as a yardstick to judge developing counties. For human rights to be person, particularly of others, over material realities such as profits and selfish individualism.

The study of human rights reaches us that human rights violations usually reflect a calculated pursuit of political power, not inherent evil or ungovernable passions. So there is a need to rethink the framework of the rights. It is often not right to blame the government of a country for lack of rights. To protect human rights in a global context, one needs global justifications and effective institutions which can safeguard human dignity and its free existence.

References :-

1. Globalization and Human Rights, Anil Bhuimali, Pub. By Serial Publications – 2006.
2. Globalization and Human Rights, Prof. Yash Ghai, www.hkdf.org
3. Globalization and its impact o Human Rights, George Mthews Chunakara, Prep. By Tred Winnie for religion online.
4. Globalization and its impacts on Human Rights, www.religionoline.org
5. Human Rights and Globalization By Dr. Samir Naim Ahmed, www.countercurrents.org
6. Human Rights Questions and Answers Leah Levin, UNESCO 1998, Pub. By the Director, National Book Trust, India.
7. Samajik Kalyan and samajik Kaydao, Prof A.G. Shah and Prof. J.K. Dave, edition 2004-05 By Anada Book Depot, Ahmedabad.

****

ग्रामीण हस्तकलाओं के प्रति महिला उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण का अध्ययन गोरखपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. दीपशिखा पाण्डेय *

प्रस्तावना - सम्प्रत्यात्मक पृष्ठभूमि - भारतीय लोकपरम्पराओं के रूप में हस्तकलाएँ पिछले कुछ वर्षो से हमारे अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान आकर्षित करने लगी हैं। उससे पहले वे उच्चवर्गीय कलाओं के निम्नस्तरीय स्थापत्य ही समझी जाती थी और लोग उस पर तनिक भी आकर्षित नहीं होते थे। जिन लोगों ने इस दिशा में शोध आदि का कुछ भी कार्य किया उन्होंने केवल इसके कला पक्ष को देखा ,आर्थिक महत्ता के संदर्भ में किसी का ध्यान आकर्षित नहीं हुआ कि वे लोक पारम्परिक कलाएँ जिसे महिलाओं द्धारा सम्पादित किया जा रहा है वह महिलाओं के आर्थिक उन्नयन का भी कार्य कर सकती हैं। कुछ कलाएँ जैसे इंडोनेशिया कला ऐसी हैं, जो विदेशों से आकर कारोबारी दृष्टि से सफलता अर्जित की है। इंडोनेशियाई कला बुटिक को भारत में आकर ऐसा रंग मिला कि यह रंगो से सराबोर हो उठी तथा कलाकारों ने भारत में इस कला को ऐसा रूप दिया कि विश्व स्तर पर इसने अपनी एक अलग पहचान बनाई है(हेमा गाँधी, 2009)। गोरखपुर को यदि भौगोलिक संदर्भ में देखें तो शहरी क्षेत्र की अपेक्षा गाँवों की स्थिति साक्षरता, जीवनस्तर, सामाजिक एवं आर्थिक स्तर के क्षेत्र में अत्यन्त निम्न स्तरीय है। ऐसे में हस्तकला निर्मित करने वाली महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय बनी हुई है। परिवार में बच्चों की संख्या 6-12 तक होती है। परन्तु हस्तकलाओं के घटते माँग एवं रोजगार का अन्य कोई साधन उपलब्ध न होने के कारण बच्चों को स्वास्थ्य, सुविधा, पोषण, शिक्षा आदि का पूर्णत: लाभ नहीं मिल पाता है। गोरखपुर का अधिकांश क्षेत्र जैसे- रजई, बैंक रोड, करीमनगर, बालापार, चरगाँवा, डोमिनगढ़, चौरीचौरा के क्षेत्र जो विशेष रूप से बाँस द्धारा निर्मित लोकपारम्परिक हस्तकलाओं का निर्माण करते हैं, वहाँ की महिला कारीगरों की दषा अत्यन्त ही दयनीय है। महिला कारीगरों द्धारा बाँस से निर्मित लोकपारम्परिक हस्तकलाएँ आज भी पुराने ढ़ंग के अनुसार तैयार की जा रही हैं। उनमें नवीनता एवं आधुनिकता का पूर्णत: अभाव देखा जाता है। कुछ ही वस्तुएँ जैसे बाँस से निर्मित पर्दे एवं आलमारियों में ही नवीनता लायी गयी है (प्रीति चतुर्वेदी, नेहा श्री0 2008)। परन्तु बाँस से निर्मित अन्य वस्तुएँ अभी भी पुरानी पद्धति से ही निर्मित की जा रही हैं।

अत: इस समस्या को देखते हुए शोधकर्त्री द्धारा हस्तकला के रुप में बाँस से निर्मित वस्तुओं के संदर्भ में कुछ विशेष मुददों पर यह विचार किया गया कि-

- क्या निर्मित हस्तकलाएँ उपभोक्ताओं की मांग को पूर्ण कर पाती हैं ?
- क्या महिला उपभोक्ताओं निर्मित सामग्रियों में परिवर्तन की मांग करती हैं ?

इसके लिए आवश्यक है कि हस्तकलाओं के पारम्परिक पुट में परिवर्तन लाकर उन्हे उपभोक्ताओं की माँग एवं ग्रामीण महिलाओं की योग्यतानुसार कम लागत में अधिक कलात्मक एवं उपयोगी बनाया जाय, जिससे ग्रामीण महिलाएँ एवं उपभोक्ता दोनों ही संतुष्ट हों। अत: इसी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए शोधकर्त्री द्धारा इस क्षेत्र की महिलों उपभोक्ता ग्रामीण हस्तकलाओं के प्रति क्या दृष्टिकोण रखती है विषय का चयन किया गया।

अध्ययन का उद्देश्य - ग्रामीण हस्तकलाओं के प्रति महिला उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण का अध्ययन करना ।

साहित्य पुनरावलोकन - कुमार, झा प्रदीप (2010) ने 'वैश्विकरण के युग में भारत की हस्तकलाएँ' पर किए गए अपने अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि वैश्वीकरण के इस युग में भारत में निर्मित होने वाली हस्तकलाएँ रोजगार का एक प्रमुख साधन एवं कुशल कारीगरों का एक सांस्कृतिक कौशल होने के बाद भी बहुत ही असंगठित है। जहाँ हस्तकला कारीगरों द्धारा पारम्परिक यंत्रो एवं तकनीकियों के प्रयोग के कारण इनका उत्पादन विस्तृत स्तर पर नहीं हो पाता है। अत: उपभोक्ता, हस्तकला कारीगर एवं सरकार को संयुक्त रुप से जागरुक होकर भारत की सांस्कृतिक धरोहर को बचाने एवं विकास करने का प्रयास करना चाहिए।

शोध आकल्पन एवं क्रियान्वयन - प्रस्तुत शोध कार्य की प्रकृति 'क्रियात्मक अनुसंधान' पर आधारित है।

महिला उपभोक्ताओं का चयन जो निर्मित हस्तकलाओं का प्रयोग करती हैं- गोरखपुर मण्डल चार जिले गोरखपुर, कुशीनगर, महाराजगंज एवं देवरिया में विभाजित है। जहाँ प्रत्येक परिवार में विशेष अवसरों पर अनिवार्य रूप से इन हस्तकलाओं का प्रयोग होता है। हस्तकला के प्रयोग, हस्तकलाओं पर दिये जाने वाले मूल्य, उनमें पायी जाने वाली कमियों एवं नवीनता बढ़ाने के सन्दर्भ में उपभोक्ताओं का दृष्टिकोण ज्ञात करने हेतु प्रत्येक जिले से 50 एवं कुल 200 महिला उपभोक्ताओं का चयन सुविधानुसार विधि द्धारा किया गया है। प्रस्तुत शोध कार्य में ग्रामीण तथा उपभोक्ता महिलाओं द्धारा हस्तकलाओं से संबंधित जानकारी प्राप्त करने हेतु 'साक्षात्कार अनुसूची' का प्रयोग किया गया। अध्ययन को मात्रात्मक मूल्य प्रदान करने हेतु आवृति, मध्यमान एवं प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्ता प्रस्तुतिकरण एवं विश्लेषण - प्रस्तुत शोध में प्रदत्तों का संकलन करने के पश्चात् प्रदत्तों का सारणीयन एवं विश्लेषण किया गया है। प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण दो भागों पर आधारित है।

1. उपभोक्ता महिलाओं की पृष्ठभूमि से सम्बन्धित सूचनाएँ।
2. उपभोक्ता महिलाओं के द्धारा हस्तकलाओं के संदर्भ में प्राप्त विशिष्ट सूचनाएँ।

---

*वरिष्ठ प्रवक्ता (गृह विज्ञान) चंद्रकांति रमावती देवी आर्य महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.) भारत

तालिका 1.1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका (1.1) के आधार पर महिला उपभोक्ताओं की पृष्ठभूमि के सन्दर्भ में निम्न परिणाम प्राप्त हुए -

- तालिका के आधार पर यह परिलक्षित होता है कि सभी क्षेत्रों की कुल 13.5% महिला उपभोक्ताएँ 20-30 वर्ष की आयु की हैं। 72.5% महिला उपभोक्ताओं की आयु 30-40 वर्ष तथा 14% महिलाएँ 40-50 वर्ष की आयु के अन्तर्गत आती हैं। कुशीनगर का क्षेत्र ऐसा है जहाँ सर्वाधिक (24:द्ध महिलाएँ अत्यन्त कम आयु से ही हस्तकलाओं का प्रयोग कर रही हैं, जबकी देवरिया के क्षेत्र में 22% महिलाएँ अत्यधिक आयु की हैं।
- शैक्षिक स्थिति के संदर्भ में यदि देखा जाय तो 40% महिलाएँ उच्च शिक्षित हैं। 33% महिला उपभोक्ताओं ने माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त की है। 17% महिलाओं ने प्राथमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त की है, जबकि 10% महिलाएँ ऐसी हैं जो अशिक्षित हैं। तलिका के आधार पर यह पाया गया कि गोरखपुर में सर्वाधिक (78%) महिलाओं ने उच्च शिक्षा ग्रहण की है, जबकि महाराजगंज का क्षेत्र ऐसा है जहाँ सर्वाधिक (22%) महिलाएँ अनपढ हैं।
- सभी क्षेत्रों की 66% महिलाएँ शहरी क्षेत्र में निवास करती हैं, जबकी 34: महिलाएँ ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित हैं।
- सभी क्षेत्रों की 98% महिला उपभोक्ताएँ हिन्दू धर्म से संबंधित हैं। मात्र 2% महिला उपभोक्ताएँ मुस्लिम धर्म से संबंधित हैं।
- वैवाहिक स्थिति के संदर्भ में यदि देखा जाय तो सभी क्षेत्रों की 93% महिला उपभोक्ताएँ विवाहित हैं, जबकि मात्र 7% महिला उपभोक्ताएँ अविवाहित हैं।
- चयनित उपभोक्ताएँ में से 69% महिला उपभोक्ताएँ गृहणी हैं एवं 31% महिला उपभोक्ताएँ कार्यरत हैं।
- पारिवारिक संरचना के संदर्भ में यदि देखा जाय तो 58% महिला उपभोक्ताएँ संयुक्त परिवार में निवास करती हैं। 35% महिला उपभोक्ताएँ एकल परिवार से संबंधित हैं, जबकि 7% महिला उपभोक्ताओं को अन्य की श्रेणी में रखा गया है।

  परिवार में बच्चों की संख्या के संदर्भ में यदि देखा जाय तो 81% महिला उपभोक्ताओं के परिवार में बच्चों की संख्या 1-2 है। 14% परिवार में बच्चों की संख्या 2-4 है, जबकि 5% महिला उपभोक्ताओं के परिवार में बच्चों की संख्या 4-8 है। आँकड़ो से स्पष्ट है कि गोरखपुर का क्षेत्र ऐसा है, जहाँ सर्वाधिक (94%) महिला उपभोक्ताओं के परिवार में बच्चों की संख्या निम्न है, जबकी महाराजगंज की सर्वाधिक (12%) महिला उपभोक्ताओं के परिवार में बच्चों की संख्या सर्वाधिक है।
- पारिवारिक आय के संदर्भ में यदि देखा जाय तो सभी क्षेत्रों की 70% महिला उपभोक्ताओं की पारिवारिक आय 10,000-20,000 रुपये प्रति माह है। 27% महिला उपभोक्ताओं की पारिवारिक आय 5,000-10,000 रुपये प्रति माह है, जबकि 3% महिला उपभोक्ताओं की पारिवारिक आय 20,000 रुपये से अधिक है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि महिला उपभोक्ताओं के चयन में बहुत से कारकों का समावेश हो गया है तथा सभी आय वर्ग, शिक्षा स्तर, परिवार, ग्रामीण एवं शहरी परिवेश में निवास करने वाली ,गृहणी एवं कार्यरत हैं, जिससे उनके उत्तर एक बड़े समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं।

तालिका 1.2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका (1.2) के आधार पर स्पष्ट है कि 93% महिला उपभोक्ताएँ यह बताती हैं कि वह बाँस से बनी हस्तकलाओं का प्रयोग विशेष अवसरों में करती हैं।

गोरखपुर का क्षेत्र ग्रामीण परम्परा को प्राथमिकता देता है, जहाँ विभिन्न अवसरो पर बाँस से निर्मित सामग्रियों जैसे झपोली एवं टोकरी का प्रयोग परम्परागत तौर पर फल एवं मिठाईयों को शादी विवाह में उपहार देने के लिए किया जाता है।

- 90.28% महिला उपभोक्ताएँ यह मानती हैं कि बाँस से निर्मित सामग्रियाँ शुभ का प्रतीक होती है, जिसके कारण महिला उपभोक्ताएँ बाँस से निर्मित हस्तकलाओं का प्रयोग करती हैं।
- कुल 52: महिला उपभोक्ताएँ यह स्वीकार करती हैं कि बाँस से निर्मित वस्तुओं की धार्मिक मान्यता अधिक होती है जिसके कारण बाँस से बनी वस्तुओं का उपयोग किया जाता है।

  महिलाएँ यह बताती हैं कि गोरखपुर क्षेत्र में विभिन्न धार्मिक पूजन जैसे- छठ व्रत, तीनछठ व्रत, मृत्यु के समय कई धार्मिक पूजन एवं मान्यताएँ हैं जहाँ बाँस से निर्मित सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। छठ व्रत में फल, अनाज एवं अन्य पूजन सामग्री रखने के लिए बाँस से निर्मित टोकरी एवं सूप का प्रयोग, तीनछठ में पण्डित को बेना छूकर दान करने के लिए तथा मृत्यु के समय शव को लपेटने हेतु बाँस से निर्मित चटाई का प्रयोग किया जाता है।
- 25.42% महिला उपभोक्ताएँ ही बाँस से निर्मित हस्तकलाओं का प्रयोग अपनी इच्छा से एवं 4.5% महिला उपभोक्ताएँ हस्तकलाओं की सुंदरता को देख कर प्रयोग करती हैं। जबकि अधिकांश महिला उपभोक्ताएँ घरेलू कार्यो में उपयोग की दृष्टि से हस्तकलाओं का प्रयोग करती हैं।

तालिका 1.3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका (1.3) के आधार पर स्पष्ट है कि 96% महिला उपभोक्ताएँ यह बताती हैं कि बाँस की वस्तुएँ देखने में आकर्षणहीन होती हैं, जिसके कारण महिलाएँ बाँस से निर्मित वस्तुओं का क्रय नहीं करना चाहती हैं।

- 92% महिला उपभोक्ताएँ यह मानती हैं कि बाँस कारीगर सामान को सजाने के लिए केवल रंग का ही प्रयोग करते हैं, जो कुछ समय पश्चात छूट जाता है ,जिसके कारण वस्तुएँ सुन्दर नहीं लगती हैं।
- जबकि 91% महिला उपभोक्ताओं का यह मानना है कि बाँस से निर्मित वस्तुओं की उपयोगिता अधिक नहीं होती है। बेने का प्रयोग गर्मी के दिनों में करने के बाद वह जाड़े के दिनों में बेकार हो जाता है। ऐसे में महिला उपभोक्ताएँ न तो बाँस से निर्मित वस्तुओं का अधिक क्रय करती है और न ही अधिक मूल्य देने को तैयार रहती हैं।
- 89% महिला उपभोक्ताएँ यह स्वीकार करती हैं कि वस्तुएँ पुरानी डिजाइन की होती हैं। महिला बाँस कारीगरों का बनाने का तरीका आज भी वही है जो बहुत वर्षो पूर्व था जिससे उनमे नयापन नहीं आ पाता है। अत: बाँस से निर्मित वस्तुएँ परम्परागत एवं पुराने डिजाइन की होती हैं।
- 90% महिला उपभोक्ताएँ यह स्वीकार करती हैं कि बाँस द्धारा निर्मित सामग्रियों को बाजार में कोई भी स्थान प्राप्त नहीं है अर्थात सामग्रियों को लेने के लिए बाँस कारीगरों के स्थान तक जाना पड़ता है, जिससे सामग्रियों को खरीदने में समस्या उत्पन्न होती है।
- इसके साथ ही 75% महिलाएँ हस्तकलाओं में मजबूती, 72% कम टिकाऊपन एवं 76% सही अनुपात एवं संतुलन का पूर्णत: अभाव

पाती हैं, जिसके कारण महिलाएँ हस्तकलाओं का क्रय करना नहीं चाहती हैं।

तालिका 1.4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका (1.4) के आधार पर स्पष्ट है 100% महिला उपभोक्ताएँ यह बताती हैं कि बाँस से निर्मित वस्तुओं को सुन्दर एवं आकर्षक बनाकर नवीनता लायी जा सकती है।

90% महिला उपभोक्ताएँ अवसर पश्चात उपयोगी बनाकर एवं 93% परम्परागत रुप के साथ आधुनिक बना कर हस्तकलाओं में नवीनता लाने के सन्दर्भ में सुझाव देती हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव – ग्रामीण हस्तकलाओं के प्रति महिला उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण के सन्दर्भ में प्राप्त निष्कर्ष:

- महिला उपभोक्ताओं से प्राप्त परिणाम के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि महिला उपभोक्ताएँ हस्तकलाओं में नवीनता,आकर्षण, उपयोगिता बढ़ाने एवं परपम्परिकता के पुट के साथ-साथ आधुनिक प्रभाव की माँग करती हैं। महिला उपभोक्ताओं का यह विचार है कि ग्रामीण महिलाओं द्धारा निर्मित हस्तकलाएँ 20 वर्ष पहले जिस रुप में बिकती थी आज भी वह उसी रुप से प्रभावित हैं, साथ ही विषेष अवसरों पर ही उपयोगी होने के कारण अवसर पश्चात उनकी कोई उपयोगिता नहीं रह जाती है।
- अत: महिला उपभोक्ताओं के विचारानुसार बाँस से निर्मित वस्तुओं को आकर्षक बनाकर, परम्परागत रुप के साथ आधुनिक रुप में परिवर्तित कर एवं उपयोगिता बढ़ाकर हस्तकलाओं की माँग को बढा़या जा सकता है जो महिलाओं के आर्थिक उन्नयन में सहायक होगा।

उपभोक्ताओं के लिए सुझाव :

- उपभोक्ताओं को मध्यस्थों के द्धारा हस्तकलाओं को खरीदने की अपेक्षा महिला बाँस कारीगरों से प्रत्यक्ष सम्पर्क करना चाहिए।
- महिलाओं द्धारा निर्मित हस्तकला निर्माण कार्य को सम्मानजनक दर्जा देकर उनके कार्यो को प्रोत्साहित करना चाहिए।
- बाँस से निर्मित वस्तुएँ वातावरण के लिए एक अच्छे मित्र के समान हैं जबकि प्लास्टिक एवं धातुएँ वातावरण को नुकसान पहुँचाती हैं। अत: प्लास्टिक के स्थान पर बाँस से निर्मित वस्तुओं का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, डी0 एन0 (2004) 'अनुसंधान विधियाँ', प्रथम संस्करण, साहित्य प्रकाशन, आगरा
2. त्रिपाठी, कुसुम, (2008) 'उत्तर प्रदेश की हस्तकलाएँ एवं उनका भविष्य', योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृ0सं0 27-30
3. त्रिपाठी,कन्हैया (2008) 'गाँधी की आर्थिक दृष्टि', योजना, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, अंक 10, 4 अक्टूबर, पृ0सं0 48-49
4. विजयलक्ष्मी (2008) 'महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण', योजना, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, अंक 10, 4 अक्टूबर, पृ0सं0 40-42
5. यादव, रवि प्रकाश (2008) 'महिलाएँ एवं लोक पारम्परिक कलाएँ,' कुरुक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
6. यादव, अमित (2011) अमर उजाला, दैनिक समाचार पत्र, गोरखपुर संस्करण,जुलाई 23
7. गांधी, हेमा (2009) 'हस्तशिल्प कला से रोजगार', कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अंक 9, 16 जुलाई पृ0सं0 3-6
8. कुमार, झा प्रदीप (2010) 'इंडियन हैण्डिक्राफ्ट इन ग्लोबलाइजेशन टाइम्स :एन एनालिसिस आफ ग्लोबल लोकल डायनमिक्स',रेगुलर आर्टिकल, 23 दिसम्बर, www.handicraft.com.

वेबसाइटस :

1. publishyoura articles. org/ essay/ anessay the empowerment of womeninindia.html.
2. wwww.shareyouressays.com/328-words-essayon-womens-empowerment-inIndia.
3. wwww.preservearticles.com/empowerment-ofwomen.html.
4. wwww.preservearticles.com/literacy&women-empowerment.html.
5. wwww.craftsmanspace.com/free-books/bamboowork.
6. wwww.bambooworks.com.
7. wwww.oecd.org/dataoeed/50/60/4756/694.pdf

तालिका 1.2 : महिला उपभोक्ताओं द्धारा हस्तकला का प्रयोग

प्र.-आप हस्तकलाओं का प्रयोग किस प्रकार से करती है ?

क्र.	कथन	कुल N=200
1.	विशेष अवसरों पर	186 (93.0%)
2.	मौसम के अनुरुप	142 (71%)
3	शुभ मानकर	183 (90.28%)
4.	धार्मिक मान्यता के अनुरुप	162 (52.0%)
5	इच्छापूर्वक	89 (25.42%)
6.	सुन्दरतावश	9 (4.5%)
7.	घरेलू कार्यो में	168 (4.0%)

तालिका 1.1 – महिला उपभोक्ताओं की सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि

क्र.	सामान्य जानकारी	गोरखपुर	कुशीनगर	महाराजगंज	देवरिया	कुल N=200
1.	**आयु**					
	20-30 वर्ष	5 (10%)	12 (24%)	3 (6%)	7 (14%)	27 (13.5%)
	30-40 वर्ष	40 (80%)	29 (58%)	44 (88%)	32 (64%)	145 (72.5%)
	40-50 वर्ष	5 (10%)	9 (18%)	3 (6%)	11 (22%)	28 (14%)
2.	**शैक्षिक स्तर**					
	अनपढ़	0 (0%)	7 (14%)	11 (22%)	2 (4%)	20 (10%)
	प्राथमिक	2 (4%)	13 (26%)	12 (24%)	7 (14%)	34 (17%)
	माध्यमिक	9 (38%)	26 (52%)	19 (38%)	12 (24%)	66 (33%)
	उच्च	39 (78%)	4 (8%)	8 (169%)	29 (58%)	80 (40%)
3.	**निवास स्थान**					
	शहरी	50 (100%)	12 (24%)	20 (40%)	50 (100%)	132 (66%)
	ग्रामीण	0 (0%)	38 (56%)	30 (60%)	0 (0%)	68 (34%)
4.	**धर्म**					
	हिन्दू	49 (84%)	50 (100%)	47 (94%%)	50 (100%)	196 (98%)
	मुस्लिम	1 (2%)	0 (0%)	3 (6%)	0 (%)	4 (2%)
5.	**वैवाहिक स्थिति**					
	विवाहित	42 (84%)	46 (92%)	48 (96%)	50 (100%)	186 (93%)
	अविवाहित	8 (16%)	4 (8%%)	2 (4%)	0 (0%)	14 (7%)
6.	**व्यवसाय**					
	गृहणी	9 (18%)	44 (88%)	47 (94%)	38 (76%)	138 (69%)
	कार्यरत	41 (82%)	6 (12%)	3 (6%)	12 (24%)	62 (31%)
7.	**पारिवारिक संरचना**					
	संयुक्त	20 (40%)	34 (68%)	38 (76%)	25 (50%)	117 (58%)
	एकल	26 (52%)	12 (24%)	10 (20%)	22 (44%)	70 (35%)
	अन्य	4 (8%)	4 (8%)	2 (4%)	3 (6%)	13 (7%)
8.	**परिवार में बच्चों की संख्या**					
	1-2	47 (94%)	40 (80%)	32 (64%)	43 (86%)	162 (81%)
	2-4	3 (6%)	6 (12%)	12 (24%)	7 (14%)	28 (14%)
	4-8	0 (0%)	4 (8%)	6 (12%)	0 (0%)	10 (5%)
9.	**पारिवारिक आय**					
	5000-10000/माह	2 (4%)	14 (28%)	21 (42%)	17 (34%)	54 (27%)
	10000-20000/माह	42 (84%)	36 (62%)	29 (58%)	33 (66%)	140 (70%)
	20000 से अधिक	6 (12%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	6 (3%)

तालिका 1.3 : हस्तकलाओं में पायी जाने वाली कमी के संदर्भ में महिला उपभोक्ताओं का दृष्टिकोण
प्र.– आपके विचार से हस्तकलाओं में कौन–कौन सी कमी पायी जाती है ?

क्र.	कथन	कुल N=200
1.	आकषर्णहीन होती हैं	193 (96%)
2.	रंगहीन होती हैं	184 (92.0%)
3.	अवसर के पष्चात अनुपयोगी होती हैं	183 (91.5%)
4.	कम टिकाऊ होती हैं	146 (72.0%)
5.	मजबूती का अभाव होता हैं	151 (75.5%)
6.	रखने में असुविधाजनक होती हैं	116 (64.0%)
7.	परम्परागत एवं पुराने डिजाइन की होती हैं	179 (89.0%)
8.	निश्चित बाजार में नहीं बिकती हैं	180 (90.0%)
9.	बाँस से निर्मित वस्तुएँ सही अनुपात में नहीं होती हैं	153 (76.5%)

तालिका 1.4 : हस्तकलाओं में नवीनता लाने के सन्दर्भ में महिला उपभोक्ताओं का दृष्टिकोण
प्र.–आप हस्तकलाओं में नवीनता लाने के संदर्भ में क्या सुझाव देंगी ?

क्र.	कथन	कुल N=200
1.	सुंदर एवं आकर्षक बनाकर	200 (100%)
2.	अवसर पश्चात उपयोगी बनाकर	180 (90%)
3.	परम्परागत रुप के साथ आधुनिक बना कर	187 (93.5%)
4.	आकार में परिवर्तन कर	113 (56.5%)
5.	नमूने में परिवर्तन कर	156 (78%)
6.	मजबूती एवं टिकाऊपन बढ़ाकर	179 (89.5%)
7.	निश्चित अनुपात में तैयार करके	98 (49%)

****

प्रतिभाशाली बालकों की व्यक्तित्व -आवश्यकताओं का अध्ययन

अन्तिमबाला पाण्डेय *

प्रस्तावना – किसी भी व्यक्ति के लिये समाज का होना अति आवश्यक है। समाज में विभिन्न प्रकार के लोग होते है जिसमें एक विशिष्ट बालक या कहे जिन्हें विशेष आवश्यकता वाले बालक कहा जाता है। इसमें एक वर्ग होता है, प्रतिभाशाली बालकों का।

प्रतिभाशाली बालक से आशय ऐसे बालक जो निरन्तर किसी भी कार्यक्षेत्र में अपनी अद्भुत कार्यकुशलता अथवा प्रवीणता का परिचय देता है। प्रतिभावान बालक वह है, जो सामान्य बुद्धि से श्रेष्ठ प्रतीत हो अथवा वह जो उन क्षेत्रों में जिनका अधिक बुद्धिलब्धि से संबंधित होना आवश्यक नहीं है, उच्च कोटि की विशेषता रखता हो, प्रतिभाशाली बालक निश्चित रूप से विशिष्ट बालक होता है। ऐसे बालक अपने समूह अथवा कक्षा में अन्य सामान्य बालकों की तुलना में वह किसी योग्यता अथवा किसी क्षेत्र में अधिक सिद्ध होता है हम केवल उन्हें ही प्रतिभाशाली बालक नहीं कह सकते,जो शैक्षणिक क्षेत्र में अपनी विशेष प्रतिभा का प्रदर्शन करें बल्कि वे सभी बच्चे जो निम्न क्षेत्रों में अपनी श्रेष्ठतम प्रदर्शन करे प्रतिभावान बालक कहे जाते है। कोई भी क्षेत्र संगीत शिक्षा ,नृत्य , अभिनय , पेंन्टिग, चित्रकला , लेखन ,मशीन संबंधी विकास कोई भी क्षेत्र हो।

प्रतिभावान कौन है कैसे पता लगाया जाए ?

प्रतिभावान बच्चों का ध्यान रखने अथवा उनके लिये कोई शिक्षा व्यवस्था करने के पहले यह आवश्यक हो जाता है कि हम देखे कि कौन-कौन से बालक वस्तुत: प्रतिभावान् है। प्रतिभा का ठीक-ठाक पता न लगने के कारण बहुत से प्रतिभाशाली बालक , मरूस्थल के फूल के समान तथा पृथ्वी में छिपे हुए हीरे के समान गुणों की सुगंध बिना बिखेरे इस संसार से विदा हो जाते है, प्रतिभावान बच्चे की उचित पहचान् के लिये हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि केवल बौद्धिक रूप से सम्पन्न बच्चों को ही प्रतिभावान नहीं कहा जाता बल्कि जो बच्च्चे अनेक क्षेत्रों में अपनी विशेष योग्यताओं के सहारे चमकते है, उन्हें भी प्रतिभावान कहा जाता है।

प्रतिभावान बालकों की शिक्षा – इस बात से सभी एकमत है कि प्रतिभाशाली बच्चों के लिये विशेष प्रकार की शिक्षा देने का पूरा-पूरा प्रयत्न करना चाहिये। इस संदर्भ में अनेक विद्वानों ने तरह-तरह के विचार सामने रखे है। कई महत्वपूर्ण सुझाव नीचे दिये जा रहे है -

- अलग -अलग विद्यालयों की व्यवस्था।
- अलग कक्षाओं अथवा समान योग्यता पर आधारित समूहों की व्यवस्था।
- एक कक्षा से शीध्र दूसरी कक्षा में चढना अथवा वर्ष में दो बार उन्नति।

प्रतिभावान बालकों की आवश्यकताएँ– अन्य सामान्य बालकों की तरह प्रतिभाशाली बालकों की भी अपनी मूल आवश्यकताएँ होती है। वह भी सुरक्षा चाहता है। उसे प्यार पाने और करने , किसी एक समूह से सम्बन्धित होने तथा समुदाय द्धारा उसे स्वीकार किये जाने की भी आवश्यकता होती है।

विशिष्ठ आवश्यकताएँ :

1. ज्ञान प्राप्त करने और समझने की।
2. सृजनात्मकता और निर्माण तथा अनुसंधान संबंधी आवश्यकता।
3. अपनी विशिष्ट योग्यता, उचित योग्यता संबंधी विकास करने की।
4. आत्माभिव्यक्ति ओर आत्म प्रदर्शन की।

विकास के प्रयास – बालक अपने विकास के लिये उचित वातावरण की आवश्यकता होती है उसे उसकी विशिष्ट आवश्यकताओं व समस्याओं के संदर्भ में पूरी तरह समझा जाना भी आवश्यक है। ऐसा बालक बहुत अधिक जिज्ञासु तथा ज्ञान पिपासु होता है, इसलिये वह सदैव गहन अर्थ रखने वाले अनेक प्रश्न पूछता है।

1. अलग विद्यालय की आवश्यकता
2. ऐसे बालकों की शिक्षा की व्यवस्था करने के लिये अलग विद्यालय हो। जहाँ उन्हें अपनी योग्यता को विकसित करने की पर्याप्त सुविधाऐं तथा अवसर प्रदान किये जावे।

निष्कर्ष – प्रतिभाशाली बालकों को पूरा-पूरा अवसर दिया जाना चाहिये। उन्हें उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सौंपना चाहिये तथा विद्यालय के कार्यो में हाथ बटाने का अवसर देना चाहिये। इस प्रकार वर्तमान शैक्षणिक ढाँचे के अन्तर्गत बिना कोई अतिरिक्त आर्थिक बोझ डाले हुए प्रतिभावान बालकों को आगे बढ़ाने के लिये आवश्यक सुविधाऐं प्रदान करना चाहिए। प्रतिभाशाली बच्चों को शिक्षा देने के लिये किसी योजना में विद्यालय के पाठ्यक्रम को अधिक प्रतिभाशाली बच्चों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अधिक से अधिक विस्तृत तथा उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिये।

प्रतिभावान बालक की आवश्यकताएँ और समस्याएँ – अन्य सामान्य बालकों की तरह प्रतिभावान् बालक की भी अपनी मूल आवश्यकताएँ होती है वह भी सुरक्षा चाहता है, उसे प्यार पाने और करने , किसी एक समूह से संबंधित होने तथा समुदाय द्धारा उसे स्वीकार किये जाने की आवश्यकता भी होती है। इस प्रकार की मूल आवश्यकताओं के अतिरिक्त प्रतिभावान बालकों की कुछ विशिष्ट आवश्यकताएँ अग्रांकित है -

- ज्ञान प्राप्त करने और समझने की आवश्यकता।
- सुजानत्मकता और निर्माण तथा अनुसंधान संबंधी आवश्यकता।
- अपनी विशिष्ट योग्यता अथवा योग्यताओं का उचित विकास करने की आवश्यकता।

---

* शोधार्थी, शासकीय शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

- आत्म अभिव्यक्ति और आत्म प्रदर्शन की आवश्यकता।

किसी परिस्थिति में जब एक प्रतिभावान बच्चे के ऊपर आवश्यकता से अधिक ध्यान दिया जाता है अथवा बात–बात में उसकी प्रशंसा की जाती है तब वह अपने आप को दूसरों से श्रेष्ठ समझने लग जाता है और उसमें अहंकार और दंभ की मात्रा बढ़ती जाती है। फलस्वरूप वह अपने सहपाठियों तथा मित्रों को तुच्छ और यहां तक कि मूर्ख समझकर उनसे घृणा करने लग जाता है, दूसरी ओर साथ के बच्चे भी उसको अपने से कुछ भिन्न समझने लगते है। कुछ उनकी प्रतिभा के कारण उनसे ईष्या करने लगते है। इस प्रकार प्रतिभावान बालक को उसके अपने समूह द्वारा अंगीकृत नहीं किया जाता तथा वह एक प्रकार से अपने समूह से अलग–थलग पड़ जाता है। इस प्रकार का सामाजिक बहिष्कार उसे काफी अशांत बना देता है। धीरे–धीरे या तो वह प्रतिकार की भावना से विद्रोही और लड़ाकू बन जाता है अथवा अपने आप में सिमट कर उसका व्यक्तित्व पूरी तरह से दब जाता है।

References :-

1. American Psychiatric Association Diagnostic and Statistical Manual of Mental Deficiency (2nd ed), DSM –II Washington D.C.1980
2. American Association on Mental Deficiency (1973) as cited by Kisker George W ., The Disorganised Personality ; Mcgraw Hill (International student Edition III)1664
3. Barton, Hall Psychiarric Examination of the school child , London : Edward Arnold , 1947.Bower
4. E.M. Early identification of Emotionally Handicapped children in school (3rd) spring field II Thomas 1981.
5. British Mental Deficiency Act. (1929) as cited by Shanmugam T.E. Abnormal Phychology New Delhi Tata Mcgraw Hill, 1981
6. Havighurst R.J.Quoted in N.B.Henry (E.D) Education for the Gifted Fifty seventh year book of National Society for the study of Education part II Chicago.
7. Kavale K.A and Forness S.R. , The Science of Learning Disabilities SanDiego, C.A. College Hill 1985
8. Burt C The young Delinqument 3rd ed) London University of London press 1938
9. Shankar, Udai Problem Children New Delhi Steerling Publishers 1976

****

Recruitment-Selection Process ICICI Prudential Life Insurance Companies

Dr. Jyoti Jain *

Objectives Of The Project - Every task is undertaken with an objective. Without any objective a task is rendered meaningless. The main objectives for undertaking this project are:

1. To understand the internal Recruitment process at ICICI Prudential Life Insurance
2. To identify areas where there can be scope for improvement
3. To give suitable recommendation to streamline the hiring process

Methodology - The insurance sector is marked with a high level of attrition and therefore recruitment process becomes a crucial function of the organization. At ICICI Prudential Life Insurance, recruitment is all time high during May-June and Oct-Nov. The attrition is high among the sales managers, unit mangers mostly in the sales profile. The recruitment is high during these months due to the fact that March and September are half year closing and business is high during Jan-Mar. Thus it is only after March that people move out of the companies.

My area of focus was the recruitment and selection particularly at ICICI Prudential Life Insurance.

Before any task was undertaken, we were asked to go through the HR policies of ICICI Prudential Life Insurance so that we get a better understanding of the process followed by them.

1. The first task was to understand the various job profiles for which recruitment was to be done.
2. The next step was to explore the various job portals to search for suitable candidates for the job profile.
3. A candidate matching the desired profile was then lined for the first round of Face to Face interview in their respective cities.
4. Firstly the candidate had filled up the personal data form(pdf).
5. The external guide maintained a regular updating of the database.

Research Methodology

Date Source

Primary : Through Questionnaires
Secondary : Through Internet, Journals, News papers and Misc.

Data Collection Procedure : Survey
Research Instrument : Structured Questionnaire.
Sample Size : 80
Sample Area : work done in Delhi regional Office.
Sample procedure : Random sampling.

Project Schedule :

First 1 week : Training program from the company.
Second week : Collecting the primary and secondary data.
Third Fourth week : Study Recruitment & Selection Process
Fifth week : Designing the questionnaire .
Sixth week : Conducting the survey in RO.
Seventh week : Analysis of Data Collection.
Eighth week : Final Report preparation and presentation.

Limitations of the study

Task - The recruitment at ICICI Prudential Life Insurance involved a lot search from the database and calling up candidates to check whether they fit the job specification.

Difficulties :

1. Candidates were reluctant to talk at times;
2. Candidates who were contacted were not interested in Insurance on many occasions;
3. Candidates who were scheduled for interview would not turn up;

Recruitment And Selection - ”The art of choosing men is not nearly so difficult as the art of enabling those one has chosen to attain their full worth”.

Recruitment is the process by which organizations locate and attract individuals to fill job vacancies. Most organizations have a continuing need to recruit new employees to replace those who leave or are promoted in order to acquire new skills and promote organizational growth.

Recruitment follows HR planning and goes hand in hand with selection process by which organizations evaluate the suitability of candidates. With successful recruiting to create a sizeable pool of candidates, even the most accurate selection system is of little use

1. Creating an applicant pool using internal or external

---

*Professor (Commerce) Shri Arihant Colllege Of Professional Edutaional, Ratlam (M.P.) INDIA

methods

2. Evaluate candidates via selection
3. Convince the candidate
4. And finally make an offer

Scope - To define the process and flow of activities while recruiting, selecting and appointing personnel on the permanent rolls of an organization.

Authorization:

S.No.	Authorized Signatory
1	Head- Human resource
2	Managing director

Exclusions - The policy does not cover the detailed formalities involved after the candidate joins the organization.

Activity Flow - The organization philosophy should be kept in mind while formulating the recruitment procedure.

Recruitment and Selection is conducted by:

1. HR & Branch Manager
2. Functional Head

Recruitment Planning :

Recruitment Planning On The Basis Of Budget - The manpower planning process for the year would commence with the company's budgeting activity. The respective Functional heads would submit the manpower requirements of their respective functions/ departments to the board of Directors as part of the annual business plan after detailed discussion with the head of human Resource Function along with detailed notes in support of the projected numbers assumptions regarding the direct and indirect salary costs for each position.

Sourcing Of Suitable Candidates :

Selection Of Sources - Regional HR would tap various sources/channels for getting the right candidate. Depending on the nature of the position/grade, volumes of recruitment and any other relevant factors, the Regional HR would use any one multiple sources such as:

1. Existing database (active application data bank);
2. Employee referral as per any company scheme that may be approved from time to time;
3. Advertisement in the internet/newspapers/magazines/ company's sites/job sites or any other media;

Advertisements - All recruitment advertisements (in any form and any medium) shall always conform to the KLI compliance norms and would not be released by any department or branch without the approval of the VP-HR.

Screening the candidates

First level screening - The Candidates would be screened by the HR Manager/Branch Manager for the respective locations.

This assessment will be with respect to:

a. The general profile of the candidate,
b. Personality fit of the candidate into the profile,
c. Aptitude/attitude of the candidate,

For the final selection, the regional Manager (Business Heads for HO) will meet the candidates short listed by the branch manager/VP. The chart specifying the Minimum approval level for each level of recruitment is specified below:

Category	Branch Manager/ Chief Manager	Area Manager/ AVP/VP	Business Heads	Managing Director
CSE/Advisor	Yes	No	No	No
BIC	Yes	Yes	No	No
BM/CM	Yes	Yes	Yes	No
SM	Yes	Yes	Yes	Yes

Administrative Actions Regarding Interviews - Scheduling and the venue of the interviews would be handled by the recruitment team in consultation with the short listed candidate & the selection panel members, after taking mutual convenience into account. For field positions, respective branch/regional heads would undertake this co-ordination.

Reference checks - Normal, reference checks should be undertaken with at least one reference. A second reference check will be done if considered necessary.

SWOT Analysis of ICICI Prudential Life Insurance's Recruitment Process

Strengths	Weaknesses
1. Brand equity of Kotak Mahindra Bank.	1. Pre assessment tests are costly.
2. RigorousPre-Hiring assessment tests to understand aptitude and personality of candidates.	2. Conversion of footfalls is low.
3. Proper reference checks to ensure that only bonafide candidates are appointed.	3. Lengthy pre-offer formalities.
4. Adequate number of channel partners to generate footfalls for each location.	4. Huge employee turnover.
5. Footfall MIS being maintained at each branch locally by Admin.	
Opportunities	**Threats**
1.Campus recruitments have huge potential for fulfilling manpower requirements cost effectively.	1.Increasing number of private players in insurance sector creates ample choices,frequent & easy mobility for employees.
2.Tie up with recruitment agencies on supplying fixed number of footfalls week on week.	2. Same channel partners are handling all insurance companies. This leads to same pool of candidates being circulated to all partners.
3.Develop exclusive contract with channel partners to meet the manpower requirements.	3. Increasing spill over as a candidate has more than one offer at the time of making a job shift.
4.Make blue form brief and to the point.	4. As the insurance industry is small, senior level candidates hesitate to meet HR of other companies for the fear of grapevine.
5.Reduce turn around time of making an offer.	

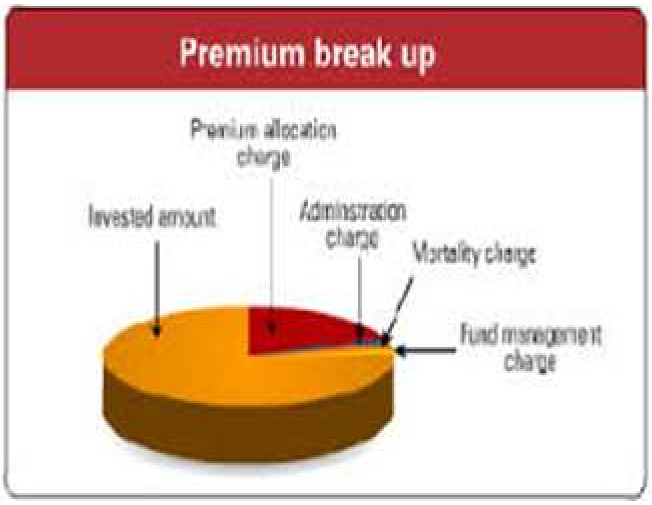

Recommendations & Suggestions :

Compress the “white space” in your hiring process.

White Spaces are delays in hiring process that are unproductive, waste time, and virtually assure you’ll lose talented candidates.

Here at ICICI Prudential Life Insurance, the delays occur when the outstation candidates are called for interviews at Regional branches like Delhi and Mumbai.

One size doesn’t fits all

Blend technology into every aspect of your recruiting and hiring process.

Web-based technology lets you increase hiring speed and quality while reducing costs.

Build and manage your candidate pool as a precious resource.

A “candidate pool” is a group of individuals who have shown interest in working for your company and are qualified for and ready to fill certain positions.

Conclusion - Insurance is confronted with high attrition rate. Therefore it makes recruitment a critical function in the organization. In order to grow and sustain in the competitive environment it is important for an organization to continuously develop and bring out innovations in all it activities. It is only when organization is recognized for its quality that it can build a stability with its customers. Thus an organization must be able to stand out in the crowd.

Learning - Every endeavor undertaken to accomplish challenging goals, can only be successful under the experienced and encouraging guidance. I am privileged to have undergone training at ICICI Prudential Life Insurance.

References :-

1. Personal research.

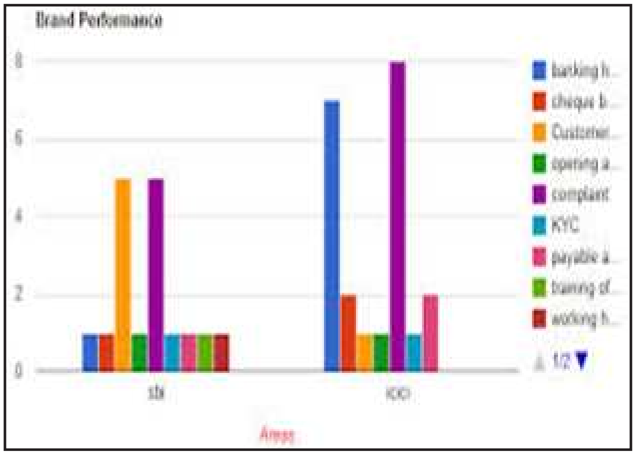

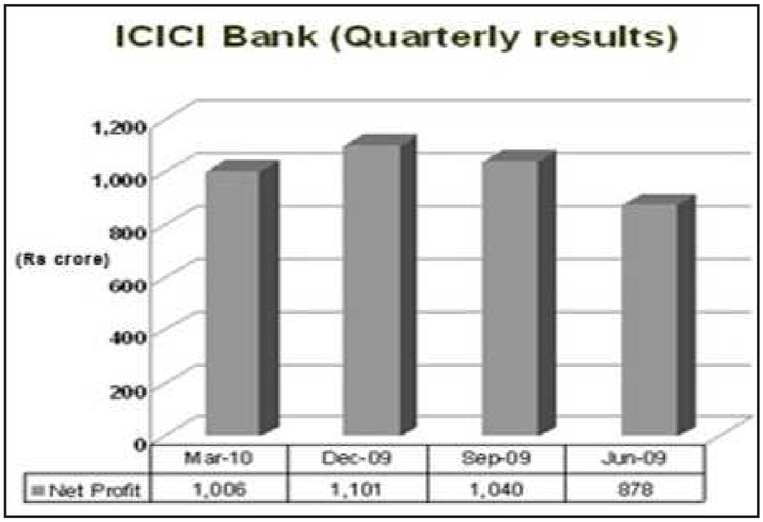

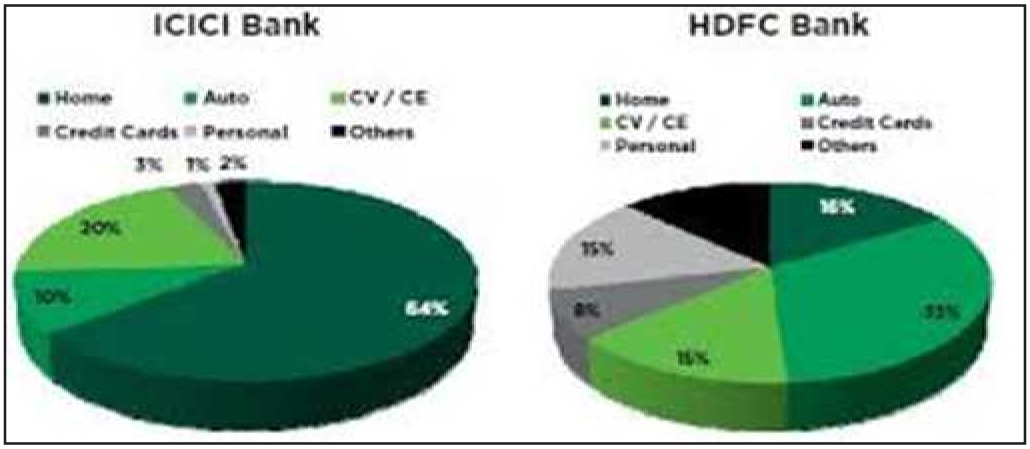

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Scope of Media in the Promotion of Tourism Industry in India

Dr. Kaustubh Jain* Prem Shankar Dwivedi **

Abstract - Media plays an important role in creating awareness. Its role in the various aspects of life is becoming increasingly more important day by day, in areas like social interaction, and cultural and educational aspects of our life. As history reveals the culture, traditions, and many more things with the help of archaeological sources in the very similar way media can also create and aware people about different tourist destinations. Media gives information about tourist place, hotels, tour operators; local people etc. which plays an important role in creating perception or brand image of the product (tourist destination). The media contribute greatly in generating tourist attractions. Media are playing an important role in the growth, development and promotion by creating a better awareness and understanding to cater to the needs and requirements of domestic and international tourist as one knows that every traveller is a 'potential' tourist, It depends upon the campaign of professionals (media professionals and tourism experts) of the industry to tap this potential and convert the 'potential' into the 'actual' clients (tourist). This changing scenario of the technology and science discoveries are making consumer behaviour more complex and unpredictable in such a time marketers are looking for more "tourist-friendly" sources of information. Therefore scope of media in promoting tourism has increased a lot. Thus this paper focuses on the impact of media in promoting Indian tourism industry worldwide.

Keywords - scope, media, tourism industry, tourism in India.

Introduction - - Media generally refers to advertising and the communication of ideas or information through publications/channels Media (print and electronic media). It can also be known as communication technology and it plays very important role in creating favourable circumstances for investments. The powerful effects of media communications can bring big changes of attitudes and behaviour among the key actors in local, national and global level of tourism. The social, cultural, economic, political and environmental benefits of tourism would show the way in monumental and historic changes in the country as the industry grows.

With the revolutionary growth and development in communication technologies the scope of media has increased a lot in developing tourism. This strategy involves the planned communication component of programmes designed to change the attitudes and behaviour of targeted groups of people in specific ways through person to person communication, mass media, traditional media, social media or community communication. It aims at the delivery of services and the interface between service deliverers and beneficiaries where people are empowered to have informed choice, education, motivation and facilitation effecting the expected changes. This can be done by media advocacy targeting all stakeholders involved in the tourism industry. Effective use of communication techniques can promote better uses of participatory message design which combines both traditional and modern media. The internet granted the freedom enjoyed by print media and common carriers such as letters, mails, and cable to the public media or social media. The big capacity of internet enables each media house to exhaustively investigate and publish depth analyses. Internet radio is not limited to audio as pictures, images, digital files and graphics are accessible to the users. Advertisers and their prospect customers can easily interact via the internet broadcasts.

Need for the Study - It is notable that the Travel and Tourism sector has actually continued to grow over these past years. International tourist arrivals reached a record 1.14 billion in 2014, 51 million more than in 2013, according to the United Nations World Tourism Organization (UNWTO). The World Travel & Tourism Council (WTTC) estimates that the Travel &Tourism sector now accounts for 9.5% of global GDP, a total of US$ 7 trillion, and 5.4% of world exports. Encouraging the development of the Travel &Tourism sector is all the more important as the T&T industry continues to play a key role as a driver of growth and job creation, growing at 4% in 2014 and providing 266 million jobs, directly and indirectly. This means that the industry now accounts for one in 11 jobs on the planet, a number that could even rise to one in 10 jobs by 2022, according to the WTTC.

The travel & tourism competitiveness index 2015 covers 141 economies worldwide in this India takes 52nd place overall. Travel &Tourism already accounts for 5% of India's employment and its huge potential for further growth is made

---

***H.O.D. (Commerce) AISECT University, Bhopal (M.P.) INDIA**
**** Research Scholar (Management) AISECT University, Bhopal (M.P.) INDIA**

visible by comparing the country's 7 million international visitors to China's 55 million. In this competitive world media plays a vital role in all industry. The Indian tourism Industry has flourished like never before in the recent years. This extraordinary growth that the Indian tourism industry has witnessed is a result of the improvement GDP of the country.

Objectives of the Study - The following are the major objectives of the paper.

1. To study about the impact of media on tourism promotion.
2. To understand the influence of social media on local cultural, social and environmental issues of the concerned geographical area.

Review of Literature - The term social media is generally understood as Internet-based applications that contain consumer-generated content and facilitate a higher level of social interaction among travellers.

Customer's viewpoint, the value of using social media depends in its richness on personal experiences and trustworthiness as electronic word-of-mouth. The impact of user generated content by social media on a traveller's decision making is well recognised in various market research reports. A number of earlier studies have also examined the impact of social media on travellers' information. Their search behaviour suggested that travel reviews on social media sites help add fun to the planning process and increase confidence for travellers' decision as the risk can be reduced.

Types of Media :

1. Media include Communication channels through which news, education, entertainment, data or promotional messages are communicated.
2. Popularity of the internet and social sites such as Face book and Twitter, social media is now an important channel which allows messages to be spread to the public.
3. Media include every broadcasting medium such as magazines, TV, radio newspapers,, billboards, direct mail, telephone, internet and fax etc.

Relationship between Media and Tourism - Media and tourism both belong to the Service industry and both work together also. Media contribute to 80% of tourism revenue where as tourism contributes to 25% of media's revenue. The role of tourism in media industry such as journalism is ever growing. Most of the universities offer journalism as a course students have to do compulsorily or they have to prepare projects on tourism and its allied areas for their respective degrees. Media plays an important role in bringing emerging destinations in light. The relationship between tourism and media is vital and complex. Tourism is highly dependent on media reporting because the vast majority of travel decisions are made by people who have never seen the destination before. When there is bad news or a crisis the tourism is also affected in a negative way. Tourists are scared away from destinations caught in the disaster coverage, causing communities dependent on tourism to lose their source of livelihood.

Role of Media in Indian Tourism - In a country like India the travel journalists, media experts on travel, leading attractive, popular and branded newspapers mainly published from Indian Metro cities, and electronics media are always highlighting the clients about the places of tourist interest, tourism, tourist season (peak and lean), image, scope of shopping, resources, hospitalities, peoples, culture and heritage to cater to the needs of prospective and actual tourists.

Tourism earns revenue through foreign exchange. This foreign exchange is necessary for the government for reducing its deficit; media are responsible for creating awareness about tourist destinations available in India to the overseas travellers. Media industry works with all the stakeholders (hotels, travel agencies, tour operators, airlines and the various government agencies) to bring revenue to the country by promoting tourism. Without the assistance of media and its support many places would have remained unexplored as the awareness about the place is very minimal to the foreigners. For e.g.: Chennai has the second longest coastline in the world. This information would not be available to outside world without the support and patronage of media. Even social networking sites like face book and YouTube are also promoting tourism. The Tirunelveli Halwa became popular only after media started promoting it and it caught the people's attention towards the mouth-watering and Irrutu Kadai Halwa became an instant success. The fish curry of Malabar and Goan fish curries which are popular in the European countries attribute their success to the vigorous campaign by the hospitality and media sectors of India.

Print, visual and electronics media are trying to project the Indian tourism resources and products in different process. Many government plans which indent to encourage tourism also we come to light with the help of media like the work of Union Ministry which was started a few years back was on a special package-linking the cultural heritage of the country with tourism, to make India a cultural tourism spot. The new packages aim at good accommodation and infrastructure for tourists. Some of them, like the Vivekananda Circuit, will cover places like Kolkata, Kanyakumari, and Rajasthan- where Swami Vivekananda travelled in his life, the Buddha circuit- which would go through Sarnath, Gaya and other places where Buddha travelled. These circuits will attract tourists from the eastern countries like Japan, Korea and Thailand, who were neglected so far. Now this creates a better image of the country and thus the industry is benefited. Communication definitely affects tourists (clients) directly and indirectly. Now a day's almost all the leading newspapers regularly feature tourism news in their daily publications. Sometimes a few organizations are sending their journalists to make a coverage on Indian and foreign destinations. Every year before a long vacation like Pooja vacation in West Bengal, Summer Vacation in northern India and southern India number of magazines like (Outlook Traveller) regularly feature different nice and magnificent articles to attract one segment of tourist community to participate in long trip and short trip either in India or in abroad.

Impact of Media in Promoting Tourism Industry - Over the years media have contributed towards shaping tourism into a responsible industry by promoting the following good practices;

1. It protects the environment and minimizes the negative social impact of tourism.
2. It generates greater economic benefits for local people and enhances the well-being of host country.
3. It makes positive contributions to the conservation of natural and cultural heritage and promotes the world's diversity.
4. It helps to understand the local cultural, social and environmental issues.
5. It provides more enjoyable experiences for tourists through more meaningful connections with local people of the destinations.

Social Media Marketing Strategies - Social Media Marketing is still in its infancy. Most of the online retailers though appreciate its positive promotion; they are still in the early stages of adoption. For an organization willing to invest in social media marketing, it is important to understand why it is an important marketing strategy and how it can help:

1. This is the age of consumer satisfaction. It is not about selling it is more about interacting. There is a lot to learn from the customers. Using social media one can identify customers, listen to their feedback and use them in improving and innovating on products or services.
2. It is not a mass advertising strategy. It can be used to identify peer groups and advertise to the particular group. Social Media can help in identifying influencers and through them one can guide a prospective customer into making a purchase.
3. It calls for novel advertising this is largely due to the multitasking phenomena. A person watching a video clip on YouTube might be simultaneously updating a blog, while reading another one and watching friend's photographs on Face book. In order to bring their attention away from distractions the advertisement must be innovative and interesting to hold the imagination and attention of the prospect tourists.
4. At the same time the message must also provoke the recipients into action; like seeking a detailed description of the product/service, or suggesting to a friend or initiating purchase. So, if the advertisement is trying to sell something then it should be conveniently placed with links so that the prospects can make a purchase with least effort.
5. Similarly Social Media can be used to increase customer loyalty through customer support services and thus improve customer retention.

Social media gives businesses on small budgets the ability to find out what people are saying about them (and others) in their industry, without paying large sums on market research. With its ear on social media, the company will be the first to know if its product is working or if changes are to be made. There are many things that social media can do for business. Developing a strategy for using it means that the firms need to think about what they want to accomplish this year and determine how social media fits into the plan. One of the benefits of a social media strategy is the fact that the available tools can customized for their particular needs. The firms can choose to concentrate their efforts on the sites that seem to offer the best return on investment, while taking a "wait and see" stand on the other side.

Conclusion - Indian tourists and travellers are being influenced by different types of attractive presentation by specialized television channels, articles by renowned journalists, and fantastic coverage by travel magazines. Slowly and gradually all these media are creating a positive image and a picture or brand of tourism in the minds of people. They are further creating perception, psychology, behaviour or and in the final selection of the site (inbound and outbound tourist).As the verdict goes, media have a social responsibility to enhance the blending of local, national and international cultural values for enriched society and economy. Public communications strategy based on access to quality information and knowledge will drive the new global tourism through partnership initiatives such as: peace and security, conflict resolutions for eco-tourism, quality tourism, Joint ventures, technology transfer etc.

References :-

1. Deshwal, Parul, "Tourism Industry: An Instrument of Indian Economic Growth through FDI", International Journal of scientific research and management (IJSRM) vol-3(2)-(2015)ISSN (e): 2321-3418, pp.2137-2140
2. Deepanshu and Gupta Nitin, "Present and Future of Indian Tourism Industry: A
3. SWOT Analysis of Andaman Islands", Masters International Journal of
4. Management Research and Development (MIJMRD), ISSN: 2347-9043, Vol. I,
5. Issue I, November, 2013, 6. pp.39-50.
7. Bhatia Archana, "SWOT Analysis of Indian Tourism Industry", International Journal of Application or Innovation in Engineering and Management (IJAIEM),ISSN 2319 – 4847,Vol. 2, Issue 12, December 2013, pp.47-49.
8. Bhatia Archana, "Role of Tourism Policies and Competitiveness of Indian Tourism", Asia Pacific Journal of Marketing and Management, Vol.2 (6), June 2013.
9. Dixit Saurabh Kumar, "Community Attitude towards Tourism Development: Study of Meghalaya, India," South Asian Journal of Tourism and Heritage, Vol.7, No.2, July 2014, pp.25-32.
10. Kumar Ravi Bhushan, "Pilgrimage tourism in Kurukshetra (Haryana): A Sustainable Development Approach", African Journal of Hospitality, Tourism and
11. Leisure Vol. 3 (2) - (2014) ISSN: 2223-814X, 2014, pp.1-10.
12. Herget,J.,Petru,Z.,Abrham,J., "City Branding And Its Economic Impacts On Tourism", Economics & Sociolog

, vol - 8(1)-(2015)- ISSN:2071-789X, pp. 119-126.

13. Chaudhary, M. (2000). India s image as a tourism destination –perspective of foreign tourists. Tourism Management, 21, 293-297.
14. Ahmed, Z.U., & Krohn, F.B. (1992). Marketing India as a tourist destination in North America –challenges and opportunities. International Journal of Hospitality Management, 11(2), 89-98.Bhattacharyya , A. (2010).
15. Michael A. Stelzner (2010), Social Media Marketing Industry Report, "How Marketers are using social media to grow their businesses", Social Media Examiner, April 2010
16. Nora Ganim Barnes, Eric Mattson, "Still Setting the Pace in Social Media: The First
17. Longitudinal Study of Usage by the Largest US Charities", University of Massachusetts Dartmouth Center for Marketing Research, 2008
18. Engvall, M. et al., 2012, Offline vs. Online: Who buys where? A customer segmentation study of travel agencies, Bachelor thesis within Business Administration, Jonkoping International Business School
19. Muller, H. (1994) The thorny path to sustainable tourism development. Journal of Sustainable Tourism 2(3), 131–6. Murphy, P.E. (1985) Tourism: A Community Approach. New York: Methuen.
20. Nelson, J.G and Butler, R.W. (1974) Recreation and the environment. In I.R.Manners and M.W. Mikesell (eds) Perspective on the Environment (pp. 290–310).
21. Lenhart, A. et al., 2010, Social Media and Young Adults. Washington, DC: Pew Research Center; Available at: http://pewinternet.org/Reports/2010/Social-Media-and-Young-Adults.aspx.
22. Agarwala, VS. "The heritage of Indian art" publication division Govt. of India, New Delhi 1964.

****

E-Waste Management : A New Business Opportunity

Dr. Sudhir Mahajan * **Dr. Manoj Mahajan** **

Abstract - E-waste is one of the fastest growing waste streams globally. In India the concept of e-waste recycling is still at nascent stage but in developed country it is taken very seriously with plenty of laws dedicated to it. But with the advancement of technology the concept of recycling e-waste material is fast catching up with Indians and it is happening big time.

According to 'Global E-waste Monitor 2014' report, India was the fifth largest producer of e-waste in the year 2014. As per United National University's Report there was generation of 17 lakh tons of e-waste in India in the year 2014 which was just 1.46 lakh tons as compared to the year 2005.

These staggering numbers speak volumes about the business opportunity for environmental conscious entrepreneurs in the recycling business of this material. Apart from business concern e-waste provides benefits such as job creation, improved technological knowledge and environmental benefits. In developing countries, job creation also helps in alleviation of poverty and improved health conditions. This study highlights the associated issues and opportunities for the entrepreneurs.

Key Words - E-Waste, E-Waste generation, Entrepreneurs, Recycling.

Introduction - The information technology has revolutionized the way we live, work and communicate. The creation of innovative and new technologies and the globalization of the economy have made a whole range of products available and affordable to the people changing their life styles significantly. New electronic products have become an integral part of our daily lives providing us with more comfort, security, easy and faster acquisition and exchange of information. But on the other hand, it has also led to unrestrained resource consumption and an alarming waste generation. Both developed countries and developing countries like India face the problem of e-waste management. The rapid growth of technology, up gradation of technical innovations and a high rate of obsolescence in the electronics industry have led to one of the fastest growing waste streams in the world which consist of end of life electrical and electronic equipment products.It comprises a whole range of electrical and electronic items, many of which contain toxic materials. Many of the trends in consumption and production processes are unsustainable and pose serious challenge to environment and human health. Optimal and efficient use of natural resources, minimization of waste, development of cleaner products and environmentally sustainable recycling and disposal of waste are some of the issues which need to be addressed by all concerned while ensuring the economic growth and enhancing the quality of life.

The UNU ADDRESS project documents that globally e-waste volume placed on the market since 1990 has grown from 19.5 million tones to 57.4 million tones in 2010 and is set to more than triple to approximately 75 million tones by 2015.

The developed countries are the largest producer of e-waste, let's look at the statistics; the three largest producer of e-waste are USA with 5.1 million tones followed by UK with 1.2 million tones and Australia with 1.19 million tones. The total revenue generated from the e-waste management market is expected to grow from $ 9.15 billion in 2011 to $ 20.25 billion in 2016 at a rate of 17.22 percent.

E-waste disposed contains both valuable materials as well as toxic materials, which needs special type of care while handling it. Many e-waste recycling companies are taking full advantages of this scenario.

Objectives of the study :

The major objectives of the study are -

1. To study of E-waste in today's scenario.
2. To know the associated aspects of E-waste
3. To explore the opportunities for the entrepreneurs.

Methodology - Secondary sources of data like recent independent studies conducted by the NGOs or government/ private agencies, journal articles, authentic internet resources, etc were evaluated for the purpose of this study.

What is E-waste?

E-waste' means electrical and electronic equipment, whole or in part discarded as waste by the consumer or bulk consumer as well as rejects from manufacturing, refurbishment and repair processes.[6]

* Asst. Professor (Commerce) A.S.R.M. Govt. College, Sonkatch, Distt. Dewas (M.P.) INDIA
** Asst. Professor (Commerce) A.S.R.M. Govt. College, Sonkatch, Distt. Dewas (M.P.) INDIA

E-waste or electronic waste, therefore, broadly describes loosely discarded, surplus, obsolete, broken, electrical or electronic devices. In other words old computers, laptop, scanners, copiers, consumer electronics, home appliance or similar products which is out of use or discarded or that have reached its end of life are called e-waste or electronic waste.

Composition of E-waste - The composition of e-waste is diverse and falls under 'hazardous' and 'non-hazardous' categories. Broadly, it consists of ferrous and non-ferrous metals, plastics, glass, wood and plywood, printed circuit boards, concrete, ceramics, rubber and other items. Iron and steel constitute about 50% of the waste, followed by plastics (21%), non-ferrous metals (13%) and other constituents. Non-ferrous metals consist of metals like copper, aluminum and precious metals like silver, gold, platinum, palladium and so on. [1] The presence of elements like lead, mercury, Beryllium, cadmium, selenium, Barium, chromium, and flame retardants beyond threshold quantities make e-waste hazardous in nature. It contains over 1000 different substances, many of which are toxic, and creates serious pollution upon disposal. [2] Obsolete computers pose the most significant environmental and health hazard among the e-wastes.

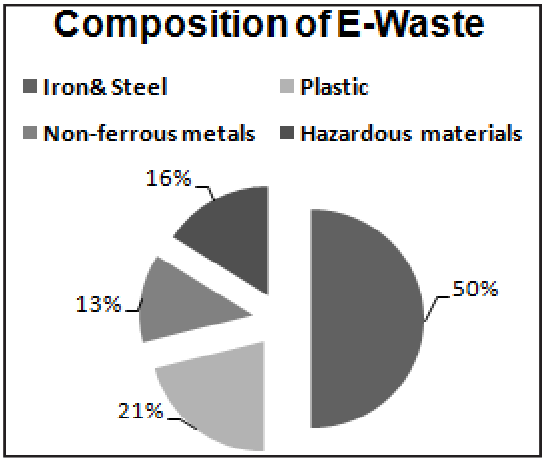

E-waste generation in India - Although no definite official data exist on how much waste is generated in India or how much is disposed of, there are estimations based on independent studies conducted by the NGOs or government /private agencies. According to the Comptroller and Auditor-General's (CAG) report, over 7.2 MT of industrial hazardous waste, 4 lakh tones of electronic waste, 1.5 MT of plastic waste, 1.7 MT of medical waste, 48 MT of municipal waste are generated in the country annually in 2005. [3]

The CPCB estimation has come true that it would exceed the 8 lakh tones or 0.8 MT mark by 2012-13. There are 10 States that contribute to 70 per cent of the total e-waste generated in the country, while 65 cities generate more than 60 per cent of the total e-waste in India. Among the 10 largest e - waste generating States, Maharashtra ranks first followed by Tamil Nadu, Andhra Pradesh, Uttar Pradesh, West Bengal, Delhi, Karnataka, Gujarat, Madhya Pradesh and Punjab. Among the top ten cities generating e-waste, Mumbai ranks first followed by Delhi, Bengaluru, Chennai, Kolkata, Ahmedabad, Hyderabad, Pune, Surat and Nagpur. [4] The main sources of electronic waste in India are the government, public and private (industrial) sectors, which account for almost 70 per cent of total waste generation. The contribution of individual households is relatively small at about 15 per cent; the rest being contributed by manufacturers. Though individual households are not large contributors to waste generated by computers, they consume large quantities of consumer durables and are, therefore, potential creators of waste. [5] An Indian market Research Bureau (IMRB) survey of 'E-waste generation at Source' in 2009 found that out of the total e-waste volume in India, televisions and desktops including servers comprised 68 per cent and 27 per cent respectively. Imports and mobile phones comprised of 2 per cent and 1 per cent respectively. As a large-scale organized e-waste recycling facility, the Attero Recycling Plant in Roorkee opened in January 2010. Despite 151 units currently registered with the Government of India, Ministry of Environment and Forests / Central Pollution Control Board, as e-waste recyclers/ re processors, having environmentally sound management facilities, the entire recycling process more or less still exists in the un organized sector. According to a data of CPCB (Central Pollution Control Board) less than 5 % of India's total e-waste gets recycled due to absence of proper infrastructure, legislation and framework. Almost half of all unused and end-of-life electronic products lie idle in landfills, junkyards and warehouses. There is huge scope for growth as the recyclers.

E-waste Regulations in India - The Basel Convention on the Control of Transboundary Movement of Hazardous Wastes and their Disposal was adopted in the year 1989 and India became party to the Convention in the year 1992. The scope of the Convention covers wide range of wastes defined as hazardous wastes based on their origin and/or composition and their characteristics. Under the provision of the Convention, transboundary movement of hazardous wastes is restricted except where it is perceived to be in accordance with the principles of environmentally sound management. Further, it proposes for application of regulatory system where transboundary movement is permissible. In pursuance of our obligations under the Basel Convention, Ministry had notified Hazardous Waste (Management, Handling and Transboundary Movement) Rules, 2008 for regulating the handling and transboundary movement of hazardous wastes including e-waste in the country.

E-waste (Management and Handling) Rules, 2011 have been notified for effective management of e-waste. State Pollution Control Boards/Pollution Control Committees are the designated authorities for monitoring and compliance under these Rules.For better management of electronic waste the government has notified E-waste (Management) Rules, 2016 dated 23rd March, 2016 which will be applicable from 1st October, 2016. These rules are extension of previous rules and are more effective as it has redefined the definition of e-waste. The provisions of draft Rules include expanding producers' responsibility, setting up of Producers' Responsibility Organizations, and e-waste Exchange, assigning specific responsibility to bulk consumers of electronic products for safe disposal, providing for economic incentives for collection of electronic waste, providing for logo-based identification of e-waste Rules compliant companies and providing for restriction on Government procurement of electronic products only from the companies who are compliant with e-waste Rules. Other measures include dedicated responsibility of electronic and electrical product manufacturers for collection and channelizing of electronic waste. [6]

Business Opportunities - Central Pollution Control Board (CPCB) estimated India's e-waste at 1.47 lakh tones or 0.573 MT per day. [7] In July 2009, India has the label of being the second largest e-waste generator in Asia. As per United National University's Report there was generation of 17 lakh tons of e-waste in India in the year 2014. More than 90 per cent of the e-waste generated in the country managed by unorganized sectors for recycling and disposal. Organized recyclers have been able to capture only 10 per cent of the total share of the e-waste market. Private e-waste recycling plants are there in just 13 districts having a totaled capacity of 4.46 lakh tons, hence there is room for new recyclers in the organized sector.

Various other research papers, reports and data points on the internet highlight the following facts -

1. Ministry of Environment and Forest [MoEF] '2012 report says that Indian electronic waste output has jumped 8 times in the last seven years i.e. 8, 00,000 tones. India has majorly two types of electronic waste market called organized and unorganized market. 90% of the electronic waste generation in the country lands up in the unorganized market. And out of this only 5.7 % of e -waste is recycled. Out of the total electronic waste generation in India, only 40 % of these are taken into the recycling processes and rest 60% remains in warehouses due to lack of skills, knowledge and awareness; inefficient and poor collection systems etc. If done in the right way, and in an organized fashion, e-waste management can become a dominant economic sector.
2. According to the United Nations Environment Programs [UNEP] '2010 report predicts that by 2020, E-waste from old computers in India will increase to 500%; from discarded mobile phones will be about 18 times high; from televisions will be 1.5 to 2 times higher; from discarded refrigerators will double or triple; than its respective 2007 levels.
3. TechNavio's analysts forecast the E-Waste Market in India market to grow at a CAGR of 26.22 percent over the period 2014-2019.
4. High technology penetration in Urban areas (>70%). This means that the highest source of e-waste is here.
5. Given the size of our population any fraction of any demographic unit is a large chunk in itself.
6. PC penetration in India is estimated to be 40 per 1000 as compared to 995 in the US. This shows the immense potential for refurbished PC market.
7. Large companies refresh the PCs every 4 years due to advancement (average).
8. In India, organized e-waste recycling is a nascent industry.
9. Moderate penetration in semi urban areas but a high growth rate (~100%).
10. Very low rural penetration and medium growth rate, but accelerating very fast.

Conclusion - Electronic waste recycling is one of the fastest growing green sectors in India, with a massive potential for growth. Entrepreneurs looking to enter this sector face a secular growing industry for a long time given the exponential rate of electronic waste in the country. Not only is India generating huge amounts of e-waste, thousands of tones of electronic waste are being imported into the country from the developed nations. Most of this e-waste is manually recycled with huge amount of inefficiency and also can lead to safety issues. Scientific recycling and disposal is need of the hour, as per capital electronics consumption in the India grows at a rapid pace.

The big volume of e-waste are being generated in India annually and though India has a number of laws in place/ proposed, most e-waste goes untreated, There are already some e-waste companies who are aggressively expanding but there is a lot of space for entrepreneurs to get in. In context of e-waste there is no need to say that one man's waste, however, is another man's treasure.

References :-

1. Ibid n.3, p.3
2. The Basel Action Network (BAN) and Silicon Valley Toxics Coalition (SVTC), Exporting *Harm: The High-Tech Thrashing of Asia*, February 25, 2002.
3. Ravi Agarwal , 'A Policy? Rubbish', *The Hindustan Times*, 4 May 2010
4. 'Disposal of e-waste', Rajya Sabha unstarred question no. 1887, dt. 07.12. 2009. Also see, Sanjay Jog, 'Ten states contribute 70% of e-waste generated in India', *The Financial Express*, 13 March 2008.
5. Satish Sinha, 'Downside of the Digital Revolution', Toxics Link , 28 December 2007,
6. E-Waste (Management) Rules, 2016 vide Notification no. G.S.R 338(E) dated 23rd March, 2016.
7. Lok Sabha unstarred question no. 650, dt. 28.07.2010
8. Respose Waste Management and Research Pvt. Ltd-Report
9. E Waste in India – Research unit (LARRDIS) Rajya Sabha Secretariat New Delhi June, 2011
10. Solving the E-Waste Problem (Step) White Paper 03 June 2014
11. eBizwire vol I issue 09 oct.2012
12. www.respose india.com
13. www.greenworldinvester.com
14. www.environmentalleader.com/2014/02/24

On the Determinants of Profitability of Indian Life Insurers - An Empirical Study

Dr. N. K. Patidar * Nidhi Saxena **

Abstract - The Indian life insurance industry is the least profitable market for its shareholders among all Asian countries due to fall in new business premium in 2010-11 in spite of the fact that it has reported net profit of Rs. 26.57 billion in 2010-11 as against net loss of Rs. 9.89 billion in 2009-10.

However, the life insures' characteristics that are related to profitability have not been studied in the Indian conditions. In this context, the present study tried to model the factors determining the profitability of life insurers operating in India taking return on asset as dependent variable. This is an empirical study. The sample for this study include all the 23 Indian life insurers (including 1 public and 22 private) and it used the data pertaining to 3 financial years, viz., 2008-09, 2009-10 and 2010-11. For this purpose, firm specific characteristics such as leverage, size, premium growth, liquidity, underwriting risk and equity capital are regressed against Return on Assets. This study led to the conclusion that profitability of life insurers is positively and significantly influenced by the size (as explained by logarithm of net premium) and liquidity. The leverage, premium growth and logarithm of equity capital have negatively and significantly influenced the profitability of Indian life insurers. This study does not find any evidence for the relationship between underwriting risk and profitability.

Introduction - A well-developed and evolved insurance sector is a boon for economic development as it provides long-term funds for infrastructure development at the same time strengthening the risk taking ability of the country. Life insurers are custodians and managers of substantial investments of individuals; and policyholders need to be confident that their insurer will be able to meet its promised liabilities in the event that claims are made under a policy. Regulatory authorities therefore seek to ensure that the financial performance of life insurance companies is in sound condition. Insurance is a big opportunity in a country like India with a large population and untapped potential. In this current scenario of growing customer base, one of the principal concerns underlying the regulation of the insurance companies is the need to protect the interest of and secure fair treatment to policyholders.

Insurance Market – Global And Indian Scenario - Insurance industry, the world over forms an integral part of the financial services sector and plays a pivotal role in the economic growth of an economy. A well-developed insurance market paves way for efficient resource allocation through transfer of risk and mobilization of savings. Insurance industry is well developed in economies such as the US, Europe, Japan, and South Korea. Emerging markets are found throughout Asia, specifically in India and China, and are also in Latin America. In 2012, the global insurance market is forecast to have a value of $4,608.5 billion, an increase of 24.9% since 2007. Life insurance dominates the global insurance market, accounting for 59.7% of the market_s value. The insurance market in India has witnessed dynamic changes including entry of a number of global insurers in both life and general segment. Life Insurance industry in India is ranked 9th among the 156 countries, during 2010-11 and the Indian non-life insurance industry improved in its global ranking to 19th in comparison to 26th in last year. The Indian insurance sector was dominated by the state owned Life Insurance Corporation of India and the General Insurance Corporation of India (earlier general insurer, now reinsurer) along with its four subsidiaries. The process of re-opening the sector had begun in the early 1990s and following the recommendations of the Malhotra Committee report, in 1999, the Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) was constituted as an autonomous body to regulate and develop the insurance industry. The key objectives of the IRDA include promotion of competition so as to enhance customer satisfaction through increased consumer choice and lower premiums, while ensuring the financial security of the insurance market. At present, the Indian insurance sector is a colossal one and is growing at a speedy rate of 15-20%. In exercise of the powers laid down in Section 14 (2) of the IRDA Act 1999, IRDA regulates, promotes and ensures an orderly growth of the insurance business for the benefit of all the stakeholders and to provide long term funds for accelerating the growth of the economy.

***Professor (Commerce) Govt. College, Pipliya Mandi, Dist.t Mandsaur (M.P.) INDIA**
**** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**

Insurance density of life insurance sector had gone up from USD 9.1 in 2001 to USD 55.7 in 2010. Insurance penetration had gone up from 2.15% in 2001 to 4.40% in 2010. Market share of LIC declined from 70.10% in 2009-10 to 69.78% in 2010-11. The market share of private insurers has gone up from 29.90% in 2009-10 to 30.22% in 2010-11 (http://www.irda.gov.in). The number of insurance companies stood at 48 at the end of 2010-11, consisting of 23 life insurers, 24 non-life insurers and a reinsurer. Edelweiss Tokio Life Insurance Company was granted registration in the year 2011-12, leading to total number of insurance companies increasing to 49 as at end-September 2011.

Objective Of The Study - This study aims to model the factors that determine the profitability of Indian life insurers taking the Return on Assets (ROA) as the dependent variable.

Research Methodology - This is an empirical study. It has taken all the 23 India life insurers (1 public and 22 private) as sample (Refer Appendix). The study period includes 3 financial years, viz., 2008-09, 2009-10 and 2010-11. The data required were drawn from IRDA data base and the public disclosures and annual reports of the respective companies. This study uses linear multiple regression model. For this purpose, the firm specific characteristics such as leverage, size, premium growth, liquidity, underwriting risk and equity capital are regressed against Return on Assets.

Table I shows the variables used and the formulae. variables used and the formulae. The linear multiple regression model developed for this study is as follows:

Table – I Variables chosen for the study Variables Formulae

Return on Assets (ROA)	Net Income before Taxes / Total Assets
Insurance Leverage (LEV)	Mathematical Reserves/ (Capital+Surplus)
Size (LnNP)	Log of Net Premium (Total Premium earned - Reinsurance ceded)
Premium Growth (PG)	Change in New Premium (First year Prem.+ Single Prem.)
Liquidity (LIQ)	Current Assets/Current Liabilities
Underwriting Risk (UWR)	Benefits paid/Net Premium
Equity Capital (LnEC)	Log of Equity Capital

Note: Compiled by the researcher based on earlier studies.

Limitations Of The Study - Following are the limitations of this study:

1. Variables such as industry dynamics, regulatory environment, company's franchise and competitive market position could not be included.
2. Macro economic variables such as interest rate change, number of insurers, inflation could not be included.

Scope For Future Research - This study has considered only six independent variables relating to profitability of the life insurers in India. Future research studies may consider more variables, both industry specific, regulatory and macro-economic variables.

Conclusion - This study led to the conclusion that profitability of life insurers is positively and significantly influenced by the size (as explained by logarithm of net premium) and liquidity. The leverage, premium growth and logarithm of equity capital negatively and significantly influence the profitability of Indian life insurers. This study does not find any evidence for the relationship between underwriting risk and profitability. In view of the untapped huge insurance market; unique regulatory environment comprising a hybrid model of regulation with competition; proposed approval to allow the players to tap the capital market for public issues; proposal to tie up with banks; and the proposal to increase the foreign direct investment, life insurers would shift their focus towards designing products providing long term savings and protection for the economy, through sustainable business models. This will help them to improve their profitability substantially in the core life insurance business than ever before.

References :-

1. Annual Report of Insurance Regulatory and Development Authority of India (IRDA), Available: www.irdaindia.org.
2. Annual Reports of various life insurers for various years, Available: www.irda.gov.in/ADMINCMS/cms/NormalData_Layout.aspx?page =PageNo764&mid=31.1.
3. Hifza Malik, (2011), Determinants Of Insurance Companies Profitability: An Analysis Of Insurance Sector Of Pakistan, Academic Research International, 1(3),315-321. Available: http://www.savap.org.pk/journals/ARInt./Vol.1(3)/2011(1.3-32).pdf.
4. Ho-Li Yang, (2007), The Effect of Financial Independence on the Performances of Life Companies: An Empirical Study, International Journal of Management, 24 (3), 522-540.
5. Naveed Ahmed, Zulfqar Ahmed,Ahmad Usman, (2011), Determinants of Performance: A Case of Life Insurance Sector of Pakistan, International Research Journal of Finance and Economics, Issue 61, 123-128.

****

म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. एल. एन. शर्मा *

प्रस्तावना - सार्वजनिक व्ययों की पूर्ति के लिए जब सरकारों को करो एवं गैर करो से प्राप्त आय के साधन कम पड़ते है। तो सरकार देशवासियों, विदेशी संस्थाओं एवं अन्य साधनों से ऋण लेती है। जिसे सार्वजनिक ऋण कहा जाता है। प्रो. फिण्डले शिराज के अनुसार, 'सार्वजनिक ऋण वह ऋण है, जो एक राज्य अपने नागरिकों या दूसरे देश के नागरिकों से लेता है।' इस बात की पुष्टि प्रो. डाल्टन ने भी की है कि 'सार्वजनिक सत्ता की आय का एक साधन सार्वजनिक आय प्राप्त करने का एक तरीका सार्वजनिक ऋण है।' इस प्रकार सरकार व्ययों की पूर्ति हेतु लोक ऋण प्राप्त करती है।

म.प्र. सरकार के राजस्व में पूंजीगत प्राप्तियों में (1) विविध पूंजीगत प्राप्तियाँ/ऋण एवं अग्रिम की वसूली (2) लोक ऋण जिसमें (3) लोक ऋण की प्राप्तियाँ (4) लोक ऋण के भुगतान (5) लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ सम्मिलित है। लोक ऋण के अन्तर्गत राज्य सरकार का आन्तरिक ऋण जिसमें प्राप्तियाँ, संवितरण के साथ शुद्ध लोक ऋण होता है तथा केन्द्रीय सरकार से ऋण एवं अग्रिम जिसमें प्राप्तियाँ, संवितरण के साथ शुद्ध लोक ऋण होता है और दोनों सम्मिलित करके प्राप्तियाँ, संवितरण जिसमें कुल शुद्ध लोक ऋण ज्ञात किया जाता है।

शोध का उद्देश्य - म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों का कितना योगदान है एवं उनकी वृद्धि दर क्या है, साथ ही छत्तीसगढ़ सरकार की तुलना में म.प्र. में इस शीर्षक का योगदान एवं उनकी वृद्धि दर कितनी है, साथ ही दोनों प्रदेशों में एवं केन्द्र में एक ही पार्टी की सरकारें है। अत: उक्त शीर्षक में राज्यों में केन्द्र का कितनी भागीदारी है, किस राज्य में ज्यादा है तथा किस राज्य में तुलनात्मक रूप से कम है यह ज्ञात करना शोध का प्रमुख उद्देश्य है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र - उक्त शोध पत्र में म.प्र. सरकार एवं छत्तीसगढ़ सरकार के बजट के प्रकाशित द्वितीयक संमकों का वर्ष 2012-13,2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 का तुलनात्मक उपयोग किया गया है तथा आवश्यकता अनुसार चित्रों द्वारा प्रदर्शन भी किया गया है।

शोध के अध्ययन की सीमाऐं - प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. सरकार एवं छत्तीसगढ़ सरकार के 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16 के बजट अनुमानों का ही अध्ययन किया गया है।

शोध व्याख्या - म.प्र. सरकार के पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋण का तुलनात्मक अध्ययन तालिका क्रं. 1 से स्पष्ट है, जो इस प्रकार है :-

तालिका 1 - (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 1 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :-

1. A. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में राज्य सरकार का आंतरिक ऋण में प्राप्तियां वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 27 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिन्ता का विषय है परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 19 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।

1. B. राज्य सरकार का आंतरिक ऋण में संवितरण वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 06 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है, परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 17 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

1. C. राज्य सरकार का आंतरिक ऋण में शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 55 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिंता का विषय है तथा वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 49 प्रतिशत की वृद्धि भी शुभ संकेत है।

2. A. केंद्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में प्राप्तियों में वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 38 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

2.B.केंद्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में संवितरण में वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 44 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

2.C. केंद्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में शुद्ध लोक ऋण वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 37 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013-14 से 2014-15 की तुलना में वर्ष 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 38 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

3.A. कुल लोक ऋण की प्राप्तियों में वर्ष 2012-13, 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 16.5 प्रतिशत की

---

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

कमी हुई जो चिन्ता का विषय है, परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 12.5 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।

3.B. कुल लोक ऋण के संवितरण में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 07 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 18 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

3.C. कुल शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 34 प्रतिशत की कमी हुई जो चिन्ता का विषय है, परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 35 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।

तालिका 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 2 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :–

1.A. छत्तीसगढ़ सरकार के बजट अनुमान में राज्य सरकार का आंतरिक ऋण में प्राप्तियां वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 09 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

1.B. राज्य सरकार का आंतरिक ऋण में संवितरण वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 67 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है, परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 52 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

1.C. राज्य सरकार का आंतरिक ऋण में शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई, परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 01 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

2.A. केंद्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 93 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिन्ता का विषय है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 78 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।

2.B. केंद्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में संवितरण में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 03 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिन्ता का विषय है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 03 प्रतिशत की पुन: गिरावट चिंता का विषय है।

2.C. केंद्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में शुद्ध लोक ऋण वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 334 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिन्ता का विषय है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 287 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।

3.A. कुल लोक ऋणों की प्राप्तियों में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 12 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 06 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

3.B. कुल लोक ऋणों के संवितरण में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 57 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो शुभ संकेत है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 20 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

3.C. कुल शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2012–13, 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 03 प्रतिशत की कमी हुई, जो चिन्ता का विषय है परंतु वर्ष 2013–14 से 2014–15 की तुलना में वर्ष 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 03 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।

तालिका 3 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 3 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है :–

1. A. राज्य सरकारों के आन्तरिक ऋणों की प्राप्तियों में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 25 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 10 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 15 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में –2 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 23 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 21 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में 17 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 03 प्रतिशत आगे है।

1. B. राज्य सरकारों के आन्तरिक ऋणों के संवितरण में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 6 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में –29 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 35 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में 12 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 26 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में –5 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जबकि छत्तीसगढ़ में –14 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 9 प्रतिशत आगे है।

1.C. राज्य सरकारों के आंतरिक ऋणों में शुद्ध लोक ऋणों में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में –44 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 21 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 23 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में –11 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 21 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 32 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014–15 से 2015–16 में मध्यप्रदेश में 38 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि छत्तीसगढ़ में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश 2014–15 से 2015–16 में छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 18 प्रतिशत आगे है।

2. A. केन्द्र सरकार से ऋण व अग्रिम की प्राप्तियों में वर्ष 2012–13 से 2013–14 में मध्यप्रदेश में 22 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में –15 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से –7 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2013–14 से 2014–15 में मध्यप्रदेश में 16

प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -78 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 94 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -22 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश 2014-15 से 2015-16 में छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 22 प्रतिशत पीछे है।

2.B. केन्द्र सरकार से ऋण व अग्रिम के संवितरण में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में 18 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 3 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 15 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में 43 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 43 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -1 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -3 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 2 प्रतिशत आगे है।

2.C. केन्द्र सरकार के ऋण व अग्रिम के कुल लोक ऋणों की प्राप्तियों में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में -31 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -43 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 12 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में 6 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -291 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 297 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -32 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 28 प्रतिशत पीछे है।

3.A. कुल लोक ऋणों की प्राप्तियों में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में 17 प्रतिशत छत्तीसगढ़ में 08 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 09 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में 0.5 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश में वर्ष 2013-14 से 2014-15 में छत्तीसगढ़ से 19.5 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में 12 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 02 प्रतिशत पीछे है।

3.B. कुल लोक ऋणों के संवितरण में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में 07 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -25 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 32 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में 14 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 32 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 18 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -4 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 12 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश 2014-15 से 2015-16 में छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 16 प्रतिशत पीछे है।

3.B. कुल लोक ऋणों के शुद्ध लोक ऋणों में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में 25 जबकि छत्तीसगढ़ में 20 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 05 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में -9 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 26 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में 26 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 06 प्रतिशत आगे है।

सुझाव -

1. म.प्र. सरकार के लोक ऋणों में राज्य सरकार के आन्तरिक ऋण में शुद्ध लोक ऋण की स्थिति में वर्ष 2014-15 को छोड़कर लगातार वृद्धि हुई है। जबकि छत्तीसगढ़ में भी लगातार वृद्धि हो रही है। म.प्र. में वर्ष 2012-13 से 2013-14 तथा 2014-15 से 2015-16 की वृद्धि दर छत्तीसगढ़ से बहुत अच्छी है,परन्तु वर्ष 2013-14 से 2014-15 में म.प्र. में वृद्धि दर छत्तीसगढ़ की तुलना में पीछे है, जो चिन्ता का विषय है, अत: म.प्र. में उक्त शीर्षक में वृद्धि दर के स्तर को बनाये रखने की आवश्यकता है इस हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिये।
2. म.प्र. के लोक ऋणों मे केन्द्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम में शुद्ध लोक ऋण की स्थिति में म.प्र. में छत्तीसगढ़ की तुलना में स्थिति बहुत अच्छी है परन्तु म.प्र. में वर्ष 2012-13 से 2013-14 तथा वर्ष 2014-15 से 2015-16 मे वृद्धि पर ऋणत्मक होना शुभ संकेत नही है। अत: वृद्धि दर के स्तर के बनाये रखने की आवश्यकता इस हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिये।
3. म.प्र. के कुल लोक ऋणों में वर्ष 2014-15 को छोड़कर लगातार वृद्धि हुई है। जबकि छत्तीसगढ़ में कुल लोक ऋणों में लगातार वृद्धि हुई है। छत्तीसगढ़ की तुलना में म.प्र. मे इस शीर्षक के अन्तर्गत वर्ष 2012-13 से 2013-14 तथा 2014-15 से 2015-16 की वृद्धि दर अधिक है। जबकि 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर कम है। अत: म.प्र. में वृद्धि दर के स्तर को बनाये रखने की आवीयकता है। इस हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एम.डी. अग्रवाल, गोपाल सिंह, आर्थिक विश्लेषण 2015, आर.बी.डी. पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
2. बी.एम.जैन, रिसर्च मैथ्डोलॉजी 2015, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर।
3. ममता जैन, दिनेश त्रिपाठी, मौद्रिक अर्थशास्त्र, 2014, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर।
4. रामप्रकाश सिंहल, वित्तीय क्षेत्र के सुधार, 2012, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
5. पवन कुमार, लोक अर्थशास्त्र, 2015, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
6. डी.एन. गुर्टू , लोक वित्त सिद्धांत एवं व्यवहार, 2014, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
7. पी.डी. माहेश्वरी, शीलचंद गुप्ता, उच्च आर्थिक विश्लेषण, 2015, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
8. S.N.Chand , Public Finance 2012 Part II Atlantic, Publishers , Distributors (P)Ltd. New Delhi
9. Arjun Y. Pangannavar , Public Finance, Principles ,Policies and Practices 2014, Atlantic Publishers Distributors (P) Ltd. New Delhi
10. S.N.Chand , Public Finance 2012 Part I Atlantic, Publishers , Distributors (P)Ltd. New Delhi
11. Sudhanshu Bhushan , Public Financing and Deregulated Fees in Indian Higher Education 2012 Book Well New Delhi

12. R.L.Sehgal ,R.Asthana , Financing , Pricing and Cost Recovery of Urban Infrastructure 2012 Book WellNew Delhi
13. Deepak Chawla , Neena Sondhi , Research , Methodology Concepts and cases 2014
14. Naveen Shodh Sansar ISSN 2320-8767(International) Impact Factor 1.9411(2015)
15. Divya Shodh Samiksha ISSN 2394-3807 (International) Impact Factor 1.7591 (2015)
16. Budget, Govt.of Madhya Pradesh, Year 2012-2013, 2013-2014, 2014-2015, 2015-2016
17. Budget, Govt. of Chattisgarh, Year 2012-2013, 2013-2014, 2014-2015, 2015-2016

तालिका क्रं. 1 - म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋण का तुलनात्मक अध्ययन

(करोड़ में)

क्र.	लोक ऋण के शीर्षक		2012-13 बजट अनु.	2013-14 बजट अनु.	2014-15 बजट अनु.	2015-16 बजट अनु.	वृद्धि प्रतिशत में		
							2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	राज्य सरकार का आंतरिक ऋण	A प्राप्तियां	14018	17578	17296	20321	25	-2	17
		B संवितरण	6945	7385	8271	7877	6	12	-5
		C शुद्ध लोक ऋण	7073	10192	9025	12443	44	-11	38
2	केन्द्रीय सरकार से ऋण व अग्रिम	A प्राप्तियां	2925	2281	2657	2080	-22	16	-22
		B संवितरण	537	632	906	896	18	43	-1
		C शुद्ध लोक ऋण	2387	1649	1751	1184	-31	6	-32
3	योग कुल लोक ऋण (1+2)	A प्राप्तियां	16942	19858	19952	22400	17	0.5	12
		B संवितरण	7482	8017	9177	8773	7	14	-4
		C शुद्ध लोक ऋण	9460	11841	10776	13627	25	-9	26

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों के अंतर्गत राज्य सरकार के आंतरिक ऋणों का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

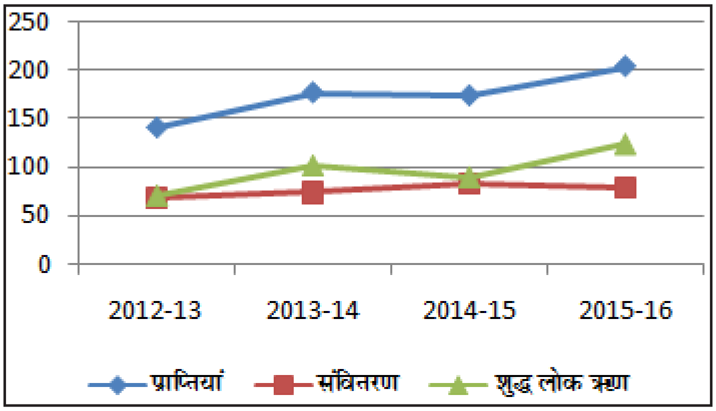

म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों के अंतर्गत केन्द्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

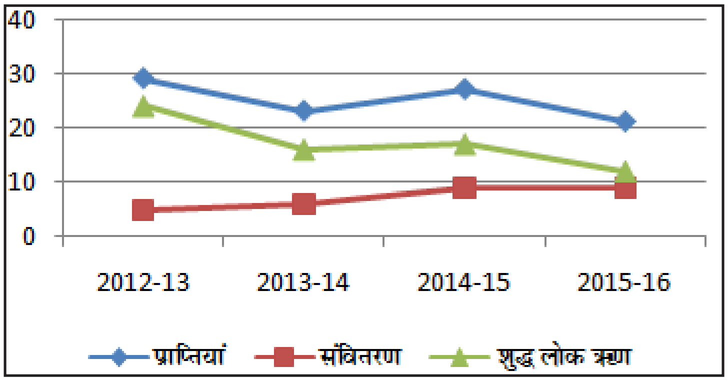

म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में कुल लोक ऋणों का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

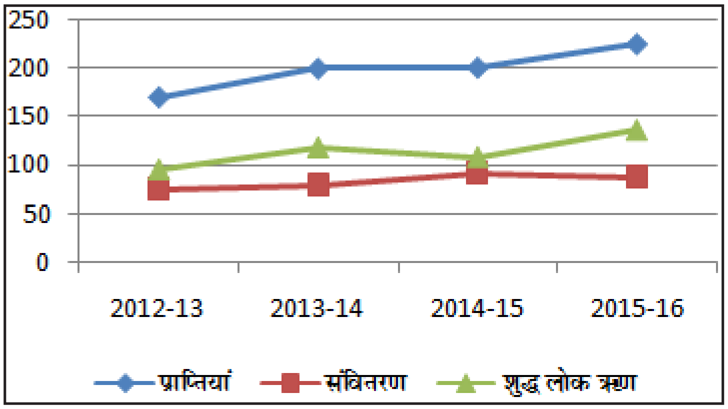

तालिका क्रं. 2 – छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋण का तुलनात्मक अध्ययन

(करोड़ में)

क्र.	लोक ऋण के शीर्षक		2012–13 बजट अनु.	2013–14 बजट अनु.	2014–15 बजट अनु.	2015–16 बजट अनु.	वृद्धि प्रतिशत में		
							2012–13 से 2013–14	2013–14 से 2014–15	2014–15 से 2015–16
1	राज्य सरकार का आंतरिक ऋण	A प्राप्तियां	4726	5180	6395	7295	10	23	14
		B संवितरण	1100	782	1078	927	–29	38	–14
		C शुद्ध लोक ऋण	3626	4398	5317	6368	21	21	20
2	केन्द्रीय सरकार से ऋण वअग्रिम	A प्राप्तियां	243	206	46	46	–15	–78	00
		B संवितरण	147	151	151	155	3	00	–3
		C शुद्ध लोक ऋण	96	55	–105	–109	–43	–291	–4
3	योग कुल लोक ऋण (1+2)	A प्राप्तियां	4969	5386	6441	7341	8	20	14
		B संवितरण	1247	933	1229	1082	–25	32	12
		C शुद्ध लोक ऋण	3722	4453	5212	6259	20	17	20

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 एवं 2015–16

छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों के अंतर्गत राज्य सरकार के आंतरिक ऋणों का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

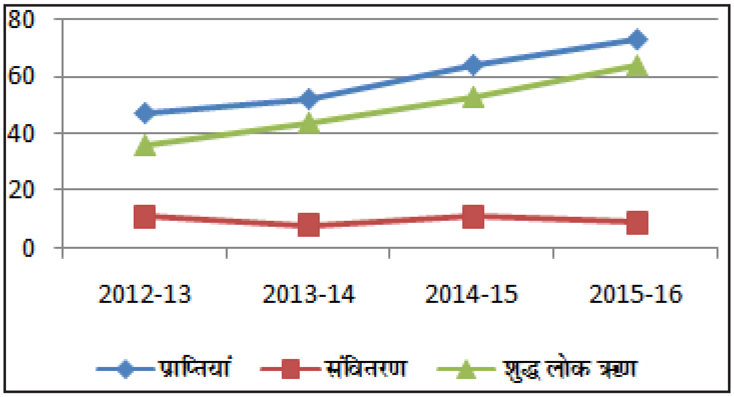

छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक ऋणों के अंतर्गत केन्द्र सरकार से ऋण एवं अग्रिम का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

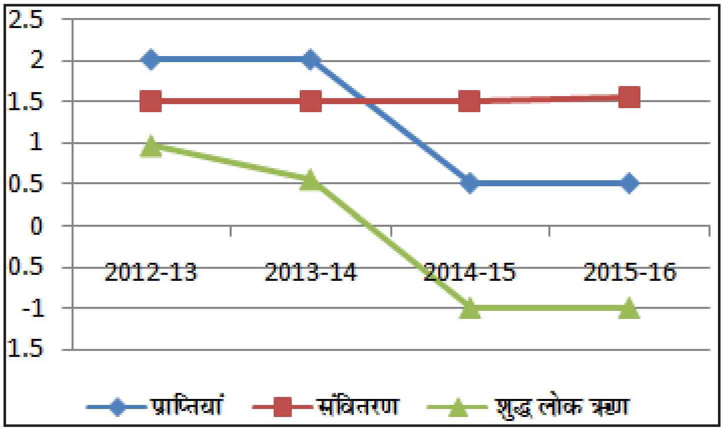

छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में कुल लोक ऋणों का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन

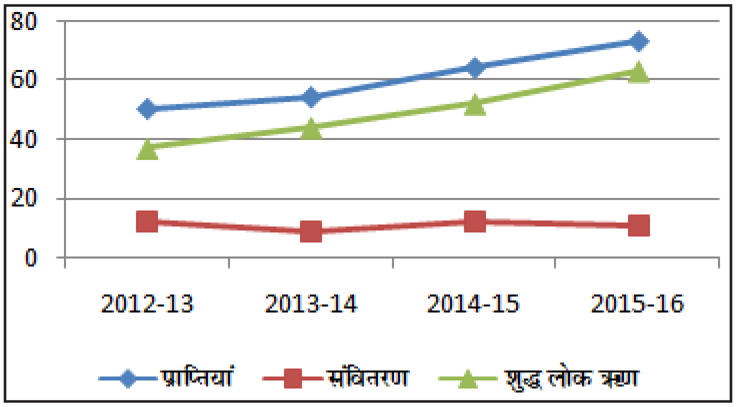

तालिका क्रं. 3- मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ सरकारों के लोक ऋणों में वृद्धि दरों का तुलनात्मक अध्ययन

(प्रतिशत में)

क्रं.	लोक ऋण के शीर्षक		मध्यप्रदेश			छत्तीसगढ़		
			2012-13 2013-14	2013-14 2014-15	2014-15 2015-16	2012-13 2013-14	2013-14 2014-15	2014-15 2015-16
1	राज्य सरकार का आंतरिक ऋण	A प्राप्तियां	25	-2	17	10	23	14
		B संवितरण	6	12	-5	-29	38	-14
		C शुद्ध लोक ऋण	44	-11	38	21	21	20
2	केन्द्रीय सरकार से ऋण व अग्रिम	A प्राप्तियां	-22	16	-22	-15	-78	00
		B संवितरण	18	43	-1	3	00	-3
		C शुद्ध लोक ऋण	-31	6	-32	-43	-291	-4
3	योग कुल लोक ऋण (1+2)	A प्राप्तियां	17	0.5	12	8	20	14
		B संवितरण	7	14	-4	-25	32	12
		C शुद्ध लोक ऋण	25	-9	26	20	17	20

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

****

स्वरोजगार सृजन में रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना का योगदान (म.प्र. के रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. लक्ष्मण परवाल * गुंजन घोचा **

प्रस्तावना – वित्त व्यवसाय का जीवनरक्त है। वित्त के बिना व्यवसाय की कल्पना भी नहीं कि जा सकती। व्यवसाय की सफलता वित्त की पर्याप्त पूर्ति तथा उसके प्रभावपूर्ण प्रबंध पर निर्भर करती है। वित्त के बिना न तो व्यवसाय को प्रारंभ किया जा सकता है और ना ही उसका विकास। वित्त से तात्पर्य मुद्रा से होता है, जिसकी पूर्ति सरकार, व्यवसायी, वित्तीय संस्थाऐ तथा विनियोक्ताओं द्वारा की जाती है।

विकास योजना का एक महत्वपूर्ण पहलू उसके वित्तीयन अथवा वित्त व्यवस्था से संबंध रखता है। योजना चाहे छोटी हो या बडी उसे अमल में लाना तभी संभव होता होता है जब उसके सिलसिले में की गई वित्त व्यवस्था इस प्रकार की हो कि वित्तीय साधन पर्याप्त मात्रा में आवश्यकतानुसार उपलब्ध हो जाए अन्यथा अच्छी से अच्छी योजना भी अपने निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाती। इस प्रकार योजना की सफलता काफी बड़ी सीमा तक वित्त व्यवस्था के स्वरुप पर निर्भर करती है।

सरकार द्वारा कई प्रकार की योजनाओं के माध्यम से व्यवसाय हेतु वित्त उपलब्ध कराया जाता है। रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना म.प्र. शासन द्वारा संचालित एक ऐसी योजना है,जो कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु उन्हे वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिये संचालित की गई है। यह योजना सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में 01 अप्रैल 2003 से प्रारंभ की गई

इस योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के शिक्षित बेरोजगारों युवाओं को स्वयं का रोजगार स्थापित करने के लिये विभिन्न बैंकों के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र में रतलाम जिले में संचालित रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता का विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया गया है–

1 रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जाति वर्ग के कितने हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत एवं वितरित किए गए?

2 रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जनजाति वर्ग के कितने हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत एवं वितरित किए गए ?

3 योजनान्तर्गत अध्ययन अवधि में विभाग द्वारा कितने अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को वित्तीय सहायता/ऋण दिये जाने का लक्ष्य रखा गया था ?

4 निर्धारित लक्ष्यों की तुलना में अध्ययन अवधि में प्रत्येक वर्ष बैंकों द्वारा कितने अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को ऋण प्रकरण स्वीकृत किए गए?

5 बैंकों द्वारा स्वीकृत ऋणों एवं वितरित ऋणों का लक्ष्य से प्रतिशत क्या रहा ?

6 बैंकों द्वारा स्वीकृत ऋण राशियों की तुलना में वितरित ऋण राशियों का प्रतिशत कितना रहा ?

अध्ययन की कार्यप्रणाली –प्रस्तुत अध्ययन म.प्र. के रतलाम जिलें में किया गया हैं, जो कि द्वितीयक समंको पर आधारित है। आँकड़ों का संग्रहण जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र रतलाम से किया गया है। वर्ष 2003–04 से वर्ष 2013 –14 तक कुल 11 वर्षो के आँकड़ों के आधार पर रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना (अनसूचित जाति एवं जनजाति हेतु) में हितग्राहियों का विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में उपलब्ध संमकों के आधार पर औसत, अनुपात एवं प्रतिशत जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का उपयोग कर विभिन्न सारणियों एवं चित्रों के माध्यम से शोधकर्ताओ द्वारा सार्थक परिणाम प्राप्त किए गए है।

विश्लेषण एवं परिणाम –रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत वर्ष 2003–04 से वर्ष 2013–14 तक रतलाम जिले में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कुल हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित वित्तीय सहायता (ऋण राशि) का विश्लेषण शोधकर्ताओ द्वारा निम्न तालिकाओं के माध्यम से किया गया है। यह विश्लेषण कुल हितग्राहियों की संख्या एवं उनको प्राप्त ऋण राशि के आधार पर किया गया है। साथ ही स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों एवं ऋण राशियों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है।

तालिका क्र.– 01 व ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका एवं चार्ट से स्पष्ट होता है कि रतलाम जिले में रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत गत 11 वर्षो (2003–04 से 2013–14) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा अनुसूचित जाति के 426 हितग्राहियों के लक्ष्य के अनुपात में कुल 451 हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये तथा वितरण मात्र 182 हितग्राहियों को ही किया गया। औसत के आधार पर प्रतिवर्ष 39 अनुसूचित जाति के हितग्राहियों के लक्ष्य के अनुपात में 41 हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किए गए जो कि 105 प्रतिशत के बराबर है,जबकि वितरण मात्र 17 हितग्राहियों को ही किया गया। यह वितरण संख्या लक्ष्य की तुलना में लगभग 54 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 41 प्रतिशत के बराबर है।

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत गत 11 वर्षो में कुल 451 अनुसूचित जाति के हितग्राहियों कों 13 करोड, 35 लाख 63 हजार रूपए

---

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

की ऋण राशि जिले की राष्ट्रीयकृत बैकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा स्वीकृत की गई थी, किन्तु इसमें से मात्र 182 हितग्राहियों को ही 04 करोड, 89 हजार रूपए की ऋण राशि वितरित की गई।

औसत रूप से प्रतिवर्ष 41 अनुसूचित जाति के हितग्राहियों को 1 करोड, 21 लाख, 42 हजार रूपयें की ऋण राशि स्वीकृत की जाकर वितरण मात्र 17 हितग्राहियों को 36 लाख, 44 हजार रूपयों का ही किया गया है। यह वितरण स्वीकृत ऋण राशि की तुलना में लगभग 30 प्रतिशत के बराबर है।

तालिका क्र.- 02 व ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका एवं चार्ट से स्पष्ट होता है कि रतलाम जिले में रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत गत 11 वर्षो (2003-04 से 2013-14) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा अनुसूचित जनजाति के 284 हितग्राहियों के लक्ष्य के अनुपात में कुल 315 हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किए गए तथा वितरण मात्र 193 हितग्राहियों को ही किया गया।
औसत के आधार पर प्रतिवर्ष 26 अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों के लक्ष्य के अनुपात में 29 हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किए गए जो कि लगभग 112 प्रतिशत के बराबर है,जबकि वितरण मात्र 18 हितग्राहियों को ही किया गया। यह वितरण संख्या लक्ष्य की तुलना में लगभग 69 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 62 प्रतिशत के बराबर है।

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत गत 11 वर्षो में कुल 315 अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को 8 करोड, 54 लाख 95 हजार रूपए की ऋण राशि जिले की राष्ट्रीयकृत बैकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा स्वीकृत की गई थी, किन्तु इसमें से मात्र 193 हितग्राहियों को ही 5 करोड, 34 लाख, 99 हजार रूपए की ऋण राशि वितरित की गई।
औसत रूप से प्रतिवर्ष 29 अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को 77 करोड, 72 लाख रूपए की ऋण राशि स्वीकृत की जाकर वितरण मात्र 18 हितग्राहियों को 48 लाख, 64 हजार रूपयों का ही किया गया है। यह वितरण स्वीकृत ऋण राशि की तुलना में लगभग 63 प्रतिशत के बराबर है।
निष्कर्ष -अध्ययन के अंत में निष्कर्ष स्वरूप यह कहॉ जा सकता है कि रतलाम जिले में रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत गत 11 वर्षो में अनुसूचित जाति वर्ग के हितग्राहियों को निर्धारित लक्ष्य संख्या 100 के अनुपात में 106 प्रकरणों में ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 43 प्रकरणों में ही किया गया है। बैंकों द्वारा प्रत्येक 100 स्वीकृत प्रकरणों में से 40 प्रकरणों में ही ऋण वितरित किया गया है। वित्तीय सहायता /ऋण राशि के अनुसार प्रत्येक 01 लाख रूपयों की स्वीकृति में बैंकों द्वारा लगभग 30 हजार रूपए ही वितरित किए गए है।

इसी प्रकार रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत गत 11 वर्षो में अनुसूचित जनजाति वर्ग के हितग्राहियों को निर्धारित लक्ष्य संख्या 100 के अनुपात में 111 प्रकरणों में ऋण स्वीकृत किया जाकर वितरण मात्र 68 प्रकरणों में ही किया गया है। बैंकों द्वारा प्रत्येक 100 स्वीकृत प्रकरणों में से 61 प्रकरणों में ही ऋण वितरित किया गया है। वित्तीय सहायता/ऋण राशि के अनुसार प्रत्येक 01 लाख रूपयों की स्वीकृति में बैंको द्वारा लगभग 63 हजार रूपए ही वितरित किए गए है।

प्रतिशत के आधार पर अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को अनुसूचित जाति के हितग्राहियों की तुलना में अधिक मात्रा में ऋण राशि एवं ऋण प्रकरणों में विभाग द्वारा लाभांवित किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 लघु शोध प्रबंध, 'रोजगार सृजन में स्वरोजगार योजनाओं की भूमिका' एक अध्ययन (रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में) डॉ. लक्ष्मण परवाल, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम, (वर्ष 2005-07)।
2 शोध प्रबंध, 'रतलाम जिले में संचालित स्वरोजगार योजनाओं का स्वरोजगार सृजन में 'योगदान' श्री धर्मेन्द्र चोधरी, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन, (वर्ष 2011-12)।
3 'कुरूक्षेत्र' मासिक पत्रिका, नई दिल्ली के विभिन्न संस्करण।
4 जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम से प्राप्त प्राथमिक समंक।
5 दैनिक भास्कर, पत्रिका, नईदुनिया आदि समाचार पत्रों में प्रकाशित लेख।

तालिका क्र.- 01
रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जाति के हितग्राहियों को
स्वीकृत एवं वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

क्र.	वर्ष	लक्ष्य	कुल प्रकरण (हितग्राहियों की संख्या)					कुल राशि (लाख रु. में)		
			स्वीकृत प्रकरण		वितरित प्रकरण			स्वीकृत	वितरित	स्वीकृतराशि से वितरित राशि का प्रतिशत
			संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	स्वीकृत प्रकरणों से प्रतिशत			
1	2003-04	15	08	53.33	08	53.33	100.00	34.53	34.53	100.00
2	2004-05	15	09	60.00	09	60.00	100.00	43.51	43.51	100.00
3	2005-06	18	44	244.44	36	200.00	81.82	129.11	51.32	39.75
4	2006-07	54	67	124.07	33	61.11	49.25	149.12	51.39	34.46
5	2007-08	36	48	133.33	31	86.11	64.58	83.98	44.20	52.63
6	2008-09	46	47	102.17	15	32.61	31.91	104.22	24.38	23.39
7	2009-10	46	27	58.70	06	13.04	22.22	70.64	06.50	09.20
8	2010-11	49	56	114.29	06	12.24	10.71	186.77	25.00	13.39
9	2011-12	49	50	102.04	02	4.08	4.00	167.44	02.00	01.19
10	2012-13	49	49	100.00	26	53.06	53.06	150.81	94.22	62.48
11	2013-14	49	46	93.88	10	20.41	21.74	215.50	23.84	11.06
	योग	**426**	**451**	**105.87**	**182**	**42.72**	**40.35**	**1335.63**	**400.89**	**30.02**
	औसत	**39**	**41**	**105.13**	**17**	**43.59**	**41.46**	**121.42**	**36.44**	**30.02**

स्रोत - जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र,रतलाम

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जाति के हितग्राहियों के लक्ष्य स्वीकृत एवं वितरित प्रकरणों की संख्या

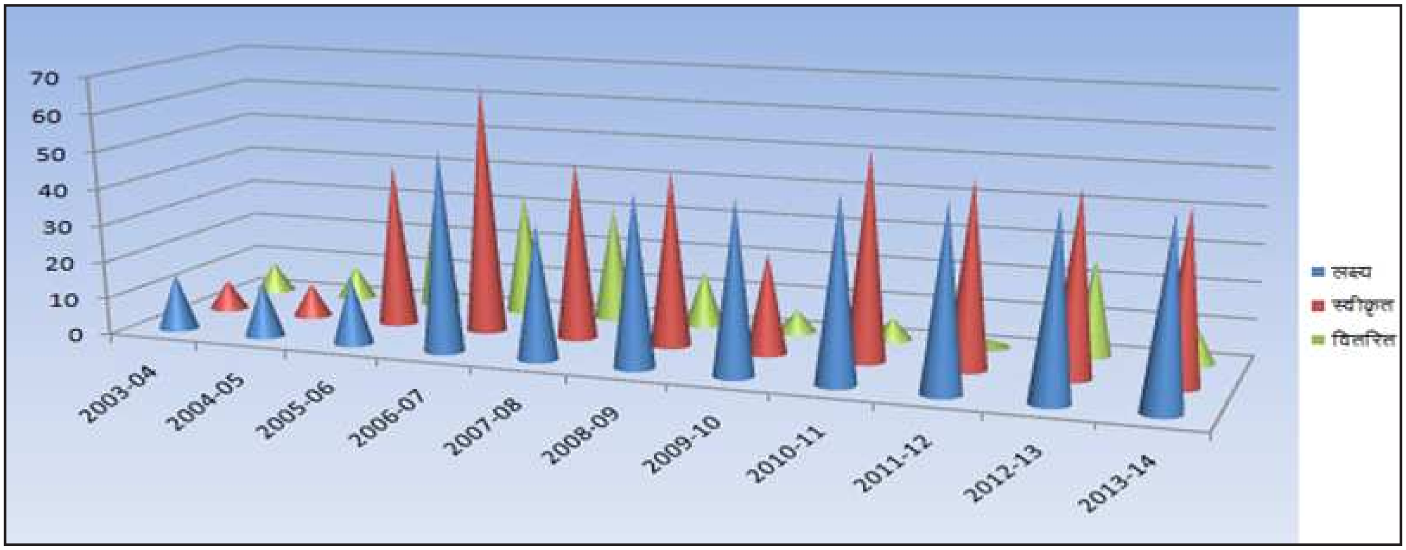

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जाति के हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशि (लाख रू. में)

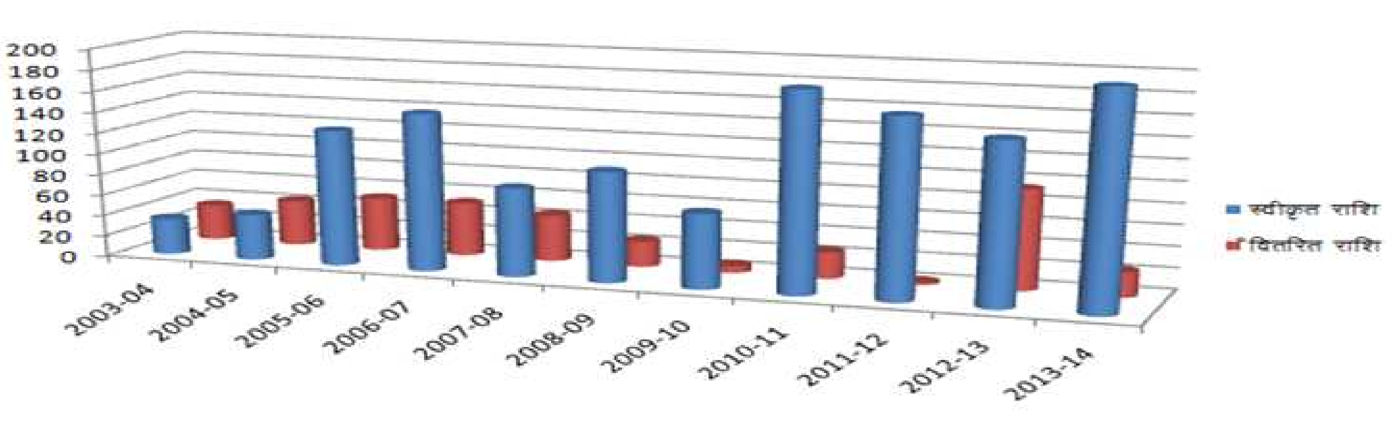

तालिका क्र.- 02

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

क्र.	वर्ष	लक्ष्य	कुल प्रकरण (हितग्राहियों की संख्या)					कुल राशि (लाख रु. में)		
			स्वीकृत प्रकरण		वितरित प्रकरण			स्वीकृत	वितरित	स्वीकृतराशि से वितरित राशि का प्रतिशत
			संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	स्वीकृत प्रकरणों से प्रतिशत			
1	2003-04	35	31	88.57	31	88.57	100.00	98.43	98.43	100.00
2	2004-05	35	32	91.43	32	91.43	100.00	97.11	97.11	100.00
3	2005-06	26	44	169.23	44	169.23	100.00	143.22	104.20	72.76
4	2006-07	52	39	75.00	14	26.92	35.90	61.25	31.65	51.67
5	2007-08	26	33	126.92	28	107.69	84.85	63.47	70.27	110.71
6	2008-09	15	15	100.00	06	40.00	40.00	29.17	04.69	16.08
7	2009-10	15	17	113.33	07	46.67	41.18	44.43	08.56	19.27
8	2010-11	20	27	135.00	04	20.00	14.81	49.50	11.10	22.42
9	2011-12	20	20	100.00	04	20.00	20.00	84.33	19.65	23.30
10	2012-13	20	29	145.00	14	70.00	48.28	96.38	61.58	63.89
11	2013-14	20	28	140.00	09	45.00	32.14	87.66	27.75	31.66
	योग	284	315	110.92	193	67.96	61.27	854.95	534.99	62.58
	औसत	**26**	**29**	**111.54**	**18**	**69.23**	**62.07**	**77.72**	**48.64**	**62.58**

स्त्रोत - जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, रतलाम

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अ.ज.जा. के हितग्राहियों के लक्ष्य, स्वीकृत एवं वितरित प्रकरणों की संख्या

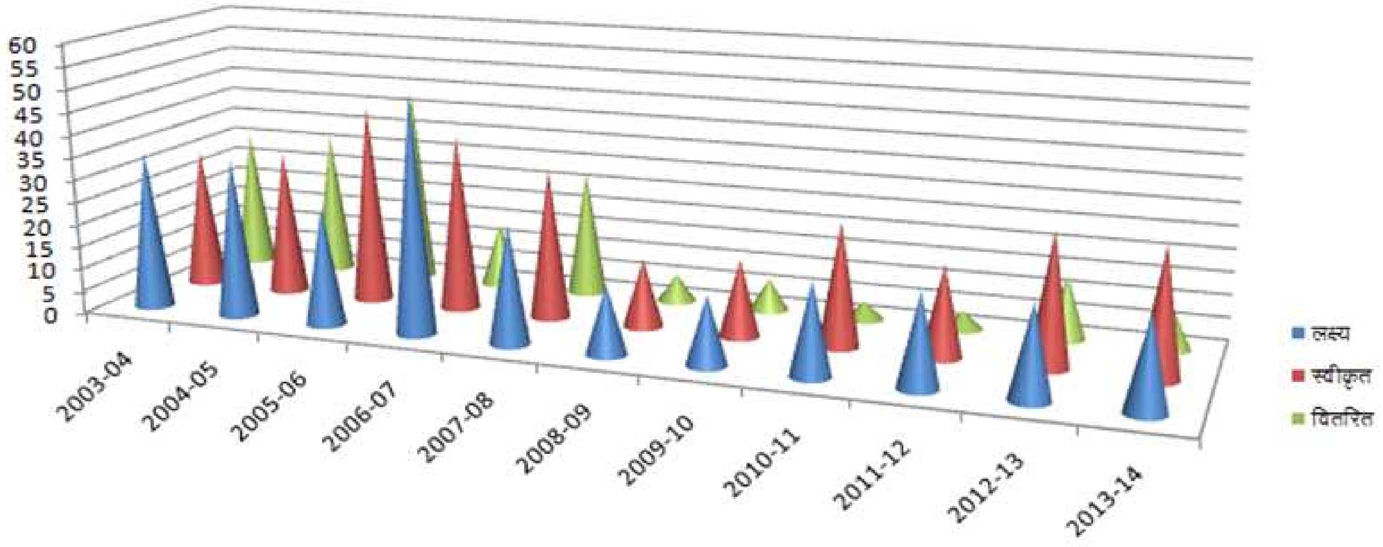

रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजनान्तर्गत अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशि (लाख रू. में)

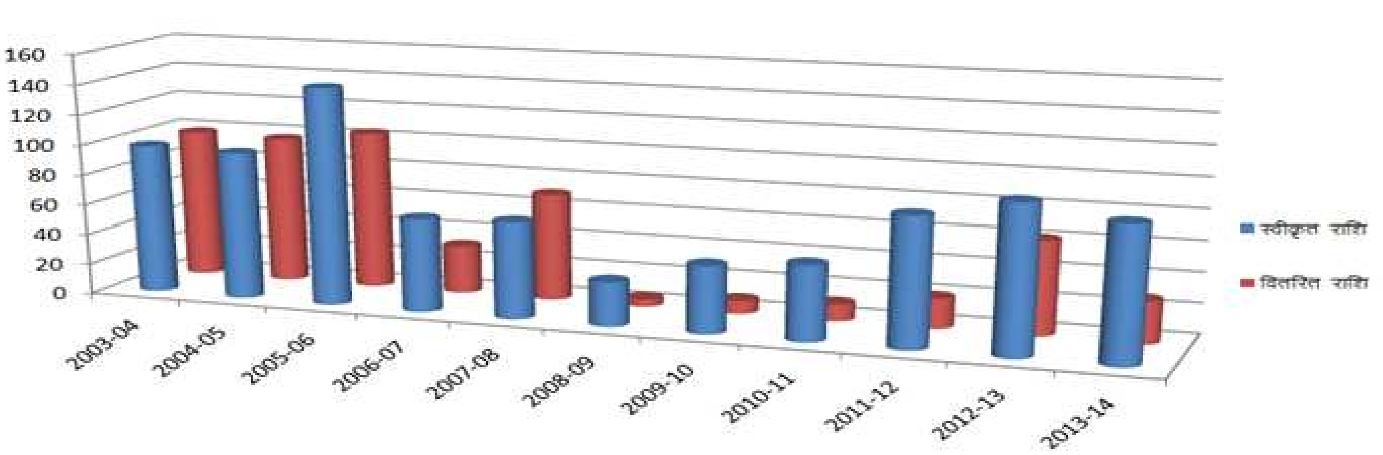

****

म.प्र. सरकार के राजस्व व्ययों की प्रवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सी.पी. पँवार *

प्रस्तावना – उन्नीसवीं शताब्दी के पश्चात् शासन व्यवस्था में राजकीय हस्तक्षेप बढ़ने के साथ–साथ लोक कल्याणकारी विचारधारा को बल मिला, परिणामस्वरुप सार्वजनिक व्ययों को महत्व दिया जाने लगा। सार्वजनिक व्यय वे होते है, जो सरकार द्वारा देश के नागरिकों के आर्थिक व सामाजिक कल्याण की वृद्धि हेतु किये जाते है। सार्वजनिक व्ययों को दो भागो में बाँटा गया है– राजस्व व्यय तथा पूँजीगत व्यय। सार्वजनिक व्ययों का वह भाग जो सरकारी सेवाओं, सब्सिडी, ऋण के ब्याज, अनुदान, रखरखाव तथा सामाजिक एवं आर्थिक कल्याण कार्यो पर होता है, राजस्व व्यय कहा जाता है। इस व्यय से न तो सरकार की उत्पादन क्षमता का विस्तार होता है न ही अतिरिक्त आय सृजित होती है। राज्य सरकारों के कुल व्ययों में राजस्व व्ययों का योगदान औसतन 80 प्रतिशत से अधिक रहता है। जहाँ पूँजीगत व्ययों की पूर्ति सरकार प्राय: ऋण लेकर करती है वही राजस्व व्ययों की पूर्ति उसकी राजस्व आय से करती है जिनमें कर राजस्व, कर भिन्न राजस्व तथा केन्द्रीय अनुदान सम्मिलित है। म.प्र. सरकार के राजस्व व्ययों को मुख्य रूप से व्यय के प्रमुख चार शीर्ष में विभाजित किया गया है यथा– सामान्य सेवाएँ , सामाजिक सेवाएँ ,आर्थिक सेवाएँ तथा सहायता अनुदान और अंश दान। सरकार प्रतिवर्ष अपने बजट में उक्त व्ययों को आयोजना एवं आयोजनेत्तर व्ययों में विभाजित कर धनराशि का संवितरण करती है। प्रस्तुत शोध पत्र में उक्त व्यय शीर्ष की मदों का तुलनात्मक अध्ययन व विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित तीन उद्देश्य रहे :

1. म.प्र. सरकार के राजस्व व्ययों की तुलनात्मक स्थिति का अध्ययन करना।
2. राजस्व व्ययों की प्रवृत्ति प्रतिशत का अध्ययन करना।
3. विकासात्मक तथा गैर विकासात्मक व्ययों की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।

अध्ययन अवधि– शोध पत्र की अध्ययन अवधि वर्ष 2011–12 से 2015–16 तक पाँच वर्षो की रही।

प्रयुक्त चल – ब्याज भुगतान, वेतन–पेंशन आदि सेवाएँ, सामाजिक सेवाएँ, आर्थिक सेवाएँ, राजस्व व्यय, विकासात्मक व्यय, गैर विकासात्मक व्यय, सहायता अनुदान आदि।

समंक संग्रहण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. शासन के संबंधित वर्षो के बजट प्रतिवेदन में उपलब्ध द्वितीयक संमकों का प्रयोग किया गया है।

मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व व्ययों की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन व विश्लेषण – प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. राज्य सरकार के वर्ष 2011–12 से 2015–16 तक की अवधि के राजस्व व्ययों की विभिन्न मदों की तुलनात्मक स्थिति को विश्लेषण तालिका क्रं. 1 तथा 2 व ग्राफ 1 एवं 2 के द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रं. 1 म.प्र. सरकार के राजस्व व्ययों की मदवार तुलनात्मक स्थिति व कुल राजस्व व्ययों से प्रतिशत को प्रकट करती है। राजस्व व्ययों की मदों को चार प्रमुख शीर्ष में विभाजित किया गया है। प्रत्येक शीर्ष का विवेचन इस प्रकार किया गया –

A. सामान्य सेवाएँ – सामान्य सेंवाओं के अन्तर्गत 5 प्रमुख सेवाएँ सम्मिलित है, जिनमें राज्य के अंग, राजकोषीय सेवाएँ , प्रशासनिक सेवाएँ, ब्याज भुगतान खर्च तथा वेतन–पेंशन आदि सेंवाओं का भुगतान सम्मिलित है। सामान्य सेंवाएँ के इन 5 व्ययों की मदों में सर्वाधिक व्यय भार ब्याज भुगतान एवं वेतन–पेंशन पर होता है। वर्ष 2011–12 में उक्त दोनों सेवाओं पर कुल राजस्व व्यय का 10.06 प्रतिशत तथा 8.38 प्रतिशत व्यय हुआ। उक्त प्रतिशत में वर्ष 2015–16 में अनुपातिक रूप से कमी होकर यह क्रमश: 7.76 तथा 7.49 प्रतिशत रहा। यह स्थिति प्रकट करती है कि सरकार द्वारा लोक–ऋणों पर किये गये ब्याज भुगतान की वृद्धि राजस्व व्ययों की वृद्धि की तुलना में नियंत्रित रही। इसी प्रकार वेतन पेंशन तथा प्रशासकीय सेवाओं में वृद्धि भी राजस्व व्ययों के अनुपात में नियंत्रित रही। कुल मिलाकर सामान्य सेंवाओं का कुल राजस्व व्ययों से अनुपात वर्ष 2011–12 के 30.80 प्रतिशत से कम होकर वर्ष 2015–16 में 24.27 प्रतिशत रहा। यह स्थिति प्रदर्शित करती है कि सरकार ने सामान्य सेंवाओं में मितव्ययता के सिद्धांत ; (canon of economy) का अनुसरण किया है।

B. सामाजिक सेवाएँ – समावेशी विकास की अवधारणा में जनकल्याणकारी सामाजिक सेंवाओं का महत्व निरंतर बढ़ रहा है। इन सेवाओं में शिक्षा, स्वास्थ्य, जलापूर्ति, आवास, श्रम कल्याण, अनुसुचित जाति/जनजाति व पिछड़ा वर्ग कल्याण तथा पोषाहार योजनाएँ आदि सम्मिलित है। सामाजिक सेवाओं की इस मद में वर्ष 2011–2012 में सर्वाधिक धन राशि क्रमश: शिक्षा, सामाजिक कल्याण व पोषाहार , स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण तथा अनुसुचित वर्ग कल्याण के लिये व्यय की गई थी जो कुल राजस्व व्ययों का क्रमश: 18.6 प्रतिशत 7.88 प्रतिशत , 4.61 प्रतिशत तथा 3.43 प्रतिशत थी। उक्त राशियों में राजस्व व्ययों की वृद्धि के अनुपात में वृद्धि हुई तथा 2015–16 में इनका प्रतिशत क्रमश: शिक्षा के लिए 17.12 प्रतिशत तथा सामाजिक कल्याण पर बढ़कर 9.92 प्रतिशत रहा। आवास व शहरी विकास योजनाओं के प्रतिशत में सर्वाधिक वृद्धि दर्ज हुई जो वर्ष 2011–12 में 2.30 प्रतिशत से बढ़ कर 2015–16 में 5.06 प्रतिशत रही। अन्य मदों का अनुपात प्रतिशत राजस्व व्ययों की वृद्धि के अनुपात में रहा। कुल मिलाकर वर्ष 2011–12 में सामाजिक कल्याण सेवाओं का प्रतिशत

---

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

कुल राजस्व व्ययों का 38.52 प्रतिशत था जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 42.12 प्रतिशत हुआ। सामाजिक सेवाओं की वृद्धि की यह प्रवृत्ति बताती है कि सरकार समावेशी विकास व कल्याणकारी राज्य की स्थापना की प्रबल पक्षधर रही है।

C. आर्थिक सेवाएँ - आर्थिक सेंवाएँ वे है जो राज्य के आर्थिक विकास में योगदान करती है। आर्थिक सेंवाओं के शीर्ष के अन्तर्गत कृषि, ग्रामीण विकास , सिंचाई एवं बाढ नियंत्रण, ऊर्जा, उद्योग, खनिज, परिवहन, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, पर्यावरण आदि सेवाऐं सम्मिलित है। आर्थिक सेवाओं में सबसे प्रमुख व्यय की मद कृषि और संबद्ध क्रियाकलाप रहे, जो कुल राजस्व व्ययों के 9.55 प्रतिशत थे। इन व्ययों में राजस्व व्ययों की वृद्धि के अनुपात में वृद्धि होकर वर्ष 2015-16 में इनका प्रतिशत कम होकर 9.11 प्रतिशत रहा। यह स्थिति सरकार की दीर्घकालीन कृषि विकास नीति को प्रदर्शित करती है। अन्य मदों में ग्रामीण विकास, ऊर्जा, उद्योग व खनिज प्रमुख थे। जिनका वर्ष 2011-12 में कुल राजस्व व्ययों से प्रतिशत क्रमश: 5.55 , 3.93 तथा 2.29 प्रतिशत था जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 6.63, 7.45 तथा 2.17 प्रतिशत रहा। सबसे अधिक वृद्धि ऊर्जा संसाधनों पर हुई जो लगभग चार गुना थी। इसके पश्चात ग्रामीण विकास संबंधी व्ययों में भी वृद्धि परिलक्षित हुई। खनिज मद में वृद्धि की प्रवृति राजस्व व्ययों की वृद्धि की तुलना में कम रही। कुल मिलाकर वर्ष 2011-12 में आर्थिक सेवाओं का प्रतिशत 24.60 था। जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 27.69 प्रतिशत हो गया। आर्थिक सेवाओं की यह अनुपातिक वृद्धि प्रदर्शित करती है कि सरकार सामाजिक कल्याण के साथ साथ आर्थिक विकास की गतिविधियों को भी महत्व दे रही है ताकि उत्पादन, उपभोग और रोजगार में वृद्धि हो सके तथा इसके परिणामस्वरुप राज्य के निवासियों की आय व बचत में भी वृद्धि हो सके।

D. सहायता अनुदान और अंशदान - संघीय वित्त व्यवस्था के अंतर्गत केंद्र सरकार राज्यों को अपने बढ़े हुए राजस्व व्ययों की पूर्ति के लिए सहायता अनुदान देती है। यह अनुदान राज्यों की आर्थिक स्थिति व पात्रतानुसार गैर योजनागत तथा योजनागत व्ययों के लिये प्रदान किया जाता है। कभी कभी यह अनुदान केंद्रीय योजना व्ययों के लिये भी प्रदान किया जाता है। राज्यों को भी यह अनुदान राज्य वित्त आयोग की अनुशंसानुसार विभिन्न स्तरों यथा संभाग स्तर, जिला योजना, नगरपालिका, ग्राम पंचायत तथा सहकारी संस्थाओं को जारी करना पड़ता है। अनुदान की यह मात्रा वर्ष 2011-12 में कुल राजस्व व्ययों का 6.08 प्रतिशत थी जो अध्ययन के वर्षो में अल्प उच्चावचन के साथ वर्ष 2015-16 में 5.91 प्रतिशत रही। इस प्रकार इस मद में हुई मात्रात्मक वृद्धि सरकार के बढ़े हुए राजस्व व्ययों के अनुपात मे होकर नियंत्रित वृद्धि रही।

ग्राफ 1 : मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व व्ययों की मदवार तुलनात्मक स्थिति (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष के रुप में राजस्व व्यय की चारों प्रमुख मदों को कुल राजस्व व्ययों से तुलना करने पर पाया कि सामान्य सेवाओं के अनुपात में औसत 10 प्रतिशत गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज हुई। जबकि सामाजिक सेवाओं व आर्थिक सेवाओं के अनुपात में क्रमश: 3 प्रतिशत व 6 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई। सहायता अनुदान की प्रवृत्ति राजस्व व्ययों में वृद्धि के अनुपात में रही। उक्त स्थिति को ग्राफ 1 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया। जिसमें ग्राफ की सर्वाधिक ऊँची दण्ड रेखा सामाजिक सेवाओं को प्रदर्शित करती है। इसके पश्चात् क्रमश: आर्थिक सेवायें, सामान्य सेवाए तथा सहायता अनुदान है।

तालिका क्रं. 2 राज्य सरकारों के राजस्व व्ययों की मदों का प्रवृत्ति प्रतिशत प्रदर्शित करती है। इस हेतु प्रथम वर्ष को आधार वर्ष = 100 मानकर शेष वर्षो का प्रवृत्ति प्रतिशत ज्ञात किया गया। सामान्य सेवाएँ शीर्ष के अंतर्गत सर्वाधिक 188 प्रतिशत वृद्धि वेतन-पेंशन और विविध सेवाओं में रही जबकि सबसे न्यून वृद्धि दर 131 प्रतिशत राजकोशीय सेवाओं में रही। कुल वृद्धि दर 166 प्रतिशत रही। सामाजिक सेवाओं में सर्वाधिक ऊंची वृद्धि दर 461 प्रतिशत आवास और शहरी विकास मद में रही। जिसमें वर्ष 2011-12 के कुल व्यय 1213.55 करोड़ से बढ़कर वर्ष 2015-16 में 5599.37 करोड़ रुपये हो गया। सबसे न्यून वृद्धि दर शिक्षा, खेल व संस्कृति मद में रही जो 193 प्रतिशत थी। विभिन्न मदों में कुल वृद्धि दर 230 प्रतिशत रही। आर्थिक सेवाओं में सर्वाधिक ऊँची वृद्धि दर ऊर्जा क्षेत्र में रही जो 398 प्रतिशत थी, जबकि सबसे न्यून वृद्धि दर सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण मद में थी जो 103 प्रतिशत थी। आर्थिक सेवाओं में कुल वृद्धि दर 236 प्रतिशत रही। सहायता अनुदान एवं अंशदान पर वृद्धि की प्रवृत्ति 204 प्रतिशत रही।

गैर विकासात्मक व्यय एवं विकासात्मक व्यय की प्रवृत्ति - सामान्यत: राजस्व व्ययों को गैर विकासात्मक व्यय माना जाता है किंतु सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर सामान्य सेवाओं के अतिरिक्त ऐसे व्यय भी किये जाते है जो स्वभावत: दीर्घकालिक प्रवृत्ति के होते है तथा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से ये व्यय आर्थिक एवं सामाजिक कल्याण से संबंधित होते है। अत: ऐसे राजस्व व्ययों को विकासात्मक व्यय माना जाना उचित है। **तालिका क्रं. 1** गैर विकासात्मक व्यय एवं विकासात्मक व्ययों के अनुपात को प्रदर्शित करती है। सामान्यत: राजस्व व्ययों के प्रथम भाग सामान्य सेवाओं को गैर विकासात्मक व्ययों में दर्शाया गया है। सामाजिक सेवाएं, आर्थिक सेवाएं तथा अनुदान को विकासात्मक व्ययों में प्रदर्शित किया गया है।

व्ययों के विभाजन की इस दृष्टि से सरकार के गैर विकासात्मक व्ययों के अनुपात में अध्ययन काल में कुल राजस्व व्ययों की वृद्धि के अनुपात में 9 प्रतिशत की गिरावट रही अर्थात सामान्य सेवाओं से संबंधित व्ययों में नियंत्रित वृद्धि दर्ज हुई। जबकि इसके विपरीत विकासात्मक व्ययों में 5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई। इस प्रकार विकासात्मक व्ययों के रुप में सरकार ने आर्थिक एवं सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों पर अधिक खर्च करके समाज के कुल हित में वृद्धि की है तथा गैर विकासात्मक व्ययों के रुप में समान्य सेवाओं के फैलाव को नियंत्रित कर मितव्ययिता के सिद्धांत (Canon of economy) से हित के सिद्धांत (Canon of benefit) को वर्द्धित (Boost) किया है।

यह स्थिति **तालिका क्रं. 2** द्वारा भी प्रदर्शित हो रही है, जिसमें सामान्य सेवाओं (गैर विकासात्मक व्यय) में वृद्धि की प्रवृत्ति 166 प्रतिशत रही, जबकि समाजिक सेवाओं, आर्थिक सेवाओं तथा अनुदान में वृद्धि की प्रवृत्ति क्रमश: 230 प्रतिशत, 236 प्रतिशत तथा 204 प्रतिशत रही। यह प्रवृत्ति प्रदर्शित करती है कि विकासात्मक व्ययों में अपेक्षाकृत ऊँची दर से वृद्धि की प्रवृत्ति रही। इसे ग्राफ 2 द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है। ग्राफ में विकासात्मक व्यय की रेखा ऊँचाई की ओर प्रवृत्त हो रही है जबकि गैर विकासात्मक व्ययों की रेखा नीचे की ओर प्रवृत्त हो रही है।

ग्राफ 2 : गैर विकासात्मक व्यय एवं विकासात्मक व्ययों की तुलनात्मक प्रवृत्ति (प्रतिशत में) (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष : अध्ययन के निम्नलिखित दस निष्कर्ष रहे -

1. सामान्य सेवाओं की मदों में ब्याज परिशोधन खर्च का भार सर्वाधिक है

किंतु राजस्व व्ययों से इसकी अनुपातिक वृद्धि दर 10.06 से कम होकर 7.76 रही जो संतोषजनक है तथा कुशल ऋण प्रबंधन का परिणाम है।

2. कुल राजस्व व्ययों की समान्य सेवाओं की मदों में वेतन, पेंशन व विविध सामान्य सेवाओं की वृद्धि दर 8.38 प्रतिशत से कम होकर 7.49 प्रतिशत रही। जो कि सरकार की इस मद में मितव्ययिता की नीति को प्रदर्शन करती है।
3. सामान्य सेवाओं के अंतर्गत राजकोषीय सेवाओं में नियंत्रित वृद्धि का प्रदर्शन हुआ है तथा पांच वर्ष के अध्ययनकाल में यह प्रवृत्ति प्रतिशत 131 रहा, जो राजस्व संसाधनों के अनुकुलतम उपयोग को प्रदर्शित करता है।
4. सामाजिक सेवाओं में सबसे अधिक व्यय भार शिक्षा, खेल, कल्याण और संस्कृति का रहा जिसमें कुल राजस्व व्ययों का 18 प्रतिशत व्यय होता है। जिसमें वृद्धि की प्रवृत्ति अध्ययन काल में समान रही।
5. सामाजिक सेवाओं में दूसरे क्रम पर सामाजिक कल्याण और पोषाहार की मद है जिस पर वर्ष 2015-16 तक कुल राजस्व व्ययों का 9.92 प्रतिशत व्यय हुआ।
6. समाजिक सेवाओं में प्रवृत्ति प्रतिशत की दृष्टि से सर्वाधिक 461 प्रतिशत वृद्धि आवास और शहरी विकास मद की रही।
7. आर्थिक सेवाओं में सर्वाधिक व्यय भार कृषि और संबद्ध क्रियाकलापों का था जो वर्ष 2015-16 में कुल राजस्व व्ययों का 9.11 प्रतिशत था तथा अध्ययन के वर्षो में इसकी वृद्धि की प्रवृत्ति समान रही।
8. आर्थिक सेवाओं में सर्वाधिक वृद्धि की प्रवृत्ति ऊर्जा संसाधनों के कार्यक्रमों पर रही जो अध्ययनकाल में चार गुना तक रही तथा राजस्व व्ययों में प्रतिशत की दृष्टि से कुल राजस्व व्यय पर 7.45 प्रतिशत थी जो कृषि सेवाओं के पश्चात दूसरे क्रम पर है।
9. सहायता अनुदान और अंशदान में वृद्धि की प्रवृत्ति समान रही।
10. गैर विकासात्मक व्ययों (सामान्य सेवाओं) की वृद्धि दर 166 प्रतिशत की तुलना में विकासात्मक व्ययों (सामाजिक सेवा, आर्थिक सेवा, अनुदान) की वृद्धि दर ऊँची रही, जो क्रमश: 230 प्रतिशत, 236 प्रतिशत तथा 204 प्रतिशत थी। निष्कर्ष रुप में सरकार ने सामान्य सेवाओं में मितव्ययिता की नीति अपनाते हुए सामाजिक कल्याण एवं आर्थिक सेवाओं को विस्तार दिया।

उपसंहार – प्रस्तुत अध्ययन में म.प्र. सरकार की राजस्व व्ययों की विभिन्न मदों की प्रवृत्ति का अध्ययन करने पर पाया कि सरकार की व्यय नीति संसाधनों के अनुकुलतम उपयोग, अधिकतम सामाजिक कल्याण व उच्च आर्थिक विकास की रही है। सरकार की राजकोषीय नीति व उसके आर्थिक लक्ष्यों के अनुरुप सामान्य सेवाओं (गैर विकासात्मक व्यय) तथा सामाजिक व आर्थिक सेवाओं (विकासात्मक व्यय) में अनुकुलतम समन्वय प्रदर्शित हुआ है। अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने के लिये सरकार को संतुलित व्यय नीति के साथ साथ दीर्घकालीक राजस्व स्त्रोतों की खोज व उनमें निरन्तर वृद्धि की प्रवृत्ति बनाये रखना होगी तथा अपने राजस्व संसाधनों में भी विस्तार करना होगा तभी समावेशी आर्थिक विकास की अवधारणा को मूर्तरुप दिया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाटिया, एच.एल. (2013), 'लोक वित्त', विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लिमि.: नई दिल्ली
2. डॉ. पन्त, जे.सी. (2014), 'राजस्व', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल.: आगरा
3. गुप्ता, जनकराज (2012), 'सार्वजनिक अर्थविज्ञान', एटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स: नई दिल्ली
4. आर्थिक समीक्षा 2014-15 से 2015-16.
5. मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2011-12 से 2015-16

ग्राफ 1 : मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व व्ययों की मदवार तुलनात्मक स्थिति

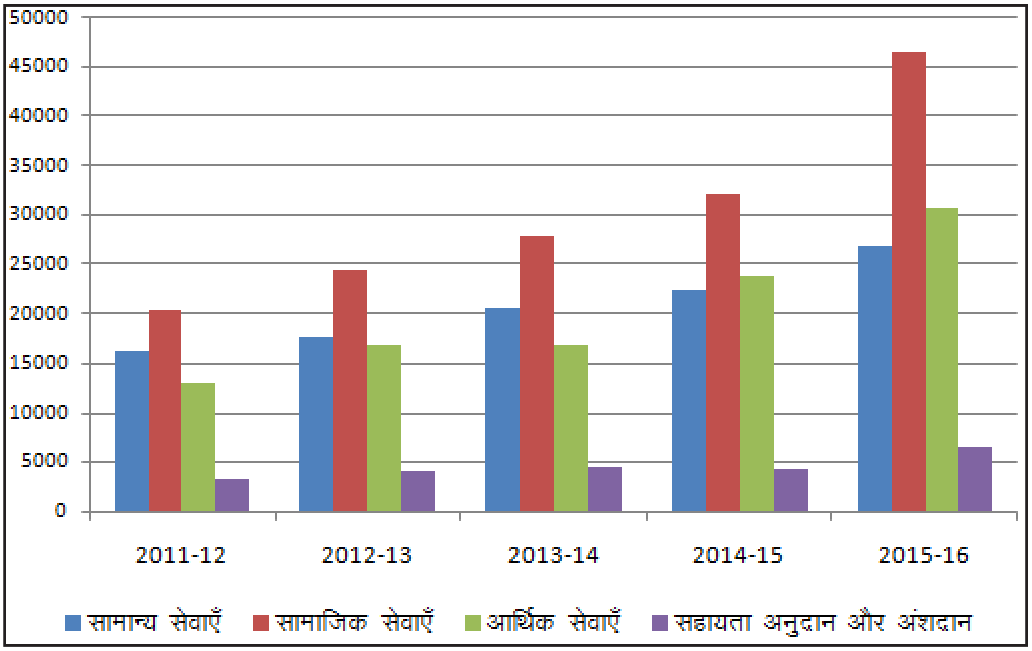

ग्राफ 2 : गैर विकासात्मक व्यय एवं विकासात्मक व्ययों की तुलनात्मक प्रवृत्ति (प्रतिशत में)

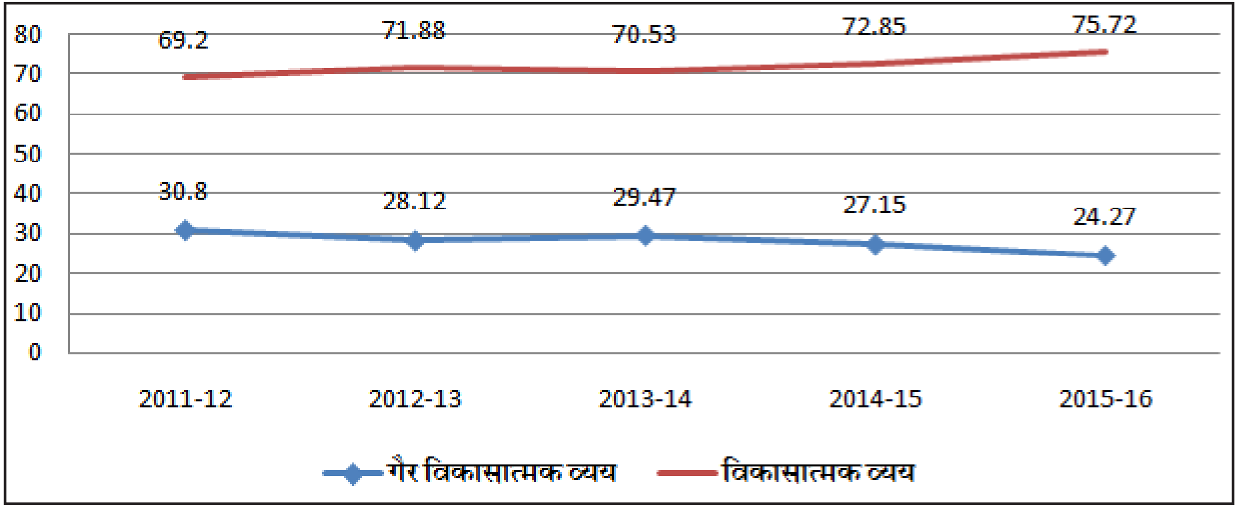

तालिका 2 : मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व व्ययों का प्रवृति प्रतिशत

व्यय के शीर्ष	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
(A) **सामान्य सेवाएँ**					
(1) राज्य के अंग	100	94	119	150	133
(2) राजकोषीय सेवाएँ	100	105	114	94	131
(3) ब्याज संग्रह और ऋण परिशोधन खर्च	100	105	121	133	162
(4) प्रशासनिक सेवाएँ	100	117	137	148	172
(5) पेंशन और विविध सामान्य सेवाएँ	100	112	135	155	188
योग (A)	100	109	127	138	166
(B) **सामाजिक सेवाएँ**					
(1) शिक्षा, खेल, कला और संस्कृति	100	111	140	165	193
(2) स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण	100	129	135	186	215
(3) जलपूर्ति और सफाई	100	126	153	155	215
(4) आवास और शहरी विकास	100	165	160	195	461
(5) श्रम और श्रमिक कल्याण	100	113	132	197	221
(6) अजा, अजजा एवं अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण	100	126	134	122	215
(7) सामाजिक कल्याण और पोषाहार	100	118	121	126	265
(8) अन्य	100	194	235	222	268
योग (B)	100	120	137	158	230
(C)**आर्थिक सेवाएँ**					
(1) कृषि और सम्बद्ध क्रियाकलाप	100	120	124	165	200
(2) ग्रामीण विकास	100	128	117	226	251
(3) सिंचाई एवं बाढ़ नियत्रंण	100	110	120	129	103
(4) ऊर्जा	100	135	161	247	398
(5) उद्योग और खनिज	100	171	122	107	199
(6) परिवहन	100	143	158	144	172
(7) विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण	100	135	257	226	363
(8) सामान्य आर्थिक सेवायें	100	99	160	124	148
योग (C)	100	130	131	183	236
(D) **सहायता अनुदान और अंशदान** योग(D)	100	127	142	132	204
योग (A+B+C+D)	100	119	133	156	210
1. **गैर विकासात्मक व्यय** योग (A)	100	109	127	138	166
2. **विकासात्मक व्यय** योग (B+C+D)	100	124	135	165	230

तालिका 1
मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व व्ययों की तुलनात्मक स्थिति (प्रतिशत में)

व्यय के शीर्ष	2011-12	%	2012-13	%	2013-14	%	2014-15	%	2015-16	%
(A) **सामान्य सेवाएँ**										
(1) राज्य के अंग	706.54	1.34	662.34	1.05	837.74	1.20	1060.46	1.29	940.74	0.85
(2) राजकोषीय सेवाएँ	2269.63	4.31	2384.55	3.79	2583.68	3.70	2135.36	2.59	2979.84	2.69
(3) ब्याज संग्रह और ऋण परिशोधन खर्च	5299.77	10.06	5573.74	8.85	6391.32	9.15	7071.25	8.58	8591.95	7.76
(4) प्रशासनिक सेवाएँ	3535.00	6.71	4125.08	6.55	4833.63	6.92	5245.04	6.37	6068.72	5.48
(5) पेंशन और विविध सामान्य सेवाएँ	4417.70	8.38	4959.43	7.88	5944.56	8.51	6853.03	8.32	8289.07	7.49
योग (A)	**16228.64**	30.80	**17705.14**	28.12	**20590.93**	29.47	**22365.11**	27.15	**26870.32**	24.27
(B) **सामाजिक सेवाएँ**										
(1) शिक्षा, खेल, कला और संस्कृति	9808.89	18.61	10896.42	17.30	13697.13	19.60	16222.33	19.69	18948.24	17.12
(2) स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण	2431.38	4.61	3128.22	4.97	3283.60	4.70	4521.34	5.49	5230.54	4.73
(3) जलपूर्ति और सफाई	590.28	1.12	741.82	1.18	905.21	1.30	916.09	1.11	1266.24	1.14
(4) आवास और शहरी विकास	1213.55	2.30	1999.67	3.18	1936.25	2.77	2361.01	2.87	5599.37	5.06
(5) श्रम और श्रमिक कल्याण	167.60	0.32	189.72	0.30	221.63	0.32	330.66	0.40	370.88	0.34
(6) अजा, अजजा एवं अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण	1809.68	3.43	2277.93	3.62	2415.97	3.46	2214.12	2.69	3895.55	3.52
(7) सामाजिक कल्याण और पोषाहार	4151.89	7.88	4901.77	7.78	5018.15	7.18	5227.01	6.35	10982.04	9.92
(8) अन्य	123.67	0.23	239.92	0.38	290.27	0.42	274.59	0.33	331.97	0.30
योग (B)	**20296.94**	38.52	**24375.47**	38.71	**27768.21**	39.74	**32067.15**	38.93	**46624.83**	42.12
(C) **आर्थिक सेवाएँ**										
(1) कृषि और सम्बद्ध क्रियाकलाप	5029.90	9.55	6021.08	9.56	6213.95	8.89	8290.58	10.06	10081.16	9.11
(2) ग्रामीण विकास	2922.22	5.55	3740.28	5.94	3405.56	4.87	6617.11	8.03	7340.50	6.63
(3) सिंचाई एवं बाढ़ नियत्रंण	654.09	1.24	720.12	1.14	782.97	1.12	845.20	1.03	671.92	0.61
(4) ऊर्जा	2070.86	3.93	2799.61	4.45	3340.48	4.78	5105.75	6.20	8244.58	7.45
(5) उद्योग और खनिज	1207.50	2.29	2060.57	3.27	1469.32	2.10	1286.49	1.56	2402.54	2.17
(6) परिवहन	891.88	1.69	1277.81	2.03	1412.21	2.02	1288.35	1.56	1533.04	1.38
(7) विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण	46.84	0.09	63.33	0.10	120.61	0.17	106.09	0.13	169.94	0.15
(8) सामान्य आर्थिक सेवायें	141.62	0.27	140.55	0.22	226.25	0.32	175.54	0.21	210.26	0.19
योग (C)	**12964.91**	24.60	**16823.35**	26.72	**16971.34**	24.29	**23715.12**	28.79	**30653.94**	27.69
(D) **सहायता अनुदान और अंशदान** योग(D)	**3203.22**	6.08	**4064.57**	6.45	**4539.28**	6.50	**4225.44**	5.13	**6544.30**	5.91
योग (A+B+C+D)	**52693.71**	100.00	**62968.53**	100.00	**69869.76**	100.00	**82372.83**	100.00	**110693.39**	100.00
1. **गैर विकासात्मक व्यय** योग (A)	**16228.64**	30.8	**17705.14**	28.12	**20590.93**	29.47	**22365.11**	27.15	**26870.32**	24.27
2. **विकासात्मक व्यय** योग (B+C+D)	36465.07	69.2	45263.39	71.88	49278.83	70.53	60007.71	72.85	83823.07	75.72
योग (1+2)	**52693.71**	100.00	**62968.53**	100.00	**69869.76**	100.00	**82372.82**	100.00	**110693.39**	100.00

स्त्रोत : मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2011–12 से 2015–16

निजीकरण पश्चात् सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों के समक्ष बढ़ती चुनौतियाँ

डॉ. आर. के.विपट * प्रो. अर्चना मुजमेर **

प्रस्तावना – उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नीतियाँ इस सदी की सबसे प्रमुख घटना थी। विकसित राष्ट्रों के साथ–साथ अनेक विकासशील देशों ने भी इस राह को अपनाया। भारत ने भी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के दबाव तथा आर्थिक संकट से मुक्ति पाने की आशा में 1991 में अपनी अर्थव्यवस्था को समूचे विश्व के लिये खोल दिया। नवीन औद्योगिक एवं आर्थिक नीतियों का उद्देश्य निजी क्षेत्र को बढ़ावा देने के साथ–साथ सार्वजनिक क्षेत्रों की सेवाओं के स्तर को ऊँचा उठाना था। यह स्थिति सामान्य बीमा क्षेत्र में भी थी। अत: नई नीतियों में बीमा उद्योग में भी भारी परिवर्तन हुए। सामान्य बीमा व्यवसाय में निजी कंपनियों को निवेश की छूट एवं विदेशी भागीदारी इसी का उदाहरण था।

1991 की नई सुधारवादी हवाओं के चलते सरकार ने सामान्य बीमा निगम का अस्तित्व समाप्त कर दिया एवं **आई. आर. डी. ए. एक्ट 1999** लागू कर दिया। सभी सार्वजनिक कंपनियाँ एवं निजी कंपनियाँ इसी आई.आर.डी.ए. के तहत् व्यवसाय कर रही हैं। बीमा नियमन एव विकास अधिकरण (आई.आर.डी.ए.) एक वैधानिक एजेंसी है जो भारत में बीमा व्यवसाय का संतुलित व नियमित विकास करने तथा बीमाधारकों के हितों का संरक्षण करने के लिए स्थापित की गई है।

बीमा क्षेत्र को निजी कंपनियों के लिए खोलने के पश्चात् बीमा व्यवसाय में परिवर्तन तीव्र गति से देखे जा रहे हैं। यह क्षेत्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। पुराने विश्वास, रीतियाँ सभी बदल रहे है। सार्वजनिक कंपनियाँ जो अब तक एकाधिकार, सरकार की सुरक्षात्मक नीतियों का लाभ लेते हुए प्रतियोगिता को भूल ही चुके थी। पर अब उन्हें अपने समक्ष वैश्विक चुनौतियाँ नजर आने लगी हैं। कई ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय बीमा कंपनियाँ जो इस क्षेत्र में उतरी है अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनुभवी और विशेषज्ञ हैं। ये कंपनियाँ बैंकों तथा अन्य ऐसी संस्थाओं से हाथ मिला रही हैं, जिनका संगठन व नेटवर्क विशाल और विस्तृत है, ताकि उपभोक्ताओं तक शीघ्र व आसानी से पहुँचा जा सकता है। ये विशाल बीमाकर्ता स्थानीय संस्थाओं के साथ मिल कर भारतीय सामान्य बीमा बाजार पर आसान पकड़ बनाने की क्षमता रखते हैं।

वर्ष 2000 में निजी कंपनियों के व्यवसाय में आते ही सामान्य बीमा व्यवसाय का समूचा परिदृश्य ही बदल गया । सामान्य बीमा व्यवसाय के मैदान में नये और पुराने खिलाड़ियों के बीच प्रतियोगिता का ऐसा खेल प्रारंभ हो गया जिसमें उसी खिलाड़ी की जीत तय थी, जो सबसे ज्यादा फिट यानि सक्षम होगा । यह बात तो स्पष्ट हो ही गई थी सक्षम कंपनियाँ ही अब बाजार में टिक पायेगी। जहाँ एक ओर निजी क्षेत्र के सामने अपने आपको इस चुनौतीपूर्ण क्षेत्र में स्थापित करने का संकट था। वहीं दूसरी और सार्वजनिक क्षेत्र के सामने अपनी तमाम स्तरहीन सेवाओं और आर्थिक अक्षमताओं को दूर कर अपने अस्तित्व को बरकरार रखने की चुनौती थी । इस व्यवसाय में कार्य कर रही निजी व सार्वजनिक कंपनियों के समक्ष कई चुनौतियाँ इस प्रकार से थी :–

1. आर्थिक व औद्योगिक क्षेत्र में तेजी से आ रहे परिवर्तनों के साथ–साथ अपने आपको परिवर्तित करना ।
2. नये सामाजिक – आर्थिक परिदृश्य में नए जोखिम तथा नये ग्राहकों को तलाश करना और बीमा के क्षेत्र का विस्तार करना ।
3. उपभोक्ताओं की बदलती मानसिकता को समझकर उसकी जरूरतों के मुताबिक सेवाएँ प्रदान कर उसे संतुष्ट करना ।
4. नई प्रभावी विपणन नीतियों का निर्माण एवं उनका प्रभावी क्रियान्वयन करना ताकि प्रतियोगिता में आगे रहा जाय ।

निजीकरण व वैश्वीकरण के प्रारंभिक दौर में यदि निजी तथा सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों की क्षमताओं का विभिन्न मानकों पर तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो ये अंतर स्पष्ट थे :–

1. संगठन – सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियाँ पिछले कई वर्षो से भारत में एकाधिकृत व्यवसाय कर रही थी। इनकी शाखाओं का जाल छोटे–छोटे शहरों तक फैला हुआ था। अत: इनका संगठन अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत और सक्षम था।

जबकि निजी क्षेत्र की कंपनियों को व्यवसाय में प्रवेश किये कुछ ही वर्ष हुये थे अत: इनका संगठन कम फैला है किंतु अपने पर्याप्त वित्तीय साधनों की सहायता से ये तेजी से अपने संगठन का विस्तार कर रहे हैं।

2. पूंजी – सार्वजनिक कंपनियों को सरकार का संरक्षण प्राप्त होने से इनका पूंजी आधार सुदृढ़ था। ये बड़े से बड़े व्यय, हानियों का भार उठा सकते थे। पूंजी स्त्रोतों को विदेशी भागीदारी व निवेश द्वारा बढ़ा रहे थे।

3. मानव संसाधन – सार्वजनिक कंपनियों में मानव संसाधन अतिरेक में था। यद्यपि ये योग्य व सक्षम था किन्तु उनके द्वारा दिये गये योगदान की तुलना में उन पर किये गये व्यय अधिक ही होते थे। जिससे प्रबंध लागत बढ़ जाती थी। यद्यपि प्रबंध लागत को कम करने के कई कठोर उपाय किये गये

---

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) भेरूलाल पाटीदार शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

मगर ये अपर्याप्त ही साबित हुये और छोटे आकार की निजी कंपनियों में कम्प्यूट्रीकृत कार्यालयीन कार्य होने के कारण यहॉ बहुत ही कम कर्मचारी कार्य कर रहे थे लेकिन ये सभी योग्य व सक्षम कर्मचारी थे।

4. नवीन तकनीक – सार्वजनिक कंपनियाँ अभी तक पूर्ण रूप से नई तकनीकों का लाभ नहीं ले पा रही थी। नई तकनीक काफी खर्चीली होने के साथ–साथ उनका उपयोग करने में काफी व्यवहारिक कठिनाईयाँ भी आ रही थी।

निजी कंपनियाँ पूरी तरह से कम्प्यूटरीकृत थी एवं इनके द्वारा पूर्ण रूप से नई तकनीकों और उपकरणों का लाभ लिया जा रहा था। सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल भी इन कंपनियों द्वारा अच्छी तरह से किया जा रहा था।

5. दावों का भुगतान एवं उपभोक्ता संतुष्टि – आई.आर.डी.ए. द्वारा बीमें की बाध्यता समाप्त कर देने के बाद से सार्वजनिक कंपनियाँ अपनी शर्तो पर संतुष्ट होने पर ही बीमा करती थी। लेकिन विक्रय पश्चात् सेवायें प्रदान करने में तथा दावों को समय पर पूर्ण भुगतान में निजी कंपनियाँ पीछे रह जाती थी।

निजी कंपनियाँ उपभोक्ता सेवाएँ प्रदान करने में काफी आगे थी। उनके द्वारा छोटे–छोटे दावों का भुगतान तो शीघ्र कर दिया जाता था मगर बड़े–बड़े दावों के भुगतान की प्रक्रिया लंबी व जटिल होती जाती थी।

6. उद्देश्य – सार्वजनिक कंपनियों का मुख्य उद्देश्य सार्वजनिक कल्याण के साथ–साथ लाभ में वृद्धि करना था। ये 'शून्य लाभ' पर व्यवसाय कर रही थी। निजी कंपनियाँ केवल अधिकतम लाभ के आधार पर व्यवसाय कर रही थी।

उपर्युक्त तुलना से स्पष्ट है कि सार्वजनिक बीमा कंपनियों को भविष्य में कुछ वर्षो तक तो लाभों में वृद्धि प्राप्त होगी और कोई बड़ी चुनौती नहीं मिलेगी लेकिन निजी कंपनियाँ धीरे–धीरे कुछ वर्षो बाद जब अपने आपको स्थापित कर लेगी और उनके वित्तीय साधन और संगठन के आकार में विस्तार हो जायेगा। तब सार्वजनिक बीमा कंपनियाँ परेशानी में पड़ सकती है। जब से नई–नई बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भारत में बीमा व्यवसाय में प्रवेश करने लगी तब से अपने अस्तित्व को बचाने की अंतहीन लड़ाई प्रारंभ हो गई है।

बीमा व्यवसाय में चुनौतियाँ बढ़ती ही जा रही हैं। आई.आर.डी.ए. द्वारा पिछले वर्षो में बार–बार प्रीमियम दर बदलना, सेवा कर लगाया जाना आदि संकेत निजीकरण व वैश्वीकरण के पक्ष में ही दिखाई देते हैं अब सार्वजनिक क्षेत्र के सामने परीक्षा की घड़ी है। जिसमें सफल होने के लिये उन्हें आत्म विश्लेषण करना चाहिये एवं सकारात्मक एवं सुधारात्मक उपाय करके अपने अस्तित्व को प्रभावशाली ढंग से सुनिश्चित करना होगा।

ऐसे में सार्वजनिक कंपनियाँ यदि अपने प्रदर्शन, गुणवत्ता में सकारात्मक परिवर्तन नहीं किया तो वे इस प्रतियोगिता में अग्रणी नहीं रह पायेंगी क्योंकि धीरे–धीरे उनके आय के स्रोत कम होते जायेंगे। उसके लिए सार्वजनिक कंपनियों को आवश्यकता थी कि वे अपनी विपणन नीतियों में मूलभूत परिवर्तन लाकर अपने आपको पुनर्संगठित करें एवं अपने ग्राहकों के समक्ष श्रेष्ठ संभावित बीमा अवसर प्रस्तुत करें साथ ही मूल्य वर्धित सेवाएँ भी प्रदान करें।

निजीकरण के प्रभाव प्रारंभ होने के साथ–साथ सार्वजनिक कंपनियों के द्वारा अपनी नीतियों में कई व्यूहरचनात्मक परिवर्तन किये गये जिनमें कुछ प्रमुख थे :–

1. प्रबंध लागत को कम करने के लिये अतिरिक्त शाखाओं को बंद किया गया।
2. कर्मचारियों की अतिरेक संख्या को कम करने के लिये स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना (व्ही.आर.एस.) लाई गई।
3. समस्त शाखाओं को पूरी तरह कम्प्यूटरीकृत कर दिया गया।
4 दावों के भुगतान की प्रक्रिया को सरल व छोटी बनाया गया।
5. कंपनी के कर्मचारियों, प्रबंधकों, एजेंटों एवं विकास अधिकारियों में आपसी विश्वास जागृत करने के लिये विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों, सेमीनार, कांफ्रेंस आदि के आयोजन किये गये।
6. कर्मचारियों के मनोबल में वृद्धि व उत्साह बढ़ाने के लिये कई अभिप्रेरणात्मक उपाय किये गये जैसे पदोन्नति, क्रमोन्नति आदि की नीतियों में सुधार किये गये।
7. बीमा के नवीन क्षेत्रों को ढूंढकर कई नवीन पॉलिसियाँ भी प्रस्तुत की गई। जो उपभोक्ता की आवश्यकताओं के अनुरूप थी।
8. उपभोक्ताओं के साथ अपने संबंधों को बेहतर बनाने के लिये कई उपाय किये गये।

सुधारवादी उपायों के क्रियान्वयन के पश्चात् सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों के विक्रय तथा लाभों में वृद्धि भी हुई।

भारत की सभी सार्वजनिक बीमा कंपनियों से यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की तुलनात्मक आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के उद्देश्य से समस्त सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की वेबसाइटस पर एवं अन्य संबंधित वेबसाइटस पर उपलब्ध द्वितीयक समंकों अर्थात् आँकड़ों, विवरणों एवं जानकारियों के आधार पर उनकी वार्षिक आय एवं लाभदायकता का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

तालिका क्र.1 में भारत की समस्त सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की वार्षिक प्रीमियम आय को प्रदर्शित किया गया है। तालिका को अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की वर्ष 2004–05 से वर्ष 2014–15 तक की वार्षिक प्रीमियम आय में लगातार वृद्धि हुई है। ये वृद्धि चारों सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की आय में हुई है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कंपनियों की परिवर्तित नीतियों का सकारात्मक प्रभाव आय पर हुआ है।

तालिका क्र. 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र.2 में भारत की चारों सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों के शुद्ध आय अनुपात को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि समस्त सार्वजनिक कंपनियों के शुद्ध आय अनुपात में वर्ष 2007–08 तक वृद्धि हुई है परन्तु मध्य के कुछ वर्षो में यह अनुपात कम होता दृष्टिगत होता है। चूँकि यह अवधि वैश्विक आर्थिक मंदी की है, अत: सार्वजनिक कंपनियों की शुद्ध आय में कमी दर्शाई गई है जो स्वाभाविक है। परन्तु इसके पश्चात् के वर्षो में पुन: सभी कंपनियों के शुद्ध आय अनुपात में वृद्धि देखी गई है। तालिकाओं के विश्लेषण सं कंपनियों के आय व लाभ में वृद्धि प्रमाणित तो होती है।

किंतु यह भी स्पष्ट है कि निजी बीमा कंपनियों की व्यवसाय में बढ़ती भागीदारी भविष्य में सार्वजनिक कंपनियों के समक्ष बड़ी चुनौती खड़ी कर देगी। निजी कंपनियों के पास पर्याप्त पूँजी भंडार, उच्च स्तरीय ग्राहक सेवाएँ और नई प्रौद्योगिकी का साथ है. जिसकी मद्द से ये व्यवसाय में अपनी पकड़ मजबूत करते जा रहे है।

सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों के समक्ष कई सारी आंतरिक समस्याएँ हैं जैसे प्रशासनिक एवं प्रबंधकीय समस्याएँ, वहीं दूसरी ओर कई बाहरी समस्याएँ भी हैं जैसे ग्राहकों का जागरूक न होना, संबंधित पक्षकारों का सहयोग न मिलना आदि। इन सभी समस्याओं का निराकरण करना अत्यंत ही आवश्यक है ताकि ग्राहकों को उनकी आवश्यकतानुसार बीमा सुविधा उचित मूल्य पर प्राप्त हो सके साथ ही साथ कंपनी उच्च स्तरीय ग्राहक बीमा सेवा प्रदान करते हुए अधिकतम लाभ भी प्राप्त कर सके। यदि आने वाले भविष्य में सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियाँ स्वयं को समयानुसार परिवर्तित नहीं कर पाई तो वे बीमा क्षेत्र में प्रतियोगिताओं में आगे नहीं रह पायेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

तालिका क्र. 1 - भारत की सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की वार्षिक प्रीमियम आय (करोड़ में) राष्ट्रीय स्तर पर

वर्ष	यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कं. लि.	शुद्ध आय अनुपात (कर पश्चात लाभ/शुद्ध प्रीमियम *100)		
		न्यू इंडिया एश्योरेंस कं. लि.	ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी	नेशनल इंश्योरेंस कंपनी
2005-2006	3154	4791	3609	3524
2006-2007	3510	5017	4020	3814
2007-2008	3740	5277	3900	4007
2008-2009	4278	6455	4077	4279
2009-2010	5237	7099	4855	4645
2010-2011	6376	8225	5570	6220
2011-2012	8179	10073	6195	5665
2012-2013	9266	11873	6738	6651
2013-2014	9709	13727	7283	7086
2014-2015	10642	15480	7515	7135

स्त्रोत - समस्त सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की वेबसाइट्स पर उपलब्ध विभिन्न वार्षिक प्रतिवेदन

तालिका क्र. 2 - भारत की सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों के विभिन्न वर्षों में शुद्ध आय अनुपात राष्ट्रीय स्तर पर

वर्ष	यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कं. लि.	शुद्ध आय अनुपात (कर पश्चात लाभ/शुद्ध प्रीमियम *100)		
		न्यू इंडिया एश्योरेंस कं. लि.	ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी	नेशनल इंश्योरेंस कंपनी
2004-2005	14.16			4.63
2005-2006	19.1	15.22	11.35	-3.96
2006-2007	20.9	30.72	17.27	14.64
2007-2008	21.92	28.51	0.32	5.12
2008-2009	13.56	4.08	-1.63	-4.08
2009-2010	16.89	6.74	-1.11	5.65
2010-2011	2.55	-5.86	1.18	1.39
2011-2012	5.71	2.04	4.84	4.68
2012-2013	7.04	8.21	9.63	8.77
2013-2014	6.36	9.02	7.21	8.73
2014-2015	8.22	10.27	7.89	8.12

स्त्रोत - समस्त सार्वजनिक सामान्य बीमा कंपनियों की वेबसाइट्स पर उपलब्ध विभिन्न वार्षिक प्रतिवेदन

****

पन्ना जिले के पर्यटन स्थल एवं रोजगार की भावी संभावनाऐं

प्रदीप कुमार रावत *

शोध सारांश – पर्यटन उद्योग विश्व के बड़े उद्योगों में से एक है। आर्थिक विकास ,रोजगार सृजन एवं देश तथा प्रदेश के समग्र विकास के लिये पर्यटन उद्योग महत्वपूर्ण है।

पर्यटन उद्योग में वह क्षमता है, जिससे पर्यटन के क्षेत्र में ऊँची विकास दर, रोजगार के अवसर एंव स्वरोजगार के अवसर हासिल किये जा सकते हैं। इसी के साथ अनेक सह उद्योग जैसे – होटल उद्योग एवं केंटरिग ट्रेवल एजेन्सी आदि उद्योगों का विकास भी सुनिश्चित होता है।

शब्द कुंजी – पर्यटन उद्योग, रोजगार, सह उद्योग पूंजी, अर्थव्यवस्था, होटल, केटरिंग ।

प्रस्तावना – जब किसी देश की आर्थिक स्थितियॉ अनुकूल होती है तो उसका विकास एक प्राकृतिक परिणाम के अनुरूप नहीं होता बल्कि उसके लिये एक उत्प्रेरक तथ्यों की आवश्यकता होती है। और इसके लिये उद्यमी की गतिविधियों की जरूरत होती है।

वर्तमान समय में उद्योग के रूप में पर्यटन की महत्ता को समस्त देशों द्वारा स्वीकार्य किया गया है। पर्यटन उद्योग विश्व के तीव्र गति से बढ़ रहे उद्योगों में से एक है। इसकी असीम सम्भावनाओं को समेटे उद्योग के सेवा क्षेत्र में पर्यटन उद्योग एक महत्वपूर्ण विकल्प है। यदि पर्यटकों को प्रदान की जाने वाली विभिन्न सेवाओं को सम्मिलित कर लिया जाए तथा इसे रोजगार संभावनाओं में जोड़ा जाए तो निश्चित रूप से भविष्य में पर्यटन उद्योग की अपार सम्भावनाएं है। पर्यटन उद्योग में वे सभी व्यावसायिक गतिविधियां सम्मिलित है। पर्यटन उद्योग में वे सभी व्यावसायिक गतिविधियॉ सम्मिलित है, जो पूरे पर्यटन उद्योग के अंग है। इनमें बैकिंग सेवाएँ, होटल परिवहन संचार, केटरिंग, मनोरंजन स्थल, कला हस्तशिल्प, उत्पादन विपणन, उद्यानों ऐतिहासिक दार्शनिक एवं धार्मिक महत्व के स्थलों का प्रबंधन शामिल हैं।

पन्ना पर्यटन की अभूतपूर्व संभावनाओं से भरा मध्यप्रदेश राज्य का एक महत्वपूर्ण जिला है। यहॉ पर्यटन के लिहाज से समुद्र रेगिस्तान और बर्फीलें पहाड़ो को छोड़कर सब कुछ है। यहॉ की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, पर्यटकों के लिये अनुकूल है। यहॉ की हीरा की खदाने ऐतिहासिक दुर्ग, प्राकृतिक रमणीय स्थल धार्मिक स्थल एवं राष्ट्रीय उद्यान आदि समुद्र पर्यटन की दृष्टि से पन्ना जिला पर्यटकों का केन्द्र बनने की क्षमता रखता है।

अध्ययन की उपकल्पना –पन्ना जिले में प्राकृतिक रमणीय स्थल, अनेक जलप्रपात, वन्य जीव अभ्यारण्य, ऐतिहासिक महल, किले, प्राचीन मंदिर, पन्ना टाइगर रिजर्व, हीरा की खाने, राष्ट्रीय उद्यान आदि है। इसके बावजूद भी पर्यटन विकास नही हो पाया फिर भी पर्यटन उद्योग को विकसित किया जा सकता है। पन्ना जिलें में पर्यटन उद्योग विकास की ओर अग्रसर हो सकता है।

पर्यटन के उद्देश्य –

1. मध्यप्रदेश में पर्यटन की स्थिति तथा पन्ना जिले में योगदान।
2. पर्यटन के प्रोत्साहन एवं विकास के लिए योजना बनाना।
3. पन्ना जिलें में पर्यटन की चुनौतियां एवं संभावनाओं की पहचान करना।
4. पन्ना जिले में पर्यटन को पर्यटन उद्योग में परिवर्तित करना।
5. पन्ना जिले में पर्यटन की स्थिति का अध्ययन।
6. जिले की आर्थिक स्थिति में पर्यटन का योगदान।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीय संमको पर आधारित है । इसमें संमको का संकलन पत्रिकाओं, शोध पत्रों, दैनिक समाचार पत्रों, तथा पर्यटन बेबसाइट से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन क्षेत्र के रूप में पन्ना एवं पन्ना जिलें में स्थित धार्मिक मंदिरों प्राकृतिक रमणीय स्थल, जलप्रपात वन्य जीव अभ्यारण्य ऐतिहासिक किले में हीरा की खाने, पन्ना टाईगर रिर्जव एवं राष्ट्रीय उद्यान आदि को सम्मिलित किया गया है।

शोध विश्लेषण – पन्ना जिला वनाच्छादित पहाड़ियों और विंध्य पर्वत पठार से आच्छादित जिला है। पन्ना जिला प्राचीन मंदिरों के साथ–साथ हीरा की खदानों के लिये विख्यात है। प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध इस जिले का क्षेत्रफल 7135 वर्ग किलोमीटर है। इसकी सीमा उत्तर में उत्तर प्रदेश के बांदा तथा पश्चिम में मध्यप्रदेश के छतरपुर, दमोह, दक्षिण में कटनी एंव पूर्व में सतना जिलों को स्पर्श करती है। यह जिला रेल यातायात से वंचित हैं सड़के ही आवागमन का साधन है। जिला मुख्यालय से निकटतम रेल्वे स्टेशन खजुराहों जिसकी दूरी 48 किलोमीटर है। तथा सतना रेल्वे स्टेशन 72 किलोमिटर है और निकटतम हवाई अड्डा खजुराहों 48 किलोमीटर दूर है। यह महामति श्री प्राणनाथ जी के दर्शनीय मंदिर तथा प्रणामी सम्प्रदाय का प्रमुख तीर्थ स्थल है। देश की एकमात्र उथली हीरा खदान एवं पन्ना राष्ट्रीय उद्यान तथा केन घड़ियाल अभ्यारण के विख्यात हैं। यहां का श्री बलदेव जी मंदिर जो स्थापत्य में पूरी तरह से लंदन गिरिजाघर सेकपाल का प्रतिरूप है एंव श्री जुगल किशोर मंदिर श्रद्धा व भक्ति का अनुपम केन्द्र है।

इस प्रकार जिले में धमार्थ शाखा से जुड़े 134 प्राचीन मंदिर हैं, जो यहाँ भक्ति और श्रद्धा के केन्द्र हैं, साथ ही पर्यटकों को आकर्षित करने हेतु प्रमुख केद्र बिन्दु हैं। जहाँ न केवल मंदिरों में भव्यता व्याप्त है वरन् धार्मिक आस्था से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण किवदंतियाँ भी है, जो आज भी मानव को पारस्परिक सहयोग का एक संदेश प्रसारित करती है ।

इसी के साथ यहां पर दार्शनिक एंव रमणीय पर्यटन स्थल है इन स्थलों के पाण्डव फाल की गुफाऍ, रनेह फाल नेशनलपार्क, अजयगढ़ का किला, मझगंवा की हीरा खदानें आदि प्रमुख है। पन्ना नगर एवं जिलें में सभी सम्प्रदाय के मंदिर और अन्य दार्शनिक स्थल प्रकार है।

---

* शोधार्थी,अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

1. **श्री प्राणनाथ जी मंदिर –** पन्ना नगर के पश्चिम में धाम मोहल्ले में स्थित इस मंदिर का निर्माण सन् 1748 में हुआ था, मंदिर का निर्माण प्रोन्नत जगत पर है। मंदिर के अंदर की दीवारों में भगवान श्री कृष्ण एवं राधा की रासलीला के आकर्षक दृश्यों का चित्रण है। मंदिर के मुख्य गुम्बद में स्वर्ण कलश एवं आशीर्वाद स्वरूप पंजा लगा हुआ है जो नगर एवं आस–पास के ग्रामीण क्षेत्रों को समय चक्र की जानकारी देता है। मंदिर में श्री कृष्ण के मुरली मुकुट प्रतिस्थापित है, मंदिर के अंदर सिंहासन आदि चाँदी के है, इन पर आकर्षक नक्काशी है, जो मानव मन को मंत्रमुग्ध कर लेता है। यहाँ हर वर्ष शरद पूर्णिमा के अवसर पर पाँच दिन तक वार्षिक उत्सव मनाया जाता है। यहाँ मनोरंजन लोक नृत्य लोक कथाओं का आयोजन होता है। जिसमें देश–विदेश के लोग आकर शामिल होते हैं।

1. **श्री बल्देव जी मंदिर –** पन्ना के 10 वें नरेश राजा रूद्र प्रताप ने इस मंदिर का निर्माण सन् 1933 से 1936 के मध्य कराया था। मंदिर निर्माण में श्री बलराम जी की 16 कलाएं स्पष्ट परिलक्षित हैं। 16 सीढ़ी 16 स्तम्भ पर विशाल मंडप 16 झरोखे एवं गुम्बद मुख्य हैं। गर्भगृह में भगवान बल्देव जी की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। यहाँ पर भक्त को दर्शन के लिये दोपहर एवं सायंकाल पट खोले जाते है।

2. **श्री जुगलकिशोर मंदिर –** इस मंदिर का निर्माण सन् 1956 में पन्ना महाराजा हिन्दूपत ने कराया था। सम्पूर्ण मंदिर मध्य युगीन महराब शैली पर निर्मित है। मंदिर के अंदर जुगलकिशोर की भव्य आकर्षक प्रतिमा विराजमान है। यहाँ प्रातः दोपहर एवं सांयकाल दर्शनों के लिए मंदिर के पट खोले जाते है। यहाँ पर राधा कृष्ण की श्यामल प्रतिमा है। जिसके दर्शन के लिए दूर–दूर से श्रद्धालु आते है।

3. **श्री गोविन्द जी मंदिर –** बल्देव मंदिर के समीप गोविन्द जी का मंदिर स्थित है, इसका निर्माण सन् 1936 में महाराजा रूद्र प्रताप की महारानी गोविंद कुंवर ने कराया था। गर्भ गृह में राधा गोविंद जी की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है।

4. **राम–जानकी मंदिर –** इस मंदिर का निर्माण महाराजा लोकपाल जी की महारानी सुजानसुंदर द्वारा सन् 1895 में कराया गया था। लेकिन मंदिर में मूर्ति की स्थापना सन् 1938 में महाराजा यादवेन्द्र सिंह जूदेव द्वारा करायी गई है। मंदिर में भगवान श्री राम–लक्ष्मण एवं सीता जी की प्रतिमा विराजमान है। यह बुंदेली वास्तु परंपरा के नरेशों के निर्माण की अंतिम कड़ी है।

5. **दिगम्बर जैन मंदिर –** यह मंदिर पन्ना के मंदिरों में सबसे पुराना मंदिर है इसका निर्माण संवत 1548 है। यहाँ भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति विराजमान है।

6. **मंदिर पर्ण कुटी –** इसका निर्माण पन्ना के महाराजा हिन्दुपत ने राजमहल के रूप में कराया था।

7. **पाण्डव फॉल एवं गुफायें –** पन्ना जिला मुख्यालय के लगभग 18 कि.मी. दूर पन्ना–छतरपुर मार्ग पर मुख्य सड़क राजमार्ग से दायीं ओर नेशनल वार्क की सीमा में स्थित है। इस स्थान पर महाभारत काल में वनवास के समय पाण्डव लोगों ने कुछ समय बिताया था।

इसीलिए इसका नाम पाण्डव फॉल रख दिया। यहाँ पर गुफायें है लेकिन वर्तमान समय में खंडहर हो चुकी है। इस स्थान का संबंध हमारे स्वंतत्रता संग्राम से भी रहा है सन् 1930 में विख्यात क्रांतिकारी श्री चंद्रशेखर आजाद ने गुप्त रूप से इस स्थान पर कुछ समय बिताया था। यह स्थान चारों तरफ से मनोरम वनों से घिरा हुआ है। यहाँ पहाड़ से झरने का जल प्रपात के रूप में मिलता है। इसके देखने के लिए प्रत्येक वर्ष देशी एवं विदेशी पर्यटक पहुँचतें है।

8. **रनेह फाल –** यह फॉल पन्ना एवं छतरपुर की सीमा से लगा हुआ है, वन तथा पर्वतीय क्षेत्र है। यह क्षेत्र सागौन के वृक्षों तथा केन नदी पर बने रनंगावां गंगऊ बांधों से सुंदर स्थान है तथा वन्यजीव अभ्यारण का केन्द्र है, जहाँ पर तेंदुआ, जंगली कुत्ता, हिरण, चीतल, सांभर आदि पर्यटको को आकृर्षित करते है तथा जहाँ पूरे साल देशी एवं विदेशी पर्यटक घूमने आते है।

9. **राष्ट्रीय उद्यान –** यह स्थान पन्ना नगर मृख्यालय से लगभग 18 किलोमीटर दूर है। यह नवम्बर से पर्यटकों लिये खुला रहता हैं। यहॉ प्रवेश के लिये ग्राम हिनौता एवं मड़ला में द्वार स्थापित किये गये हैं। मध्यप्रदेश की भौगोलिक स्थिति एवं धरातली संरचना की विषिष्टता एवं उसके सौन्दर्य के लिये ये उद्यान विख्यात हैं। उद्यान क्षेत्र के अंदर ही मझगवां हीरा खदान संचालित हैं जहां पर राष्ट्रीय खनिज विकास निगम हीरा खनन कार्य कर रही है। यहॉ की नदियों में मुख्यतः केन नदी म0प्र0राज्य के उत्तर से लेकर छतरपुर एवं पन्ना जिला की सीमायें बनाती हैं। जहॉ पर भ्रमण का समय माह दिसम्बर से माह मार्च के बीच पर्यटकों हेतु उपयुक्त रहता है। इस उद्यान को केन्द्र सरकार ने प्रोजेक्ट टाईगर योजना अंतर्गत 5 वें टाईगर रिजर्व के रूप में सम्मिलित किया हैं। यहां पर इस समय वन्यजीवों में बाघ, तेंदुआ, सॉभर, चीतल, चिकारा, भालू तथा घड़ियाल पर्यटकों को आकर्षित कर रहे हैं।

10. **जिला पुरातत्व संग्रहालय –** पुरातत्व संग्रहालय सन् 1988 में स्थापित किया गया था। इस संग्रहालय में गुप्त, चंदेल एवं कलचुरी काल की पाषाण प्रतिमाऍ प्रदर्शित है। इसके अतिरिक्त कुछ चांदी एवं ताबे के सिक्को का भी सकंलन है। यहां पर देशी पर्यटक के लिये संग्रहालय में प्रवेश शुल्क रूपये 5.00 तथा विदेशी पर्यटकों को रूपये 50.00 निर्धारित है। भ्रमण का समय प्रातः 10 बजे से शाम 5.0 बजे तक रखा गया है।

10. **विश्राम गृह –** पन्ना के पर्यटन स्थल पर्यटकों को पर्यटन विभाग विश्राम गृह भी प्रदान करते है।यहॉ निजी होटल पार्क गेट के पास हिनौता तथा पन्ना, खजुराहों में उपलब्ध कराते है।

सं.क्र.	विश्राम गृह का नाम	सीट	कमरा किराया प्रतिदिन
1.	मड़ला वन विश्राम गृह	2	1500/–
2.	जंगल कैंप, हिनौता, विश्राम गृह	8	2000/–
3.	रनेह फाल झोपड़ी	3	1500/–
4.	मोहन राज विलास होटल पन्ना	2	2500/–

पर्यटकों हेतु बुनियादी सुविधाऍं –

1. डाक घर तथा टेलीफोन – खजुराहो, पन्ना, मड़ला, हिनौता
2. अस्पताल – खजुराहो, पन्ना
3. बैंक तथा एम.टी.एम– खजुराहो, पन्ना
4. पुलिस कोतवाली – खजुराहों, पन्ना
5. रेल्वे स्टेशन – खजुराहों, सतना, झॉसी,
6. बस स्टेण्ड, खजुराहों पन्ना
7. पेट्रोल पंप – पन्ना, छतरपुर, राज्य सड़क मार्ग
8. गाइड – मड़ला, हिनौता
9. हवाई अड्डा – खजुराहों

पर्यटन स्थल राष्ट्रीय उद्यान में प्रवेश हेतु शुल्क

क्र.	वाहन प्रवेश शुल्क	सवारी व्यक्ति	भारतीय नागरिक रूपये	विदेशी नागरिक रू.
1	जीप /कार	8	1320	2640
2	मिनीबस	20	5500	11000
3	गाइड फीस	1	300	600
4	हाथी सवारी	1	550	1650

पर्यटन स्थल पाण्डव फाल व रनेह फाल के प्रवेश शुल्क

क्रं.	वाहन	भारतीय नागरिक	विदेशी नागरिक
1	मोटर साइकिल	55	110
2	आटोरिक्शा	220	440
3	कार/जीप	495	990
4	मिनी बस	1100	2200

विगत पांच वर्षो में नेशनल पार्क में आये पर्यटकों की जानकारी

वर्ष	देशी पर्यटक	विदेशी पर्यटक	कुल संख्या	प्रतिशत
2010-11	8777	3829	12606	15.6
2011-12	9579	4325	13904	17.1
2012-13	11117	4753	15870	19.5
2013-14	14500	4919	19419	23.9
2014-15	13772	5399	19371	23.8

विगत पॉच वर्षो में पाण्डव फाल में आये पर्यटकों की जानकारी सारणी विश्लेषण

वर्ष	देशी पर्यटक	विदेशी पर्यटक	कुल संख्या	बदलाव प्रतिशत
2010-11	43127	532	43659	20.6
2011-12	45577	538	46115	21.7
2012-13	38629	372	39001	18.4
2013-14	49257	466	49723	23.4
2014-15	33087	275	33362	15.7

विगत पॉच वर्षो में रनेह फाल में आये पर्यटकों की जानकारी का सारणी विश्लेषण

वर्ष	देशी पर्यटक	विदेशी पर्यटक	कुल संख्या	बदलाव प्रतिशत
2010-11	34097	9287	43384	21.0
2011-12	32568	1035	33603	16.2
2012-13	34025	8074	42099	20.3
2013-14	41356	6583	47939	23.1
2014-15	33634	6189	39823	19.2

उपरोक्त सारणी विश्लेषण वर्ष 2013-14 एवं 2014-15 में पर्यटकों की संख्या में वृद्धि या कमी को प्रदर्शित करती है।

निष्कर्ष - पर्यटन विश्व में बड़े उद्यमी के रूप में विकसित हो रहा हैं, यह विदेशी मुद्रा निवेश में सहायक है। अनेक उद्योगों से जुडे होने के कारण रोजगार सृजन व इन उद्योगों के विकास में मददगार है। अत: मध्यप्रदेश पर्यटन विभाग की प्राथमिकता होनी चाहियें। पन्ना जिले की अर्थव्यवस्था में पर्यटन की अहम भूमिका हो सकती है। पन्ना जिले के उपरोक्त पर्यटन स्थलों को प्रचार एवं सुविधाओं के जरिये अधिक आकर्षक बनाया जाना चाहिये।

पर्यटन स्थलों के विकास हेतु सुझाव -

1. पर्यटन स्थलों पर बुनियादी सुविधायें होना।
2. विशिष्ट एवं कम लोक प्रिय स्थलों का प्रचार प्रसार करना।
3. जिले के सभी पर्यटन स्थलों को पर्यटन राज्य विकास मंत्रालय से जोड़ा जाए।
4. सभी पर्यटन स्थलों की जानकारी इंटरनेट में उपलब्ध होना चाहिए।
5. पर्यटन स्थलों के पास पर्यटकों के भ्रमण हेतु प्रशिक्षित गाइड का होना।
6. पर्यटन स्थलों का चिन्हांकन होना चाहिए।
7. पर्यटन स्थलों बैंकिग सुविधायें एवं आवागमन की सुविधायें होना चाहिए।

संदभिर्त पुस्तकें -

1. मध्यप्रदेश सदंर्भ 2012 - जनसंपर्क विभाग मध्यप्रदेश।
2. मध्यप्रदेश सामान्य अध्ययन - डॉ. एम. एम. सिसौदिया
3. इंटरनेट से प्राप्त सांख्यिकीय, पर्यटक रिर्पोट।

****

मध्यप्रदेश के सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. बी. एस. मक्कड़ * अजय बख्तरिया **

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश भारत के मध्य में स्थित एक राज्य है। इस राज्य का गठन 1 नवम्बर 1956 में हुआ था लेकिन 1 नवम्बर 2000 में पुनर्गठन हुआ और एक राज्य छत्तीसगढ़ बना। मध्यप्रदेश की सीमा उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात व छत्तीसगढ़ राज्यों से मिली हुई है। यहाँ उपलब्ध संसाधनों पर सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विद्यमान है,जो राज्य के औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। मध्यप्रदेश सरकार भी औद्योगिकरण को बढ़ाने में निरन्तर प्रयत्नशील रही है। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास अधिनियम लागू होने के पश्चात् सरकार द्वारा किये गये प्रयासों के फलस्वरूप राज्य में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र में तेजी से वृद्धि की गई है। चतुर्थ गणना के परिणामस्वरूप मध्यप्रदेश वर्तमान में देश के 10 अग्रणी राज्यों में सम्मिलित राज्य है। इस शोध पत्र में मध्यप्रदेश सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के पंजीकृत क्षेत्र व अपंजीकृत क्षेत्र तथा सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की संख्या, विनियोग व रोजगार का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम का परिचय – सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास अधिनियम 2006 में इन उद्यमों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया। विनिर्माण उद्यम और दूसरा सेवा उद्यम, प्रत्येक भाग में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की परिभाषा प्लांट, मशीनरी व सम्बद्ध उपकरणों में विनियोग के रूप में दी गयी है। विनिर्माण इकाईयों में सूक्ष्म उद्यम में विनियोग की सीमा 25 लाख रूपए तक, लघु उद्यम में विनियोग 25 लाख रूपए से अधिक और 5 करोड़ रूपए तक और मध्यम उद्यम में विनियोग की सीमा 5 करोड़ रूपए से अधिक और 10 करोड़ रूपए तक है। सेवा इकाईयों में सूक्ष्म विनियोग की सीमा 10 लाख रूपए तक, लघु उद्यम में विनियोग की सीमा 10 लाख रूपए से अधिक और 2 करोड़ रूपए तक और मध्यम उद्यम में विनियोग की सीमा 2 करोड़ रूपए से अधिक और 5 करोड़ रूपए तक है।

उद्देश्य –

1. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के पंजीकृत व अपंजीकृत क्षेत्र का अध्ययन करना।
2. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की संख्या, विनियोग व रोजगार का अध्ययन करना।

प्रविधि – अध्ययन का क्षेत्र मध्यप्रदेश राज्य है। यह प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक संमकों पर आधारित है। जिसमें वर्ष 2006-07 से 2013-14 तक के आँकड़े एकत्रित किये गये है। इनका संकलन सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम, वार्षिक रिपोर्ट 2013-14 तथा www.msme.gov.in से किया गया है।

मध्यप्रदेश में पंजीकृत व अपंजीकृत क्षेत्र – मध्यप्रदेश में 19.33 लाख सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम है, जिसमें 1.07 लाख उद्यम पंजीकृत है व 11.50 लाख उद्यम अपंजीकृत है। पंजीकृत क्षेत्र में 2.98 लाख व अपंजीकृत क्षेत्र में 17.32 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त है। प्रति इकाई रोजगार सर्वाधिक 2.79 पंजीकृत क्षेत्र में है। जिसे निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है –

तालिका क्रमांक -1.1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

मध्यप्रदेश में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की संख्या, विनियोग व रोजगार – मध्यप्रदेश में वर्ष 2006-07 में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम की संख्या 16733 थी, जिसमें विनियोग 17822.16 लाख रू. था और 38958 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था, वर्ष 2007-08, 2008-09 में उद्यमों की संख्या, विनियोग और रोजगार के क्षेत्र में निरन्तर वृद्धि हुई। वर्ष 2008-09 में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम की संख्या 20920 थी जिसमें विनियोग 36871.54 लाख रू. था और 46891 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था। लेकिन वर्ष 2009-10 में उद्यमों में संख्या, विनियोग और रोजगार के क्षेत्र में कमी पाई गई। वर्ष 2009-10 में उद्यमों की संख्या 19721 जिसमें विनियोग 25414.24 लाख रू. और रोजगार 41302 था, लेकिन वर्ष 2010-11, 2011-12 में उद्यमों की संख्या, विनियोग और रोजगार के क्षेत्र में निरन्तर वृद्धि हुई। वर्ष 2011-12 में उद्यमों की संख्या 20100 थी जिसमें विनियोग 43698.50 और रोजगार 46095 था। वर्ष 2012-13 में उद्यमों की संख्या में पुन: कमी पाई गई लेकिन विनियोग व रोजगार के क्षेत्र में वृद्धि हुई। वर्ष 2012-13 में उद्यमों की संख्या 19886 थी जिसमें विनियोग 60073.41 था और रोजगार 46948 था। वर्ष 2013-14 में उद्यमों में संख्या, विनियोग और रोजगार के क्षेत्र में कमी हुई। वर्ष 2013-14 में उद्यमों की संख्या 18653 जिसमें विनियोग 56103.54 और रोजगार 44336 था, जिसे निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक -1.2 व ग्राफ (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक -1.3 व ग्राफ (देखे अगले पृष्ठ पर)

मध्यप्रदेश में विभिन्न वर्षो में विनियोग के क्षेत्र में निरन्तर से वृद्धि हुई है। वर्ष 2006-07 में प्रति उद्यम विनियोग 1.06 लाख रू. था, जो 2013-14 में 3.01 लाख रू. हो गया। सर्वाधिक प्रति उद्यम विनियोग 2012-13 में 3.02 लाख रू. रहा। रोजगार के क्षेत्र में विनियोग की तुलना में वृद्धि नहीं हुई है। विभिन्न वर्षो प्रति उद्यम रोजगार 2 प्रति व्यक्ति से अधिक रहा है। सर्वाधिक प्रति उद्यम रोजगार वर्ष 2007-08 में 2.4 व सबसे कम वर्ष 2009-10 व 2010-11 में 2.1 रहा है।

निष्कर्ष – इस शोध पत्र में मध्यप्रदेश के सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में सर्वाधिक अपंजीकृत क्षेत्र के 11.50 लाख उद्यम है जिसमें 17.32 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ है। अध्ययन में पाया गया है कि प्रदेश में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों में प्रतिवर्ष स्थापना हो रही है। विनियोग के क्षेत्र

---

* प्राध्यापक एवं प्राचार्य, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

में भी सतत् व निरन्तर वृद्धि हुई है और रोजगार के अवसर भी उत्पन्न हो रहे है। इन सबके आधार पर यह कहा जा सकता है कि सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों का प्रदेश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है।

अध्ययन से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में विभिन्न वर्षों में विनियोग के क्षेत्र में निरन्तर व तेजी से वृद्धि हुई है। वर्ष 2006-07 में प्रति उद्यम विनियोग 1.06 लाख रू. था जो 2013-14 में 3.01 लाख रू. हो गया। सर्वाधिक प्रति उद्यम विनियोग 2012-13 में 3.02 लाख रू. रहा। रोजगार के क्षेत्र में विनियोग की तुलना में वृद्धि नहीं हुई है। विभिन्न वर्षों में प्रति उद्यम रोजगार 2 प्रति व्यक्ति से अधिक रहा है। सर्वाधिक प्रति उद्यम रोजगार वर्ष 2007-08 में 2.4 व सबसे कम वर्ष 2009-10 व 2010-11 में 2.1 रहा है। विनियोग के क्षेत्र में वृद्धि होना मध्यप्रदेश में वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं पर निर्भर करता है तथा रोजगार में वृद्धि होना उद्यमों के स्वभाव व प्रकृति पर निर्भर करता है। अत: यह कहा जा सकता है सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की मध्यप्रदेश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्षिक प्रतिवेदन 2013-14, भारत सरकार सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम मंत्रालय उद्योग भवन, नई दिल्ली।
2. कुमार प्रमीला, मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. wwww.msme.gov.in

तालिका क्रमांक -1.1

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की चतुर्थ गणना के परिणाम

क्र.	अभिलक्षण	पंजीकृत क्षेत्र	अपंजीकृत क्षेत्र	आर्थिक सर्वेक्षण 2005	योग
1	क्षेत्र का आकार (लाख में)	1.07	11.50	6.76	19.33
2	कुल रोजगार (लाख में)	2.98	17.32	13.36	33.66
3	प्रति इकाई रोजगार	2.79	1.51	1.97	1.74
4	कुल नियत निवेश (रु. करोड़ में)	-	-	-	**10530.40**

स्त्रोत- सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यम, वार्षिक रिपोर्ट 2013-14

तालिका क्रमांक -1.2

मध्यप्रदेश में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम

वर्ष	सूक्ष्म, लघु एवंमध्यम उद्यमों की संख्या	विनियोग (लाख रू. में)	रोजगार
2006-07	16733	17822.16	38958
2007-08	18582	29827.31	46197
2008-09	20920	36871.54	46891
2009-10	19721	25414.24	41302
2010-11	19856	41316.57	42959
2011-12	20100	43698.50	46095
2012-13	19886	60073.41	46948
2013-14	18653	56103.54	44336

स्त्रोत - www.msme.gov.in

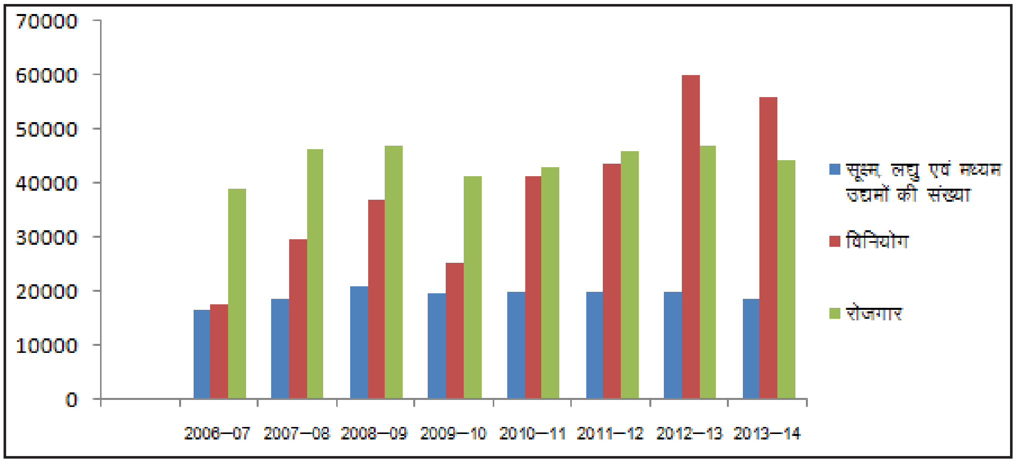

तालिका क्रमांक – 1.3

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों में प्रति उद्यम विनियोग व रोजगार

वर्ष	विनियोग प्रति उद्यम (लाख रू. में)	रोजगार प्रति उद्यम (व्यक्ति)
2006-07	1.06	2.3
2007-08	1.60	2.4
2008-09	1.76	2.2
2009-10	1.29	2.1
2010-11	2.08	2.1
2011-12	2.17	2.3
2012-13	3.02	2.3
2013-14	3.01	2.3

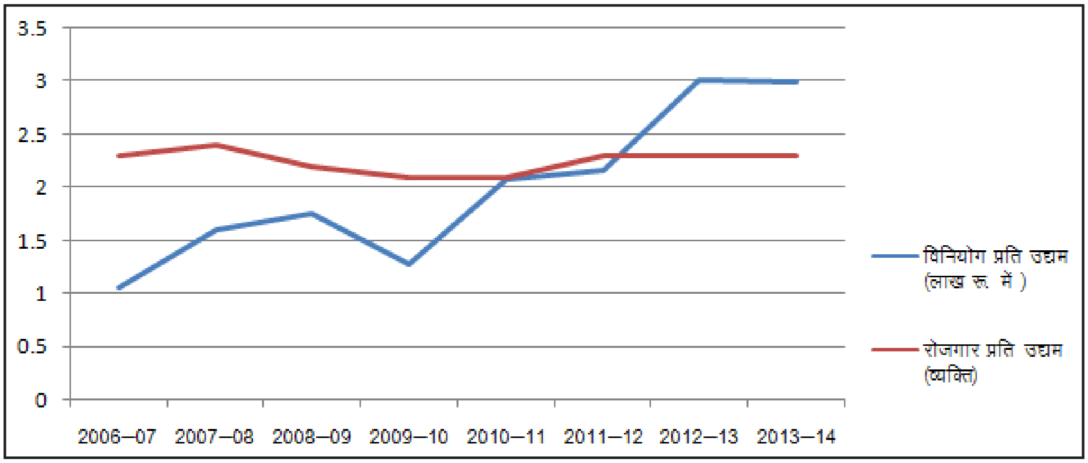

****

वित्तीय साक्षरता एवं वित्त प्रबंधन (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. प्रियंका श्रीवास्तव *

शोध सारांश – वित्तीय साक्षरता वित्तीय उत्पादों तथा सेवाओं हेतु मांग का सृजन करती हैं। इससे आम आदमी को बैंकों द्वारा प्रदत्त उत्पादों और सेवाओं की आवश्यकताओं तथा लाभों की जानकारी मिलती है। जिसके फलस्वरूप वित्तीय समावेशन की गति बढती है। समाज के सभी वर्गों के लिये किसी न किसी रूप में वित्तीय साक्षरता की जरूरत होती है। तथापि हमारे समाज का एक बड़ा वर्ग वित्तीय रूप से वंचित रहा है। इसलिये वर्तमान में वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों में मुख्य रूप से ऐसे व्यक्तियों पर ध्यान केंद्रित होना चाहिऐ जो व्यक्तिगत वित्त से संबंधित मामलों में जानकारी न होने से लगातार वित्त के अभाव में अपना जीवन जी रहे है। वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों का प्रभाव बढाने में प्राथमिक चुनौती यह है कि लक्ष्य समूहों तक पहुँचाने वाली बुनियादी जानकारी भी उपलब्ध नही है। आम जनता के वित्तीय साक्षर होने की दशा में मुझे विश्वास है कि इससे बैंकिंग सेवाओं की मांग आवश्यक रूप से बढ़ जाऐगी। वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों के द्वारा वांछित अनुरूपता के साथ शहरी क्षेत्र में भी वित्तीय सेवाओं से वंछित विभिन्न वर्गो के लोंगों को शिक्षित किया जा सकता है। वर्तमान में आवश्यकता है कि बैंकों द्वारा वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों के संचालन तंत्र को गतिशील बनाया जाऐ साथ ही साथ ग्राहकों को वहन करने योग्य लागत तथा उपयोग करने में आसान सेवाऐं उपलब्ध कराए। अब समय आ गया है। कि हम अपने वित्तीय समावेशन मॉडल को एक निरन्तर चलने वाले व्यवहार्य व्यवसायिक अवसर के रूप में उन्नत करें ताकि गरीबी से वित्तीय साक्षरता की ओर अग्रसर हो सके तथा बैंकों को भी सुनिश्चित रूप से लाभप्रद कारोबारी अवसर प्राप्त हो।

प्रस्तावना – वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों का उददेश्य – वित्तीय साक्षरता कार्यक्रमों का प्रमुख उददेश्य दो प्रमुख अवयवों, साक्षरता एवं सुलभ उपलब्धता के माध्यम से वित्तीय समावेशन को सुविधाजनक बनाना है। इन कार्यक्रमों का उददेश्य आम आदमी को जानकारी प्रदान करना है ताकि वे वित्तीय आयोजना करने, बचत की आदत डालने एवं वित्तीय उत्पादों के बारे में जानकारी पाने में सक्षम बन जाऐं तथा वित्तीय सेवाओं का प्रभावी ढंग से उपयोग कर सकें। वित्तीय साक्षरता उन्हें अपने जीवन चक्र की जरूरतों के लिये समय से पहले नियोजन करने में और ऋण का सहारा लिये बिना ही अनअपेक्षित आकस्मिकताओं से निपटने में सहायक होगी। उनके लिए अपने धन का सकारात्मक ढंग से प्रबंधन करना तथा ऋण के जाल में फसने से बचना संभव होगा।

1. वित्तीय साक्षरता एवं वित्तीय समावेशन के व्यापक प्रचार प्रसार से वित्तीय सेवा प्रदाता के रूप में बैंकों को देश के दूर दराज गांव में निहित व्यवसायिक अवसर पाने में मदद मिलेगी। अत: बैंकों को भी वित्तीय साक्षरता प्रयासों को अपने भावी निवेश के रूप में देखना चाहिऐ। इससे बैंकों द्वारा अपने खाताधारकों को बैंकिंग सेवाओं का समूह उपलब्ध कराना चाहिऐ।जिससे छोटी ओवर ड्राफ्ट सुविधा, आवर्ती खाते, केसीसी तथा धन प्रेषण सुविधाऐं शामिल हो जिससे कि खाते सक्रिय लेनदेन वाले बनाए जा सकें। लोगों को इन खातों में लेनदेन करने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिऐ ताकि खाते रखने संबंधी खर्चे की लागत वसूल कर यह बैंकों के लिए एक व्यवहार्य एवं लाभकारी व्यवसाय सिद्व हो सके।
2. वित्तीय साक्षरता का उददेश्य विभिन्न उत्पादों के बारे में जागरूकता पैदा करना, उनकी जानकारी देना तथा उत्पादों को उन्हें घर पर उपलब्ध कराना है। इससे आम जनता में धन प्रबंधन; बचत के महत्व, बैंक में बचत के लाभ, बैंकों के द्वारा दी जाने वाली अन्य सुविधाओं और बैंक से उधार लेने के लाभों के बारे में जागरूकता पैदा कर उन्हे शिक्षित करना है।

वित्तीय साक्षरता के प्रमुख अवयव–
अपने वित्त का प्रबंध

1. **आमदनी क्या है?** – विभिन्न स्त्रोंतों जैसे मजदूरी, खेती या कारोबार आदि से अर्जित धन आमदनी कहलाती है।

आमदनी (धन का स्त्रोत)	राशि रूपये
वेतन या मजदूरी	2000
कृषि कारोबार से अर्जन	3000
योग	5000

2. **खर्चे क्या है?** – विभिन्न मदों पर व्यय किऐ जाने वाला धन खर्चे कहलाता है।

खर्चे (धन का उपयोग)	राशि रूपये
भोजन, मकान, कपडे	5000
शिक्षा	1000
कर्जे की चुकौती	800
बीमारी	500
शादी, त्यौहार, यात्रा आदि पर अधिक व्यय	1500
योग	8800

3. **निवेश क्या है?** – अपनी बचत में से कुछ पैसे कहीं पर इस आशा के साथ रखना कि समय अंतराल में इनमें वृद्धि होगी निवेश कहलाता है। जैसे– जमीन खरीदना, मकान खरीदना, बैंकों में सावधि जमा रखना आदि।
4. **बचत क्या है?** – आमदनी खर्चों के मुकाबले अधिक होने पर हमारे पास बचे पैसे बचत कहलाते है।
5. **ऋण क्या है?** – खर्च आमदनी के मुकाबले अधिक हो तथा हमारे पास

---

*अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, करैरा, शिवपुरी (म.प्र.) भारत

कुछ बचत भी न हो तो इस कमी को उधार लेकर पूर्ण करना ऋण कहलाता है।

आमदनी रू	खर्चे रू	परिणाम	क्या करें
5000	4000	बचत 1000	आगे बढें
5000	5000	0	सोचें
5000	6000	कमी 1000	रूकें

6. **जरूरी;गैरजरूरी मदों में अंतर क्या है?–** ऐसे खर्चे जिन्हे टाला नही जा सकता जरूरी मद हैं जैसे– मकान;भोजन; शिक्षा;स्वास्थ्य आदि। गैरजरूरी मद वह है। जो अपनी चाहत पर निर्भर है। जो जीवित रहने के लिये आवश्यक नहीं होती।

7. **अपने पैसों का प्रबंध कैसे करें? –** हम अपने धन का प्रबंध वित्तीय योजना करते हुऐ प्रभावी ढंग से कर सकते है। इसके लिये हमें एक निश्चित अवधि एक सप्ताह या एक माह के लिये अपनी आमदनी एवं व्यय का हिसाब रखने के लिये एक वित्तीय डायरी रखना आवश्यक है।

8. **वित्तीय योजना क्या है?–** वित्तीय योजना का अभिप्राय जीवन चक्र की जरूरतें जैसे–जन्म;शिक्षा;मकान खरीदना' विवाह, बीमारी, दुर्धटना, मृत्यु, बाढ़, सूखा जैसी प्राकृतिक आपदाओं पर होने वाले वित्तीय खर्च का अनुमान लगाने एवं उन्हें पूरा करने के उपाय करने से है।

वित्तीय योजना कैसे करें–

- अपनी वर्तमान वित्तीय स्थिति क्या है। इसका आंकलन करें ।
- अपनी आवश्यकताओं और चाहत की पहचान करें ।
- प्रत्येक मद की लागत और हम इसे कब तक हासिल करना चाहते है। इसका अनुमान लगाए।
- एक वित्तीय डायरी बनाएं इसमें अपने साप्ताहिक/मासिक आमदनी और व्यय को लिखें।
- खर्चे काबू में रखें ।
- अपनी बचत की नियमित रूप से समीक्षा करें कहां खर्चे कम तथा बचत बढाई जा सकती है।
- अपनी बचत को बैंक खाते में जमा करें ।

9. **बचत– हम बचत क्यों करे ? –** अपनी आमदनी से खर्चे ज्यादा होने की दशा में तथा अधिक पैसों की जरूरत पढने पर उसे काम में लिया जा सके इसलिये नियमित बचत करना आवश्यक है। इसे खर्चों में कटौती कर या कमाई बढाकर जुटा सकते है। हमें कितने समय तक बचत करनी चाहिऐ? जितनी अधिक अवधि तक हम पैसे बचाऐगें उतनी ही हमारी बचत बढती जाऐगी। जितनी अधिक हमारी बचत होगी हम अपने अचानक आने वाले खर्चों एवं बुढ़ापे की जरूरतों को पूरा करने के लिये तैयार रहेगें। जब हम लम्बी अवधि तक बचत करते है। तो तब वह कई गुना बढ़ जाती है। क्योंकि उस पर ब्याज भी मिलता रहता है।

आयु	25 वर्ष	35 वर्ष	45 वर्ष
वार्षिक बचत रूपये	1000	1000	1000
अवधि वर्ष	40	30	20
बचत राशि	40000	30000	20000
प्रति वर्ष 10 प्रतिशत की	422878	142033	39900
दर से अर्जित ब्याज 65 वर्ष की आयु में कुल	462878	172033	59900
राशि			

हम अपनी बचत कहां रखें? – बचत करने का सर्वोत्तम तरीका अपने धन को बैंकों में जमा कराना है। क्योकि बैंक में रखा गया धन सुरक्षित होता है। इस पर ब्याज भी मिलता है। बैंक से हम कई सुविधाऐं जैसे ऋण; धन प्रेषण सुविधा उचित लागत पर पा सकते है।

10. बैक में खाता खोलने के लाभ–

- बैंक में खाता खोलने से हमें पहचान मिलती है। जो अन्य सरकारी एजेन्सियों द्वारा मान्य है।
- बैंक खाते मे होने वाले सभी लेनदेन पारदर्शी होते है। जैसे हमें जमा;निकासी;ब्याज आदि विवरणों की जानकारी रहती है।
- बैंक पक्षपात रहित होते है। समान प्रकार के ग्राहकों के लिये नियम समान होते है।
- बैंक खाते में हमारा पैसा सुरक्षित रहता है।
- बैंक हमारी आवश्यकता अनुसार बचत;सावधि;आवर्ती;जमा खाता खोलता है। जिस पर हमें ब्याज भी मिलता है।
- हम बैंक खाते में मजदूरी/वेतन सीधे जमा करवा सकते है।
- हम कभी भी बैंक में पैसा जमा करवा सकते है तथा आवश्यकता पडने पर निकाल सकते है।
- हम बैंक से ऋण ले सकते है। बैंक उचित ब्याज दर पर उत्पादक प्रयोजनों के लिये ऋण देते है।
- हम बैंक के माध्यम से धन दूसरी जगह भेज सकते है।

****

'भारत के ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर ' सरकारी योजना के माध्यम से

डॉ. राजू रैदास *

शोध सारांश – भारत गॉवों में बसता है, गॉव के विकास पर देश का विकास निर्भर करता है। भारत में लगातार जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है, जिससे शिक्षित एवं अशिक्षित बेरोजगारों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की संख्या वैसे तो कम है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र का निवासी मुख्य रूप कृषि पर ही निर्भर करता है। किन्तु कृषि में छिपी व मौसमी बेरोजगारी पाये जाने के कारण कृषि के प्रति लोगों का आकर्षण कम होता जा रहा है, साथ ही यहॉ सीमांत किसान, सिंचाई के साधनों की कमी एवं फसली कार्यक्रम के कारण बेरोजगारी का भय ग्रामीणों में व्याप्त रहता है, जिससे ग्रामीण क्षेत्र के लोगों का पलायन ग्रामीण से शहर की ओर होने लगता है, इससे शहरों में अनावश्यक जनसंख्या दबाव बढने लगता है। इन समस्याओं के निराकरण के लिए भारत सरकार द्वारा लोगों को रोजगार प्रदान करने हेतु विभिन्न प्रकार के भारत सरकार द्वारा योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया है। जिससे लोगों को रोजगार एवं स्वरोजगार प्राप्त हो सके।

प्रस्तावना – भारत गांवों में बसता है, गांव के विकास पर ही राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। देश में बढ़ती जनसंख्या के कारण जनसंख्या दबाव लगातार बढ़ता जा रहा है, जिससे निर्धारित मजदूरी की दर पर काम करने वालों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है, किन्तु उन्हें रोजगार व स्वरोजगार नहीं मिलता है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की संभावना वैसे भी कम है। ग्रामीण क्षेत्र का निवासी मुख्यत: कृषि पर ही निर्भर करता है, लेकिन कृषि पर लोगों का आकर्षण लगातार कम होने से कृषि भूमि या तो बेकार पड़ी रहती है या एक फसली कृषि तक ही सीमित रह गई है। कृषि कार्य को कुछ लोगों द्वारा शौकिया किया जा रहा है। कृषि कार्य को लोग आज हीन दृष्टि से देखने लगे हैं। यदि मानव चाहे तो कृषि भूमि को कई प्रकार से प्रयोग कर सकता है। वर्तमान में युवा पीढ़ी ने कृषि भूमि का प्रयोग न केवल फसल उगाने में बल्कि कृषि भूमि को फॉर्म हाउस के रूप में प्रयोग कर रहे हैं। इसके लिए सबसे पहले सिंचाई साधन विकसित कर रहे हैं, जहाँ नलकूप या सरकार द्वारा विकसित नहर सिंचाई साधन के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। सिंचाई के साधन उपलब्ध हो जाने से बहुफसलीय कार्यक्रम के साथ फूलों की खेती का चलन तीव्रता से बढ़ रहा है। इन सारे आकर्षण के बाद भी कृषि के प्रति लोगों का रूझान नहीं बढ रहा है, जिससे गांव में रहने वाले लोगों के पास रोजगार का अभाव रहता है, जिससे लोगों का गांव शहर की ओर पलायन हो रहा है, जिसके कारण शहरी क्षेत्रों में लगातार जनसंख्या दबाव बढ़ रहा है। इस पलायन को रोकने और ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में संतुलन बनाने के लिए सरकार द्वारा कई योजनाएं बनाई गई हैं, जिससे लोगों को रोजगार एवं स्वरोजगार प्राप्त हो सके, जो इस प्रकार हैं –

1. **मनरेगा –** विश्व की सबसे बड़ी संख्या तथा महत्वाकांक्षी योजना महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना 2006 में प्रारंभ की गई, जिसके अन्तर्गत गांव में रहने वालों को 100 दिन का रोजगार दिया जाता है।
2. **ग्रामीण व्यापार केन्द्र –** सन् 2007 में यह योजना शुरू की गई। चार पी पब्लिक, प्राइवेट, पंचायत, पार्टनरशीप द्वारा रोजगार के साधनों में वृद्धि के साथ गैर कृषिगत कार्यों से आय के स्त्रोत निर्मित करना, ग्रामीण रोजगार को बढ़ावा देकर ग्रामीण विकास की गति देना है। प्रारंभ में इस योजना के लिए 35 जिलों का चयन किया गया
3. **राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन –** इसके अन्तर्गत स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना एवं स्वर्ण जयंती शहरी स्वरोजगार योजना प्रारंभ की गई। 1999 से चल रही स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना को राष्ट्रीय ग्रामीण विकास मिशन में 24 जून 2010 को मिला दिया गया। इस योजना से ग्रामीण रोजगार की संभावना को पहले की अपेक्षा अधिक बढ़ाया है।
4. **राष्ट्रीय ग्रामीण जीविकोपार्जन मिशन (राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम) –** इस योजना का आरंभ 3 जून 2011 को राजस्थान के बांसवाड़ा जिले से किया गया। इसका लक्ष्य गरीबी रेखा से नीचे के 7 करोड़ लोगों को रोजगार देना था। इस योजना को स्व–सहायता समूह द्वारा प्रयोग किया जाता है।
5. **आधारभूत संरचना निर्माण में रोजगार –** ग्रामीण क्षेत्रों मे आधारभूत संरचना निर्माण कार्यों, जैसे – सड़क योजना, जलापूर्ति, विद्युतीकरण, दूरसंचार क्षेत्रों में कार्यो के बढ़ने से रोजगार व आय में वृद्धि हुई। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में सड़क निर्माण पर जब 10 लाख का निवेश होता है, तब करीब 163 लाख गरीब से बाहर निकल जाते हैं।
6. **ग्रामीण पर्यटन एवं सेवाओं में रोजगार –** ग्रामीण क्षेत्र अपनी प्राकृतिक सुन्दरता व देश की विशिष्टताओं के कारण पर्यटकों के लिए हमेशा से आकर्षण का केन्द्र रहे हैं। देश में ग्रामीण पर्यटन की असीम संभावना को देखते हुए सरकार देश में हस्तशिल्प, ज्ञान एवं संस्कृति आदि को बढ़ावा दे रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज सेवा क्षेत्र की भूमिका भी बढ़ती जा रही है। इस हेतु सरकार विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों के द्वारा ग्रामीणों को प्रशिक्षित कर रही हैं। दूरसंचार, चिकित्सा, शिक्षा एवं मरम्मती कार्यों में सरकार व्यापक सहयोग दे रही है।
7. **स्वरोजगार –** सेवा क्षेत्र में उधार शिक्षा, तकनीक एवं जागरूकता के बढ़ने के साथ लोगों में स्वरोजगार के प्रति काफी आकर्षण है। स्व–सहायता समूह, खादी ग्रामोद्योग के रोजगार सृजन कार्यक्रमों, मनरेगा

---

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

के तहत नवीन कार्यों, मसलन तालाब निर्माण, मवेशी पालन आदि के तहत सरकार ग्रामीणों को रोजगार हेतु प्रेरित व सहयोग कर रही है। इसके लिए प्रशिक्षण व वित्त की व्यवस्था कर रही है।

8. **कॉल सेंटर, वी, पी, ओ, एवं इंटरनेट संबंधी रोजगार के नए अवसर –** ये आयाम भी रोजगार के नये अवसर ग्रामीण क्षेत्रों की ओर रूख कर रहे हैं। यह ग्रामीण क्षेत्रों के लिए क्रांतिकारी बदलाव में सहायक सिद्ध होगें।
9. **औद्योगिक प्रशिक्षण –** सबसे बड़ी चुनौती शिक्षा व प्रशिक्षण की है। हम अब भी पारम्परिक शैक्षणिक पद्धति से जुड़े हुए हैं, जबकि आधुनिक समय में व्यावसायिक शिक्षा की मांग जोर पकड़ रही है। आधुनिक रोजगार हेतु हमारी शिक्षा प्रणाली बेहतर श्रम बल तैयार नहीं कर पाती। ग्रामीण क्षेत्रों में छात्र प्राथमिक या माध्यमिक शिक्षा ही प्राप्त करते हैं, लेकिन यह शिक्षा बहुत नहीं हैं। प्राथमिक स्तर से ही व्यवसाय केन्द्रित शिक्षा पद्धति को अपनाने की प्रवृत्ति होना चाहिए। इसके अलावा अशिक्षित लोगों के लिए वैकल्पिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। औद्योगिक प्रशिक्षण गैर कृषिगत कार्यो के प्रशिक्षण, सूचना प्रौद्योगिक, सेवा क्षेत्र आदि से जुड़े रोजगार हेतु आवश्यक कौशल विकास के लिए शिक्षण प्रशिक्षण का प्रयास करना होगा।
10. **कृषि एवं सहायक उद्योग का विकास –** भारत में 69 प्रतिशत लोग कृषि पर निर्भर करते हैं, लेकिन जिस काम के लिए 2 लोगों की आवश्यकता होती है, वहाँ काम के अभाव में 5–7 लोग लगे रहते हैं, इसलिए कृषि के साथ सहायक उद्योग जैसे– मछली पालन, मुर्गी पालन, फल–फूल की खेती, घास उगाना, कपास उगाना, जानवर पालना आदि को भी विकसित करना चाहिए।

कृषि एवं सहायक उद्योग–

1. मधुमक्खी पालन।
2. रेशम कीट व कोसा कीट पालन।
3. मत्स्य पालन।
4. गोबर गैस।
5. बायो गैस निर्माण।
6. औषधि निर्माण।
7. जैविक खाद निर्माण।

आदि सहायक उद्योग को शामिल कर ग्रामीणों के लिए रोजगार की व्यवस्था करना चाहिए। साथ ही बागवानी का सहारा लेकर रोजगार एवं आय में वृद्धि की जा सकती है, जैसे–

1. शाक भाजी बागवानी।
2. फलों की बागवानी।
3. फूलों की बागवानी।
4. जड़ी बूटी की बागवानी।
5. वनवृक्ष संवर्द्धन।

11. **राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम –** इस कार्यक्रम का शुभारम्भ तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी जी ने किया। सन् 1989 में इस कार्यक्रम को जवाहर योजना में मिला दिया गया।
12. **ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम –** यह कार्यक्रम 1983 में प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण निर्धन एवं भूमिहीन श्रमिक परिवारों के लिए की व्यवस्था करके उन्हें गरीबी रेखा से ऊपर उठाना था 1989 में इसे जवाहर रोजगार योजना कार्यक्रम में विलीन कर दिया गया।
13. **जवाहर रोजगार योजना –** राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी योजना को समाप्त करके उन्हें उनके स्थान पर वर्ष 1989 में जवाहर रोजगार योजना का प्रारंभ किया गया। ग्रामीण एवं ग्रामीण पंचायतों की सक्रिय सहभागिता के आधार पर इस योजना की आधारशिला रखी गई।
14. **रोजगार आश्वसन योजना –** इस योजना को 2001 में सम्पूर्ण ग्रामीण योजना में मिला दिया गया।
15. **जवाहर ग्राम समृद्धि योजना –** यह योजना 1 अप्रैल 1999 में प्रारंभ की गई। इस योजना का निर्माण जवाहर रोजगार योजना को पुनर्गठित करके किया गया एवं दो वर्ष की अल्प अवधि के पश्चात् ही इस योजना का विलय सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में कर दिया गया। इस योजना का लक्ष्य मांग आधारित टिकाऊ सामुदायिक परिसम्पत्तियों के निर्माण हेतु बरोजगार निर्धन व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करके उनको गरीबी रेखा की परिधि से उठाने का था।
16. **सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना –** रोजगार आश्वासन योजना तथा जवाहर ग्राम समृद्धि योजना को समाहित कर सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का शुभारम्भ सितम्बर 2001 में किया गया। काम के बदले अनाज योजना को इसमें विलय कर दिया गया। इस योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार अवसरों के साथ–साथ खाद्यान्नों की उपलब्धता सुनिश्चित करने की प्राथमिकता दी गई।
17. **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना –** पूर्ववर्ती 6 योजनाओं ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण, ग्रामीण क्षेत्र, महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, ग्रामीण दस्तकारों को उन्नत औजारों के किट की आपूर्ति का कार्यक्रम एवं गंगा कल्याण योजना तथा 10 लाख कुँआ योजना का विलय करके एक समग्र स्वरोजगार योजना के रूप में 1 अप्रैल 1999 में प्रारंभ की गई। इस योजना का उद्देश्य लघु उद्योगों की स्थापना के माध्यम से गरीब परिवारों की आय बढ़ाकर तीन वर्शो में उनको गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। इसी के साथ ग्रामीण गरीब परिवारों, स्व–सहायता समूहों के रूप संगठित करके उनकी क्षमताओं और कौशल में अभिवृद्धि करते हुए वित्त की सहायता से लघु उद्योगों को स्थापित करना है। प्रत्येक आत्मनिर्भर समूह में महिलाओं को शामिल करने के प्रयास किये गये हैं।
18. **महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना –** विश्व में भारत प्रथम देश है, जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सुनिश्चित करके गरीबी दूर करने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण गारंटी योजना पारित कर रोजगार को कानूनी अधिकार की मान्यता दी है। इसके अन्तर्गत कई माध्यमों से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के नये विकल्प ग्रामीण युवाओं के लिए खुल जायेंगे, जिसमें मुख्यतया इस योजना के अन्तर्गत श्रमिकों को गांवों में ही स्थायी परिसम्पत्तियों वाटरशेड प्रोग्राम, जनसंख्या कार्यो, सड़क पंचायत घरों के निर्माण, जैसे– वाटरशेड प्रोग्राम, जल संरक्षण कार्यो, तालाब निर्माण, वन संरक्षण, संड़क पंचायत, घरों का निर्माण व वृक्षारोपण जैसे कार्यक्रमों में संलग्न किया गया है। खादी ग्राम उद्योग का पुनरूद्धार व अद्यतन करके खादी के प्रति लोगों की अभिरूचि जाग्रत करके इस ग्राम उद्योग में रोजगार

को बढ़ाया जा सकता है।

19. **पर्यटन में रोजगार –** पर्यटन के रोजगार की 4 गुना अधिक संभावनाएं बढ़ा सकते हैं।

20. **खादी ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन –** खादी ग्रामोद्योग क्षेत्र को मजबूत बनाने के लिए सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों को मंत्रालय ने निम्नलिखित कुछ बड़े कदम उठाये हैं –

1. बाजार विकास सहायता योजना।
2. ब्याज सबसिडी योग्यता प्रमाण पत्र। (I.S.E.DG.Plan & KVIC Plan)
3. मार्केट डवेलपमेंट असिस्टेंड योजना। (MBA Plan)
4. खादी सुधार एवं विकास कार्यक्रम। (KRDP)

21. **खादी ग्रामोद्योग की परियोजनाएँ –**

1. खनिज आधारित उद्योग।
2. वन आधारित उद्योग।
3. कृषि आधारित और खाद्य उद्योग।
4. बहुलक और रसायन आधारित उद्योग।
5. इंजीनियरिंग और गैर परम्परागत ऊर्जा।
6. सेवा उद्योग।

खादी ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन करने के लिए बाजार विकास सहायता योजना में खादी के उत्पादन पर बाजार विकास सहायता योजना शुरू की गई। इसके साथ ही छूट प्रणाली में सुधार के लिए गांधी जयंती के समय 108 दिन के लिए ग्राहकों को 20 प्रतिशत छूट देने की सरकार की प्रणाली हुआ करती है। सरकार की इन योजनाओं के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले ग्रामीणों को रोजगार देने की कोशिश की जा रही है।

निष्कर्ष – ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले सैकड़ों युवा जहाँ प्रत्यक्ष रूप से इन योजनाओं एवं सेवाओं से जुड़े, वहीं तमाम लोग अप्रत्यक्ष रूप से इन कारोबार, रोजगार एवं स्वरोजगार से जुड़कर जीविकोपार्जन कर रहे हैं। निश्चित रूप से इन योजनाओं एवं सेवाओं का जितना अधिक विस्तार होगा, ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार की संभावनाएं उतनी अधिक बढ़ेगी। यही वजह है कि सरकार द्वारा उन सभी सुविधाओं को पहुँचाने की कोशिश की जा रही है जो किसी न किसी रूप में रोजगार का साधन बने।

सरकार को चाहिए कि शहरी क्षेत्रों के साथ ग्रामीण क्षेत्र में कम खर्च पर या नि:शुल्क प्रशिक्षण केन्द्र खोलकर शिक्षित व अशिक्षित युवकों को प्रशिक्षण दे, साथ ही आई,टी,आई, प्रशिक्षण संस्थानों के माध्यम से लोगों की इच्छा व आवश्यकतानुसार 3 से 6 माह का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था कराये, जिससे एक योग्य व प्रशिक्षित व्यक्ति अपनी पूर्ण कुशलता के साथ अपने द्वारा स्थापित उद्योग धंधों को पूर्णतया विकसित कर सकें। इसकी आवश्यकता इसलिए है, क्योंकि पैतृक रोजगार ग्रामीण अर्थव्यवस्था रूपी माला में गुँथे हुए मणियों की भाँति है, जिसका मुख्य स्तम्भ खेती था। इन परम्परागत धंधों में बिखराव की वजह से यह माला छिन्न भिन्न हो चुकी है। परिणामस्वरूप कृषि व्यवस्था के साथ–साथ समस्त ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था प्रभावित हुई है।

ग्रामीण परिवेश में मौजूद गरीबी एवं बेरोजगारी के वैसे तो अनेक कारण हो सकते हैं। इनमें से एक महत्वपूर्ण कारण गांव के परम्परागत उद्योग धंधों में कमी होना है। धंधे लगभग 1/4 जनसंख्या का जीवन आधार थे। गांव में उपलब्ध कराई जा रही सेवाओं व पारम्परिक व्यवसाय के रूप में हजारों वर्षों से जो कार्य हो रहा था, इसके अनेक लाभ भी थे। आज नई पीढ़ी का सेवा व्यवसाय में कार्यरत रहना, व्यावसायिक एवं लाभदायक है।

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की असीम संभावनाएं हैं, एवं चुनौतियाँ भी हैं। इनको श्रेष्ठ बनाने के लिए तकनीकी, प्रबंधकीय निगरानी की सुदृढ़ता की दिशा, निगरानी व प्रबंधन की जागरूकता है। यदि इन उपायों को अपनाया गया तो ग्रामीण लोगों को बरोजगारी की समस्या से मुक्त कर गरीबी, अज्ञानता एवं निरक्षरता के जाल से भी मुक्त हो सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में संचार क्रांति का सफल संचालन करते हुए न केवल ग्रामीणों को सरकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों से अवगत कराना संभव है, अपितु उनको विभिन्न रोजगार अवसरों, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं खेती से संबंधित अद्यतन व वैज्ञानिक जानकारी भी प्रदान करना संभव है।

इस प्रकार के व्यवसायों के कुछ उदाहरण हैं – लोहारी, कताई, बुनाई, हेयर कटिंग, कुम्हारी, रंगाई, पुताई, छपाई, सिलाई, सुनारी, बागवानी, जूता निर्माण, मुर्तियाँ बनाना आदि प्रमुख हैं। पहले पैतृक धंधे पीढ़ी चलते थे, जिससे परिवार के युवाओं को रोजगार की तलाश में इधर–उधर भटकने की आवश्यकता नहीं थी, लेकिन आज युवा वर्ग इन धंधों को सीखने व आगे बढ़ाने में हीनता का अनुभव करते हैं। रोजगार की तलाश में आज का ग्रामीण युवक षहरों की ओर भाग रहा है, इससे न केवल बेरोजगारी फैल रही है, बल्कि पैतृक धंधों का पतन हो रहा है, जिससे स्वंय की पहचान भी व्यक्ति खो रहा है। इस सबके पहले युवाओं को शहर में पैतृक धंधे के बदले हुए नाम में ही सेवा कार्य करना पड़ रहा है और शहर में आजीविका अर्जित करने के लिए तमाम समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

सुझाव – आज आवश्यकता इस बात की है कि युवा शक्ति गांव में रहकर इन उद्योग धंधों की बदलती हुई परिस्थितियों तथा आवश्यतानुसार नई तकनीक अपनाकर इन्हें नया स्वरूप दे। इन कार्य कौशलों में दक्ष होने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था बहुत जरूरी है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों के कारीगरों के सानिध्य में भी प्रशिक्षण लिया जा सकता है। इसमें दो फायदे हो सकते हैं–

1. पैतृक उद्योग धंधों को पतन होने से रोका जा सकेगा।
2. कुछ सीमा तक बेरोजगारी की समस्या पर नियंत्रण किया जा सकेगा, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी दूर करने व रोजगार बढ़ाने में सहायक मिलेगी।

रोजगार योजनाओं को अधिक प्रभावी बनाने हेतु इन योजनाओं के क्रियान्वयन प्रशासन व निरीक्षण पद्धति को अधिक सक्षम, पारदर्शी एवं सक्रिय बनाने की आवश्यकता है। ग्रामीण लोगों की निरक्षरता पहुँच एवं जागरूकता के अभाव के कारण इन योजना से लाभान्वित नहीं हो पाते। अंत में यही कह सकते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के काफी स्त्रोत हैं, किन्तु प्रत्येक स्तर पर परिश्रम, बौद्धिक, शारीरिक कुशलता और जोखिम उठाने की आवश्यकता है। थोड़ा सा परिश्रम कुछ धैर्य और व्यावसायिक बुद्धि प्रयोग आजीविका के नित नये आयाम प्रदान कर सकता है। इसके लिए बैंक व सरकार भी सहायता करती है। मेहनत की रोटी खाने का भाव रखने वाले लोगों के लिए आजीविका के स्त्रोतों का कतई अभाव नहीं है।

संदर्भ गंथ सूची :-

1. 'समग्र ग्रामीण विकास सिद्धान्त' डॉ0प्रसन्न स्प्रे ।
2. रोजगार और निर्माण पत्रिका 2015
3. www.google.com/wikipedia.com

****

मध्यप्रदेश के प्रमुख समाचार पत्र और उनकी स्थिति

डॉ. प्रतापराव कदम* मेधा पाठ **

प्रस्तावना - मध्यप्रदेश के प्रमुख दैनिक समाचार पत्र :-स्वतंत्रता के बाद बड़ी तीव्रता से पत्र-पत्रिकाओं का विकास और प्रचार हुआ। इस प्रकार विकास के मूल में परिवर्तित परिस्थितियाँ, स्वंत्रतता की भावना और अभिव्यक्ति की स्वाधीनता के मनोभाव प्रबल रहे है। स्वतंत्रता के बाद के वर्षो में यह धारणा प्रबल रही है कि लेखकीय अभिव्यक्ति पर कोई अकुंश नहीं लगाया जा सकता है। लेखकीय स्वाधीनता और अभिव्यक्ति की निर्भीकता प्रेरक स्वाधीनता ने अनेक दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्र पत्रिकाओं को जन्म दिया। यदि दैनिक पत्रों को ले तो स्पष्ट होता है कि ये मूलत:-राजनीतिक गतिविधियाँ, दैनिक जीवन की उथल-पुथल और सामाजिक घटनाक्रम को प्रस्तुत करती है। ये पत्र अपने शीर्षक से सूचित कर देते है कि दैनिक जीवन में जो गतिविधियाँ है, उनमें साहित्य का स्थान अपेक्षाकृत कम है। इस कमी की पूर्ती दैनिक पत्रों के विशेषांक द्धारा की जाती है, जो या तो वर्ष अंत में या सप्ताह के अन्त में प्रकाशित होते है।

साप्ताहिक-पत्र, दैनिक की तुलना मे अधिक साहित्यिक होते है क्योंकि उनमें अधिक पृष्ठ होते है। चिंतन व प्रधान होने के कारण साहित्यिक, सामाजिक और विविध प्रकार की सामग्री को अधिक स्थान प्राप्त हो सकता है। यही स्थिति पाक्षिक और मासिक पत्रों की जो पत्र जितनी अधिक अवधि के अन्तराल से प्रकाशित होता है उसमे उतना ही अधिक वैविध्य होता है।

दैनिक पत्र - नई दुनिया स्वतन्त्रता के प्रभात से कुछ मास पूर्व 5 जनवरी 1947 को नई दुनिया ने जन्म लिया। इसका जन्म श्री कृष्णचन्द्र मुदगल तथा श्री कृष्णकान्त व्यास के प्रयत्नों से हुआ। आज की नई दुनियाँ जिस रूप में हमारे सामने है, वह उसका शीर्ष और प्रौढ रूप है। पहले अपने प्रारम्भिक रूप में वह छोटा सा साध्य-कालीन दैनिक पत्र था। मध्यप्रदेश के गठन के पश्चात् नई दुनिया का प्रकाशन रायपुर एवं जबलपुर से ही प्रारम्भ हुआ। पर 1979 में यह दोनों संस्करण बन्द कर दिये गये। 1967 में नई दुनिया ने अपना मुद्रण ऑफसेट रोटरी मशीन पर प्रारम्भ किया। इस प्रकार की मशीन भारत में पहली बार नई दुनिया के पास आई। यही नहीं नई दुनिया को इस बात का भी श्रेय प्राप्त है कि इसने सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में पहला टेलीप्रिंटर स्थापित करके वैज्ञानिक व तकनीक पत्रकारिता की शुरूआत की। यह पत्र केवल मध्यप्रदेश का पत्र नहीं है। वरन् साहित्यकारों, बुद्धिजीवियों और समाज सेवियों का संगम है।

नवभारत - मध्यप्रदेश का लोकप्रिय दैनिक नवभारत सर्वप्रथम नागपुर से सन् 1938 में प्रकाशित हुआ। मायाराम सुरजन इसके प्रथम सम्पादक थे। इनके बाद कालकाप्रसाद दीक्षित, मदनलाल माहेश्वरी इसके सम्पादक बने। वर्तमान में इसके सम्पादक रामगोपाल माहेश्वरी है। नवभारत ने धीरे धीरे काफी ख्याति अर्जित की। अत: 1950 में जबलपुर से, 1956 में भोपाल से, 1956 में रायपुर से और 1960 में इन्दौर बिलासपुर से भी इसके संस्करण निकलने लगे। यह भी ए.बी.सी. सदस्य है तथा यह पी.टी.आई.यू.एन.आई. समाचार भारती से समाचार सेवा लेता है।

.स्वदेश -1966 की विजयादशमी को इन्दौर से दैनिक हिन्दी स्वदेश पहले-पहल प्रकाशित हुआ। इन्दौर से प्रकाशित होने के बाद स्वदेश 1971 में ग्वालियर से भी निकलने लगा। इन्दौर संस्करण के प्रथम संपादक गंगाप्रसाद शर्मा थे। फिर सत्यव्रत रस्तोगी रहे। माणिक चन्द इसके सम्पादक रहे है।

राजस्थान पत्रिका -दैनिक राजस्थान पत्रिका आज प्रदेश के प्रमुख समाचार पत्रों में गिना जाता है। अभी 24वें राष्ट्रीय पुरस्कार वितरण समारोह में सूचना प्रसारण मंत्रालय द्धारा बड़े दैनिक समाचार पत्रों में (भारतीय भाषा में) राजस्थान पत्रिका को मुद्रण में प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया है। आज हमें यह 10 पृष्ठीय अखबार दिखाई देता है। राजस्थान में राजस्थान पत्रिका पहला अखबार जिसमें छपाई में स्टीरियो रोटरी मशीन का प्रयोग शुरू किया।

दैनिक भास्कर -दैनिक भास्कर विशम्भर दयाल अग्रवाल द्धारा नोविल प्रिंटिंग प्रेस इब्राहिम पुरा भोपाल से मुद्रित तथा प्रकाशित होता है। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन 1958 में हुआ। पहले इसके संपादक काशीनाथ चतुर्वेदी थे, वर्तमान में इसके प्रधान संपादक महेशचन्द्र अग्रवाल है तथा श्यामसुन्दर संपादक है। यह आठ पृष्ठीय दैनिक आठ कालम में विभक्त है।

तालिका 5.1 (तालिका देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

मध्यप्रदेश के प्रमुख दोपहर के समाचार पत्र -प्रभात किरण, अग्निबाण, दैनिक दोपहर, चौथा प्रहरी, न्यूजटुडे आदि अखबार प्रतिदिन दोपहर के समय मध्यप्रदेश से प्रकाशित किये जाते है।

सांध्यकालीन समाचार पत्र-सांध्य दैनिक, चौथी दुनिया, जी.पी.एम. सिटी ब्लास्ट, प्रदेश टुडे, साधना, स्वदेश, यलो पेज आदि समाचार पत्र प्रतिदिन शाम के समय प्रकाशित होते है।

समाचार पत्रों की अधोसंरचना-समाचार पत्रों की अधोसंरचना का शाब्दिक अर्थ खुलना, प्रकट होना, क्रमिक विस्तार है। प्राकृतिक क्रिया पूर्व विद्यमानता, परिवर्तनशीलता, एवं क्रमबद्धता में चार विकास के सोपान है। इन चार बिन्दुओं पर ध्यान देने से विकास की अवधारणा स्पष्ट होती है। क्रमिक प्रजाति ही विकास है। आर्थिक दृष्टि से जीवन-स्तर में सुधार ही इसका लक्ष्य है।

मध्यप्रदेश समाचार पत्रों के संबंध में सरकार की नीति - वर्तमान शासन प्रणाली में जनसंचार की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज की प्रशासनिक व्यवस्था जितनी जटिल है, उतनी विशाल भी। राजनीतिक आधार और शक्तियाँ सरकार में निहित है। संघीय, केन्द्रीकृत, एकात्मक शासन पद्धति

---

* प्राध्यापक (वाणिज्य संकाय) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

की सरकारें स्थानीय, राज्यीय और केन्द्रीय स्तर पर कार्यरत हों, कार्यपालिका, न्यायपालिका, और विधायिका शक्ति पर आधारित सरकारें जनसंचार साधनों की उपेक्षा नहीं कर सकती। जनसम्पर्क उनके लिये अपरिहार्य है। जनसम्पर्क प्रेरक शक्ति है और यह शक्ति जनसंचार के द्वारा ही क्रियाशील रहती है।

शासक और शासित में परस्पर विश्वास उत्पन्न करने के लिए जनसंचार तंत्र कार्यरत होता है। अपने देश में एक स्वतंत्र मंत्रालय ही इस दिशा में काम करता है। जिसे सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय कहा जाता है। इस मंत्रालय के अधीन 14 ईकाइयाँ है

1. आकाशवाणी **2.** दुरदर्शन **3.** प्रेस सूचना कार्यालय **4.** फिल्म्स डिविजन **5.** विज्ञापन तथा दृश्य प्रचार विभाग 6. प्रकाशन विभाग **7.** संगीत तथा नाटक विभाग **8.** क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय **9.** फोटो डिवीजन **10.** संदर्भ और अनुसंधान निदेशालय **11.** भारतीय समाचार पत्रों के पंजीकरण को करने वाला कार्यालय **12.** फिल्मों से संबधित सेंट्रल बोर्ड **13.** फिल्म उत्सवों का निदेशालय **14.** भारतीय फिल्मों का राष्ट्रीय संग्रहालय

विकास कार्यो की सूना देकर पत्रकार जन-जन में जिज्ञासा उत्पन्न करता है कि अमुक कार्य में इतनी प्रगति या अधोगति हुई। आधुनिक वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी और इलेक्ट्रानिक्स फैलाव के साथ पत्रकारिता का दायरा और दायित्व भी बढा है, विकसित हुआ है। शासन की उपलब्धियों से संदर्भित समाचार ही विकास पत्रकारिता को स्पष्ट नहीं करता इसका लक्ष्य है-

1. जीवन के सभी पक्षों की सूचना देना। **2.** विकास के प्रति जन-जन में अभिरूचि जागृत करना। **3.** विकास के दौरान बाधक तत्वों को प्रकाशित करना। **4.** विविध समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव देना। **5.** विकास के प्रति जन-जन में अभिरूचि जागृत करना।

प्रेस की स्वतंत्रता अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अभिन्न अंग है और लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए बहुत जरूरी है। भारतीय संविधान में यह स्वतंत्रता मौलिक अधिकार के रूप में दी गई है। प्रेस व्यक्तिगत अधिकारों को सम्मान देने और वैधानिक सिद्धांतो और कानूनो के अंतर्गत काम करने के लिए बाध्य है।

प्रेस पंजीकरण अधिनियम 1867 - सन् 1867ई. में प्रभावी प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट आज भी विभिन्न संशोधनों के साथ जारी है। इसका उद्देश्य प्रेस की स्वंतत्रता पर नियंत्रण नहीं अपितु प्रिंटिंग प्रेस एवं पत्रों के लिए पंजीकरण प्रणाली का नियमन तथा उसके साथ अन्य प्रकाशित सामग्री प्रकिया सुरक्षित रखना है इस अधिनियम की मुख्य धाराएं इस प्रकार है -

1. प्रत्येक प्रकाशित समाचार पत्र में मुद्रक प्रकाशक प्रकाशन स्थल का नाम स्पष्ट रूप से होना चाहिए।
2. वही मुद्रक पत्र छाप सकता है, जिसने जिला प्रेसीडेन्सी तथा सबडिवीजनल मजिस्ट्रेट की अनुमति प्रेस चलाने के लिए ले रखी है।
3. समाचार पत्र के प्रत्येक अंक पर मालिक और संपादक का नाम अंकित होना चाहिए।
4. प्रेस रजिस्ट्रार अथवा अन्य किसी व्यक्ति की मांग पर पूरी जॉच पड़ताल के आदेश देकर मजिस्ट्रेट घोषणा पत्र को रदद् करने का अधिकारी है।
5. प्रेस नियमों का उलंघन करने पर सम्पादक प्रकाशक को और मुद्रक को सजा या जुर्माना दी जा सकती है।
6. पत्र प्रकाशक से प्राप्त जानकारी के आधार पर प्रेस रजिस्ट्रार प्रतिवर्ष अपनी रिपोर्ट तैयार करता है।
7. प्रेस रजिस्ट्रार को गलत सूचना देने पर दंड दिया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश के प्रमुख दैनिक समाचार पत्र।
2. मध्यप्रदेश के प्रमुख दोपहर के समाचार पत्र।
3. मध्यप्रदेश के प्रमुख सांध्यकॉलीन समाचार पत्र।
4. समाचार पत्रों की अधोसंरचना।
5. समाचार पत्रों की रीति नीति।
6. मध्यप्रदेश के संबंध में समाचार पत्र के संबंध में सरकार की नीति।

तालिका 5.1

मध्यप्रदेश के प्रमुख दैनिक समाचार पत्रो की सूची एवं प्रसार

क्रमांक	नाम	स्थान	जन्म	सर्कुलेशन	मुफ्त प्रतियां
1.	आलोक	रीवा	1955	500	NIL
2.	भारत भूमि	ग्वालियर	1952	1570	62
3.	भव्य आलोकन	रतलाम	1963	NIL	NIL
4.	छत्तीसगढ.	दूर्ग	1966	NIL	NIL
5.	दैनिक भास्कर	उज्जैन	1958	1500	NIL
6.	दैनिक भास्कर	भोपाल	1958	1500	NIL
7.	दैनिक मध्यप्रदेश	भोपाल	1966	NIL	NIL
8.	दैनिक राही	सागर	1958	1950	NIL
9.	ध्वज	मंदसौर	1936	NIL	NIL
10.	ग्वालियर रिर्पोटर	लश्कर	1963	1800	200
11.	ग्वालियर समाचार	ग्वालियर	1960	1900	400
12.	हमारी आवाज	ग्वालियर	1952	6272	199

क्रमांक	नाम	स्थान	जन्म	सर्कुलेशन	मुफ्त प्रतियां
13.	इन्दौर समाचार	इन्दौर	1946	12707	1069
14.	जबलपुर समाचार	जबलपुर	1956	6532	417
15.	जनप्रवाह	ग्वालियर	1960	6638	138
16.	जनार्दन	इन्दौर	1961	NIL	NIL
17.	जागरण	इन्दौर	1950	4834	699
18.	जागरण दैनिक	रीवा	1953	3753	508
19.	जागरण दैनिक	भोपाल	1956	4807	365
20.	जवाहर के लाल	ग्वालियर	1966	NIL	NIL
21.	लश्कर समाचार	ग्वालियर	1962	2000	100
22.	मध्य भारत प्रकाश	ग्वालियर	1950	7011	166
23.	मध्यप्रदेश	कटनी	1959	1955	119
24.	मध्यप्रदेश समालोचक	कटनी	1965	NIL	NIL
25.	महाकौशल	रायपुर	1951	NIL	NIL
26.	नई दुनिया	इन्दौर	1947	25137	567
27.	नई दुनिया	रायपुर	1958	7772	550
28.	नई दुनिया	जबलपुर	1959	8803	498
29.	नवभारत	जबलपुर	1950	12577	658
30.	नवभारत	जबलपुर	1959	13174	579
31.	नवभारत	भोपाल	1956	7216	543
32.	नवभारत	इन्दौर	1960	6164	635
33.	नवभारत	इन्दौर	1951	NIL	NIL
34.	नवभारत	उज्जैन	1960	NIL	NIL
35.	नवभारत	ग्वालियर	1948	NIL	NIL
36.	नवभारत	भोपाल	1953	NIL	NIL
37.	निरंजन	ग्वालियर	1964	3000	430
38.	प्रदीप	जबलपुर	1950	NIL	NIL
39.	प्रजादूत	उज्जैन	1963	NIL	NIL
40.	रायपुर संदेश	रायपुर	1966	830	76
41.	राजहंस	ग्वालियर	1960	600	100
42.	सतना समाचार	सतना	1963	NIL	NIL
43.	सतना संदेश	सतना	1964	NIL	NIL
44.	स्वदेश	इन्दौर	1966	6664	653
45.	टाइम्स ऑफ इन्दौर	इन्दौर	1966	NIL	NIL
46.	वॉयस ऑफ इन्दौर	इन्दौर	1966	NIL	NIL
47.	युगधर्म	रायपुर	1961	6354	882
48.	युगधर्म	जबलपुर	1951	NIL	NIL

****

राष्ट्रीयकृत सड़क यात्री परिवहन सेवाओं का विश्लेषण

डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ *

प्रस्तावना – हमारे देश के विभिन्न राज्यों में सड़क परिवहन के राष्ट्रीयकरण का कार्य 1950 के पश्चात् प्रारम्भ हो गया था तथा देश के सभी राज्यों में राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवा, राज्य परिवहन निगम (एस टी यु) की सेवाएँ प्रारम्भ हो गयी थी। इस महत्वपूर्ण योजना के लिए केन्द्र व राज्य सरकारों ने शासकीय परिवहन संस्थानों को पूँजी अंशदान प्रदान किया था। आज देश के विभिन्न राज्यों व केन्द्र शासित प्रदेशों में शासकीय नियंत्रण में (एसटीयु) 24 निगमों, 9 शासकीय विभागों, 15 कम्पनियों तथा 7 स्थानीय निकायों के अन्तर्गत तथा साथ ही 2 शासकीय संस्थान देहली पर्यटन निगम व हिमाचल प्रदेश पर्यटन निगम के रूप में कार्य कर रहे है। इस तरह कुल 58 शासकीय सड़क परिवहन संस्थान देश में परिवहन सेवा प्रदान कर रहे है।

राष्ट्रीयकृत बसों में यात्रीगण – वर्तमान समय में देश के सभी राज्यों (मध्यप्रदेश को छोड़कर) व केंद्र शासित प्रदेशों में शासन द्वारा सार्वजनिक परिवहन सेवाए प्रदान की जा रही है। तालिका क्रं.1 के अध्ययन एवं रेखाचित्र क्रं. 1 को देखे तो यह स्पष्ट हो रहा है कि राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं को निरन्तर हानि का सामना करना पड़ रहा है। मगर इसमें तथ्य यह भी है कि इनके द्वारा प्रतिवर्ष कार्य निष्पादन भी निरन्तर बढ़ रहा है। संचालित किलोमीटर एवं परिवहन किए गए यात्रियों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। एसटीयू की बसों में प्रतिवर्ष लगभग 2719.25 करोड़ यात्री यात्रा कर रहे है जो राष्ट्रीयकृत बसों से पूर्णत: संतुष्ट है।

तालिका क्रं. 1 : **STU`s** में प्रतिदिन यात्रा करने वाले यात्रियों की संख्या

वर्ष	यात्री प्रतिदिन करोड़ में
2004-05	**6.06**
2005-06	**6.20**
2006-07	**6.12**
2007-08	**6.27**
2008-09	**6.91**
2009-10	**6.98**
2010-11	**7.05**
2011-12	**6.90**
2012-13	**6.77**
2013-14	**7.28**
2014-15	**7.45**

स्त्रोत : प्रोफाइल एण्ड परफार्मेन्न्स ऑफ **STU`s**वर्षिक प्रतिवेदन, **CIRT** पुणे द्वारा प्रकाशित

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है **STU`s** में सड़क से यात्रा करने वाले यात्रियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। चूंकि यात्रियों को आसानी से उपलब्ध होने के कारण यह प्रवृति ज्यादा बढ़ रही है। इसमें यह भी स्पष्ट है कि यात्रियों की संख्या में वृद्धि, संचालित किलोमीटर में वृद्धि दोनों का प्रत्यक्ष प्रभाव हानि पर हो रहा है अर्थात इनके साथ साथ प्रतिवर्ष हानि भी बढ़ती जा रही है। उपरोक्त तालिका को हम स्थान के आधार पर एवं प्रति बस के आधार पर वर्गीकृत करे तो ग्रामीण क्षेत्रों में 494 यात्री प्रति बस, शहरी क्षेत्रों में 934 यात्री प्रति बस तथा पहाड़ी क्षेत्रों में 85 यात्री प्रति बस प्रतिदिन होते है।

राष्ट्रीयकृत बसों द्वारा संचालित किलोमीटर – भारत में संचालित **ASTU** प्रतिवेदन से स्पष्ट है कि सड़क मार्ग परिवहन भारतीय परिवहन प्रणाली की आधारशिला है। माल परिवहन हो या फिर यात्री परिवहन दोनों ही क्षेत्रों में सड़क परिवहन ही अग्रणी भूमिका में है। भारत में प्रतिदिन यात्रा करने वाले यात्रियों में से 95 प्रतिशत यात्री सड़क परिवहन का उपयोग करते है। भारत में 58 राष्ट्रीयकृत या स्टेट अण्डरटेकिंग कारपोरेशन है, जो प्रतिदिन लगभग 7.45 करोड़ यात्रियों का परिवहन करते है। यदि इसमें निजी परिवहन संचालकों को भी जोड़ दिया जाये, तो यह संख्या बहुत अधिक हो जायेगी। नीचे की तालिकाओं में **STU`s** की बसों द्वारा संचालित कि.मी. तथा प्रतिवर्ष परिवहित यात्री संख्याओं को दर्शाया गया है। वर्ष 2005-06 से वर्ष 2014-15 तक **STU`s** की बसों द्वारा तालिका क्रं 2 में दर्शाये गए तालिकानुसार संचालन किया गया है। **STU`s** की बसों ने वर्ष 2005-06 से 2014-15 तक निम्नानुसार संचालन किया है।

तालिका क्रं. 2 : **STU`s** की बसों द्वारा संचालित किलोमीटर

वर्ष	कि.मी. (करोड़ में)
2005-06	1260
2006-07	1251
2007-08	1302
2008-09	1416
2009-10	1476
2010-11	1516
2011-12	1509
2012-13	1519
2013-14	1529
2014-15	1670

स्त्रोत: भारत सरकार सड़क परिवहन व राजमार्ग मंत्रालय एवं **ASTU** वर्षिक प्रतिवेदन

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि देश के विभिन्न राज्यों के राज्य परिवहन निगम अपने अपने क्षेत्र में यात्री परिवहन हेतु महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है। इन सभी राज्यों में मिश्रित व्यवस्था के रुप में निजी बस संचालक भी मौजूद है तथा यात्री परिवहन बाजार में इनका भी बहुत बड़ा हिस्सा हैं। मगर चूंकि इनका उद्देश्य बस संचालन से मात्र लाभ कमाना है। जबकि राष्ट्रीयकृत सड़क यात्री परिवहन सेवा का उद्देश्य सामाजिक कल्याण है। विभिन्न राज्यों के अंदरुनी ग्रामीण क्षेत्रों तक एसटीयू की बसे जाती है। जबकि निजी संचालक यहां नहीं जाते है क्योंकि हानिप्रद मार्गो पर संचालन करना इनके लिए संभव

---

* प्राध्यापक (वाणिज्य)शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

नही है। यदि हम पिछले वर्षो में राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं की लाभ–हानि देखें तो निम्नानुसार स्थिति स्पष्ट हो जायेगी।

राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं की आर्थिक स्थिति – भारतीय **STU`s** में 23245.44 करोड़ (संचित हानि सहित) पूंजी दायित्व के पूजीं अंशदान के रुप में राज्य व केंद्र शासन का अंशदान 21363.12 करोड़ तथा लोन (विभिन्न बैंक व वित्तीय संस्थाओं से) 5817.45 करोड़ रुपये का। **STU`s** अपनी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पब्लिक डिपाजिट भी प्राप्त कर रही है। यह 101.59 करोड़ तक है। 31 मार्च 2014 की स्थिति में वित्तीय वर्ष में यातायात (किराए) के रुप में 36296.30 करोड़ रुपये, 3793.30 करोड़ सब्सिडी तथा 1720.46 करोड़ अन्य भवन किराया, विज्ञापन आदि में प्राप्त हुए थे। जबकि **STU`s** की लागत 49206.00 करोड़ रुपये था जिसमें वेतन सामग्री, कर, बयाज, डेप्रिसिएशन, प्रोयवेट बसों को भुगतान एवं अन्य मरम्मत कार्य सम्मिलित है। इस तरह कुल 7395.94 करोड़ की हानि हुई थी। इस हानि में छात्रों को दिए जाने वाला कन्सेशन 2834.31 करोड़ रुपये , दिव्यांगों व ब्लाइंड व फ्री पास 26.66 करोड़, वरिष्ठ नगारिक 532.22 करोड़ व अन्य 159.68 करोड़ कुल 3984.57 करोड़ के बदले शासन के सब्सिडी 3793.30 प्राप्त हुई। गत वर्ष की तुलना में हानि में 9.93 प्रतिशत की वृद्धि हुई पिछले वर्षो की हानि को निम्न तालिका से समझा जा सकता है।

तालिका क्रं. 3 : **STU`s** में हानि वर्ष 2010–11 से 2013–14 तक

वर्ष	हानि (करोड़ रु. में)
2010–11	**6601.00**
2011–12	**6728.00**
2012–13	**7395.94**
2013–14	**7670.88**

स्त्रोत : वार्षिक प्रोफाइल व परफार्मेन्स प्रतिवेदन, CIRT,Pune

रेखाचित्र : STU`s में हानि

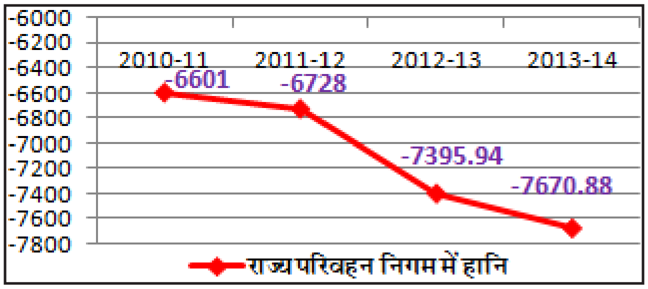

सन् 2013–14 में केवल 2 **STU`s** ने लाभ प्राप्त किया। (1) कर्नाटक **SRTC** ने 1.74 करोड़ रुपये (2) ओड़िसा **SRTC** ने 7.20 करोड़ रुपये। यहाँ उल्लेखनीय तथ्य यह है कि कर्नाटक में 14190 बसें जनता के लिए उपलब्ध है। वहीं उड़ीसा में मात्र 376 बसें ही उपलब्ध है।

राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं में हानि का मुख्य कारण प्रदेश के सभी मार्गो पर सेवाएँ प्रदान करना, विभिन्न कन्सेशन जैसे छात्र, वरिष्ठ नागरिक, दिव्यांग, राष्ट्रीय पदक, पुलिस पदक जैसी सेवाओं के कारण भी राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं में हानि हो रही है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते है कि भारत में राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाएँ अपनी 1.60 लाख बसों के साथ बहुत अच्छा कार्य कर रही है। यह बसें देश के सभी भागों में यात्रियों को ले जाती है, चाहे वह जम्मू–कश्मीर, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, नार्थ ईस्ट के पहाड़ी क्षेत्र हो या राजस्थान व गुजरात के रेगिस्तानी क्षेत्र हो या फिर शहरी ग्रामीण क्षेत्र ही क्यों न हो, राष्ट्रीयकृत बसें हर जगह उपलब्ध है। बड़े अफसोस की बात है कि मध्यप्रदेश में राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं बंद कर दी गई जिसकी वजह से मध्यप्रदेश में केवल उन्हीं मार्गो पर निजी बस संचालकों द्वारा बस संचालन किया जा रहा हैं जो लाभप्रद है। तथ्य यह भी है कि मध्यप्रदेश के सभी ग्रामीण क्षेत्र पक्के मार्ग से जुड़े हुए है मगर यहां पर राष्ट्रीयकृत सड़क यात्री परिवहन सेवा नहीं होने से ग्रामीण क्षेत्र के यात्रियों को 8–10 किलोमीटर चलकर अपनी यात्रा के लिये निजी संचालकों की बस पकड़ना होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रोफाइल एण्ड परफार्मेन्स ऑफ **STU`s**वर्षिक प्रतिवेदन, **CIRT** पुणे द्वारा प्रकाशित
2. भारत सरकार सड़क परिवहन व राजमार्ग मंत्रालय एवं **ASTU** वर्षिक प्रतिवेदन
4. Indian Transport System : P Jagdish Gandhi,G. Jon Guaseelan
5. Management of State Transport in India : K. N Ramanujam

रेखाचित्र : **STU`s** की बसों में प्रतिदिन यात्रा करने वाले यात्रियों की संख्या (करोड़ में)

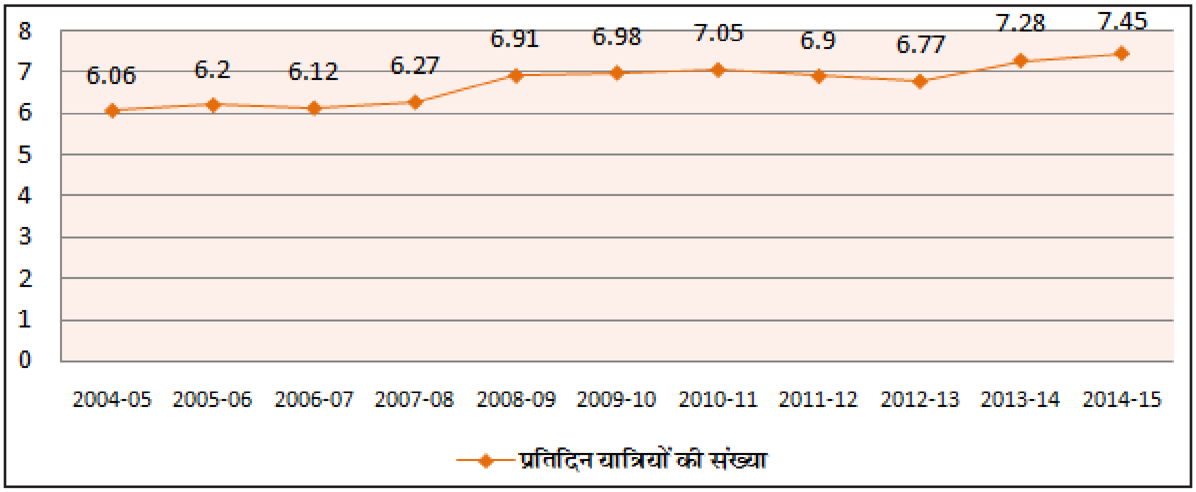

लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास में वनोपज पर आधारित उद्योगों का योगदान

डॉ. सुमन यादव *

प्रस्तावना – सरल शब्दों में उद्योग से आशय किसी वस्तु अथवा सेवा के निर्माण से है, तथा इस रूप से उद्योग विश्व में अनादिकाल से प्रचलित हैं किन्तु आधुनिक युग में उद्योग का अर्थ विज्ञान एवं तकनीकी की सहायता से नवीन उपयोगिताओं अथवा मूल्यों का निर्माण करने से है। जब एकाधिकार प्रकार के उद्योगों का एक साथ विकास होता है तो यह एक प्रक्रिया बन जाती है। जिसे औद्योगीकरण कहा जाता है। औद्योगीकरण की प्रक्रिया अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रो में परिवर्तन ला देती है, तथा इसके फलस्वरूप भविष्य में सामाजिक एवं आर्थिक प्रणाली में भी परिवर्तन का दौर शुरू हो जाता है। यांत्रिक शक्ति एवं संयंत्रों का उपयोग बड़े पैमाने के उत्पादन को प्रोत्साहित करता है। अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में भारी पूंजी विनियोग एवं वैज्ञानिक तकनीक के उपयोग के द्वारा उत्पादन में वृद्धि होती है।, जिससे रोजगार के अवसर बढ़ जाते है। लोगों की प्रति व्यक्ति आय एवं क्रय शक्ति में वृद्धि हो जाती है। जो बचत एवं विनियोग की दरो को बढ़ाने में सहायक होती है। इस तरह औद्योगीकरण से अवरूद्ध अर्थव्यवस्था के विकास को गति मिलती है, तथा आर्थिक स्तर में सुधार आता है।

उद्योग स्थापना का कार्य एक विकासशील और रचनात्मक प्रक्रिया है। उद्योगों के विकास में तभी बढ़ोतरी हो सकती है। जब उन्हें इस हेतु अनुकूल परिस्थितियां एवं सुविधाऐं मिल सके। वित्तीय और तकनीकी आवश्यकतायें पूरी हो सके। जिला उद्योग केन्द्र का गठन इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये किया गया है। इस केन्द्र में उद्योगपति को तकनीकी ज्ञान, वित्तीय सहायता, विभागीय सुविधाऐं और विपणन तथा उचित मार्गदर्शन एक ही स्थान पर सुलभ करायी जाती है। भारत शासन ने वर्ष 1977 में घोषित औद्योगिक नीति में देश में औद्योगीकरण को बढ़ाने के उद्देश्य से जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना का निर्णय लिया तथा सभी जिलो में समान प्रशासनिक ढांचा स्थापित किया गया। इसी तारतम्य में मध्यप्रदेश में भी प्रदेश के समस्त 48 जिलो में जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना की गई।

जिले के औद्योगिक विकास पर दृष्टि डाले तो कुछ तथ्य सामने आते है। जो इस क्षेत्र के स्वरूप की तस्वीर प्रस्तुत करते है। प्राचीन काल में कृषि व्यापार में विकसित यह क्षेत्र लघु एवं कुटीर उद्योगों के लिये भी विख्यात था यहां अनेक प्रकार की कलात्मक वस्तुओं का निर्माण होता रहा है। किन्तु समय सदैव एक सा नहीं होता । इस क्षेत्र ने भी ब्रिटिश प्रशासन का प्रकोप भोगा है। जिसके परिणामत: यहां की श्रीवृद्धि को ग्रहण लग गया और उद्योग अवनत हुए आर्थिक स्थिति बिगड़ने लगी एवं यह क्षेत्र विकास की दिशा में पिछड़ने लगा। स्वतंत्रता के बाद इस क्षेत्र की राजनीतिक व आर्थिक गतिविधियां बढ़ी तथा शनै: शनै: यहां उद्योगों के विकास की गति प्रारम्भ हो गयी। प्रारम्भ में छोटे पैमाने के उद्योगों की स्थापना हुई बाद में विभिन्न आधारभूत सुविधाओं के विकास के साथ–साथ नवीन बड़े पैमाने के उद्योगों ने भी अपने पैर पसार दिये तथा वर्तमान में यह क्षेत्र औद्योगिक विकास की दृष्टि से उन्नति की दिशा में अग्रसर हो रहा है।

वनोपज पर आधारित प्रमुख लघु उद्योग– जिले की वन संपदा महत्वपूर्ण है। जिले में वनोपज पर आधारित प्रमुख लघु उद्योग निम्न है:–

आरा मिले –वनोपज पर आधारित पहला महत्वपूर्ण उद्योग लकड़ी के फर्नीचर से संबंधित है। जिसमें लकड़ी चिराई मशीने शामिल है। इनमें इमारती फर्नीचर एवं लकड़ी के अन्य सामान बनाने हेतु लकड़ी की चिराई की जाती है।

लकड़ी फर्नीचर उद्योग – वनोपज पर आधारित दूसरा महत्वपूर्ण उद्योग लकड़ी के फर्नीचर से संबंधित है। यह लघु एवं कुटीर दोनों रूप में विद्यमान है। कुछ इकाइयां आधुनिक यंत्र उपकरणों से फर्नीचर निर्माण करती है, तथा अनेक इकाईयां कुटीर उद्योग के रूप में व्यक्तिगत या पारिवारिक रूप से यह कार्य करती है।

शराब कारखाना – जिले में देशी शराब निर्माण की इकाई कार्यरत है। यह शासकीय क्षेत्र के अंतर्गत आबकारी विभाग द्वारा नियंत्रित है, इसमें गुड़ एवं महुआ द्वारा शराब निर्माण किया जाता हैं ।

सीमेंट पाइप निर्माण उद्योग –जिलें में कुछ इकाईयां सीमेंट के पाइप के निर्माण से संबंधित है। ये इकाइयां पुल, नहर तथा नालियों आदि में लगने वाले सीमेंट पाइपों का निर्माण करते है।

कैमिकल फैक्ट्री – सिवनी में 2 केमिकल फैक्ट्री स्थापित है। जो आक्सेलिक ऐसिड का निर्माण करती है।

स्टील फैब्रीकेशन एवं स्टील फर्नीचर उद्योग –स्टील फैब्रीकेशन एवं स्टील फर्नीचर निर्माण से संबंधित कुछ इकाइयां है, जो सिवनी नगरीय क्षेत्र में एवं निकट स्थान में स्थापित है। स्टील फेब्रिकेशन की मुख्य इकाई 'एमपी लाईट हाउस' 1977 से पंजीकृत है। जो औद्योगिक (सिवनी) प्रक्षेत्र मे स्थित है।

स्ट्रा बोर्ड एवं पेपर मिल –सिवनी जिले की यह एक मात्र पुठ्ठा मिल (कार्ड बोर्ड) बनाने की मिल है। जो सिवनी नगर के समीप बम्होड़ी नामक स्थान पर स्थापित है। यह भी सीमित क्षमता वाली इकाई है। यह मुख्यत: पुठ्ठा निर्माण से संबंधित है।

प्लास्टिक उद्योग – प्लास्टिक से विभिन्न वस्तुएं, डिब्बे, जरी केन, पॉलीथीन बैग आदि के निर्माण से संबंधित इकाईयां है जिनमें पहली इकाई आसर प्लास्टिक इंडस्ट्रीज बारापत्थर सिवनी है, जो प्लास्टिक डिब्बे का निर्माण करती है। दूसरी ओम प्लास्टिक इंडस्ट्रीज है। जो 1977 से पंजीकृत है। ये इकाइयां भी छोटी है।

आइलपेंट निर्माण इकाई –सिवनी जिले में एक इकाई आइल पेंट निर्माण

---

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

से संबंधित है, जो 'मालू पेंट्स इंडस्ट्रीज' के नाम से सिवनी के समीप ग्राम लूघरवाड़ा में स्थापित है।

चिलिंग प्लांट –सिवनी के समीप ग्राम बंडोल में चिलिंग प्लांट स्थापित है जो घी, दूध, दही, मक्खन आदि निर्माण से संबंधित है।

स्ट्रोन क्रेशर –बिल्डिंग तथा सड़क आदि निर्माण में प्रयुक्त होने वाली गिट्टी निर्माण से संबंधित कुछ इकाईयां जिले में स्थापित है जो सिवनी, बंडोल, बिछुआ, गंगाटोला, सोनाडोगरी, आदि स्थानों में है। अधिकांश स्टोन क्रेशर इकाईयां सिवनी के आस पास स्थित है।

बर्फ फैक्ट्री –बर्फ निर्माण से संबंधित 2 इकांइया सिवनी नगर में स्थित है।

मारबल टाइल्स –मारबल टाइल्स निर्माण से संबंधित एक इकाई सिवनी में स्थापित है।

पेपर प्रोडक्ट्स –पेपर वाइन्डिंग एवं तैयार पेपर से कपियां आदि निर्माण की एक मुख्य इकाई 'कौशल पेपर प्राडक्ट्स' स्थापित है।

कोल्ड स्टोरेज –सिवनी में एक कोल्ड स्टोरेज भी स्थापित है।

नस (स्नफ) –नस (स्नफ) निर्माण से संबंधित 1 इकाई नीतू स्नफ फैक्ट्री स्थापित है। पीतल के गुंड़ निर्माण तथा टिन कन्टेनर संबंधी कुछ इकाई अति लघु स्तर पर कार्यरत है।

ज्वैलरी आभूषण निर्माण –सिवनी नगर में मुख्यत: सोना चांदी के आभूषण गहने निर्माण संबंधी कार्य होता है।

हथकरघा उद्योग –सिवनी जिले के उद्योगों में यह भी एक महत्वपूर्ण उद्योग हैं,यद्यपि ये इकाइयां अति लघु है, किन्तु यह उद्योग अति लघु उद्योग जिले में पूर्व से विद्यमान है। बिजली चलित एवं हस्तचलित करघो का प्रयोग कर साड़ियां आदि तैयार की जाती है। हथकरघों की सर्वाधिक संख्या सिवनी नगर में है। जो एक विशेष वर्ग के लोगों का मुख्य व्यवसाय है। कोष्टा जाति के लोग इस व्यवसाय में विशेष रूचि रखते है जो परंपरागत रूप से इस व्यवसाय को रखे हुऐ है। इन्हें राज्य वस्त्र निगम द्वारा धागा उपलब्ध कराने की सुविधा दी गयी है। यहां एक हथकरघा बुनकर कलाकार सहकारी समिती (भैरोगंज सिवनी) में कार्यरत है। इस उद्योग में अनेक परिवार लगे हुऐ है तथा रोजगार प्राप्त कर रहे है।

मत्स्य उद्योग –जिले में मत्स्य उद्योग में बहुत प्रगति हुई है। जिले के विभिन्न तालाबों में मतस्य पालन होता है। जिले में मत्स्य विकास अभिकरण स्थापित है। मत्स्य पालन हेतु प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित है। जिले में मत्स्य बीज उत्पादन किया जाता है। वर्ष 1994–95 में विभागीय तौर पर सिवनी जिला संपूर्ण राज्य में मत्स्य बीज उत्पादन में द्वितीय स्थान पर रहा। यहां उत्पादित झींगा बीज छिन्दवाड़ा, बालाघाट, मंडला, बैतूल, होंशगाबाद, शिवपुरी, भोपाल, देवास आदि जिलों को प्रदाय किया गया। लगभग 4600 लोगो को 758 तालाबो के पट्टे पूर्व से आवंटित है। जिले में 5 मतस्य चेतना केन्द्र मछली पालन के प्रचार–प्रसार हेतु स्थापित किये गये है। मतस्य पालन के लिये जिले में अनेक मछुआ सहकारी समिति का गठन कर इस उद्योग की प्रगति हेतु विशेष प्रयास किये जा रहे है। इनमें लोगों को रोजगार प्राप्त हो रहा है। जिले में जेवनारा एवं लखनादौन में मतस्य बीज केन्द्र स्थापित है।

ईट निर्माण – रैयतवाड़ी, बम्होड़ी, बरघाट, पिंडरई, अरी धारना, भोमा आदि अनेक स्थानो पर ईट निर्माण तथा कुछ स्थानो पर कवेलू निर्माण होता है।

उपर्युक्त वर्णित वनोपज पर आधारित उद्योगों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि सिवनी व छिन्दवाड़ा जिले के विकास वनोपज पर आधारित उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । इन उद्योगों से संबंधित कठिनाईयों को जिला उद्योग केन्द्र इकाईयों के माध्यम से दूर किया जा सकता है । वैसे भी यह संभाग प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों से भरपूर है । यदि शासन द्वारा संभाग की आर्थिक उन्नति के लिए द्रुतगति से प्रयास किये जाये तो भविप्य में आशानुकूल परिणाम प्राप्त होग । शोधार्थी का ऐसा मानना है कि इन क्रियाओं के फलस्वरूप संभाग में आर्थिक संपन्नता के साथ–साथ औद्योगीकरण भी बढ़ेगा और सिवनी व छिन्दवाड़ा जिला बहुत थोड़ी समयावधि में ही केवल प्रदेश में ही नही वरन् समूचे देश में अपना विशिप्ट स्थान बना लेगा ।

संदर्भ ग्रंथ सूची.

1. डॉ.आर.एस.कुलश्रेष्ठ – वित्तीय प्रबंधन (1994) साहित्य भवन आगरा प्रकाशन।
2. डॉ. के.सी. भण्डारी – भारत के आर्थिक नियोजन एवं प्रगति के सिद्धांत ।
   एवं डॉ. एस.पी. जौहरी लक्ष्मी नारायण नाथूराम आगरा प्रकाशन
3. उद्यमिता (1995–2009) – उद्यमिता विकास केन्द्र म.प्र. भोपाल
4. वार्षिक प्रतिवेदन – मध्यप्रदेश औद्योगिक विकास (1995–2009) निगम भोपाल।
5. मध्यप्रदेश का सांख्यिकीय– मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण सर्वेक्षण, मध्यप्रदेश वार्षिक एवं सांख्यिकी संचालनालय भोपाल।
6. कुरूक्षेत्र, मई–जून – ग्रामीण विकास मंत्रालय की (1995–2009) मासिक पत्रिका ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि भवन नई दिल्ली।

****

डिजीटल इंडिया का प्रभाव - संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ

मनोज जैन *

प्रस्तावना -प्रधानमंत्री का स्वप्न भारत के प्रत्येक नागरिक को इंटरनेट की विशाल दुनिया से जोड़कर ग्लोबल बनाने का है। एक उद्देश्य सबको सशक्त बनाने का और उन जुबानों को भी आवाज देने का है। जिनकी बात की पहुँच सीमित थी। अगर प्रधानमंत्री के शब्दों में कहे तो डिजीटल इंडिया एक ऐसी क्रांति है, जो बिना किसी सीमा को जाने-पहचाने लोगों को सूचना का अधिकार देती है। मुख्य रूप से गाँव को इंटरनेट प्रदत्त बनाने के लिए शहरों और गाँवो के बीच एक पुल के तौर पर ही देखी जा रही है। लेकिन अगर हम इसके फायदो पर विशेष रूप से गौर करे तो डिजिटल इंडिया देश में इन्टनेट तक ही सिमटा हुआ नजर नहीं आएगा।

प्रधानमत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने 2 जुलाई 2015 को डिजिटल इंडिया प्रोजेक्ट की शुरूआत की थी। देश के लोगों के बेहतर विकास और वृद्धि के लिए रूपांतरित भारत के लिए ये एक प्रभावशाली योजना है, सुशासन और अधिक नौकरियों के लिए भारत को एक डिजिटल विस्तार देना इसका लक्ष्य है। सरकारी सेवा और लोगों के बीच की दूरी के अंतर को मिटाने के लिए डिजिटलीकरण अभियान की और भारत के पीएम ने अपना श्रेष्ठ प्रयास किया। किसी भी दूसरे देश से ज्यादा वृद्धि और अच्छे भविष्य के लिए भारत में डिजिटलीकरण की बहुत जरूरत थी।

डिजीटल इंडिया के लाभ -

1. डिजीटल इंडिया लाकर व्यवस्था लागू करने को ये मुमकिन बनाएगा। जिसके परिणाम स्वरूप रजिस्टर्ड संग्रह के माध्यम से ई-शेयरिंग सक्षम बनाने के साथ ही भौतिक दस्तावेज को कम करने के द्वारा कागजी कार्यवाही को घटाएगा।
2. सरकार के द्वारा विभिन्न ऑनलाइन लक्ष्यों की प्राप्ति को ये सुनिश्चित करेगा।
3. ये एक प्रभावशाली अनलाइन मंच है। जो चर्चा कार्य करना और वितरण 'जैसे विभिन्न दृष्टिकोण के द्वारा शासन प्रणाली में लोगों को शामिल कर सकता है।'
4. ई हस्ताक्षर संरचना के द्वारा नागरिक अपने दस्तावेज को आनलाइन हस्ताक्षरित करा सकता है।
5. ई- अस्पताल के माध्यम से महत्वपूर्ण स्वास्थ परक सेवाओं को आसान बना सकता है। , जैसे आनलाइन रजिस्टशन डॉक्टर से मिलने का वक्त लेना, फीस जमा करना, आनलाइन लक्षणिक जांच करना, खून जांच आदि।
6. अर्जियों के जमा करने, प्रमाणीकरण प्रक्रिया, अनुमोदन और संवितरण के स्वीकृति के द्वारा राष्ट्रीय छात्रवृत्ति पोर्टल के माध्यम से लाभार्थी के लिए लाभ उपलब्ध करता है।
7. ये एक बड़ा मंच है, जो अपने नागरिकों के लिए पूरे देश भर में सरकारी और नीति सेवाओं के प्रभावशाली वितरण को आसान बनाता है।
8. भारत नेट कार्यक्रम (तेज गति का डिजिटल हाइवे) देश के लगभग 250,000 ग्राम पंचायतों को जोडेगा।
9. डिजीटल इंडिया पहल में मदद के लिए बाहरी स्त्रोत नीति भी एक योजना है। मोबाइल पर आनलाइन नीति भी एक योजना है। मोबाइल पर ऑनलाइन सेवाओं के बेहतर प्रबंधन के लिये जैसे वाइस डाटा, मल्टीमीडिया आदि बीएसएनएल के अगली पीढ़ी का नेटवर्क 30 साल पुराने टेलिफोनों एक्सचेंज को बदल देगा।
10. सभी शहरों नगरो और गाँवो मे ब्राडबेंड हाइवे की खुली पहुंच के एक क्लिक पर विश्व स्तरीय सेवा की उपलब्धता को मुमकिन बनायेगा।

संभावनाएं -

1. मंत्रालय/विभाग/ राज्यों को भारत सरकार द्वारा स्थापित सार्वजनिक और समर्थन आइसीटी बुनियादी सुविधा का लाभ उठाना होगा। डीइआइओवाई को भी विकसित मानक निर्धारित और नितिगत दिशा निर्देश क्षमता निर्माण, अनुसंधान एवं विकास कार्य , तकनीक समर्थन आदि जारी रखना होगा।
2. मौजूदा चल रही ई शासन पहलो का उपयुक्त डिजिटल इंडिया के सिद्धांतो के साथ पुर्नेरूत्थान किया जाएगा। नागरिकों को सरकारी सेवाओं की प्रदायगी में तेजी लाने के लिए कार्य क्षेत्र मे वृद्धि रि इंजीनियरिंग प्रक्रिया, एकीकृत और अंतर प्रचालनी प्रणालियों के इस्तेमाल और क्लाउड और मोबाइल जैसी उबरती हुई प्रोद्योगिकियों के परिनियोजन और उपयोग को बढ़ावा दिया जाएगा।
3. राज्यों को विशिष्ट परियोजनाओं का चुनाव करने की सुविधा दी जाएगी जो उनकी सामाजिक, आर्थिक जरूरतों के लिए प्रांसगिक है।
4. ई शासन को एक विकेन्दीकृत कार्यान्वियन माडल अपनाने नागरिक केन्द्रीत सेवा अभिविन्यास विभिन्न ई शासन अनुप्रयोगों और आइसीओ बुनियादी ढॉचे/ संसाधनों का इष्टतम उपयोग के अंतर को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हद तक केन्द्रीकृत पहल के माध्यम से प्रोत्साहित किया जाएगा।
5. एक विकेन्द्रीकृत कार्यान्वियन माडल अपना कर नागरिक केन्द्रीत सेवा नीति को सुनिश्चित करने , विभिन्न ई शासन अनुप्रयोगों और आइसीटी अवसंरचना/ संसाधनों का इष्टतम उपयोग करने के लिए शासन को एक केन्द्रीकृत पहल के माध्यम से प्रोत्साहित किया जाएगा।
6. सफलताओं की पहचान की जाएगी और जहां भी उनकी प्रतिकृति आवश्यक होगी वहां उनकी उत्पादकता और अनुकूलन में वृद्धि की जाएगी।
7. ई शासन परियोजनाओं मे सार्वजनिक निजी भागीदारी को जहां भी आवश्यक होगा वहा पर्याप्त प्रबंधन और रणनीति नियंत्रण के साथ लागू किया जाएगा।

---

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

8. विशिष्ट आइडी को प्रमाणीकरण और लाभवितरण की सुविधा के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।
9. केन्द्र और राज्यस्तर पर सभी सरकारी विभागो के समर्थन को मजबूत करने के लिए एनआइसी पुनर्गेठन किया जाएगा।
10. विभिन्न इ शासन परियोजनाओं का निर्माण, विकास और उनको तेजी से लागू करने के लिए 10 प्रमुख मंत्रालयों में मुख्य सूचना अधिकारी की नियुक्ति की जाएगी। सीआइऔ के पद को संबधित मंत्रालय में अधिक शक्तियों के साथ अपर संचिव /संयुक्त सचिव स्तर पर नियुक्ति की जाएगी।

चुनौतियाँ –

1. सरकार की मंशा है कि डिजिटल के मार्फत लोगों के रोजमर्रा की सहूलियते दिलाई जाये लेकिन डिजिटल इंडिया प्रोग्राम के अंदर होने वाली चीजे पहले भी हो रही थी, तो फिर नई सरकार के पास नया क्या है।

सरकार ने इस अभियान के तहत नौ क्षेत्रों को निर्धारित किया है।

1. ब्रांडबेंड हाइवे– सरकार का पहला लक्ष्य है कि ब्राडबेंड हाइवे, इसके तहत देश के आखिरी घर तक ब्राडबैंड के जरिये इंटरनेट पहुचांने का प्रयास किया जाएगा।
2. सरकार का दूसरा लक्ष्य सबके पास फोन की उपलब्धता जिसके लिए जरूरी है कि लोगों के पास फोन खरीदने की क्षमता हो, ख्याल अच्छा है लेकिन सरकार को यो सोचना होगा कि सबके पास फोन खरीदने की क्षमता आ गई है या फिर सरकार अगर ये सोच रही है कि वो खुद सस्ते फोन बनाएगी तो इसके लिए तकनीक और कहां है।
3. पब्लिक इंटरनेट एक्सेस प्रोग्राम – हर किसी के पास इंटरनेट हो यह अच्छी बात है। इसके लिए पीसीओ की तर्ज पर पब्लिक इंटरनेट एक्सेस प्वाइंट बनाये जा सकते है, ये पीसीओ आसानी से समस्या हल कर सकते है लेकिन हर पंचायत के स्तर पर इसको लगाना/ और चलाना आसान काम नहीं है।
4. ई गवर्नेस यानी सरकारी ऑफिस को डिजिटल बनाना और सेवाओं को इंटरनेट से जोड़ना।
5. ई–क्रांति:– ये गवर्नेस से जोड़ा जा सकता है और सरकार की मंशा है कि इंटरनेट के जरिये विकास गांव–गांव तक पहुंचे इस पर सबसे ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है।
6. सरकार इन्फोनमेशन फार आल यानि सभी को जानकारियाँ मुहैया कराई जाएगी। लेकिन सवाल यह उठता है कि एक्सेस टू इंफोरमेंशन के अभाव में यह कैसे संभव है।
7. **इलेक्ट्रानिक्स उत्पादन –** इसके तहत उद्देश्य इलेक्ट्रानिक उत्पादो के लिए कल पुर्जो के आयात को शून्य करना है, यह संभव नहीं है क्योंकि पूरी दुनिया चाहती है व्यापार करना। जहां तक इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादो के उत्पाद का सवाल है, तो अभी तक हम इस मामले मे शहरो तक ही सीमित है और गांवो तक जा ही नही रहे है, इसमे नीति और नियमितता की चुनौतियाँ बहुत ज्यादा है।

निष्कर्ष – तकनीक हमेशा से नवयुग में प्रवेश का माध्यम रही है चाहे वह पेपर हो, प्रिटिंग प्रेस हो, ब्लैक बोर्ड हो, पुस्तकें हो अथवा इक्कीसवीं सदी का मोबाइल , ब्राडबैंड और इंटरनेट सुविधा हो। अब देखना यह होगा कि इस नव–क्रांति का हम कितना सकारात्मक उपयोग करते है। पर इतना तो आवश्य कहा जा सकता है कि जैसे–जैसे ग्रामीण भारत सूचना तंत्र से जुड़ता जाएगा। भारत मे ज्ञान का उत्पादन भी बढ़ता जाएगा और एक बार पुन: हम वैश्विक स्तर पर भी अपनी ज्ञान–पताका फहरा पाएंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योजना, जनवरी 2016, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. प्रतियोगिता दर्पण मार्च 2016, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा।
3. समाचार पत्र/पत्रिकाएँ ।
4. www. digitalindia.gov.in

****

प्राचीन भारत में प्रबंध व्यवस्था

डॉ. अंतिमबाला जैन *

प्रस्तावना – प्रबंध के इतिहास पर हम अपना ध्यान केन्द्रित करें तो यह ज्ञात होता है कि प्रबंध का इतिहास ईसा पूर्व के 5000 वर्षों से भी अधिक पुराना है, यदि प्राचीन ग्रंथ रामायण और महाभारत का भी अवलोकन करें तो यह जानकारी प्राप्त होती है कि प्रबंध के सिद्धांत और आज के युग के अति आधुनिक प्रबंधकीय निपुणताएं इन दोनों महान ग्रंथो में समावेशित है।अनेक भारतीय राजाओं ने भी अपने प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने हेतु प्रबंध का सहारा लिया। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी अनेक स्थानों पर अनेक दृष्टांत दृष्टिगत होते हैं जिसमें कौटिल्य ने सम्राट चन्द्रगुप्त को कुशल प्रबंधन हेतु अनेकों उपाय बताए हैं।

इजिप्ट के विश्व विख्यात पिरामिड जो ईसा में तीन हजार वर्ष पूर्व बनाए गए थे उनके लिए भी नियोजन संगठन साधनों की उपलब्धता जन निर्देशन और समन्वय एवं नियंत्रण की आवश्यकता महसूस की गई। यदि हम प्रबंधन के इतिहास का समयानुसार अध्ययन करते हैं, तो हम पाते हैं कि प्रबंधन की विचारधारा का उद्गम एवं विकास व्यवसाय के उद्भम एवं विकास के साथ–साथ हुआ।

आधुनिक प्रबंधन अभ्यास और सिद्धांतों का विकास विगत् 150 वर्षो के दौरान हुआ। जब पश्चिमी देशों में औद्योगिक संगठनों का उदय हुआ। सामान्य अर्थो में प्रबंधन ज्ञान की वह शाखा है, जो व्यवसाय में आने वाली विभिन्न जटिल परिस्थितियों से कैसे निपटा जाए, इसका अध्ययन करती है।

जहॉ तक भारतीय प्रबंधन की महत्ता का प्रश्न है, वह अपने आप में वृहद है क्योंकि प्रबंधन में कर्त्तव्या एवं व्यवस्था भी आती है इसके अंतर्गत लोगों के हित संरक्षण एवं सामाजिक व्यवस्था भी आती है इसके अंतर्गत लोगों के हित संरक्षण एवं सामाजिक व्यवस्था आती है।

प्रबंधन से लोक जीवन प्रभावित होता है। लौकिक उत्थान तथा आदर्श सामाजिक संरचना के लिये प्रबंधन अति आवश्यक है। प्राचीन भारत के विभिन्न कालो में राज्य शासको द्वारा प्रबंधन अपनाया गया। उनके आधार पर किसी शासक का समकालीन और परिवर्तित युगों में आकलन होता रहा है।

प्रबंध के बारे में ऋग्वेद और अथर्वेद में बहुत कुछ कहा गया है। वहां पर राजा की नियुक्ति से लेकर सिंहासनच्युत भी किया जा सकता था। कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्राचीन भारत प्रबंधन पर प्रकाश डालता है कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र राज्य की उत्पत्ति, सामाजिक समझौता, राजा का निर्वाचन, सैनिकों का संगठन तथा नेतृत्व के बारे में विस्तृत अवधारणा को बताते हुए कहा कि नेता (राजा) स्थानीय होना चाहिये। नेता को निरंकुश एवं स्वेच्छाचार होने से बचाने के लिए उस पर धर्म शिक्षा जनमत और अमात्य तथा गुरूजनों का नियंत्रण रखा गया। इसके अंतर्गत प्रगतिशील अर्थव्यवस्था के संकेत मिलते हैं, जो कि एक सुदृढ़ प्रबंधन से हो संभव है।

वाल्मीकि रामायण से भी प्रबंधन व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। इसके अंतर्गत राज्य की उत्पत्ति (नियोजन), गुप्तचर व्यवस्था, सैन्य संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय संपर्क सिद्धांत एवं युद्ध संबंधी विचारों को प्रतिपादित किया गया है। अयोध्याकाण्ड में वर्णन आया है कि राम आय प्राप्ति के उपायों एवं व्यय कर्म के लिये प्रबंधन करते थे।

महाभारत में कहा गया है कि यदि राजा प्रजा का पालन एवं रक्षण सही प्रकार से करता है, तो परिस्थितियां अनुकूल बन जाती है, अत: इस प्रकार का प्रबंधन संबंधी गुण राजा में होना चाहिए व्यवस्थित प्रबंधन से राजा एवं प्रजा के मध्य सौहार्दपूर्ण सामंजस्य स्थापित होता है, जिससे शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त इसी ग्रंथ में भी एक उल्लेख मिलता है कि कैसे भीष्म ने युधिष्ठिर के पूछने पर उत्तर दिया था कि एक नेता को प्रबंध करते समय अपना शरीर (स्वंय) मंत्री (आसपास कार्य करने वाले व्यक्ति) कोश (वित्तीय स्थिति) दण्ड (वेतन में वृद्धि न करना एवं पदोन्नत न करना) मित्र (सहायक) राष्ट्र एवं नगर (व्यवस्था क्षेत्र) ये करे उस राज्य (व्यवसाय) का प्रबंधन सुचारू रूप से होगा। मनुस्मृति में कहा गया है कि राजा का प्रमुख कर्तव्य प्रजारक्षण है, प्रजा की रक्षा तभी हो सकती है जब राजा को कर वसूल करने का अधिकार प्राप्त होता है, राजा कर सही रूप से तब वसूलकर सकता है। जब वह प्रबंध कार्यो के अंतर्गत, कृषि विकास, व्यापार एवं अन्य राज्यों से संबंध एवं संधि इत्यादि शामिल हैं। मनुस्मृति में राजा की उन्नति केवल सुवर्ण एवं भूमि लाभ प्राप्ति से भर नहीं है बल्कि इसके लिये यह आवश्यक है कि राजा एक अच्छा प्रबंधक हो मनु यह परामर्श भी देते हैं कि आसपास के राज्यों की स्थिति उनके अनुराग, अपराग, सामर्थ्य और असामर्थ्य व उनके पारस्परिक व्यवहार का चिंतन एक अच्छा प्रबंधक कर सकता है। इसके अलावा वह शत्रु मित्र व उदासीन राजाओं के कार्यो के गुण दोषों को तथा वर्तमान, भूत एवं भविष्य में इनसे होने वाले लाभ हानि का भी प्रबंधन करे इस तरह से वह पूर्वानुमान कर प्रबंधन कर सकता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में भी प्रबंधन के बारे में कहा गया कि राजा को अपने संगठन पर ध्यान देना चाहिए। इस स्मृति में राज्य के सात अंगों को महत्वपूर्ण माना गया। एक सुचारू प्रबंधन व्यवस्था के लिये राजा को कोष का संग्रह अवश्य करना चाहिए किंतु न्यायोचित रूप से इस ग्रंथों के अनुसार राजा जो भी राष्ट्र की आय (प्रजा की आय) का छठा भाग कर के रूप में वसूल कर सकता था। इससे अतिरिक्त आय को अधिक तथा व्यय को कम रखना भी वर्णित किया गया है।

भारतीय अर्थव्यवस्था प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों से धनी राष्ट्र

---

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य एवं प्रबंध) अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

की श्रेणी में आता है। देश में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से समाजवादी समाज की रचना की जा रही है। आर्थिक विकास शीघ्र एवं स्थायी करने के लिए आधारभूत एवं भारी उद्योगों की स्थापना की गई। हरित क्रांति के क्षेत्र में विस्तार करने के लिए कई कृषि कार्यक्रमों की शुरूआत की गई। नये कल्प में प्रबंधन की शैली व कला भी तेजी से बदल रही है। आज के उत्पाती दौर एवं उग्र समय में प्रबंधकों के समक्ष नई मांगो, नई अपेक्षाओं के साथ-साथ नई योग्यताओं एवं नये कौशल की आवश्यकता उत्पन्न कर दी है।

ऐसे वैश्विक बदलावों के युग में प्रबंधकों ने समस्याओं के नये एवं सृजनात्मक समाधान खोजने शुरू कर दिए है। चाहे वो हमारी प्राचीन परम्पराओं में चाहे वो हमारे इतिहास में या हमारे प्राचीन ग्रन्थों में। दलीय भावना, सहयोग, सहभागिता, ज्ञान पारित, अर्न्तव्यवहार एवं विनिमय प्रबंधकला के ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत बन गए है। जिनके द्वारा ही संगठनात्मक व्यवहार का निष्पादन किया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 प्राचीन संस्कृत वाड्मय में राजधर्म का स्वरूप भाग-एक डा. केदार शर्मा, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय जयपुर।
2 प्राचीन संस्कृत वाड्मय में राजधर्म का स्वरूप भाग-दो डा. केदार शर्मा, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय जयपुर।
3 यज्ञवल्क्य स्मृति- डॉ. उमेशचन्द्र पाण्डे, चौखम्बा संस्कृत संस्थान।
4 व्यावसायिक प्रबंध के सिद्धांत- आर.सी. अग्रवाल साहित्य भवन।
5 प्रबंध अवधारणा- जी.एस. सुधा एवं डॉ. उमेश होलानी रमेश बुक डिपो, जयपुर।

****

Solid Waste Management & Its Impacts : A Case of Gwalior Municipal Corporation

Sunil Sharma * **Dr. Kamlesh Kumar Shrivastava** **

Introduction - Gwalior Municipal Corporation is the oldest municipal corporation of Madhya-Pradesh state. It was established on 6 June in 1887 by the Council of Regency for the responsibility of civic infrastructure and administration of Gwalior city. Primarily, it was established for infrastructural development and administration of Gwalior city. In 1904, the local government was assigned to general functions of local self-government like city-planning, water supply and sanitation etc. Under the , later reforms of as after the implementation of Municipal corporation Act in 2013, now, elected governing body came into existence and Maharaja MadhavRao Sicndia left the chairmanship of this corporation. Important amendments were made from time to time in 1936 and 1954. In 1956 , major reforms came into existence, as the process of reorganization of Indian states, new Madhya-Pradesh state came into existence and only two municipal corporation were given status of municipal corporation -Gwalior and Indore. Now ,the modern Municipal corporation as elected member 's body came into existence and more responsibilities were assigned to perform. First time in 1994, full flash direct elections were held for 60 ward members and a chairperson. At present, Gwalior municipal corporation has 69 ward members and 1 Mayer.

This paper is specially a part of research of Gwalior municipal corporation which is conducting for four selected problems of urbanization- i) Water supply, ii) Solid Waste Management iii) Drainage System and iv) Urban Transportation in Gwalior City. Thus in this paper, the problem of solid waste management is taken for this particular analysis .

The problem of solid waste management is the most important problem of Urbanization. It has very large and intensive economic and other multifold effects. It is directly and indirectly associated with the income and efficiency of individual as well as society which leads to the productivity and economic growth.

Objectives - Although the major objective of this study is confined to the problem and remedies of solid waste management in Gwalior city only, but some specific objectives are also determined for the study. These are as-

1. To study the status of prevailing solid waste management system in Gwalior city.
2. To study the structure and working of the solid waste management system in the city.
3. To study the solid waste collection method in this city.
4. To study the disposal method of solid waste in this city.
5. To study the role of Gwalior Municipal corporation in solid waste management system in Gwalior city.
6. To study the financial aspects in solid waste management system in Gwalior city.
7. To study the means of collection of solid waste from households and others solid wastes producers in the city.
8. To analyze the problems of present solid waste management system in Gwalior city.
9. Finally , on the basuis of results and findings of the study, an attempt will be made to suggest a policy framework for improvement in the present operating solid waste management system in Gwalior city.

Research Methodology & Data - This paper is based on secondary data which are collected from secondary published sources. The duration of the study is confined to five year only from 2007-08 to 2011-12 .The analysis and discussions are related to only four selected variables i) means of solid waste transportation ii) production of solid waste within the jurisdiction of Gwalior municipal corporation iii) disposal of produced solid waste and iv) Gap ratio between production and disposal of. solid waste. Thus this study deals a comprehensive informatics with reference to solid waste management system in Gwalior City.

Importance of a good solid waste management system - A good system of solid waste management leads to rapid economic growth. It increases income of the citizens and reduce poverty. The fact is that if a city is clean, it is free from dirtiness. Dirtiness leads to illness and illness leads expend on medical care. This again leads to reduction in the expenditure on food. It again leads to weak health. Weak health reduce efficiency to work. This again leads to low productivity. Low productivity means low payment to factor of production . Low payment to factor of production means low income. Low income means low availability of food. Low availability of food means weak health. In this way the cycle goes on.So, It is do clear that an efficient solid waste

---

*Research Scholar, School of studies in Economics, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Professor (Economics) Vijaya Raje Scindia Govt. Girls Post-Graduate College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

management system is key driver of economic growth.

As environmental issues, untreated solid waste resulted in ground water pollution, air pollution, emissions of greenhouse gases, harmful effects of mosquitoes, flies, animals, rats, soil pollution and health related problems are major issues related to solid waste management.

Main problem & Discussions - According to 2011 Census , 212,73,792 people are living in the jurisdiction of Gwalior Municipal Corporation which is 62.69 percent of total population of Gwalior district. There has been seen a rapid urbanization trend in Gwalior. The share of urban population of Gwalior district (62.69%) is two times more than the share of urban population at state level (27.60 percent.) the trend of rapid urbanization is becoming the greatest challenge to our city planner and policy makers. Gwalior district administration and Gwalior Municipal corporation is constantly making their best efforts to meet the problems arising from increase in urban population in Gwalior district. But all efforts are legging and proving short before these challenges of basic urban amenities.

As the special case of solid waste management in Gwalior city, most of civilians are aware about proper solid waste management which they generated in their daily life. Large part of solid waste is generated by households. Hotels, restaurants, hospitals and private nursing homes are also major generators of solid waste .

Present System Of Solid Waste Management In Gwalior City - According to the pre-said duration of research, within 60 wards of Gwalior Municipal Corporation, all best efforts were made by Gwalior Municipal Corporation for proper disposal of solid waste generated by all components of society. A good practice was introduced with the assistance of ADB as door to door collection of solid waste from households, restaurants, hospitals and nursing homes. In this system of solid waste management, for residents of 60 as estimated 1,47,189 families in 2011, 285 tons of solid waste was generated per day. For the collection and disposal of this solid waste, 325 dustbins , 23 trolleys and 15 dumpers were engaged. The collection of solid waste was divided in two categories. Fist was fixed collection by placed bins and second was by movable transport mechanism. 14 locations were identified for fixed collection of solid waste out of them Railway station, city Center , Morar Girls college , DD Nagar, Bijali Ghar, Lakshi Bai colony and Maheshwary Nurshing home are some important spots where big dustbins were put to collect solid waste which was generated nearby the localities. But, according to available data generation, collection & disposal of solid waste in Gwalior city, a major gap is seen. As reported, as an average 200 tons solid waste was collected out of 285 tons by the mechanism. This shows 30 percent gap between solid waste generated & collected.

Due to presence of air station in Gwalior city, Meanwhile,for municipal solid waste treatment and processing plant was established at Kedarpur Gram by M/ s AKC Developers . This unit had 25 tons solid waste treatment capacity per day. For the coverage of whole system of solid waste management in Gwalior city, three tier system is prevailing for this purpose. Municipal system, private residency system and individual system.But, in fact, the status of solid waste management has drastically improved during this study period.

Findings and Conclusion :

1. Gwalior Municipal corporation has a well developed solid waste management system.
2. Citizens residing in Gwalior Municipal jurisdiction , are very aware about solid waste management and are cooperative in solving this problem.
3. Within financial limits, all possible efforts have been made by Gwalior administration as well as by Gwalior Municipal corporation for solid waste management in the city .
4. A remarkable work has been done to make the city clean and green.
5. It is true that Gwalior Municipal corporation has developed infrastructure well enough, but it not still sufficient according to the rapid urbanization and volume of generated solid waste in the city.
6. A more rational and scientific is needed to get full success in Swacch Bharat Mission.

Way forward - Sufficient infrastructural development is the most important for full management solid waste in Gwalior city. For this, it is also required to enhance finance for municipal Corporation to meet its growing expenditure . Augmentation of Capacity for collection and disposal of solid waste is earliest need to combat the problem. To filling the gap between solid waste generated, collected and disposed , only is to adopt public –private partnership model.

References :-

1. Nayak, P.R. (1962) : 'The Challenge of Urban Growth to Indian Local Government' in Turner (ed.) India's Urban Future, University of California Press, Berkley.
2. Vaidya, C. (2006), "Successful Municipal Resource Mobilization in Indore" in India Infrastructure Report 2006, 3-I Network, 2006.
3. Faster, Sustainable and More Inclusive Growth, An Approach to Twelth five Year Plan', Government of India, Planning Commission, New Delhi (2011).
4. Inclusive Urban Planning in Madhya Pradesh, Urban Administration and Development Department, Govt. of M.P.
5. Report on Indian Urban Infrastructure and Services, The High Powered Expert Committee (HPEC) for Estimating the Investment Requirements for Urban Infrastructure Services, Chairperson, Dr. Isher Judge Ahluwalia, Chairperson, Indian Council for Research on International Economic Relations.
6. Report On Status Of Municipal Solid Waste Management In Gwalior City. (2011) Central Pollution Control Board, Central Zone Bhopal, Publication 2011.
7. Urban Reforms in Madhya Pradesh (2012) Urban administration & Development Department Government of Madhya Pradesh.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Micro-Finance For Rural Entrepreneurship Development & Rural Industrialization

Nisar Ahmad Wani * **Dr. Pavan Kumar Shrivastava** **

Introduction - The microfinance program is believed to connect rural micro-enterprises with formal financial systems and has been emerged as an effective tool to solve poverty and unemployment problems in rural areas. To what extent Microfinance Institutions (MFIs) help in enhancing income of rural micro entrepreneurs? Microfinance recognizes that poor people are remarkable reservoirs of energy and knowledge. And while the lack of financial is not just a sign of poverty, today it is looked as an untapped opportunity to create markets, bring people in form the margins and give them the tools to help themselves. "-Kofi Annan (Sec.General of UN). "The poor stay poor,not because they are lazy but because they have no access to capital."-Laureate Milton Friedman.

The difference between rural and urban entrepreneur is only a matter of degree rather than the content. Many successful entrepreneurs are prospering in the cities who are hailing from rural areas. It is essential to have a balanced regional development of the country and to avoid the concentration of industry in one place. Rural areas must try for better utilization of human resources to improve the rural economy. Government has moral responsibility in designing, promoting, innovating rural entrepreneurial development Programme for the up-liftment of the rural economy on which the urban economy is built upon. The promotion of rural entrepreneurship is vital in the context of generating gainful employment and minimizing the widening of disparities between rural and urban population. For reducing poverty and to overcome low productivity in the farm sector rural entrepreneurship is necessary. The Rural entrepreneurs want to earn more income, but most of them are not aware of innovative ways of selling their ideas and services to customers in a productive way.

Rural Industrialization - The industrial unit organized in the rural areas is known as rural industries. Khadi and village industries, handlooms, handicrafts, sericulture, Coir, agro-based units,service industries, rural workshops, metal-based industries, dairy and related activities, etc are the various examples of rural industries. The scale of operation, the level of technology, the types of raw materials to be used and the size of investment mainly determine whether the venture would fall within the definition or rural industries. Essentially the investment needed should be small; the technology to be applied should be simple and within the reach of the villager and it should be capable of yielding reasonably quick returns. Further, the raw materials to be utilized should be available locally and the goods produced should generally be opening popular use in the rural areas. Some agro-based manufacturing processes operating even on a bigger scale can successfully be managed by the rural entrepreneur. The fruits and vegetable processing industry is a good example of this type. House wives in rural areas have been drying up vegetables, preparing pickles, jams, sauces etc., in rich verities for family use during lean periods. These skills, though slightly dormant and in disuse, are still in existence, all over the countryside. In addition, some rural industrial units providing various services like tailoring, laundry, blacksmith, carpentry, goldsmith etc. have been in existence since almost the dawn of civilization. Mining and quarrying on a modest scale has been going on in the rural areas for centuries. Lime manufacturing, stone crushing and pulverizing, sand collecting, washing and grading of blocks, slabs and chips making, brick and tile manufacturing of glassware, bangles and beads constitute some of these activities. Rural industries, services and enterprises constitute the non-farm sector. The appropriate strategy for the developing countries to follow now should be the expansion of rural industries, services etc. These would not only diversify the rural economy, but also help in the further development of agriculture. These would provide inputs to agriculture as well as process large varieties of agricultural produce. Rural industries, services etc. will open out new opportunities for gainful employment, particularly to the under-employed during lean periods, when there are no agricultural operations. Rural Industrialization is important for creating employment opportunities, raising rural incomes and strengthening agriculture-industry linkages. Thus far, it has been pursued by a multiplicity of government agencies. However, the impact of these programs

---

*Research Scholar (Economics) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Asst. Professor (Economics) Govt. P.G. College, Shivpuri (M.P.) INDIA

at the grass roots level has remained modest. We must integrate the efforts of the various government agencies and ensure active community participation. However it is necessary to set up at least 100 rural clusters every year to give a boost to rural industrialization. This is being done for the benefit of rural artisans and unemployed youth. In the long run, it will definitely reduce rural urban disparities. The setting up of rural industrial units is primarily the concern of private entrepreneurs. However, the Central Government has formulated many schemes for the development and promotion of such units throughout the country.

Microfinance - Micro-Finance is changing the lives of the rural people, re-energizing the poor community; particularly the most oppressed, suppressed and neglected community of the rural society. The access to credit as well as extending other financial products and services to these people of low income group below poverty line includes women, small marginal farmers, artisans, tenant's agricultural labourers and share croppers. Present global financial crisis is not likely to impact small and micro enterprises and hence it is better for banks to focus on micro-finance. Rural Poor are the most disadvantaged in terms of access to credit through formal sources. Lack of access to the credit has always been a major hindrance in promoting micro-enterprises. In India, the need for micro-finance is higher as the demand for credit to start microenterprises by the poor people could not be met by the institutional initiatives of rural finance up to large scale. In many developing countries micro-enterprise in its various forms are the major sources of livelihood in rural as well as urban areas. It contributes to a large proportion of employment generation in developing as well as developed countries.

Need Of Micro-Finance For Rural Industrialization And Rural Entrepreneurship Development - The strategy for poverty reduction accelerate the rapid economic growth with a focus on microfinance, access to basic minimum services for improving the quality of life of poorest of poor; and direct state intervention in the form of targeted antipoverty programmes. Rural development is primarily oncerned with addressing the needs of the rural poor in the matter of sustainable economic activities. Alleviation of rural poverty can be achieved by identifying income-generating activities with focus on micro finance as the basic input for socio-economic development. Role of micro finance in eradication of poverty was stressed by the United Nations in its Economic and Social Council meet. Micro credit emphasizes building capacity of a micro entrepreneur, employment generation, trust building and help to the 'micro entrepreneur' at initiation and during difficult times. Micro credits are enough for innovative and hard working micro entrepreneurs to start small business such as making handicraft items. From the income of these small businesses the borrowers of micro credit can enjoy better life, food, shelter, health care and education for their families and above all these small earnings will provide a hope for better future. In rural areas the micro entrepreneurs continue to produce the traditional designs for local markets produce a large variety of essential products such as milk, food products, village crafts and homemade snack foods. Many are engaged in retail trading of groceries and textiles. These enterprises represent a substantial supply resource for semi urban and urban markets. Micro credit is emerging as a powerful instrument for poverty alleviation in the new economy. It is a powerful instrument and has improved access of rural poor. In order to enhance rural artisan's access to credit for consumption and production, the establishment of new and strengthening of existing micro-credit mechanisms and micro-finance institution will be undertaken so that the outreach of credit is enhanced. The Micro- Credit revolution has providing them increased selfemployment opportunities and making them credit worthy. There is now mounting hope that micro finance can be a large scale poverty alleviation tool which can uplift the standard of living of the rural poor. The success of the Micro-Credit programme would change the future of rural India.

Conclusions - In the above discussion it is clear that microfinance has an important role to play in rural industrialization and development of entrepreneurship among the rural people. Both micro-finance as well as micro-enterprise has the common objective of poverty alleviation and creation of employment opportunities for the rural poor and therefore there is a need for both of them to come together and act for the larger objective of poverty alleviation. Rural industrial development is a self reliant development strategy but it need to be supported by enabling environment and proper infrastructure support. For creation of enabling environment there is need for government and non government entities to work together. Then only these enterprises can grow and contribute efficiently towards the larger objective of poverty alleviation.

References :-

1. Animesh Banerjee - Micro-financing: A tool for grass root development.
2. Taori, K., Singh, S.-Rural Industrialization:a plan for the future.
3. Nisha Bharti & H.S. Shylendra - Microfinance and Sustainable Micro-entrepreneurship Development-Institute of Rural Management, Anand, Gujarat
4. K. Sateesh Reddy – Multy Faceted Rural Development – Prominent Publishers and Distributors, New Delhi.
5. K. V. Patel – Rural Economics – Himalaya Publishing House, Bombay.
6. N. K.Thingalaya – Rural India – Real India – Himalaya Publishing House, Bombay.

****

जनजातीय परिवारों पर समाज विकास योजनाओं के प्रभाव का एक अध्ययन (बड़वानी जिले की वरला तहसील के संदर्भ में)

डॉ. प्रकाशचंद्र रांका * हिरालाल खर्ते **

शोध सारांश – परिवर्तन प्रकृति का नियम है। भूमण्डल पर स्थित प्रत्येक वस्तु चाहे वह भौतिक हो या अभौतिक परिवर्तन के इस चक्र से अछूता नहीं रहा है। इस अर्थ में परिवर्तन एक अवश्यभावी है। इसी प्रकार समाज व्यवस्था में भी परिवर्तन सदैव विद्यमान रहा है। सामाजिक परिवर्तन की यह सार्वभौमिक प्रकृति संसार के सैकड़ों सभ्यताओं के उत्थान–पतन की कहानी इतिहास के रूप में मानव के समक्ष प्रस्तुत करती है। आधुनिक एवं सभ्य समाज में निरन्तरित परिवर्तन की प्रवाह में सामंजस्य स्थापित करने में देश का एक बहुत बड़ा वर्ग मीलों दूर है। यह वर्ग हमारे समाज के जनजातीय लोग है, जो सदियों से शोषण के दमनचक्र से जूझते हुए अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है। विकास की परिभाषा से अनभिज्ञ यह जनजाति समाज अपने आप को सभ्य समाज की तुलना में अत्यन्त दीन–हीन महसूस करता है। जनजातीय समुदाय का एक बहुत बड़ा भाग विपन्नता से ग्रसित शोषित वर्ग है, जो अपनी जीविकोपार्जन, श्रम के विनिमय से प्राप्त पारिश्रमिक के आधार पर करता है। यद्यपि इन जनजातीय समुदाय का रहन–सहन स्तर एवं आर्थिक संरचना सदियों से प्रकृति से जुड़ा हुआ है। वनों एवं प्रकृति पर अपना जन्मसिद्ध अधिकार वाली इन जनजातियों के जीविकोपार्जन के साधनों पर बाहरी व्यक्तियों एवं शासन के हस्तक्षेप बढ़ने से उनके सामने अनेक कठिनाईयाँ उत्पन्न हो गई है। जनजातीय परिवारों के सरल स्वभाव एवं उदार प्रकृति का अनुचित लाभ अन्य समुदाय के लोगों द्वारा लेने से धीरे–धीरे ये शोषण के शिकार हुए। दिन–रात कठोर परिश्रम करने एवं उसके एवज में कम से कम मूल्य (पारिश्रमिक) प्राप्त करने हेतु उन्हें बाध्य किया जाता है। संभवत: यही जनजातीय लोगों के जीवन की कहानी है।

प्रस्तावना –प्रकृति की गोद में पल रहे इन धरती पुत्रों (जनजातीय लोगों) के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के लिए हमारा शासन तंत्र प्रतिबद्ध है। उनके उत्थान के लिए शासन निरन्तर प्रयत्नशील है। देश स्वतन्त्र होने के पश्चात विभिन्न विकास योजनाओं के माध्यम से जनजातियों के आर्थिक सामाजिक विकास हेतु महत्वपूर्ण पहल की गई। सैकड़ों विकास योजनाएं क्रियान्वित की गई ताकि सुनियोजित ढंग से आर्थिक उत्थान संभव हो, इस पर विशेष जोर दिया गया। यद्यपि शासन द्वारा संचालित इन विकास योजनाओं पर अरबों रूपये व्यय किए गए। जिससे कि देश में सामाजिक–आर्थिक विकास के मार्ग प्रशस्त हो, देश में आधारभूत संरचनाओं की अभिवृद्धि दृष्टिगत हो। परन्तु यह प्रश्न अभी भी विचारणीय है कि जिस गति से विकास होना था, जनजातियों के जीवन में परिवर्तन होना चाहिए था, उनकी आर्थिक स्थिति सुधरनी थी तदनुरूप नहीं हो सका। समाज विकास योजनाओं का पूर्ण लाभ जनजातीय परिवारों को नहीं मिलने का मुख्य कारण शासन द्वारा विकास योजनाओं का क्रियान्वयन उचित ढंग से न होना, जनजातियों में अशिक्षा, अज्ञानता, विकास कार्यक्रम की ग्रहण क्षमता का अभाव, प्रशासनिक/वित्तीय कठिनाईयों आदि को उत्तरदायी माना जा सकता है। यद्यपि जनजातीय समुदाय की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक धार्मिक तथा नैतिक समस्याएँ भी इन योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु बाध्य करती है, लेकिन इन समस्याओं के निराकरण में विकास योजना के क्रियान्वयन में कमी एवं समायोजन का ही महत्वपूर्ण कारण माना जा सकता है। भारतीय समाज के विकास की दौड़ में इन जनजातीय परिवारों को सम्मिलित करने एवं उन्हें राष्ट्रीय मुख्य धारा से जोड़ने के लिए उनकी वर्तमान आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का अध्ययन किया जाना आवश्यक है। क्योंकि वैज्ञानिक अध्ययन के द्वारा ही जनजातियों की समस्याओं का समाधान संभव हो सकता है।

जनजाति का अर्थ एवं परिभाषा – भारत के पर्वतीय एवं वन्य क्षेत्र में अनेक ऐसे मानव समूह निवास करते हैं, जो कि मानव सभ्यता के विकास की दृष्टि से प्रारंभिक सोपानों से आगे नहीं बढ़ पाए हैं, इन्हें आदिवासी, आदिमवासी, कबोली आदि नामों से संबोधित किया जाता है। आदिवासी कबीली आबादी एवं जनजाती अंग्रेजी भाषा एवोरीजल, नैटिक एवं ट्राइबल्स के पर्याय है। भारतीय संविधान में आने के बाद अनुसूचित जनजाति शब्द का प्रचलन बढ़ा है। यह भारतीय संविधान में स्वीकृत शब्द है। अनुसूचित जनजातियों में कई बार वनवासी शब्द का भी प्रयोग मिल जाता है। आदिवासी या जनजाती शब्द की समाजशास्त्रीय एवं मानवशास्त्रीय व्याख्या अनेक विद्वानों ने की है।

जनजाति को परिभाषित करते हुए **गिलिन एवं गिलिन** लिखते है 'स्थानीय आदिम समूहों के किसी भी संग्रह को, जो कि एक सामान्य क्षेत्र में रहता है। एक सामान्य भाषा बोलता है और एक सामान्य संस्कृति का अनुसरण करता है। एक जनजाति कहते हैं।'

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार 'जनजाति विकास के आदिम अथवा बर्बर आचरण में लोगों का एक समूह है जो एक मुखिया की सत्ता स्वीकारते हो तथा साधारणतया अपना एक समान पूर्वज मानते हो।'

संबंधित साहित्य समीक्षा –

वैद्य नरेश कुमार (2003) – 'जनजातीय विकास पृथक एवं यथार्थ' में बताया कि जनजातीय विकास के नाम पर सरकार ने सड़कें बनवाई। विकास

---

* विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

की इन सड़कों ने शोषण के सभी दरवाजे खोल दिये। जिसके माध्यम से सरकारी अफसर, जंगलात के ठेकेदार एवं सूदखोर महाजनों ने जनजातीय संसाधनों को समेटे व वन नीति में फेरबदल कर उनके अधिकारों से बेदखलकर जनजातीय का शोषण करने लगे।

आहूजा राम (2012) – 'भारतीय समाज में आदिवासी परिवर्तन का अर्थ आदिवासी कल्याण या आदिवासी विकास है। आदिवासियों के पुनर्वास और विकास लिए भारत में लागू किए गए सरकारी कार्यक्रम अपने लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सके हैं तथा स्वतंत्रता के बाद से ही आदिवासी सर्वहारावाद कायम रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. समाज विकास योजनाओं का जनजातीय परिवारों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
2. जनजातीय क्षेत्र में संचालित समाज विकास योजनाओं की स्थिति का मूल्यांकन करना।
3. समाज विकास योजनाओं के संबंध में आने वाली समस्या हेतु उचित सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन विधि – सामाजिक शोध को वैज्ञानिक स्वरूप देने के लिए वैज्ञानिक विधि का उपयोग करना आवश्यक होता है। अध्ययन को सुव्यवस्थित रूप से पूरा करने के लिए अध्ययन के पूर्व क्रमबद्ध रूप रेखा तैयार कर लेना चाहिए। प्रस्तुत शोध पत्र के लिए प्राथमिक समंको का उपयोग किया गया है, जिसमें प्रश्नावली के माध्यम से शोध क्षेत्र वरला तहसील के 75 जनजातीय परिवारो का चयन किया गया है। चयनित 75 जनजातीय परिवारों का साक्षात्कार लेकर संमकों का संकलन किया गया है।

संकलित संमकों का सारणीकरण एवं विश्लेषण

सारणी क्रं. 1

योजना की जानकारी के स्त्रोत से संबंधित

जानकारी के स्त्रोत	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
मित्र	14	18.66
रिश्तेदार	07	9.33
ग्रामवासी	17	22.66
सरकारी कर्मचारी	12	16
लागू नहीं	25	33.33
योग	**75**	**100.00**

स्त्रोत – सर्वेक्षित आंकड़े।

उपरोक्त तालिका क्रमांक–1 में योजना की जानकारी से संबंधित चरों के अनुसार वर्गीकरण किया गया है,जिसमें मित्र से 18.66 प्रतिशत, रिश्तेदारों से 9.33 प्रतिशत, ग्रामवासीयों से 22.66 प्रतिशत, सरकारी कर्मचारी से 16 प्रतिशत एवं योजना लागू नहीं 33.33 प्रतिशत होता है कि सर्वाधिक 33.33 प्रतिशत जनजातीय परिवारों को योजना की जानकारी ही नहीं है।

सारणी क्रं.–2

क्षेत्र में कार्यरत योजनाओं की जानकारी से संबंधित

संचालित योजनाएँ	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
मुख्यमंत्री मजदूर सुरक्षा योजना	04	5.33
जनश्री बीमा योजना	09	12.00
प्रधानमंत्री ग्राम सडक योजना	15	20
इंदिरा आवास योजना	22	29.33
सामाजिक सुरक्षा योजना	07	9.33
मुख्यमंत्री अन्त्योदय आवास योजना	18	24.00
योग	**75**	**100.00**

स्त्रोत – सर्वेक्षित आंकड़े ।

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 2 में क्षेत्र कार्यरत योजनाओं से समंको का विश्लेषण किया गया है। जिसमें मुख्यमंत्री मजदूर सुरक्षा योजना 5.33 प्रतिशत, जनश्री बीमा योजना 12 प्रतिक्षत, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना 20 प्रतिशत, इंदिरा आवास योजना 29.33 प्रतिशत सामाजिक सुरक्षा योजना 9.33 प्रतिशत एवं मुख्यमंत्री अन्त्योदय आवास योजना 24 प्रतिशत उत्तरदाताओं में योजना की जानकारी दिए। अतः तालिका का पूर्ण विश्लेषण पर यह ज्ञात होता है कि आवास संबंधित योजना ज्यादा संचालित है, जिसमें सबसे अधिक 29.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महत्व दिया।

सारणी क्रं.–3

योजनाओं के प्रति धारणा से संबंधित

धारणा	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
बहुत अच्छी	14	18.66
अच्छी	18	24.00
तटस्थ	28	37.33
खराब	06	08.00
बहुत खराब	09	12.00
योग	75	100.00

स्त्रोत – सर्वेक्षित आंकडे।

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 3 में उत्तरदाताओं की योजना के प्रति धारणा से संबंधित समंको का विश्लेषण किया गया है। जिसमें योजनाऐं बहुत अच्छी 18.66 प्रतिशत, अच्छी 24 प्रतिशत, तटस्थ 37.33 प्रतिशत, खराब 8 प्रतिशत एवं बहुत खराब 12 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपनी रूचि जाहिर की। अतः योजनाओं के प्रति उत्तरदाताओं की तटस्थ रूचि सबसे अधिक 37.33 प्रतिशत रहीं।

सारणी क्रं. – 04

सरकारी योजनाओं का लाभ न मिलने के कारण से संबंधित

कारण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
राजनैतिक भ्रष्टाचार	13	17.33
प्रशासनिक भ्रष्टाचार	11	14.66
योजना प्रभावी वर्ग तक सीमित	10	13.33
प्रशासनिक अड़चने	08	10.66
अज्ञानता एवं निरक्षरता	12	16.00
लागू नहीं	21	28.00
योग	75	100.00

स्त्रोत – सर्वेक्षित आंकड़े।

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 04 में सरकारी योजनाओं का लाभ न मिलने के कारणों से संबंधित समंको का विश्लेषण किया गया है। जिसमें राजनैतिक भ्रष्टाचार 17.33 प्रतिशत, प्रशासनिक भ्रष्टाचार 14.66 प्रतिशत, योजना प्रभावी वर्ग तक सीमित 13.33 प्रतिशत, प्रशासनिक अड़चने 10.66 प्रतिशत, अज्ञानता एवं निरक्षरता 16 प्रतिशत एवं लागू

नहीं 28 प्रतिशत उत्तरदाता है। अत: विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक 28 प्रतिशत लोगों को सरकारी योजना क्षेत्र में संचालित योजनाओं का पता नहीं है।

निष्कर्ष – सामाजिक विकास योजनाओं को समाज के आर्थिक विकास के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। लेकिन अन्तर यह है कि विकास का आशय समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक पहलूओं के सम्पूर्ण विकास से होना चाहिए। इसी तर्क को साकार रूप देने हेतु प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध का सम्पूर्ण अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सरकार जिस उद्देश्य को अपना केन्द्र बिन्दु मानकर योजनाएँ संचालित करती है, वास्तव में वे इसके हकदार है जिसका लाभ उनको मिलना चाहिए। सरकार के द्धारा जो विभिन्न योजनाएं क्रियान्वित हो रही है। उन योजनाओं के माध्यम से लोगों का विकास तो हो रहा है पर उतना नहीं जितना सरकार के आकड़े दर्शाते है। आज वर्तमान में वास्तविक स्थिति को देखे तो यह कहा जा सकता है कि सरकार की योजनाएँ कागजों पर ही चलती हैं। वास्तव में तो उसका उपयोग कोई अन्य वर्ग ही ले लेता है, गरीब वंचित रह जाता है। इसके लिए सरकार को विशेष उपाय करना चाहिए ताकि जनजातीय समाज का हर गरीब व्यक्ति योजनाओं का सीधा लाभ प्राप्त कर सके। इसके लिए योजनाओं का सरकारी दस्तावेजी करण का काम होना चाहिए। योजनाओं का प्रचार-प्रसार व योजनाओं के प्रति जागरूकता के लिए सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं के माध्यम से इसको प्रसारित व संचालित किया जाना चाहिए तभी इन योजनाओं से जनजातीय वर्ग के लोगों का कल्याण होगा।

सुझाव –

1. सरकार द्धारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी सभी जनजातीय समुदाय तक पहुँचायी जानी चाहिए।
2. योजनाओं का प्रचार प्रसार सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्धारा किया जाना जाहिए।
3. ग्रामीण क्षेत्र में ग्राम पंचायत भवन के सामने एक बोर्ड लगाया जाना चाहिए। जिसमें योजनाओं की जानकारी लिखी गई हो।
4. योजना जिसके लिए बनाई गई है, उसका लाभ केवल वे व्यक्ति ले सके ऐसा कानून सरकार को बनाना चाहिए।
5. संचालित योजनाओं की समय-समय पर जाँच होनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **तिवारी शिव कुमार एवं शर्मा श्रीकमल (2009) –** 'मध्यप्रदेश की जनजातियाँ समाज एवं व्यवस्था'' म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, रविद्रनाथ ठाकुर मार्ग, बाणगंगा, भोपाल (म.प्र.) 462003।
2. **हसनैन नदीम (2001) –** 'जनजातीय भारत'' रवि मजूमदार, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली – 110016।
3. **बैद्य नरेश कुमार (2003) –** 'जनजातीय विकास मिथक एवं यथार्थ'' रावत पब्लिकेशन्स सत्यम अपटिमेन्ट्स सेक्टर-3 जवाहर नगर, जयपुर – 302004।
4. **आहुजा राम (2012) –** 'भारतीय समाज ' रावत पब्लिकेशन्स सत्यम अर्पाटमेन्ट्स सेकटर-3, जवाहर नगर, जयपुर – 302004।

****

मध्यप्रदेश की बैगा जनजाति-विकास की समस्याएं और सुझाव

डॉ. महेश कुमार धुर्वे *

प्रस्तावना –भारत जनजातियों का अजायबघर है। जनजाति शब्द अपने आप में असीम अनुपम और अद्‌भुत इतिहास संजोए हुए है। इसका उच्चारण करते ही पुरातन सांस्कृतिक सम्पन्न जनसमूह की एक झलक सामने आ जाती है। जनजातियां अपने आदिकालीन सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विशिष्टता के लिए जाने पहचाने जाते हैं। भारत की विभिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था में जनजातियाँ देश की सांस्कृतिक धरोहर माने जाते हैं। जनजाति इतिहास के पन्नों को पलटने से ज्ञात होता है कि विदेशी शासकों द्वारा अपने स्वार्थपूर्ति के लिए जनजातियों का खूब शोषण किया गया। इनकी सामाजिक सांस्कृतिक विशिष्टता को बनाये रखने के बहाने उन्हें समाज की मुख्य धारा से दूर रखा गया। परिणामस्वरूप यह समुदाय न केवल आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ता गया, बल्कि समाज व राष्ट्र की मुख्य धारा से अलग होता गया। जनजातियों के पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुए,केंद्र व राज्य सरकारों के द्वारा इनके विकास के लिए विभिन्न योजनाएं बनाई व लागू की गई। यहां तक की संविधान में भी इनके विकास के लिए विभिन्न प्रावधान किए गए हैं। विभिन्न विकास कार्यक्रमों के माध्यम से कुछ जनजातियों ने तो अपना विकास किया किन्तु कुछ जनजातियों पर इन विकास कार्यक्रमों का बहुत कम प्रभाव पड़ा। इनमें से प्रमुख है – बैगा जनजाति।बैगा जनजाति विकास कार्यक्रमों से कोसों दूर रहा है। आज भी इनका जीवन आदिकालीन प्रतीत होता है।

बैगा जनजाति–बैगा जनजाति द्रविड़ वर्ग की आदिम जनजाति है। यह जनजाति जंगली व पहाड़ी क्षेत्रों में एकांत में रहना पसंद करते हैं। मध्यप्रदेश के जिन जिलों में यह जनजाति निवास करती है, वहां का प्राकृतिक वातावरण इनके निवास के लिए उपयुक्त वातावरण भी प्रदान करता है। प्रकृति के साथ इनका संबंध इनके प्रकृति प्रेमी होने का प्रमाण भी है। और शायद इसी कारण इन्हें प्रकृति पुत्र भी कहा जाता है। इनके मकान झोपड़ीनुमा होते हैं, मौजूदा दौर में भी इस जनजाति का रहन–सहन, आचार–विचार, खान–पान, व्रत–त्यौहार, संस्कृति– परम्परा वही है जो एक डेढ़ सदी पहले थी। आज हम जिसे सभ्य समाज की संज्ञा देते हैं, उस समाज के आडम्बरों एवं कृत्रिमताओं से अपने आप को अलग रखे हुए हैं। बैगा जनजाति मुख्य रूप से मध्यप्रदेश के मण्डला, बालाघाट, डिण्डौरी, उमरिया, एवं शहडोल जिले के पूर्वी सतपुड़ा पहाड़ियों में पाई जाती है। इनकी जनसंख्या 1911 में लगभग 30000 हजार थी। एवं 2009 में इनकी जनसंख्या लगभग 104587 हो गई है।

म.प्र. में बैगा जनजातिजनसंख्या (सारणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विशेष पिछड़ी जनजाति – बैगा जनजाति को इनके राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक सभी क्षेत्रों में पिछडा होने के कारण भारत सरकार द्वारा सन् 1960–61 में 'विशेष पिछड़ी जनजाति' के रूप में चिन्हित किया गया। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा भी सन् 1976 में इन्हें विशेष पिछड़ी जनजाति का दर्जा दिया गया एवं इनके समग्र विकास के लिए प्रदेश में पृथक से 'बैगा विकास अभिकरण' की स्थापना की गई।

मध्य प्रदेश में बैगा विकास अभिकरण

क्र.	जिला	अभिकरण का नाम	ग्राम संख्या
1	मण्डला	बैगा विकास अभिकरण मण्डला	249
2	डिण्डोरी	बैगा विकास अभिकरण डिण्डोरी	217
3	शहडोल	बैगा विकास अभिकरण शहडोल	238
4	अनुपपुर	बैगा विकास अभिकरण अनुपपुर	
5	उमरिया	बैगा विकास अभिकरण उमरिया	248
6	बालाघाट	बैगा विकास अभिकरण बैहर, बालाघाट	208
		योग	1160

बैगा विकास अभिकरण को जनजाति उपयोजना के अन्तर्गत विशेष केन्द्रीय सहायता प्रदान की जाती है। इनके लिए पृथक–पृथक विभागों को विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में बजट प्रावधान किए जा रहे हैं। वर्तमान में बैगा जनजाति की संस्कृति को बचाये रखने एवं संरक्षण के लिए एवं अन्य समाज के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिए सन् 2015 से प्रतिवर्ष बालाघाट जिले की बैहर तहसील में बैगा ओलंपिक का आयोजन किया जा रहा है। केंद्र एवं मध्यप्रदेश सरकार के द्वारा बैगा जनजाति के समग्र विकास के लिए किए जाने वाले सतत प्रयासों के बावजूद भी इस जनजाति का अपेक्षित विकास नहीं हो पाया। आज भी बैगा जनजाति का विकास एक समस्या बनीं हुई है।

समस्याएँ –विकास की चर्चा आज आम हो गई है। सभी को विकास का बुखार चढ़ा हुआ है। जहाँ तक जनजातीय विकास की बात है, तो यह आरम्भ से ही समस्याग्रस्त रहा है। आजादी के पूर्व जनजातियों की जो समस्याएँ थी, वे आज जस की तस ही नहीं बल्कि अनेक मुखी एवं अनेक स्तरीय हो गई हैं। इनकी समस्याएँ प्राचीन भी हैं एवं अर्वाचीन भी। शायद इसी कारण लोग अब विकास की समस्या को समस्या नही बल्कि 'प्रक्रिया' समझने लगे हैं। बैगा जनजाति वर्ग की समस्याएँ अन्य वर्ग की समस्याओं से काफी भिन्न हैं, जिन्हें निम्नानुसार रखा जा सकता है –

बैगा जनजाति में विस्थापन की समस्या मुख्य रूप से रही है। यह वर्तमान की समस्या नहीं है। पहले सेंट्रल प्रॉविंसेस एण्ड बरार से इन्हें विस्थापित किया गया। तब से लेकर आज तक इनका विस्थापन सतत् रूप से जारी है। विकास एवं औद्योगीकरण के नाम पर बैगा जनजातीय क्षेत्रों का अधिग्रहण कर इन्हें विस्थापित होने के लिए मजबूर किया गया। उनकी जमीन एवं जंगल से बेदखल कर उन्हें भूमि हीन, मजदूर, ठेका श्रमिक आदि से बदल दिया गया है।

बैगा जनजाति के लोग सदियों से वन क्षेत्रों में ऐसे दुर्गम स्थानों पर रहते आ रहे हैं, जो दूर एवं एकांत में हैं, जिसके कारण उनका सम्पर्क समाज की मुख्यधारा से नहीं हो पाता है। आवागमन के साधनों का अभाव भी इन्हें

सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, मलांजखण्ड, जिला - बालाघाट (म.प्र.) भारत

विकसित लोगों के सम्पर्क में आने नहीं देता है। साथ ही जीवन यापन तथा विकास के साधनों की व्यवस्था करने में बड़ी समस्या होती है। बैगा जनजाति क्षेत्रों की भूमि उबड़-खाबड़ पथरीली एवं पहाड़ी है, जिसके कारण इन भूमियों की उत्पादकता कम है। अधिकांश बैगाओं के पास कृषि भूमि नहीं है एवं जिनके पास भूमि है वे भूमि समतलीकरण मेड़-बंधान, जल एवं मिट्टी संरक्षण की व्यवस्था नहीं होने से ये लोग पर्याप्त उत्पादन नहीं कर पाते हैं। इसलिए कृषि विकास नहीं हो पाया है। बैगा लोग बेबर खेती के स्थान पर स्थाई खेती करने लगे हैं, किन्तु गरीबी व अज्ञानता के कारण कृषि के आधुनिक तरीकों का प्रयोग नहीं करते हैं। संयुक्त परिवारों के विघटन होने से भूमि के छोटे-छोटे टुकड़े हो रहे हैं, जिससे पर्याप्त पैदावार नहीं हो पाता है।

बैगा जनजाति में गरीबी एवं बेरोजगारी एक गम्भीर समस्या है। अपने परम्परागत व्यवसायों से जैसे-टोकरी बनाना, चटाई बनाना, बाँस तथा लकड़ी के सामान बनाना आदि से परिवार की आवश्यकताओं को पूरा कर लेते थे, किन्तु आधुनिक प्लास्टिक-पेपर युग ने उनके कुटीर उद्योगों को छीन लिये हैं। जनता द्वारा भी इन वस्तुओं का अधिक उपयोग किया जा रहा है, जिसके कारण इनके सामने बेरोजगारी की नई समस्या उत्पन्न हो गई है। वन बैगा जनजाति के रोजगार का प्रमुख साधन रहा है, जो कि उनकी अर्थव्यवस्था का आधार है, किन्तु वन संबंधी अधिनियम ने इनकी अर्थव्यवस्था के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा उत्पन्न कर दी है। वनों का राष्ट्रीयकरण होने से वनोत्पादों का संग्रहण नहीं कर पा रहे हैं।

शिक्षा के प्रति उदासीनता बैगाओं के विकास के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा के रूप में सामने आयी है। शिक्षा के क्षेत्र में शासन की अनेक योजनाएँ संचालित हैं, फिर भी शिक्षा का प्रकाश इनसे कोसों दूर है। शराब का सेवन बैगाओं में एक प्रमुख समस्या है। परिवार में पुरूष एवं महिला दोनों ही शराब का सेवन करते हैं। इस पर उनकी आय का अधिकांश भाग खर्च ही नहीं होता है, बल्कि उनकी मानसिक व शारीरिक कार्य क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जनजातीय एवं बैगा जनजातीय विकास कार्यक्रमों में हो रहे भ्रष्टाचार भी इनके विकास में बड़ी समस्या है एवं इनके पिछडेप़न के लिए उत्तरदायी कारण भी है। बैगा जनजातीय क्षेत्र अधिकतर जंगलों एवं पहाड़ों में अवस्थित है, जहाँ जाना एवं सम्पर्क स्थापित करना अत्यंत कठिन है। संचार एवं यातायाता की सुविधा के अभाव ने भी इनका विकास रोक रखा है।

सुझाव - बैगा जनजाति की समस्याओं को सम्मुख रखते हुए इनके निराकरण हेतु कुछ समाधानात्मक सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं-बैगा जनजाति के लोग महत्वाकांक्षी प्रवृति के नहीं होते हैं, इनमें धनोपार्जन की इच्छा बहुत कम होती है, ये स्वभावत: संकोची व संतोषी प्रवृति के होते हैं। अत: आवश्यक है कि उनमें उच्च जीवन जीने, उद्यमी प्रवृति का विकास करने एवं व्यावसायिक दृष्टिकोण अपनाने हेतु प्रेरित व जागृत किया जाए। इस हेतु स्वरोजगार के क्षेत्र में संचालित योजनाओं की पूर्ण जानकारी एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों की समुचित व्यवस्था करना चाहिए। बैगा जनजाति समाज की समस्याएँ एक मुखी नहीं है बल्कि अनेक मुखी हैं। समस्या के प्रत्येक स्तर को गम्भीरता पूर्वक समझते हुए, उनके समाधान की रणनीति बनाई जाए।

बैगा जनजाति की समस्याओं के समाधान के लिए इस वर्ग के पढ़े-लिखे लोगों के द्वारा इनके विचारों एवं मनोवृतियों में परिवर्तन लाकर, इनके सामाजिक व्यवस्था को आघात पहुँचाये बिना सामाजिक परिवर्तन हेतु जागरूक किया जाए।

वर्तमान में व्यक्ति एवं समाज के समग्र विकास का आधार शिक्षा है, अत: बैगा जनजाति के समग्र विकास हेतु प्रारम्भिक शिक्षा की अनिवार्यता होनी चाहिए, ताकि इनमें सामान्य बुद्धि के विकास के साथ समाज एवं स्वयं को समझने एवं स्वविकास हेतु निर्णय लेने की क्षमता विकसित हो सके। बैगा जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य संबंधी गम्भीर समस्या है। स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार कर इन्हें इसकी सुविधा उपलब्ध करायी जाए। बैगा जनजाति के विकास हेतु संचालित विभिन्न विकास कार्यक्रमों की उच्च स्तर पर सतत् जाँच व निगरानी कर विकास कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन किया जाना चाहिए, ताकि बैगा जनजाति को योजनाओं का सही लाभ दिलाया जा सके। बैगा जनजाति समाज को अन्य समाज के साथ सामंजस्य स्थापित करने हेतु प्रेरित करना होगा। अत: बैगा बाहुल्य क्षेत्र में विशेष जागरूकता केन्द्र स्थापित कर बैगाओं को आधुनिक समाज से सामंजस्य स्थापित करने योग्य बनाया जाना चाहिए।

शिक्षा के क्षेत्र में किए जाने वाले प्रयासों का उचित प्रबंधन होना चाहिए। छात्रावासों, आश्रमों में सुविधाएँ बढ़ाई जाये तथा सुविधाएँ उच्च गुणवत्तायुक्त होनी चाहिए। विकासात्मक योजनाओं के लाभ प्राप्त करने हेतु बैगाओं से बहुत अधिक कागजी औपचारिकताएँ पूर्ण न कराई जाए। इससे वे आसानी से योजनाओं का लाभ प्राप्त कर विकास के पथ पर अग्रसर हो सकेंगे। बैगा जनजाति समाज को शोषण से मुक्त करने शासन स्तर पर उचित पहल होना चाहिए। समाज सेवकों एवं स्वयं सेवी संस्थाओं को भी इसके लिए आवश्यक सहयोग देना चाहिए। इसके लिए स्वयं सेवी संस्थाओं का विस्तार किया जाना भी उचित होगा। बैगा जनजातीय क्षेत्रों में यातायात व संचार साधनों का विकास किया जाना चाहिए, ताकि बाह्य समाज के सम्पर्क में आने एवं आधुनिकता से परिचित होने से यह समाज विकास के लिए प्रेरित हो सकेगा। विकास कार्यक्रमों से जुड़े व्यक्तियों में नैतिक गुणों का विकास किया जाना चाहिए, ताकि भ्रष्टाचार को नियंत्रित किया जा सके। शासन स्तर पर भी भ्रष्टाचार के विरूद्ध कड़ाई से कदम उठाये जाने चाहिए।

शासकीय योजनाओं के प्रचार-प्रसार से लेकर क्रियान्वयन तक जन प्रतिनिधियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अत: विकास योजनाओं का लाभ दिलाने में प्रत्येक चरण पर इस वर्ग को जनप्रतिनिधियों का सहयोग नितांत आवश्यक है।

बैगा जनजाति के पारम्परिक व्यवसायों को ध्यान में रखते हुए एवं विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप प्राथमिकता के आधार पर उचित योजनाओं का चयन किया जाना चाहिए।बैगा बाहुल्य क्षेत्रों में वन आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना कर अधिक से अधिक बैगाओं को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है। इससे बेरोजगारी की समस्या को दूर तो किया ही जा सकेगा, बैगाओं के परम्परागत व्यवसायों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए एवं इन व्यवसायों में दक्षता सवंर्धन के विशेष कार्यक्रम सतत रूप से चलाए जाने चाहिए।बैगाओं को औषधीय जड़ी-बूटियों का ज्ञान होता है। इनके ज्ञान का उचित प्रबंधन कर खाली पड़े भू:खण्डों पर औषधीय जड़ी-बूटियों की खेती कराई जा सकती है। इससे इन्हें संग्रहक से उत्पादक बनाया जा सकता है, जिससे इनकी आय में वृद्धि होगी एवं क्रयशक्ति बढ़ेगी। प्रत्येक भूमिहीन बैगा परिवार को उपलब्धता अनुसार समान रूप से कृषि भूखण्ड उपलब्ध कराया जाना चाहिए। कृषि की उन्नत तकनीक की जानकारी दी जाकर आवश्यक कृषि यंत्र प्रदाय किया जाना चाहिए, इससे कृषि उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ बैगाओं की आय में भी वृद्धि होगी। बैगा जनजातीय बाहुल्य क्षेत्रों में बैंकिंग प्रणालियों का विस्तार कर बचत बैंकों की स्थापना की जानी चाहिए एवं बैगाओं को बचत करने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। संभवत: इससे बैगाओं में अनावश्यक खर्च करने की

प्रवृति को रोका जा सकता है। इस प्रकार बैगा जनजाति विकास के लिए उपरोक्त उपायों को अपनाकर इनके विकास को नई दिशा प्रदान की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र.शासन आदिम जाति तथा अनुसूचित जाति कल्याण विभाग मार्गदर्शिका 2005
2. चौरसिया, डॉ. विजय, 2009-प्रकृति पुत्र बैगा, भोपाल: म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. नायडू,पी. आर.,2002-भारत के आदिवासी विकास की समस्याएँ, द्वितीय संस्करण, नई दिल्ली : राधा पब्लिकेशन्स।
4. सोन वानी अर्जुन कुमार 1997 -मण्डला जिले के चाणंा क्षेत्र के बैगा जनजाति की शैक्षिक उन्नति का समीक्षात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबंध, डॉ. हरिसिंह गौर वि. वि. सागर।
5. तिवारी, डॉं. शिवकुमार एवं शर्मा, डॉं. श्रीकमल, 2000-मध्यप्रदेश की जनजातियाँ - समाज एवं व्यवस्था, षष्ठम संस्करण, भोपाल - म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
6. बैगा विकास अभिकरण - बैहर 2011-12
7. Thomson, W.B. – The Settlement Report of seoni District between 1854-1866, Published in 1867, The imperial Gazetteer of India, Volume – 12,

म.प्र. में बैगा जनजाति जनसंख्या

जिला	ग्रामों की संख्या	परिवार संख्या	पुरूष संख्या	महिलाओं की संख्या	कुल संख्या
डिण्डोरी	157	5213	9107	9017	18124
मण्डला	308	5438	13453	13277	26730
बालाघाट	189	2999	6940	7017	13957
शहडोल	104	4873	11181	10850	22031
उमरिया	183	4894	12145	11600	23745

****

भारत में प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का प्रभाव एवं संभावनाएँ

विक्रम बामनिया * डॉ. एम. एल. पाटीदार **

शोध सारांश – सरकार की नई फसल की बीमा योजना किसानों के लिये किसी संजीवनी से कम नहीं है। वर्ष 2016 में किसानों के लिये इससे बड़ा तोहफा नहीं हो सकता है। उम्मीद जताई जा रही है कि यह फसल बीमा किसानों का भाग्य बदल देगी। इसकी विशेषता यह है कि किसान खेतों में खड़ी फसल, कटाई के बाद खलिहान में पड़ी उपज अथवा बुवाई के बाद पौधों, पेड़ों का बीमा करा सकेगें। सरकार की कम प्रीमियम, बड़े बीमा पालिसी यह योजना किसानों की क्रय शक्ति में इजाफा करेगी। प्राकृतिक आपदा में नष्ट होने वाली फसलों का 100 फीसदी मुआवजा मिलेगा और वह भी महज 15 फीसदी प्रीमियम अदा करने पर। केन्द्र सरकार व राज्य सरकारें शेष पांच गुना प्रीमियम राशि 50:50 के हिसाब से वहन करेगी।

प्रस्तावना – प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदीजी ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के स्थापना दिवस समारोह को सम्बोधित करते हुए 29 जुलाई 2014 को कहा था– हमें दो चीजों को सिद्ध करना है–'पहला तो यही कि हमारा किसान देश और दुनिया का पेट भरने में सामर्थ्यवान है और दूसरा हमारी कृषि किसानों की जेब भरने में समर्थ हो।' पिछले डेढ़ वर्षो में किसान हित में जिस तेजी से नई योजनाएँ आ रही है उससे लगता है कि आने वाले समय में प्रधानमंत्रीजी की यह बात साबित होगी।

विभिन्न आपदाओं से कृषिगत उत्पादन में होने वाले नुकसान की बेहतर व सुगम भरपाई के लिये नई किसान हिंतैषी फसल बीमा योजना खरीफ 2016 से लागू की गई है। इस योजना को केन्द्रीय मंत्रीमण्डल ने 13 जनवरी 2016 को मंजूरी प्रदान की थी।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना नाम की इस योजना ने 2010 में लागू की गई संशोधित फसल बीमा योजना का स्थान लिया है। नई योजना के तहत किसानों को कम लागत पर ही ज्यादा लाभ प्रदान करने की व्यवस्था की गई है। पूर्ववर्ती सभी फसल बीमा योजनाओं की समीक्षा कर नए फीचर शामिल कर बनाई गयी नई फसल बीमा योजना से बेहतर बताया गया है। इस योजना के तहत् किसानों द्वारा देय प्रीमियम की राशि बहुत कम रखी गई है। खरीफ की सभी उपजों के लिये बीमित राशि का 2.0 प्रतिशत तथा रबी उपजों के मामलों में 1.5 प्रतिशत प्रीमियम का भुगतान ही किसानों को करना होगा। वार्षिक वाणिज्यिक व बागवानी फसलों के मामले में किसानों द्वारा देय बीमित प्रीमियम राशि 5.0 प्रतिशत होगा। तथा शेष प्रीमियम की अदायगी सरकार द्वारा की जाएगी।

मुख्य बिन्दु –

- किसानों द्वारा सभी खरीफ फसलों के लिये केवल 2.0 प्रतिशत एवं सभी रबी फसलों के लिये 1.5 प्रतिशत का एक समान प्रीमियम का भुगतान किया जाना है। वार्षिक वाणिज्यिक एवं बागवानी फसलों के मामले में प्रीमियम केवल 5.0 प्रतिशत होगा।
- किसानों द्वारा भुगतान किये जाने वाले प्रीमियम बहुत ही कम है और शेष प्रीमियम का भुगतान सरकार द्वारा किया जाएगा ताकि किसी भी प्रकार प्राकृतिक आपदाओं में फसल हानि के लिये किसानों को पूर्ण बीमित राशि प्रदान की जाए।
- सरकारी सब्सिडी पर कोई ऊपरी सीमा नहीं है व भले ही शेष प्रीमियम 90 प्रतिशत है यह सरकार द्वारा वहन किया जाएगा।
- इससे पहले प्रीमियम दर पर केपिंग का प्रावधान था कि जिससे किसानों को कम से कम दावे का भुगतान होना था। अब इसे हटा दिया गया है और किसानों को बीमा किसी कटौती के पूरी बीमित राशि का दावा मिलेगा।
- वर्ष 2016-2017 के बजट में प्रस्तुत योजना का आवंटन 5550 करोड़ रूपये का है।
- बीमा योजना को एक मात्र बीमा कम्पनी भारतीय कृषि बीमा कम्पनी (ए.आई.सी.) द्वारा नियंत्रित किया जाएगा।
- पी.एम.एफबीवाय द्वारा राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (NAIS)एवं संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एमएनएआईएस) की एक प्रतिस्थापना योजना है और इसलिये इसे सेवाकर से मुक्त रखा गया है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का कार्य निष्पादन (तालिका देखे अगले पृष्ठ पर)

उद्देश्य –

1. प्राकृतिक आपदाओं कीट एवं रोगो के परिणामस्वरूप अधिूसचित फसल में से किसी की विफलता स्थिति किसानों को बीमा कवरेज और वित्तीय सहायता प्रदान करना।
2. कृषि में किसानों की सतत प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिये उसकी आय को स्थायित्व देना।
3. किसानों को कृषि में नवाचार एवं आधुनिक पद्धति को अपनाने के लिये प्रोत्साहित करना।
4. कृषि क्षेत्र में ऋण के प्रवाह को सुनिश्चत करना।

प्रविधि – यहाँ जानकारी हेतु द्वितीयक समंकों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक समंक सूचनाओं के लिये संदर्भित पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं एवं इन्टरनेट का उपयोग किया गया है।

अध्ययन की उपयोगिता – प्रस्तुत अध्ययन से भारत में कृषि एवं कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा तथा कृषि विकास आधार स्तम्भ साबित होगा। किसानों के जीवन स्तर में सुधार एवं आय में वृद्धि होगी। प्राकृतिक एवं दैवी आपदाओं के परिणामस्वरूप फसलों को होने वाली हानि से रक्षा करने

---

* शोधार्थी, राजीव गांधी शासकीय पी.जी. कॉलेज, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** पूर्व प्राचार्य, शासकीय पी.जी. कॉलेज, नीमच (म.प्र.) भारत

तथा किसानों को वित्तीय सुविधा प्रदान कर अगले मौसम में उनकी ऋण पात्रता बनाए रखने के लिये यह बीमा योजना उपयोगी होगी। इस योजना से बाढ़, सूखा, चक्रवात, आग व ओलावृष्टि जैसी प्राकृतिक आपदाओं तथा कीट व बीमारियों के कारण फसल को हुई क्षति से किसानों को संरक्षण प्रदान करना है। यह योजना जोत के आकार पर ध्यान दिये बिना ऋणी व गैर ऋणी सभी किसानों के लिये स्वीकार की गई है।

निष्कर्ष – भारतीय कृषि की अनिश्चितता को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय कृषि आयोग ने फसल बीमा योजना आवश्यक ही नहीं बल्कि अपिरिहार्य बताया है।

किसानों की आमदनी बढ़ाने के लिये फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ पशुपालन बागवानी एवं मत्स्य पालन को भी बढ़ावा देने की दिशा में पहल की जा चुकी है। इस कदम से लघु एवं सीमान्त किसानों को भी काफी फायदा पहुंचने की उम्मीद है। पिछले डेढ वर्षो में किसान हित में जिस तेजी से नई योजनाएं आ रही है, उससे लगता है कि आने वाले समय में प्रधानमंत्री जी यह बात सही साबित होगी। कृषि घाटे का सौदा न रहकर एक व्यवसाय की तरफ फलेगी-फूलेगी जिससे विश्व बाजार में न केवल भारतीय खाद्य उत्पादन की गुणवत्ता स्थापित होगी बल्कि किसानों की आय भी बढेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ग्रामीण विश्व व्यापार संगठन एवं विश्व (2011) सवलिया बिहारी वर्मा, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
2. प्रतियोगिता दर्पण 'समसामयिक वार्षिकी' (2016) स्वदेशी बीमा नगर, आगरा।
3. प्रतियोगिता दर्पण 'भारतीय अर्थव्यवस्था' (2012) स्वदेशी बीमा नगर आगरा।
4. कुरूक्षेत्र फरवरी 2016 अंक 4
   सूचना और प्रसारण मार्च मंत्रालय, सूचना भवन सीजीओ काम्पलेक्स नई दिल्ली।
5. कृषक सुरक्षा राष्ट्रीय मासिक पत्रिका जुलाई 2015 म.प्र. भोपाल
6. www.india.gov.in

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का कार्य निष्पादन

क्र.	विवरण	रबी 1999-2000	खरीफ 2000	रबी 2000-01	खरीफ 2001	रबी 2001-02	योग
1.	सम्मिलित किसान (लाख में)	5.80	84.09	20.91	85.68	20.81	217.31
2.	बीमाकृत राशि (करोड़ रू)	356.40	6803.38	1602.78	7300.90	1698.39	17861.75
3.	प्रीमियम (करोड़ रू.)	5.42	206.74	27.792	56.95	34.72	531.63
4.	शामिल क्षेत्र (मिलियन हैक्ट.)	780	132.20	31.11	127.58	32.73	331.42
5.	दावे (करोड़ रू.)	7.69	1222.91	59.50	468.82	64.39	1823.31
6.	भुगतान किये गये दावों की राशि (करोड़ रू.)	7.68	1222.77	59.04	258.82	17.91	17.91

****

उज्जैन जिले के कृषि विकास में सहकारी बैंको का योगदान

पूजा चन्द्रावत * डॉ. सारा अत्तारी **

शोध सारांश – भारत एक कृषि प्रधान देश है, यहाँ कि 74 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है, जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि है। अत: देश के विकास के लिए ग्रामीण एवं कृषि विकास आवश्यक है। उज्जैन जिलें का कुल क्षेत्रफल 6091 वर्ग कि.मी. है, जो कि प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 1.976 प्रतिशत है। उज्जैन जिला प्रशासकीय दृष्टि से 6 विकासखण्डों तथा 7 तहसीलों में विभक्त है। जिला मुख्यालय उज्जैन हैं। यहाँ पर सभी विकासखण्ड कृषि प्रधान है। कृषि विकास के लिए वित्त व्यवस्था आवश्यक है। ऐसे में बैंकों की भूमिका महत्वपूर्ण है, इनके माध्यम से ही वित्त प्रदान कर कृषि क्षेत्र को बढ़ावा दिया जा सकता है। उज्जैन जिलें में 170 व्यापारिक बैंक, 25 केन्द्रीय सहकारी बैंक व 13 भूमि विकास बैंक कार्यरत् है, जो अपनी विभिन्न कृषि ऋण योजनाओं के माध्यम से वित्त प्रदान करने का कार्य कर रही है। प्रस्तुत शोध पत्र में उज्जैन जिलें के कृषि विकास में सहकारी बैंको के योगदान का अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – कृषि विकास, अर्थव्यवस्था, कृषि ऋण एवं सहकारी बैंक।

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था मुलत: कृषि पर आधारित है, प्राचीनकाल से ही भारत के निवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि रहा है। भारतीय कृषि की निम्न उत्पादकता के कारण कृषक ऋणों एवं उनके ब्याज का समय पर भुगतान नहीं कर पाते थे। परिणामस्वरुप कृषकों के ऋण पीढी दर पीढी चलते ही जाते है। प्राचीन समय में कृषक गरीबी एवं ऋणग्रस्तता के कारण न तो खेती के तरीकों में सुधार कर सकता था, और न ही अपनी आर्थिक उन्नति के बारे में विचार कर पाता था, क्योंकि उस समय गॉवों में साख की कोई सुविधा नहीं थी, इसलिए उसे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बार–बार साहूकारों से ऋण लेना पड़ता था, और साहूकारों के ब्याज की दर एवं ऋण देने की शर्ते इतनी कठिन होती है,कि गरीब कृषक की आय का बड़ा भाग ब्याज एवं ऋण चुकाने में ही चला जाता था। इस कारण कृषक कभी भी ऋण से मुक्त नहीं हो पाता। भारतीय कृषकों की इन आर्थिक कठिनाईयों को दूर करने की दृष्टि से सहकारी बैंक को एक और कल्याणकारी संस्था माना जाता है।

सहकारी बैंकों का देश के आर्थिक जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। हालांकि इन बैंकों से सम्बन्धित कई समस्याऍं है, जिनका समाधान करना आवश्यक है, और इसी बात को ध्यान में रखते हुए सरकार ने स्वतंत्रता के बाद से ही इनके तीव्र विकास पर विशेष बल दिया है। और यह महसुस किया गया कि ये बैंक कृषि उत्पादन एवं कृषकों की गरीबी एवं असमानताओं को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते है। योजना आयोग ने भी पंचवर्षीय योजनाओं में इनके विकास की संस्तुति की।

कृषि विकास एवं भारतीय अर्थव्यवस्था – प्राय: कृषि विकास से तात्पर्य कृषि उत्पादकता वृद्धि से लिया गया है। परन्तु यांत्रिक क्रांति के बाद आज उत्पादकता में होने वाली वृद्धि के अपेक्षाकृत कृषि विकास को अधिक विस्तृत अर्थो में प्रयोग करते है। प्रो. मिश्रा के अनुसार कृषि विकास से तात्पर्य कृषि हेतु नई दशाओं का परिवर्धित अनुकूलन एवं उसकी अन्तर्निहित संभावनाओं का पूर्ण विकास है। कृषि विकास की समस्याएँ मात्र वर्तमान उत्पादन हेतु नई तकनीक लाने की ही नहीं बल्कि इसमें संरचनात्मक आधार में परिवर्तन की भी है, जिसमें कृषि के संरचनात्मक आधार में परिवर्तन के लिए बैंकिंग संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आधुनिक प्रौद्यौगिक के आधार पर कृषि का विकास करने के उद्देश्य से देश में बड़ी मात्रा में तथा उचित शर्तो पर कृषकों का बैंकिंग संस्थाओं की सुविधा प्रदान की गई। सन् 1951–52 में देश में कुल कृषि ऋण आवश्यकताओं का लगभग 93 प्रतिशत गैर–संस्थागत स्त्रोतों से साहूकार, महाजन, व्यापारी आदि तथा शेष 7 प्रतिशत बैंकिंग संस्थाओं जैसे सहकारी समितियॉ, व्यवसायिक बैंकों द्वारा उपलब्ध कराया जाता रहा है, परन्तु वर्तमान में परिस्थितियॉ बदल गई है। देश में अब कृषकों को कृषि विकास का महत्व देने के उद्देश्य से अधिकांश ऋण बैंकिंग संस्थाओं से ही प्राप्त हो रहा हैं। वर्तमान में गैर–संस्थागत स्त्रोतों का कृषि में अंशदान अब कम हो गया है।

अध्ययन के उद्देश्य– किसी भी क्षेत्र विशेष की प्रगति उस क्षेत्र में उपलब्ध वित्तीय संस्थाओं पर निर्भर करती है। बिना वित्तीय सहायता के कृषि की प्रगति संभव नहीं हो सकती है। हमारे देश में कृषि वित्त के लिये ही सहकारी बैंकों की स्थापना की गई है। सरकार एवं सहकारी क्षेत्र से जुडे राजनेताओं एवं अन्य व्यक्तियों द्वारा सहकारी संस्थाओं के माध्यम से भारतीय कृषि की तस्वीर बदल दिए जानें के दावें समय–समय पर कियें जाते रहें है। प्रस्तुत शोध पत्र कार्य का विशेष अध्ययन निम्न उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया गया है–

- कृषि विकास के सदंर्भ में उज्जैन जिलें में सहकारी बैंकों की स्थिति का अध्ययन करना।
- सहकारी बैंकों द्वारा सदस्य समितियों की साख सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने की स्थिति का अध्ययन करना।
- सहकारी बैंकों द्वारा अपनाई गई ऋण प्रकिया एवं ऋण योजनाओं का अध्ययन करना।
- कृषकों को ऋण समय पर प्राप्त होता है या नहीं तथा बैंक द्वारा दिए गए ऋण के उपयोग का मूल्यांकन किया जाता है या नहीं।
- इस सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना कि कृषकों को जो ऋण प्रदान

---

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

* प्राचार्य शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुरा जिला – नीमच (म.प्र.) भारत

किये जाते है, उसमें कृषकों के उद्देश्य पूरे होते है या नहीं।

- सहकारी बैंकों का अध्ययन कर उसकी वित्तीय स्थिति तथा ऋण प्रदान करने की क्षमता ज्ञात करना, जिससे यह ज्ञात हो सके कि सहकारी बैंक कृषि विकास की आवश्यकताओं को पूरा करने में कहां तक सफल रही हैं।
- कृषि ऋणों की अदायगी एवं वसूली व्यवस्था का अध्ययन करना।
- उज्जैन जिलें के सहकारी बैंकों एवं हितग्राहियों की विभिन्न समस्याओं एवं कठिनाईयों का अध्ययन करना एवं उनके समाधान हेतु सुझाव।

अध्ययन क्षेत्र- मेरे शोध पत्र का क्षेत्र मध्यप्रदेश राज्य का उज्जैन जिला है। धार्मिक दृष्टि से उज्जैन एक पवित्र शहर है। भारतवर्ष की मोक्षदायिनी सप्तपुरियों में उज्जैन का अपना अलग ही महत्व है। उज्जैन जिला भौगोलिक दृष्टि से मालवा के पठार के केन्द्रीय भाग में स्थित है। उज्जैन जिलें का कुल क्षेत्रफल 6091 वर्ग कि. मी. है, जो कि प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 1.976 प्रतिशत है। उज्जैन जिला प्रशासकीय दृष्टि से 6 विकासखण्डों तथा 7 तहसीलों में विभक्त है। जनसंख्या की दृष्टि से उज्जैन जिलें की कुल जनसंख्या जनगणना 2011 के अनुसार 19 लाख 86 हजार 597 है, जिसमें से 7 लाख 79 हजार 064 नगरीय क्षेत्र में तथा 12 लाख 07 हजार 533 ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। जिलें की कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या 60.78 प्रतिशत है। उज्जैन जिला बैंकिंग सुविधा की दृष्टि से सम्पन्न है। उज्जैन जिलें में जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक एक स्वशासी संस्था है, जो कि म. प्र. सहकारी अधिनियम 1960 के तहत् पंजीकृत संस्था है। उज्जैन जिलें में जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक उज्जैन की 30 शाखाँए जिलें में कार्यरत है। इनमें से 5 शाखाँए अमानत संग्रहण का कार्य करती है। एवं 25 शाखाँए कृषि ऋण वितरण का कार्य जिलें की 172 सहकारी समितियों के द्वारा करती है। यह बैंक कृषकों को कृषि ऋण, कृषि साख समितियों के माध्यम से प्रदाय करता है। जिलें में कुल कृषक परिवारों की संख्या 2,12,213 है, तथा बैंक से सम्बद्ध 172 कृषि सहकारी संस्थाओं की संख्या 2,02,054 है, जो कृषक परिवार का 95.21 प्रतिशत है।

उज्जैन जिलें में सहकारिता का विकास - देश में सहकारिता आन्दोलन का प्रारंभ 1904 में हुआ है। इसके पश्चात् ही भारत के समस्त राज्यों की सरकारों ने इस ओर अपना ध्यान आकर्षित किया। उज्जैन जिलें में सहकारिता का शुभारंभ 19 जुलाई 1918 से हुआ जब को-ऑपरेटिव बैंक का पंजीयन एक सहकारी समिति के रुप में किया गया। वर्ष 1918-19 में जिलें परगनों तथा ग्रामों में सहकारी साख समितियों का निर्माण होने लगा। सन् 1918 में जिलें में सहकारी बैंक की स्थापना की जा चुकी थी एवं जिलें के विभिन्न ग्रामों में प्राथमिक सहकारी साख समितियों का निर्माण भी हो चुका था, किन्तु सन् 1927 तक विकास की गति अत्यन्त धीमी थी सहकारी साख संस्थाओं की रचना त्रिस्तरीय है। गांव स्तर पर प्राथमिक सहकारी समितियाँ, जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा राज्य स्तर पर राज्य या शीर्ष सहकारी बैंक होते है। प्राथमिक सहकारी समितियाँ गांव स्तर पर कृषकों को सदस्य बनाकर उन्हें ऋण प्रदान करती है। जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंक एवं भूमि विकास बैंक होते है। केन्द्रीय सहकारी बैंक कृषकों को अल्पकालीन एवं मध्यकालीन ऋण खाद, बीज, कीटनाशक, औषधियाँ आदि खरीदनें के लिए ऋण प्रदान करते है। जबकि भूमि विकास बैंक कृषकों की भूमि गिरवी रखकर उन्हें ट्रेक्टर, थ्रेशर, मोटर पंप आदि खरीदनें के लिये दीर्घकालीन ऋण प्रदान करते है। राज्य सहकारी बैंक, केन्द्रीय सहकारी बैंकों को इस उद्देश्य से ऋण प्रदान करते है, कि वे इन ऋणों को कृषकों तक पहुंचा सकें।

वर्ष 1980-81 में उज्जैन जिलें में सहकारी साख समितियों की संख्या 166 थी, जो वर्ष 2014-15 में 172 हो गई है। उज्जैन जिलें में प्राथमिक कृषि साख समितियाँ लगभग सभी गॉवों में अल्पकालीन, मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन साख उपलब्ध करा रहीं है। इन समितियों का प्रमुख कार्य कृषि ऋण का नकद तथा वस्तुओं के रुप में ऋण वितरण करना है। कृषि ऋण में नकद ऋण राशि 75 प्रतिशत तथा शेष 25 प्रतिशत राशि वस्तु के रुप में दी जाती है। कृषि विकास हेतु कृषकों को दीर्घकालीन ऋण भी प्रदान किया जाता है। भूमि विकास बैंक द्वारा कृषकों को कृषि विकास की आवश्यकताओं यथा- पंपसेट क्रय, ट्रेक्टर, मशीनरी क्रय की व्यवस्था, भूमि समतलीकरण, कुएँ खोदना, पुराने कुओं की मरम्मत, फेन्सिंग जैसी भूमि सुधार गतिविधियों के लिए कृषकों को दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती है। इस प्रकार उज्जैन जिलें में वर्तमान में 170 व्यापारिक बैंक, 25 केन्द्रीय सहकारी बैंक व 13 भूमि विकास बैंक कार्यरत् है।

सुझाव-

- जिलें के समस्त भागों में संतुलित वित्तीय व्यवस्था हेतु बैंकिंग संस्थाओं की स्थापना की जानी चाहिए जिससे कृषकों को ऋण उपलब्धता में कठिनाई न हो।
- कृषकों को उत्पादनों का उचित मूल्य दिलाने के लिये तथा उत्पादनोत्तर पर होने वाली अनावश्यक क्षति को रोकने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में उचित भण्डारण एंव वितरण की व्यवस्था होनी चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों को समय-समय पर कृषि वित्त योजनाओं एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सम्पन्न कराना चाहिए जिससें कृषि वैज्ञानिकों एवं ऋण के उपयोग के अनुभवों एवं उनके अनुसंधानों को कृषकों तक पहुॅचाया जा सकें।
- जिलें की समस्त वित्तीय संस्थाओं द्वारा समय-समय पर कृषकों हेतु विभिन्न संचालित योजनाओं का ग्रामीण स्तर पर प्रसार करना चाहिए जिससें ग्रामीण कृषकों को विभिन्न वित्तीय योजनाओं की जानकारी प्राप्त हो सके एवं इसका उचित ढंग से उपयोग किया जा सकें।
- जिलें के समस्त विकासखण्डवार वित्तीय संस्थाओं द्वारा कार्य योजना तैयार की जानी चाहिए तथा प्रतिवर्ष कृषि विकास के लक्ष्य एवं पूर्ति की समीक्षा की जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. माथुर बी.एस. (1994), सहकारिता देश-विदेश में साहित्य भवन, आगरा।
2. डॉ. मिश्रा जयप्रकाश. (2004), कृषि अर्थशास्त्र।
3. अग्रवाल एन.एल.(1990), भारतीय कृषि का अर्थशास्त्र राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
4. दत्त एवं महाजन, (2012), भारतीय अर्थव्यवस्था, 49वाँ संस्करण, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लिमि. नई दिल्ली।
5. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका 2011-2014, जिला सांख्यिकीय कार्यालय, उज्जैन।

****

गाँधी जी के ग्राम स्वराज की वर्तमान पंचायती राज में प्रासंगिकता

डॉ. वर्चसा सैनी *

प्रस्तावना – गाँधी जी का चिन्तन रूढ़िवादी परिवेश से मुक्त था लेकिन अपने अतीत से सदैव अनुप्रेरित होता रहा। यही कारण है कि गाँधी ने बुद्ध की अहिंसा को परम सत्य के रूप में स्वीकारा और समाज को उसकी हर क्षेत्र में सार्वभौम उपयोगिता बताते हुए अपनाने का आग्रह किया। यह आग्रह मात्र उपदेशक आग्रह नहीं था बल्कि अहिंसा को सहज समर्पित सहज पुरुष का आत्मलोचन था। उन्होंने जो कहा, वही किया, जो किया उसे अपनाने का आग्रह सभी के समक्ष रखा। उनके सम्बन्ध में इतना कहना युक्ति संगत लगता है कि गाँधी केवल अहिंसा के ही मुखर हस्ताक्षर का नाम नहीं है बल्कि 'सत्य' और 'प्रेम' की संयुक्त भावना का युग बोध भी है। इस दृष्टि से 'सत्य-अहिंसा और प्रेम' उनकी बौद्धिक चेतना का अंग बन गये। यही सब कुछ उन्हें महामानव बना गये।

गाँधी जी ने सामाजिक जीवन में व्याप्त वर्ग-विषमता के विनाश के लिये मार्क्सवादी पथ नहीं अपनाया क्योंकि उन्हें संघर्ष के मार्ग में जहाँ एक ओर अहिंसा दम तोड़ते हुए अनुभव हुई, वहाँ दूसरी ओर मार्क्सवादी दर्शन की व्यापकता सी अनुकूल अनुभव नहीं हुई। वह पूँजी के स्थान पर श्रम को महत्व देते हैं। स्वतंत्रता के प्रारम्भिक चरण में लड़खड़ाता हुआ देश उनके अनुरूप मन नहीं बना पाया। चोरी-चोरा 'काण्ड' ने गाँधी जी के अन्त:स्थल को झकझोर दिया। उन्हें केवल अहिंसा का मार्ग प्रिय था। किसी अन्य विकल्प या मार्ग पर चलने के लिए न वह सहमत थे और न प्रस्तुत। स्वतंत्रता संग्राम ने ही गाँधी जी को धर्म, जाति और सम्प्रदायों में विभक्त सामाजिक रेखाओं को तोड़कर 'एक बनने और नेक बनने का आह्वान करने के लिए प्रेरित किया। यहाँ वह 'हरिजनों के लिए हरिजन' बनने के लिए आतुर हुए। 1930 का आंदोलन उनके रचनात्मक कार्य एवं उद्देश्यों का प्रतिफल है। धर्म की रेखाओं को खींचकर हिन्दु और मुस्लिम समाज को लड़ाने के लिए बना राजनैतिक वातावरण 'खिलाफत आंदोलन' को समर्थन देने के लिए उन्हें रोक नहीं पाया। उपलब्धियों के रूप में सम्पूर्ण देश गाँधी का देश है। व्यवहारिक आर्दशवादी के उपनामों से अलंकृत गाँधी का सम्पूर्ण परिवेश 'ग्राम स्वराज्य' की रचना में ही निकल गया। सामाजिक जीवन में व्याप्त असमानताओं तथा आर्थिक जीवन को घातक शोषण से मुक्ति के लिए गाँधी जी का केवल चिन्तन ही समर्पित नहीं था बल्कि सम्पूर्ण गाँधी सम्पूर्ण समर्पित था। नारी समानता, शोषण मुक्ति, साम्प्रदायिक सौहार्द, हरिजन उत्थान तथा ग्राम स्वराज के माध्यम से समतावादी समाज की रचना का आधार लेकर गाँधी जी की यात्रा का शुभारम्भ हुआ।

रूसो की तरह गाँधी जी ने भी गाँव लौट चलने के लिए आवाज दी है, जिस प्रकार रूसो ने वर्तमान सभ्यता और वैज्ञानिकता का विरोध करते हुए यह विचार प्रतिपादित किया कि मनुष्यता को जिन्दा रखने के लिए प्रकृति की गोद में वापस चला जाना चाहिये, उसी भावना के आधार पर गाँधी जी ने भी गाँवों की ओर चलने की आवाज उठाई किन्तु रूसो एवं गाँधी जी में मूलभूत अन्तर है। रूसो वर्तमान सभ्यता और उससे उत्पन्न जटिलताओं की आलोचना तो करता है किन्तु प्रकृति की गोद में वापस जाने का कोई ठोस कार्यक्रम नहीं प्रस्तुत करता। इसके विपरीत गाँधी जी ने गाँव की ओर लौट चलने का ठोस कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया है। गाँधी जी अराजकतावादी थे। इसलिए वे राज्य की सार्थकता पर विश्वास नहीं करते थे, फिर भी व्यवहारिकता की दृष्टि से राज्य को सम्पूर्णतया तथा समाप्त भी नहीं करना चाहते थे। इसलिए जिस ग्राम स्वराज की परिकल्पना गाँधी जी ने की उसमें गाँव शासन की ईकाई बनेगा। प्रत्येक गाँव अपने आप में आत्मनिर्भर होगा। राजनीतिक व आर्थिक दृष्टि से सत्ता का पूर्ण विकेन्द्रीकरण हो जायेगा। सत्ता किसी केन्द्रीय शासन के हाथ में नहीं रहेगी। प्रत्येक गाँव स्वायत्ता सम्पन्न होगा तथा स्वयं अपना शासन संचालन करेगा। इस प्रकार आर्थिक विकेन्द्रीकरण होगा। बड़े-बड़े उद्योग नहीं होंगे। प्रत्येक गाँव आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होगा। अपने आत्म निर्भर स्वायत्तापूर्ण ग्राम स्वराज की व्याख्या करते हुए गाँधी जी ने एक ऐसा चित्र प्रस्तुत किया जिसमें उनकी विकेन्द्रीयकरण सम्बन्धी मान्यताएं साधारणत: स्पष्ट हो जाती है। विकेन्द्रीकरण की जिस व्यवस्था को गाँधी जी स्वीकार करते हैं, उसका लक्ष्य ग्रामीण गणराज्य की प्रतिस्थापना करना है। ग्रामीण गणराज्य का सामान्य अर्थ यह कि प्रत्येक गाँव एक छोटा सा प्रजातंत्र हो और उसके निवासी उन सब सुख और सुविधाओं को प्राप्त कर सके जो किसी भी स्वतंत्र राज्य में नागरिक को सुलभ होती है। ऐसे गणराज्य की स्थापना में ग्राम के नागरिकों का विशेष उत्तरदायित्व तथा योगदान होगा। गाँधी जी के अनुसार 'ग्राम स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर निर्भर नहीं करेगा और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए जिनमें दूसरो का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर सहयोग से काम लेगा।' सच्चे गणतंत्र की स्थापना करने के इच्छुक लोगों को अपने हृदय में इस सत्य का धारण कर लेना आवश्यक है कि सच्चा लोकतंत्र ऊपर से नहीं वरन नीचे से विकसित होना चाहिये। लोकतंत्र देश के विकास में ग्रामीण जनों की भागीदारी की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए गाँधी जी ने सही ही कहा था 'सच्चा लोकराज्य केन्द्र में बैठे 20 आदमी नहीं चला सकते, वो तो नीचे हर गाँव के लोगों द्वारा चलायी जानी चाहिये।

गाँधी जी ने ग्राम स्वराज्य के विचार की कल्पना की थी। उसे सहेजने का दायित्व विनोबा जी ने लिया। इसके लिए लोकशक्ति को जागृत करना तथा स्वामित्व विसर्जन की भावना को सफल बनाना है। बापू का पूर्ण स्वराज्य से कभी यह आशय नहीं था कि उसमें इस प्रकार की व्यवस्था हो जिसमें एक वर्ग तो समृद्धिशाली बनता जाये और दूसरा नितांत शोषण के नीचे दबकर कंगाल बनता जाये।' भारत के लिए स्वराज्य का अर्थ है ग्राम स्वराजय जिसमें देश की सम्पन्नता को अंकुर विकसित हो। 'स्वराज्य का अर्थ

---

* राजनीति विज्ञान, जे.के. पी. (पी.जी.) कालेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

है, सारे देश का राज्य।' जब दूसरे की सत्ता अपने देश पर नहीं रहती तो स्वराज्य हो जाता है लेकिन जब हर एक गाँव में स्वराज्य हो जाता तब उसे ग्राम स्वराज्य कहा जाता है। गाँधी जी के लिए स्वराज्य साध्य है, साधन सत्य एवं अहिंसा है। जनता के लिए सच्ची लोकसत्ता या स्वराज्य कभी भी झूठे वायदे और हिंसक वारदातों के द्वारा नहीं आ सकती तथा सामान्य जन के हित की भावना प्रत्येक मानव क्षेत्र में पायी जाती है। यदि हिंसा का सहारा लिया गया तो इससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्रभावित होगी, जबकि व्यक्तिगत स्वतंत्रता 'स्वराज्य' का महत्वपूर्ण अंग है। दूसरी ओर स्वराज्य शुद्ध नैतिकता पर आधारित है, इसलिए इसमें अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों पर अधिक बल दिया जाता है। इसमें मानव समूह के प्रति समर्पण का भाव निहित है। गाँधी जी सबसे पहले गाँवों को परिपूर्ण बनाना चाहते थे, उसके पश्चात् स्वशासन, स्वराज्य और लोकराज्य की ओर अग्रसर होते हुए रामराज्य की अन्तिम सीढ़ी तक पहुंचना चाहते थे। गाँधी जी के अनुसार 'रामराज्य ग्राम स्वराज्य का आदर्श है।'

गाँधी जी की दृष्टि में स्वराज्य की पूर्णता के स्वप्न तब तक पूरे नहीं हो सकते जब तक गाँव स्वावलम्बन की प्रक्रिया में पूर्णरूपेण दक्ष न हो। ग्रामोद्योगों के कारण मशीनीकरण की बुराईयों से ग्रामीण गणराज्य बचे रहेंगे। गाँधी जी को विश्वास है कि ऐसा स्वावलम्बी और समर्थ गाँव ऐसे सब कामों को करने की क्षमता रखेगा जो हिंसा से मुक्त हो। जमींदारों और पूँजीपतियों के बुरे बोझ से यह गाँव मुक्त रहेगा। गाँव को स्वावलम्बी बनाने के लिए केवल कृषि एवं खादी ग्रामोद्योग से 'ग्राम स्वराज' का स्वप्न पूरा नहीं हो सकता। गाँधी जी ग्राम स्वावलम्बन के लिए अन्य उद्योगों की आवश्यकता भी अनुभव करते हैं जैसे कपड़े की छपाई-रंगाई आदि। ग्रामोद्योग संघ की स्थापना करके जिस कार्य का शुभारम्भ किया वह वर्तमान सरकार और नागरिकों के लिए प्रेरक और दिशाबोधक है। 'ग्रामीण गणतंत्र' अथवा 'ग्राम स्वराज' का आधार जहाँ गाँधी जी आर्थिक स्वावलमबन में खोजते हैं, वहाँ उनकी दृष्टि ग्रामीण प्रबन्ध से ओझिल नहीं हुई है। इसीलिए वह प्रबन्ध का दायित्व गाँव के लोगों की निर्वाचित संस्था ग्राम पंचायत को सौंपते हैं। पंचायती राज के द्वारा विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था से ही विकास सम्भव है। विकेन्द्रीकरण का भी अर्थ सत्ता को छोटे-छोटे भागों में बांटकर ग्राम और जिला स्तर में विकास की गतिविधियों को बढ़ाना है। भारत जैसे देशों में जहाँ जनसंख्या का बहुत बड़ा हिस्सा शहरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में निवास करता है। उनकी अभिलाषा के आधार पर पंचायती राज के द्वारा सहायक सिद्ध करने के लिए स्थानीय स्वशासन की अवधारणा बहुत प्रासंगिक है।

गाँधी जी आधुनिक भारत में 'ग्राम स्वराज' के लिए ग्राम पंचायतों के सबसे बड़े पक्षधर थे। उन्होंने अपने मत को व्यक्त करते हुए लिखा है कि 'स्वतंत्रता स्थानीय स्तर से प्रारम्भ होनी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक गाँव एक गणराज्य अथवा पंचायत राज होगा। प्रत्येक गाँव के पास पूर्ण सत्ता भारत के राष्ट्रीय आंदोलन की वैचारिक रूपरेखा में ग्राम पंचायतों का केन्द्रीय स्थान था और शक्ति होगी। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक गाँव को आत्मनिर्भर होना चाहिए और अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूरा करना चाहिए ताकि वह सम्पूर्ण प्रबन्ध चला सके।' गाँधी जी ने स्वराज्य आत्मनिर्भर लोकतंत्र का सपना देखा था जो अपने सभी कार्यो का स्वयं प्रबन्ध कर सके। पंचायती राज की धारणा को गाँधी जी ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में स्थान दिलाया जो राज्य की नीति निर्देशक योजना में शामिल है, जो वास्तव में पूर्ण स्वराज एवं 'ग्राम स्वराज' का एक महत्वपूर्ण भाग है। प्रत्येक राज्यों में गाँव के विकास के लिए अपने-अपने राज्य यानि पंचायत का राज्य होगा। प्रत्येक गाँव की सभी जरूरी आवश्यकताएं पंचायती राज द्वारा पूरी होगी तथा पंचायती राज के अन्तर्गत प्रत्येक गाँव अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए केन्द्रीय सरकार के ऊपर निर्भर नहीं होगी। गाँधी जी की सर्वोदयी राज्य व्यवस्था की स्वतंत्र ईकाई गाँव है। गाँधी जी के अनुसार 'ग्राम के तमाम बालिग स्त्री पुरुषों को वोट का अधिकार होना चाहिए, जो पाँच व्यक्तियों की पंचायत को चुने। इनमें से एक सर्वसम्मति से सरपंच चुना जाए। ग्राम के प्रशासन न्याय कर निर्धारण एवं अर्थव्यवस्था खेती उद्योग और व्यापार, शिक्षा एवं सफाई इन सब कार्यो को करने की जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों पर हो।'

मार्क्सवादी राज्य व्यवस्था में राज्य की सम्पूर्ण शक्ति और अधिकार केन्द्रीय सरकार के अधीन रहते हैं। इससे क्षेत्रीय सरकार केन्द्रीय सरकारों का एक पुर्जा मात्र बनकर रह जाती है। उस सरकार का अपना वर्चस्व खत्म होने के साथ उसकी कार्य करने की स्वतंत्रता और स्वायत्ता खत्म हो जाती है, जबकि गाँधी जी की राज्य व्यवस्था में सम्पूर्ण अधिकार ग्राम पंचायत के पास रहते हैं, जिसमें व्यक्ति स्वतंत्र है। कुछ अधिकार प्रादेशिक पंचायतों के पास रहते हैं। गाँधी जी की राज व्यवस्था को हम ग्राम स्वराज्य या पंचायत राज की संज्ञा भी दे सकते हैं। गाँधी जी के अनुसार प्रत्येक गाँव के लिए अपनी एक यज्ञशाला, पाठशाला, सभा भवन व पानी के लिए उसका अपना प्रबन्ध होगा। बुनियादी तौर पर प्राथमिक शिक्षा सबके लिए आवश्यक होगी, जाति-पाति के भेदभाव का कोई स्थान नहीं होगा। अत: लोगों को इस व्यवस्था में अपनापन महसूस होगा, इसलिए यह उनका स्वराज सिद्ध होगा। स्वराज की व्याख्या करते हुए गाँधी जी कहते हैं कि स्वराज्य एक पवित्र वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ है, आत्मानुशासन व आत्मसंयम है तथा स्वदेश समग्र मानव मात्र का कल्याण। यह एक ऐसी व्यवस्था है कि भारत के गरीब लोग भी यह महसूस कर सकेंगे कि यह उनका अपना राज्य है, जिसमें सरकार समान्य जन की स्वीकृति पर आधारित है, जिसके अन्तर्गत सर्व धर्म सम्भाव ही राज्य का मूल मंत्र होगा। स्पष्ट है कि धरातलीय स्तर पर लोकतंत्र मूल्यों की संस्थापन में पंचायती राज की बढ़ती भूमिका का अहम स्थान है, जो ग्रामीण विकास के लिए एक रामबाण औषधि का कार्य करता है।

समग्रत: लगभग चार दशकों तक देश में पंचायती राज व्यवस्था अनेकानेक कारणों से कभी प्रभावी, तो कभी डगमगाती प्रतीत हुई किन्तु उक्त परिप्रेक्ष्य में लगभग दो दशक पहले 22 एवं 23 दिसम्बर 1992 को देश की संसद द्वारा 73 वां एवं 74 वा संशोधन अधिनियम पारित करते हुए पंचायतों एवं नगर पालिकाओं को संवैधानिक रूप से स्वशासन की इकाईयाँ बनाने की व्यवस्था की गयी तो इसे एक बदलाव की एक नयी इबारत माना गया। 73वें संशोधन अधिनियम द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को न केवल एक नई दिशा मिली, बल्कि लोकतंत्र की जड़ो को सींचने में भी सार्थक सफलता मिली। इस संशोधन अधिनियम के द्वारा संविधान में एक नया अध्याय-9 जोड़ा गया, जिसके अन्तर्गत संविधान में 16 नये अनुच्छेद तथा एक नयी अनुसूचि (ग्यारहवीं अनुसूचि) जोड़ी गयी। फलस्वरूप देश में पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ और देश के संघीय लोकतांत्रिक ढांचे में एक नये युग का सूत्रापात हुआ। अधिनियम की मुख्य विशेषता यह है कि अन्य बातों के साथ-साथ इसमें सभी स्तरों पर पंचायतों के नियमित चुनाव, अनुसूचित जातियों/जन जातियों, अन्य पिछड़े वर्गो व महिलाओं (33 प्रतिशत) के लिए सीटों का आरक्षण तथा स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति को मजबूत बनाने के उपायों की व्यवस्था की गयी है। साथ ही राज्य वित्त आयोग निधियों का प्रावधान किया गया है। किसी भी

दृष्टि से देखा जाए तो यह एक रेड़िकल संवैधानिक कदम था। कहा गया कि लोगों द्वारा निर्वाचित कुछ हजार प्रतिनिधियों (सांसदो और विधायकों) द्वारा देश को चलाने के स्थान पर अब हमारे समक्ष विभिन्न स्तरों पर जन मुद्दो को आवाज देने वाले लाखों प्रतिनिधि हैं। संसदीय लोकतंत्र की रचना को पहली बार नीचे से ऊपर देखा गया। पंचायतों को अधिकार दिये जाने से गाँधी जी की 'ग्राम स्वराज की कल्पना साकार हो रही है।'

यहाँ पर कुछ प्रश्न उभरते हैं जैसे कि लगभग दो दशक बीत जाने के बाद आज हम कहाँ खड़े हैं ? वे कौन सी बाधाऐं हैं, जो इन सब उपलब्धियों के बावजूद इन जमीनी लोकतंत्र को जीवन्त बना सकने की क्षमता वाली संस्थाओं के पूर्ण विकास की राह में चुनौती बन खड़ी है ? ग्राम पंचायतों में व्याप्त भ्रष्टाचार विभिन्न रूपों में इस संस्था को कमजोर कर रहा है। पंचायती राज व्यवस्था में धनबल व बाहुबल का प्रयोग यह पंचायती राज की नई बीमारी है, इसके अतिरिक्त गुटवाद, जातिवाद, पितृसत्तात्मक व सामन्ती संस्कारों से जकड़े परम्परागत समाज में व्याप्त गरीबी अशिक्षा से प्रजन्मित दुष्चक्र में विवश प्रतिनिधि अपने निहित स्वार्थो अथवा जो गाँधी जी के 'ग्राम स्वराज' के दर्शन के एक दम विपरीत है। ग्राम सभा जो कि धरातलीय लोकतंत्र का न केवल प्रथम सोपान है बल्कि ग्राम पंचायत की आत्मा है। पंचायती राज व्यवस्था का आधार स्तम्भ होने के कारण ग्राम सभा को सशक्त तथा सामुहिक उत्तरदायित्व की कारगर संस्था के रूप में रूपान्तरित करना होगा। दरअसल ग्राम सभा और पंचायतों का रिश्ता द्वन्द्वात्मक है। पंचायतें तभी असरदार हो सकती है, जब ग्राम सभाएँ नियमित रूप से बैठक करें और ज्यादा से ज्यादा संख्या में लोग इन बैठकों में भागीदारी करें। नि:संदेह ग्राम सभा ही वह सशक्त माध्यम है, जिसके द्वारा ग्रामीण जनों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करके देश की वास्तविक तस्वीर बदली जानी सम्भव है। स्वशासन की इस नयी व्यवस्था को जिन कठिन सामाजिक एवं राजनीतिक दबावों, सामाजिक विषमता, जाति प्रथा, पितृसत्तात्मकता, सामन्ती ढांचा, निरक्षरता, असमान विकास के बीच कार्य करना पड़ा है, उन्हें देखते हुए हम कई चीजों पर गर्व कर सकते हैं जैसे आज प्रत्येक पाँच वर्ष पर स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं का नियमित चुनाव एक प्रतिमान बन गया है। यह भी अपने आप में कोई साधारण उपलब्धि नहीं है कि राज्य चुनाव आयोग, राज्य वित्त आयोग जैसी संवैधानिक संस्थाए सभी राज्यों में पूरी तरह प्रतिष्ठित हो चुकी है। राज्य चुनाव आयोगों ने पंचायत चुनावों को गम्भीरता से लिया है, जिससे जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक प्रक्रिया की साख बनी है, निर्णय लेने की प्रक्रिया में आज पूर्ववर्ती वंचित तबकों की भागीदारी बढ़ी है, यह भी संतोष का विषय है। इसका सबसे ज्यादा लाभ महिलाओं को मिला है। मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) की ग्राम पंचायतों में गत योजना में 33 प्रतिशत के सापेक्ष 40 प्रतिशत से अधिक महिलाऐ निर्वाचित हुई। हमारे जैसे सोपानीकृत और पुरुष वर्चस्व वाले समाज के लिए यह कोई मामूली घटना नहीं है। वर्तमान समय में 500 से अधिक जिला पंचायते लगभग 5100 ब्लॉक पंचायते हैं जो भारतीय लोकतंत्र के आधार के रूप में कार्य कर रही है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि धरातलीय स्तर पर लोकतंत्र की संस्थापना पंचायती राज की भूमिका ने सकारात्मक भूमिका का निवर्हन किया है। ग्रामीण विकास के द्वारा भारतीय ग्रामीण जनता की विकास की राह आसान होती जा रही है और वे अपने विकास की विभिन्न ग्रामीण योजनाओं का भरपूर लाभ उठाकर प्रगति कर रहे हैं। पंचायती राज तथा ग्रामीण विकास गाँधी जी के 'ग्राम स्वराज' की सकारात्मक कड़ी है जो ग्रामीण पृष्ठभूमि के विकास में सहायक है तथा परिणामत: जन साधारण के स्तर पर धरातलीय लोकतंत्र को विकसित, पुष्पित एवं पल्लवित होने में सहायक है। गाँधीवादी यह व्यवस्था निश्चित ही भारत में राष्ट्र प्रेम, सम्प्रदायिक सद्भाव, राष्ट्रीय एकल अखण्डता को सबल बना सकती है। गाँधी जी के यह विचार आधुनिक भारत के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रासंगिक एवं उपयोगी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बी.एम. शर्मा – 'पंचायती राज की भूमिका' पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
2. जे.आर. भारती – 'गाँधी के राम राज्य की प्रासंगिकता' खादी ग्रामोद्योग, फरवरी 1990
3. सतवीर गुप्ता – 'कृषि दयानन्द व महात्मा गाँधी के समाज दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन' मेरठ विश्वविद्यालय में दर्शन शास्त्र का शोध प्रबन्ध 1985
4. सूर्यभान सिंह – 'ग्रामीण विकास व पंचायती राज' कुरुक्षेत्र, नवम्बर 2005, पृष्ठ सं.–294
5. गाँधी मार्ग, 'अहिंसा संस्कृति का मासिक पत्र, 17 नवम्बर 1983
6. डॉ. वीरेन्द्र शर्मा – 'भारत के पुनर्निर्माण में गाँधी जी का योगदान,' श्री पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली–110005
7. डॉ. प्रभात कुमार भट्टाचार्य – 'गाँधी दर्शन' कालेज बुक डिपो, जयपुर।

****

नरसिंहपुर के स्वाधीनता सेनानी

डॉ. नितिन सहारिया *

प्रस्तावना – वर्तमान राजनीति में एक अंग्रेजी लोकोक्ति अत्यंत प्रखर होकर प्रमाणित होती जान पड़ रही है। “politics is the last resorts of scoundrels” लेकिन आज की पीढ़ियों को यह प्रतीत कराना हम बुद्धिजीवियों का आवश्यक कर्त्तव्य बन जाता है कि मुल्क कि एक पीढ़ी ऐसी भी थी जिसने राष्ट्र की राजनीति में मात्र परमार्थिक निष्ठा से भाग लिया और स्पष्ट जानती थी कि बलिदान लगभग निश्चित है। अंग्रेजो की 200 वर्ष की गुलामी से मुक्ति हेतु हुई राजनीति में जो भी सम्मिलित होता था। उसे इस बात का पूर्ण विश्वास नहीं होता था कि वह जीवित भारत को स्वतंत्र देख पायेगा अथवा नहीं। वह तो सर पर कफन बांधकर चलता था और मुमुर्क्षु न होकर यह कामना करता था कि बलिदान अथवा स्वभाविक मृत्यु के बाद पुन: जन्म ले और जन्म-जंमांत्तर तक राष्ट्र स्वतंत्रता के संघर्ष की अलख जलाता रहें।

सन् 1920-1930-1942 आंदोलन के वीरों का बहुत अल्पांश ही स्वतंत्र भारत राष्ट्र में सांस ले सका। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र को नेतृत्व अधिकतर 1942 के आंदोलन में सम्मिलित पीढ़ी से मिला और यह एक निर्विवाद सत्य है कि इस तपी हुई पीढ़ी ने राष्ट्र को कुशल नेतृत्व दिया भी । कुछ नाम अत्यधिक देदीप्यमान हैं। जैसे श्री लालबहादुर शास्त्री । चीन के हाथों भारत की पराजय के लगभग दो साल बाद ही पाकिस्तान ने जब भारत पर पूर्ण शक्ति से हमला किया तो शास्त्री जी के आव्हान पर सारे राष्ट्र ने सप्ताह में एक दिन का उपवास रखना आरंभ कर दिया ताकि खाद्य समस्या जो उस समय कठिन थी प्रभावी सैन्य कार्यवाहियों के आड़े न आने पाए। स्कूलों के बच्चों ने टॉफियॉ खाना छोड़कर अपना जेब खर्च पूरा का पूरा राष्ट्रीय रक्षा कोष में देना प्रारंभ कर दिया । इतिहास साक्षी है, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय भावना, सामरिकशक्ति, मनोबल राष्ट्रीय चरित्र , जो इस समय उत्पंन हुआ था ने भारत को कुछ ऐसी विशिष्ट शक्ति प्रदान की है कि बाद के बड़े से बड़े आघात हमारा राष्ट्र बहादुरी से झेल रहा है और उसकी दृढ़ता और अधिक अभिव्यक्त हुई है। पंडित श्याम सुंदर नारायण मुशरान भी उसी त्यागी पीढ़ी के नेता थे। यहॉ ‘नेता’ शब्द का आशय अंग्रेजी का लीडर Leader शब्द नहीं बल्कि Patriot पं. मुशरान का संम्पूर्ण जीवन गीता के दर्शन का साकार रूप था। राष्ट्रीय आंदोलन में सम्मिलित होने के लिए भरी पूरी पारिवारिक जिम्मेदारियों के होते हुए भी एक बढ़िया असिस्टेंट जेलर की नौकरी को त्याग दिया। इन्द्र सा ऐश्वर्य त्याग कर आप सदा वामन रहे। साक्षात्कारों से पता चला कि उन्होंने इतना करते हुए भी एक पिता के कर्त्तव्य पूर्ण निष्ठा से निभाए और उनकी संताने अपनी-अपनी विधाओं में सर्वोच्च शिखर तक पहुँची। एक Patriot का क्या स्वरूप होता है, वह तो आगे शोध प्रबंध में विस्तृत रूप में सामनें है। लेकिन उनके जीवन की लोक संवेदना का चित्रण जो स्वतंत्रता सेनानियों , उनके मित्रों, सहयोगियों ने अपने साक्षात्कारों में प्रस्तुत किया है, मार्मिक तो है ही, साथ ही साथ प्राचीन आर्य राजाओं के गौरव की याद दिलाता है। हमारे देश के कीर्ति स्तंभ, भारतीय संस्कृति के अनन्य अराधक, भारत माता के अमर सपूत, त्याग एवं बलिदान की मूर्ति, प्रदेश के कलश पुरूष पं. श्याम सुंदर नारायण मुशरान के पूर्वज सत्रहवीं शताब्दीं में कश्मीर उत्तर भारत के निवासी थे। यह काल मुगलकालीन धर्मांधता और क्रूरता का काल था, जिनके सामने अनेक लोग धर्म परिवर्तन कर बैठें , परंतु यह ब्राह्मण परिवार इस क्रूरता और धर्मांधता के आगे नहीं झुका और अपना सब कुछ त्याग कर महाकौशल में आ बसा पं. मुशरान के पूर्वजों ने अपने कश्मीर की याद में नरसिंहपुर जिलें में गोटेगॉव के पास एक गॉव का नाम श्रीनगर रखा था जो आज भी स्थित है।

इस सारस्वत गोत्रीय ब्राह्मण कुल में प्रदेश के गौरव पुरूष पं. श्याम सुंदर नारायण मुशरान का जन्म माल गुजार परिवार में प्रगति शील किसान पं. लक्ष्मी नारायण जी मुशरान के यहॉ 23 नवम्बर 1906 ई. को हुआ। आपके पितामह शिवप्रसाद जी मुशरान थे। आपकी माता श्रीमति लक्ष्मी रानी थी। आपकी बड़ी बहिन श्रीमती राजकुमारी थी, जिनका विवाह प्रख्यात राजनेता कैलाशनाथ काटजू के परिवार में हुआ था। उनके अग्रज पं. आनंद नारायण मुशरान थे। जो कि बाद में जिले में सहकारिता के भीष्म पितामह तथा प्रखर अधिवक्ता रहे । आपकी पत्नी श्रीमति विद्यादेवी थी। संतानों में पुत्र अजय मुशरान पुत्री रत्ना नागू एवं मीरा उगरा थी।

पं. एस.एस.एन. मुशरान की औपचारिक स्कूली शिक्षा का शुभारंभ 7-8 वर्ष की आयु से होता है। आपने प्रायमरी स्कूल की शिक्षा ब्रांच प्राथमिक शाला नरसिंहपुर में संपन्न की। पिता जी प्रगतिशील किसान होने से आपको स्नातक शिक्षा बी.एस.सी. (एग्रीकल्चर) से करने हेतु नागपुर कृषि महाविद्यालय जाना पड़ा। नागपुर से 1929 में लौटने पर आपका विवाह श्रीमति विद्यादेवी से हुआ। एवं 1931 मे आप असिस्टेंट जेलर बन गये। तथा 1932 में प्रथम पुत्र रत्न के रूप में अजय मुशरान की प्राप्ति हुई। पं. मुशरान अध्ययन के अतिरिक्त शैक्षणेत्तर गतिविधियों में समान रूप से रूचि लेते थे। नाटक, वाद विवाद, प्रहसन, संगीत आदि अनेक प्रिय विषय थे। छात्रों के द्वारा मंचित नाटक में वे बहुत रूचि व्यक्त करते थे साथ ही उन्हें प्रोत्साहित भी किया करते थे। पंडित जी छात्र सम्मेलनों में भी अपनी गहरी रूचि रखते थे कई बार निर्धन-मित्र छात्रों की सहायता वे अपने जेब के खर्च से कर दिया करते थे। विद्यार्थी काल में ही उनका हृदय परमार्थ भावना से ओतप्रोत था।

उन दिनों हाई स्कूल आज की तरह जगह-जगह नहीं हुआ करते थे। अत: पंडित जी को हाईस्कूल शिक्षा प्राप्त करने हेतु नरसिंहपुर आना पड़ा एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा गवर्मेंट हाई स्कूल नरसिंहपुर में प्राप्त की। उन दिनों

---

* अतिथि विद्वान (प्राध्यापक) शा.एम.एम. महाविद्यालय, कोतमा, जिला-अनूपपुर (म.प्र.) भारत

जबलपुर में रॉबर्ट्सन कॉलेज अत्यधिक ख्याति प्राप्त महाविद्यालयों में अपनी गणना रखता था। इस ख्याति प्राप्त महाविद्यालय की परम्परा इतनी उच्च कोटि की थी कि यहाँ का निकला हुआ छात्र अपने आपको 'राबर्ट सोनियन' कहने में उन दिनों में गौरवान्वित अनुभव करता था। कुल मिलाकर जबलपुर का यह महाविद्यालय पूरे महाकौषल क्षेत्र में अपनी ख्याति रखता था किन्तु पिताजी की रूचि कृषि विषय से स्नातक करने की थी इसलिए आप नागपुर गये एवं हास्टल में रहकर अपनी स्नातक उपाधि प्राप्त की। जिन दिनों पंडित श्याम सुंदर नारायण नागपुर कृषि महाविद्यालय से अपनी स्नातक की पढाई कर रहे थे उस समय वे हास्टल में रहा करते थे। उनकी रूचि सांस्कृतिक क्रिया कलापों में अधिक थी। नागपुर कृषि महाविद्यालय से सन् 1930 में अपने बी.एस.सी. (कृषि) परीक्षा उत्तीर्ण की। यह परीक्षा आपने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की, जो उस समय बहुत बड़ी सफलता का घोतक था। उस समय इस संकाय में मात्र 25 या 30 प्रतिशत परीक्षाफल निकलता था और प्रथम श्रेणी तो कभी किसी को बर्षो बाद मिल पाती थी। पंडित जी के उन दिनों के साथियों में अधिकांश द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

पं. मुशरान की एक बात ओर बड़ी महात्वपूर्ण है, जिसकी चर्चा उनके परिवार में ही नहीं वरन् मित्रों में भी हुआ करती थी। जिन दिनों वे छात्रावास में रहकर अध्ययन कर रहे थे, तो पिताजी द्वारा खर्चे के लिए रूपये भेजे जाते थे इन पैसों को वे इतनी मिव्यता से खर्चे करते थे कि कुछ पैसे प्रतिमाह बचा लिया करते थे और इन बचे हुए पैसो से अपनी मित्र मंडली के जरूरत मंद मित्रो की सहायता किया करते थे। जब वे घर लौटते तो पिताजी द्वारा हाल चाल पूछा जाता एवं पिताजी पूछते कि बेटे पैसे तो कम नहीं पड़ते इस पर पंडित जी अपनी डायरी दिखा दिया करते जिसमें एक-एक पैसे का हिसाब लिखा हुआ होता था। तब पिताजी बोलते बेटे मैं डायरी दिखाने के लिए नहीं कह रहा हूँ यदि कम पडें तो नि:संकोच बोल देना। इस डायरी लेखन की आदत से सभी मित्र और परिवार वाले बडे ख़ुश रहा करते थे। बचपन से ही आप बड़े नम्र, शांत स्वभाव के दिखाई देते थे।

गाँधीवादी दर्शन के अडिग अनुयायी एवं राजनीति के सशक्त पुरोधा स्वर्गीय श्याम सुंदर मुशरान उन्हीं बलिदानी महापुरूषों में से एक थे। जिन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अहम् भूमिका निभाई और अंतिम क्षणों तक देश सेवा के लिए समर्पित रहे। कांग्रेस संगठन के प्रति सर्मपण की भावना तथा कार्यकर्ताओं के पगति आत्मीयता पूर्ण व्यवहार उनकी विलक्षण प्रतिभा का प्रतीक था। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य तीन धाराएं हमारे समक्ष दृष्टिगोचर होती हैं। सन् 1885-1905 के पहले चरण में जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का ध्येय धुंधला, अस्पष्ट तथा संदिग्ध अवस्था में था क्योंकि यह आंदोलन केवल थोड़े से ही शिक्षित मध्यम वर्गीय बुद्धिजीवी वर्ग तक ही सीमित था। राष्ट्रीय आंदोलन का दूसरा दौर सन् 1905-1919 से शुरू होता है। इस समय कांग्रेस प्रौढ़ हो चुकी थी। तथा उसका उद्देश्य तथा उसकी सीमाएं अधिक विस्तृत हो गई थी। अब यह संस्था (कांग्रेस) जनता के सर्वतोन्मुखी सामाजिक, आर्थिक,राजनीति तथा सांस्कृतिक विकास के लिए प्रयत्नशील थी। राजनीतिक क्षेत्र में उद्धेश्य पूर्ण स्वराज था। इस बीच कुछ के लोगों ने साम्राज्यवाद को समाप्त करने के लिए क्रांतिकारी ढंग अपनाया। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के तीसरे और अंतिम चरण (1919-1947) में कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए महात्मा गांधी के नेतृत्व में एक विशेष भारतीय ढंग-अंहिसात्मक असहयोग अपना कर आंदोलन किया। पं. श्याम सुंदर नारायण मुशरान का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में प्रवेश अंतिम चरण में ही हुआ।

पं. श्याम नारायण मुशरान ने 1929 में नागपुर विश्व विद्यालय से कृषि में स्नातक की उपाधि प्राप्ति की। 1931 में असिंस्टेंट जेलर के रूप में शासकीय सेवा में प्रवेश किया तथा 1933 में पूज्य वापू महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू का नरसिंहपुर जिले के करेली नगर में आगमन हुआ। करेली में एक राजनैतिक सम्मेलन सैयद मूसा की अध्यक्षता में किया गया। जिसमें महात्मा गांधी के प्रेरणादायी उद्धोधन से लाखों लोग प्रभावित होकर पं. मुशरान का मन अंग्रेजो की नौकरी में नहीं लगा और उन्होंने तत्काल नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। संयोग से इसी वर्ष पं. श्याम सुंदर नारायण मुशरान का विवाह डॉ. कैलाश नाथ काटजू की भानजी डॉ.ए.एन. गुर्ट् की पुत्री से हुआ। कांग्रेस अब गाँव-गाँव, घर-घर में बस गई थी। 1933 के असेंबली चुनाव में कांग्रेस उम्मीदवार बाबू शंकर लाल दुबे प्रचुंड बहुमत से विजयी हुए। ठाकुर निरंजन सिंह डिस्ट्रिक्ट कौसिल के अध्यक्ष आनंद नारायण मुशरान उपाध्यक्ष तथा स्व. श्याम सुंदर नारायण मुशरान लोकल वोर्ड के अध्यक्ष बनाये गए। जब व्यक्तिगत सत्यागह की की घोषणा की तो नरसिंहपुर जिलें में ठाकुर निरंजन सिंह के नेतृत्व में नवयुवकों को संगठित किया जाने लगा। ठाकुर निरंजन सिंह के इस कार्य में पं. मुशरान ने अभूत पूर्व सहयोग दिया एवं जिले को एक सूत्र में बांधकर जिले के परिवेष को इस प्रकार प्राणवान बनाया कि उस समय करकबेल रेल्वे स्टेशन के स्टेशन मास्टर श्री व्यास जी ने पं. मुशरान के मन में एक नई लहर आंदोलित की और आंदोलन का मार्ग प्रशस्त करते हुए आस-पास के इलाके के सरपंच जमींदारों को संगठित कर युवको का एक संगठन तैयार किया जाए जिससे आंदोलन को सही ढंग से चलाया जा सके। व्यास जी की इस युक्ति से श्री मुशरान के दिलोदिमाग पर गहरा असर हुआ और उनके मन में एक नई चिंनगारी का सूत्रपात हुआ वास्तविक राजनैतिक जीवन की शुरूआत हुई।

अंग्रेजी शासन से लोहा लेने तथा आंदोलनो को चलाने के लिए पं. श्याम सुंदर नारायण मुशरान ने श्री व्यास जी की युक्तियों से प्रेरित होकर आस-पास के क्षेत्रों के प्रतिष्ठित प्रभावशाली गणमान्य व्यक्तियों को भोज हेतु आंमत्रित किया। यह भोज मानो संगठन की एक भूमिका थी। यही भोज परम्परा चलती रही और संगठन का मूल मंत्र फूँकती रही। स्व. मुशरान की वह प्रखर वाणी, क्रांतिकारी विचार धारा ने गाँव-गाँव में क्रांति का जो बिगुल फूँका उसकी चिनगारी पूरे जिले में दावानल बनती चली गई। अंग्रेजी हुकूमत की नींव डोलने लगी। लोग आंदोलन से जुड़ते चले गये। पं. मुशरान के निरंतर सम्पर्क और गाँव-गाँव में उद्‌बोधनों का असर यू हुआ कि आंदोलन गति पकड़ता चला गया। विदेशी वस्त्रों की होली जलने लगी। घर-घर में चरखे से सूत कात कर अंग्रेजी शासन का विरोध किया जाता था। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी श्री नाथूराम चौकसे ने श्री श्याम सुन्दर मुशरान के कार्यो को इस प्रकार याद किया- पं. मुशरान से मेरी मुलाकात 1937 में हुई। जब वे गाडरवारा में आये हुये थे रास्ते में कौड़िया से मैं उनके साथ हो गया

'निकल पड़े सत्याग्रही, सब चक्र सुदर्शन हाथ लिये।
और तिरंगे झंडे संग, मातृभूमि का गान लिये।।'

उस समय मुशरान जैसे राष्ट्रवादी, देशसेवी एवं आत्मबलिदानियों के साहस के बल बूते पर ही हमारा देश परीक्षा की उस आग में से तपकर कुंदन बन कर निकल सका। आज हम एक आजाद देश के नागरिक हैं हमारी आजादी के लिए हम उन त्यागवीर, सूरमाओं के सदा ऋणी रहेगें।

राजनीतिक जीवन में दीर्घकालीन अनुभव मध्यप्रदेश शासन में कृषि,

वित, स्वास्थ्य, उद्योग, श्रम, विद्युत, वन मंत्री के रूप में देखा जाता हैं। व्यवस्थाएं स्थापित की, वे आदर के साथ याद की जाती हैं। इस प्रकार सन् 1952 में वे प्रथम बार मध्यप्रदेश विधान सभा के सदस्य चुने गए। पं. मुशरान 1964 में कृषकों के एक प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व करते हुए अमेरिका की यात्रा पर गये। 1961 में पंजाब राव देशमुख के नेतृत्व में 11 सदस्यीय कृषि दल के रूप में पश्चिमी जर्मनी तथा यूरोपीय देशों की यात्रा की। आपकी कृषि जगत में रूचि एवं योग्यता को देखते हुए आपको मुख्यमंत्री द्वारका प्रसाद मिश्र ने अपने मंत्री मण्डल में कृषि मंत्री नियुक्त किया। एक ओर जहाँ, पं. मुशरान जी विधान सभा के अंदर कठोर अनुशासन का पालन करते थे एवं विधान सभा माननीय सदस्यों से उसका निष्ठापूर्वक अनुगमन कराते थे, वहीं वे सदन के बाहर सभी सदस्यों से आत्मीय संबंध बनाए रहते थे। यही कारण था कि विरोधी सदस्य भी उनका हृदय से आदर करते थे।

म.प्र. भूमि सुधार योजना विधेयक 1967 इस विधेयक द्वारा म.प्र. के कृषको की भूमि में सुधार किया गया। भूमि (पड़ती) को कृषि योग्य बनाया गया। 'कंटूर बंडिंग' की योजना को शुरू किया गया। कृषि मंत्री पं. मुशरान ने भिंड जैसे अत्यंत पिछडे जिलो को कृषि क्षेत्र में अग्रणी करने हेतु 'सघन कृषि योजना' संचालित की। 'भिंड जिले को वर्ष 1966-67 से ही सघन कृषि योजना के अन्तर्गत ले लिया गया हैं। 1956 में मंत्री बनने पर आपने नरसिंहपुर को जिले को दर्जा दिलाया तथा जिले में बिजली लगवाई, ग्रामों को शहरों से जोड़े जाने की शासकीय योजना के अंतर्गत सड़कों तथा नदियों पर पुल - पुलियों का निर्माण कराया। शहरी एवं ग्रामीण अंचलों में स्वास्थ सुविधायें मुँहैया कराईं। साथ ही 147 करोड की बरगी डेम योजना की स्थापना कर समृद्धि में एक नये आयाम का अध्याय जोड़ा। शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय नरसिंहपुर पंडित मुशरान की ही देन हैं। वे महिला विकास के प्रति अत्यंत चिंतित थे। इस हेतु आपने बहुत से महत्वपूर्ण कार्य किए। नरसिंहपुर में महिला सरकारी बैंक की स्थापना कराई। आपके प्रयासों के द्वारा नरसिंहपुर में जिला चिकित्सालय की स्थापना हुई।'

पंडित जी का हृदय जन पीड़ा से विहवल हो जाता था, जब कभी कोई किसान या आम आदमी अपनी समस्या लेकर उनके पास आता तो वे उसे सुनकर छटपटा उठते थे ऐसा ही एक उहारण देखा गया जब 1961 में नरसिंहपुर ही नहीं वरन संपूर्ण महाकौशल क्षेत्र में एक भीषण अकाल पड़ा और सभी कुएं सूख गए। शासकीय योजना के तहत् किसानो को ट्यूबबैल बनवाने के लिए सब सिडी प्रदान की गई। और देखते ही देखते यह बहुत बड़ा संकट पंडित जी के प्रयासों से टल गया। महाकौशल क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक, संस्कृति, बौद्धिक विकास की कहानी पंडित मुशरान के कृत्तित्व की कहानी है। आपके द्वारा किए गए कार्यो से यह संपूर्ण क्षेत्र आज समृद्ध दिखाई दे रहा है। एवं नरसिंहपुर की माटी में जन्में एक ऐसे महान देशभक्त, सपूत, स्वतंत्रता सेनानी, प्रशासक के कृतित्व की कहानी स्वयं कह रहा है, जिसने अपना सारा जीवन ही यइंद राष्ट्राय इंद नम् की तरह राष्ट्र को समार्पित कर दिया और कभी स्वयं के व्यक्तिगत जीवन की चिंता न करते हुए देश के एक सजग प्रहरी की तरह अपनी कर्त्तव्य निष्ठा का पालन किया ऐसे महान परूष के कृत्तित्वों से यह संपूर्ण महाकौशल क्षेत्र अथवा नरसिंहपुर जिला कभी उऋण नहीं हो सकता । आज भी ,स्वतंत्रता सेनानी, कर्त्तव्य परायण नागरिक, देशभक्त के रूप में सदैव इतिहास के पन्नों में अमर हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'प्रयास' पत्रिका, पृ. 18 नव जागृति प्रकाशन नरसिंहपुर, वर्ष 1999।
2. गोपीलाल राय- 'गाँधीवादी दर्शन के अडिग अनुयायी- स्व. श्याम सुदर नारायण मुशरान दैनिक नवीन दुनिया पृ. 1, दिनांक- 16/7/85, प्रकाशन- नरसिंहपुर।
3. कर्नल अजय नारायण मुशरान (म.प्र. शासन वित्तमंत्री) से लिए गए साक्षात्कार पर आधारित, दि. 11/12/03 स्थान-भोपाल।
4. पं. प्रहलाद ओरिया से लिये गये व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित, दि. 30/01/06, स्थान-लौकीपार ,नरसिंहपुर (म.प्र.)।
5. श्रीमति रत्ना नागू (पं. एस.एस.एन. मुशरान की सुपुत्री) के व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित, दि. 30/01/06, स्थान-नरसिंहपुर (म.प्र.)।
6. श्रीमति रत्ना नागू (पं. मुशरान की सुपुत्री) के व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित, दि. 30/1/06, स्थान-नरसिंहपुर (म.प्र.)।
7. वही गोपीलाल राय- ' गाँधी दर्शन के अडिग अनयायी- स्व. श्याम सुन्दर नारायण मुशरान' दैनिक नवीन दुनिया, पृष्ट-1 दिनांक 16/7/85 प्रकाशन स्थान-नरसिंहपुर (म.प्र.)।
8. भगवंतराव मंडलोई स्मृति ग्रंथ, 'म.प्र. के विभूति पुरूष' पृष्ट संख्या-31, प्रकाशन स्थान भोपाल प्रकाशन वर्ष1980।
9. कर्नल अजय नारायण मुशरान जी द्वारा दिए गए साक्षात्कार पर आधारित, दिनांक 11/12/03, स्थान भोपाल।
10. वही
11. स्वंतत्रता सेनानी गेंदालाल ताम्रकार द्वारा दिए गए साक्षात्कार पर आधारित, दिनांक 10/03/05, स्थान चीचली ,गाडरवारा नरसिंहपुर (म.प्र.)।
12. स्वतंत्रता सेनानी डालचंद मोदी के द्वारा दिए गए साक्षात्कार पर आधारित, दिनांक 11/03/05, स्थान कौड़िया, गाडरवारा नरसिंहपुर (म.प्र.)।
13. स्वतंत्रता सेनानी, हल्कू सिंह वर्मा से लिए गए साक्षात्कार पर आधारित, दिनांक -12/03/05, स्थान- गाडरवारा नरसिंहपुर (म.प्र.)।
14. स्वतंत्रता सेनानी, लक्ष्मीनारायण कठल के साक्षात्कार पर आधारित, दि. 12/03/05, स्थान-गाडरवारा नरसिंहपुर (म.प्र.)।
15. मध्यप्रदेश विधान सभा कार्यवाही खंड-1 क्र.-1,1 7/4/67, पृ. 633 ।
16. वही पृ. 452
17. नवीन दुनिया- अखवार, लेख- 'गॉधीवादी दर्शन के अडिग अनुयायी एवं राजनीति के सशक्त पंडित मुशरान' दि. 16/07/85, पृ.2 जबलपुर (म.प्र.)।

****

बन्दी उत्पीड़न, एक विश्वव्यापी समस्या

डॉ. संजय कुमार मिश्रा *

प्रस्तावना – सुधारवादी विचारधारा के विद्वानों का विश्वास है कि आपराधिक प्रवृत्ति एक प्रकार का रोग है, जो सामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक परस्थितियों की उपज हैं। अत: अपराधी को सजा न दे कर उसका उपचार उसी प्रकार किया जाना चाहिये जैसे किसी रोगी का उपचार किया जाता हैं'।

बंदी उत्पीड़न एक विश्वव्यापी समस्या है जो लिंग, भेद, उम्र और स्वास्थ्य की दशा का ख्याल न करके सभी व्यक्तियों को दी जाती है। ये मानवीय अधिकार के उल्लंघन का सबसे खराब पहलू है जो अति गंभीर और चौंकाने वाली समस्या भारत जैसे तीसरे विश्व के देशो में व्याप्त है। पुलिस जेल अधिकारियों सेना एवं कानून का पालन कराने वाली संस्थाओं के द्वारा लगातार भयानक उत्पीड़न ऐसे लोगों को दी जाती है, जो संदेहास्पद मुजरिम हो तथा जेल के कैदी हो और यह दिन प्रतिदिन गंभीर रूप से बढ़ रही है। मुश्किल से एक सप्ताह ही नहीं निकल पाता है जब कि अखबारो में इस प्रकार के उत्पीड़न एवं बन्दियों की मृत्यु की खबरें न छपती हो। ये बंदी उत्पीड़न दुराग्रही व्यक्तियों जैसे तोड़फोड़ करने वाले आतंकवादी एवं डाकुओं तथा कठोर हृदयहीन अपराधी भी है तो क्या पुलिस को यह अधिकार मिल जाता है कि कानून की आड़ लेकर उन पर अमानवीय अत्याचार करें। अधिकतर ऐसे उत्पीड़न का शिकार वे लोग होते है, जो आर्थिक रूप से गरीब है एवं सामाजिक रूप से अधिकारहीन है ऐसे उत्पीड़ित व्यक्ति अधिकतर वे लोग होते है जो अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, आदिवासी, महिलाएं, मजदूर वर्ग तथा भूमिहीन श्रमिक होते हैं।

यह बंदी उत्पीड़न आजकल इतना सामान्य हो गया है कि न केवल पुलिस एवं नौकरशाह अपितु सामान्य जनता भी पुलिस के द्वारा छानबीन करने को एक सामान्य प्रक्रिया ही समझती है। फलस्वरूप इस तरह के उत्पीड़न की खबरें समाज को क्षणिक पहुँचाती हैं, परन्तु जब उत्पीड़न का भयावह रूप सामने आता है, तो जनता विरोध स्वरूप चिल्लाने लगती है और तभी शासन ऐसे उत्पीड़न की तरफ ध्यान देता है क्योंकि जनता की आवाज के सामने दूसरा विकल्प नहीं रहता हैं।

फिर भी दोषी पुलिस कर्मचारी का अधिक से अधिक सजा यह होती है कि वह कुछ समय के लिये मुवत्तिल कर दिया जाता है और कुछ समय पश्चात ही जब जनता की याददाशत से ऐसी घटनाएं निकल जाती है, तो दोषी पुलिस अधिकारी पुन: नौकरी में आ जाता हैं।

भारत के एमनेस्टी रिर्पोट के अनुसार 1 जनवरी 1985 से 1 नवम्बर 1991 की अवधि में पुलिस एवं रक्षा सेनाओं के द्वारा इस तरह कि यातनाओं से 415 व्यक्तियों की मृत्यु हुई है। बंदियों की मृत्यु की छानबीन करने पर इसी रिर्पोट में कहाँ गया कि 42 घटनाओं से अधिक कि जाँच न्यायधीशों द्वारा नहीं की गई के द्वारा केवल 3 घटनाओं में दोषी अधिकारियों को सजा मिली।

शासन ने वर्ष 1993 में राज्यसभा में यह स्वयं स्वीकार किया कि जनवरी से मार्च 1993 में अकेले दिल्ली में 3 महिने के अंदर पुलिस हिरासत में 46 व्यक्तियों की मृत्यु हुई। जब देश की राजधानी में यह स्थिति है तो दुरदराज के गाँवो तथा आदिवासी क्षेत्रों में भयावह स्थिति की कल्पना सहजता से की जा सकती है, जहाँ बंदी यातनाओं के उदाहरण लोगों के ज्ञान में भी नहीं आते हैं।

उत्पीड़न क्या है– उत्पीड़न प्राय: अत्यधिक यातना चाहे वह शरीरिक हो, मानसिक हो या मनोवैज्ञानिक हो तथा इस उद्देश्य से किसी व्यक्ति को उसकी अन्तर्आत्मा के विरूद्ध कुछ कहने या करने के लिये विवश किया जाये। इसके मायने यह भी है कि संदेहास्पद मुजरिम को किसी एकांत स्थान में रोककर परिवार, मित्रो एवं कानूनी सहायता से दूर रख कर विवश किया जाता है। छानबीनकर्ता प्रत्येक चीज को नियंत्रित करता है। यहाँ तक कि उसके जीवन करे खुले रूप में जो इसका अभ्यास करते है वे उत्पीड़न को उत्पीड़न मानते ही नहीं। ये लोग इसको संदिग्ध छानबीन, प्रश्नकर्ता या परीक्षा लेना आदि शब्दों के नाम से पुकारते हैं।

किसी भी नाम से पुकारा जाए किन्तु यह हमेशा आत्याचार के रूप में ही होता हैं। उत्पीड़न का इतिहास काफी पुराना है, अठारवीं शताब्दी के अंत तक शारीरिक यातना देना कानूनी माना जाता था और शासन की और से तथा कई देशों में पूछताछ व छानबीन का एक तरीका माना जाता था, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद ही उत्पीड़न का कार्य मानव अधिकार के उल्लंघन के समान माना गया। और यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन गई, उत्पीड़न को एक निरोध के रूप में सम्मलेन में सन् 1949 एवं मानव अधिकार 1948 के अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा से इस प्रकार के उत्पीड़न की एक प्रस्ताव के द्वारा आलोचना की गई। संयुक्त राष्ट्र संघ ने अन्य चीजों के आलवा उत्पीड़न की परिभाषा इस प्रकार से की हैं–

'उत्पीड़न का तात्पर्य यह है कि ऐसा कोई कार्य जिसके द्वारा मानसिक अथवा शारीरिक कठोर पीड़ा पहुँचाई जाये तथा जानबुझ कर किसी व्यक्ति को इसके द्वारा किसी व्यक्ति से कोई सूचना ली जाये या कोई तथ्य स्वीकार कराया जाए, या उसके किसी कार्य के लिये सजा देने के उद्देश्य से अथवा किसी कारण से दूसरो से अलग करने के उद्देश्य से सरकारी अधिकारी के द्वारा की जाती है। किन्तु इसमें ऐसे कानूनी तरीके शामिल नहीं है, जो अचानक दर्द या कष्ट उत्पन्न करते हों'। यह परिभाषा काफी उदार व विशाल हैं, क्यों कि यह किसी व्यक्ति के शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के कष्टों को शामिल करती है किन्तु इस परिभाषा में कानूनी तरीके से उठाए गये तरीके के द्वारा किसी व्यक्ति की पीड़ा या कष्ट को उत्पीड़न के दायरे से बहार रखा गया है। यह एक गंभीर त्रुटी हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ किसी देश के कानून संगत उत्पीड़न को उत्पीड़न नहीं मानती है तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के देश कानून संगत उत्पीड़न को जारी रख सकते है। इस परिभाषा के अनुसार कई मुस्लिम देशों के कानून में कठोर

---

* अतिथि विद्वान, शासकीय जे.एन.एस.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शुजालपुर (म.प्र.) भारत

शारीरिक यातना देना जैसे सबके सामने कोड़े मारना, सबके सामने अंगभंग करना विधि संगत माना जाता हैं। इस परिभाषा के अनुसार किसी देश के विधि संगत यातना को उत्पीड़न नहीं माना जाता है। यह परिभाषा इसलिये अवांछनीय है तथा इस त्रुटी को शीघ्र ही समाप्त होना चाहिये।

भारतीय संविधान में उत्पीड़न को लेकर न्यायिक दृष्टिकोण – पुलिस के द्वारा की गई ज्यादितयों से संबंधित कुछ प्रकरण–

'खडक सिंह विरूद्ध उत्तर प्रदेश राज्य ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 1295' इस मामले में संदिग्ध व्यक्तियों पर निगरानी रखने के लिये बनाऐ गये यू.पी.पुलिस रेग्यूलेशन्स (उत्तर प्रदेश पुलिस विनियम) के अध्याय 20 में उल्लेखित छः अध्युपायो को उच्चतम न्यायालय के सूक्ष्म संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (घ) (भारत राज्य क्षेत्र में सर्वत्र अबाध संचरण) तथा अनुच्छेद 29 में उपबन्धित (प्राण व देहिक स्वंतत्रा का अधिकार) के मूल अधिकारों के आधार पर चुनौती दी गई हैं।

बहुमत का निर्णय देते हुए न्यायाधिपति एवं राजगोपाल अयंगर ने अनुच्छेद 19(1)(घ) और अनुच्छेद 29 के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए कहा कि जहॉ तक संरक्षण की स्वतंत्रता का सम्बन्ध है, वह केवल और अनन्यत: अनुच्छेद 19(1)(घ) में ही प्रदान की गई है और अनुच्छेद 29 में जिस 'पर्सनललिबर्टी' का उल्लेख है उसमें संचरण की स्वतंत्रता सम्मिलित नहीं है। उन्होने कहाँ कि अनुच्छेद 19 के खण्ड (1) में दी गई सातो स्वतंत्रताऐ अनुच्छेद 29 की 'पर्सनललिबर्टी' की परिधि से बाहर है, अत: जब इन सातो स्वतंत्रताओ में से किसी के न्यून या हनन की समस्या प्रस्तुत हो तो केवल अनुच्छेद 19(1) का उपयुक्त उपखण्ड ही सुसंगत होता है और अनुच्छेद 29 का प्रयोग असंगत होता है। परन्तु उन्होंने यह भी कहा कि अनुच्छेद 29 की देन केवल बंदीकरण के विरूद्ध स्वतंत्रता की देन नहीं है। अनुच्छेद 29 में दैहिक स्वतंत्रता का व्यापक अर्थ है, जिसमें बंदी न बनाये जाने के अतिरिक्त, अपनी स्वेच्छा से भोजन, निद्रा आदि वे सब शारीरिक क्रियाऐ करने की स्वतंत्रता है जो 19(1) की सात स्वतंत्रताओं को निकालने के बाद बची रहती है, इस प्रकार बहुमत के अनुसार अनुच्छेद 19 की यह अपेक्षा है कि इसमें उल्लेखित सात स्वतंत्रताओं में से प्रत्येक पर उसी दशा में निर्बन्धन लगाए जा सकते है। जबकि (1) निर्बन्धन विधि द्वारा प्राधिकृत हो और (2) वे अनुच्छेद 19 के सुसंगत खण्ड में दिये गये उद्देश्यो के हित में निर्मित युक्तियुक्त निर्बन्ध हो अनुच्छेद 29 की यह अपेक्षा है कि इन सात स्वतंत्रताओं के अतिरिक्त, व्यक्ति की शेष दैहिक स्वाधिनताओं पर निर्बन्धन तभी लगाए जा सकते है, जबकि वे निर्बन्धन विधि द्वारा प्राधिकृत हो। इस प्रकार बहुमत के अनुसार उक्त पुलिस विनियम के अध्युपायो में से प्रत्येक की वैद्यता पर या तो अनुच्छेद 19(1) (घ) में दी गई संचरण की स्वतंत्रता के संदर्भ में, क्योंकि ये दोनो ही संवैधानिक उपबंध किसी भी अध्युपाय के लिये एक साथ सुसंगत नहीं हो सकते और दोनों ही स्थितियो में एक बात समान रूप से आवश्यक है और वह यह है कि प्रत्येक अध्युपाय विधि द्वारा प्राधिकृत हो। परन्तु यह स्पष्ट था कि यू.पी.पुलिस रेगूलेशन्स (उत्तर प्रदेश पुलिस विनियम) किसी अधिनियम या अन्य विधि द्वारा प्राधिकृत नहीं थे। वे तो पुलिस विभाग द्वारा अपने अधिकारियों के मार्गदर्शन के लिये अपने आप ही बना लिए गए थे। अत: न्यायालय ने प्रारंभ में ही स्पष्ट कर दिया कि इन में से कोई भी अध्युपाय यदि अनुच्छेद 19(1) (घ) या अनुच्छेद 29 में या इनमें से किसी में भी दिए गए मूल अधिकार को निर्बन्धित करता हुआ पाया जाऐगा तो वह विधि द्वारा प्राधिकृत न करने के आधार पर अवेध हो जाऐगा।

इन अध्युपायों में प्रथम था पुलिस द्वारा गुप्त रूप से संदिग्ध व्यक्ति के घर या उसके आसपास निगरानी रखना। इसे बहुतमत ने दोनों में से किसी मूल अधिकार पर निर्बन्धन नहीं समझा। दूसरा था रात के समय संदिग्ध व्यक्ति के घर पर दरवाजा खटकाना और यह पता लगाना की वह घर में है या नहीं। इसे बहुमत ने संचरण की स्वतंत्रता से तो असम्बद्ध पाया परन्तु अनुच्छेद 29 की दैहिक स्वाधिनता का अतिलघन करने वाला पाया क्योंकि इससे व्यक्ति के आराम करने, सोने आदि की स्वतंत्रता का हनन होता है। अत: इस अध्युपाय को अवैध घोषित कर दिया गया। अन्य अध्युपाय जिसका सम्बन्ध पुलिस अधिकारियों द्वारा समय समय पर संदिग्ध व्यक्ति के रहन सहन आमदनी, संगति, प्रतिष्ठा आदि के विषय में पुछताछ करने उसके आने जाने पर रिपोर्ट तैयार करने और उसके विषय में अन्य सूचना एकत्रित करने से था, न तो अनुच्छेद 19(1) (घ) के लिये और न अनुच्छेद 29 के लिये सुसंगत पाए गये। इनसे संदिग्ध व्यक्ति के किसी तमल अधिकार का अतिलंघन नहीं होता और जहाँ तक स्वयं संदिग्ध व्यक्ति से ही पूछताछ करने का प्रश्न है वह चाहे तो उत्तर देने से इंकार भी कर सकता है।

यहाँ मुख्य रूप से यह कहना आवश्यक है कि बहुमत ने अर्जीदार का यह तर्क अस्वीकार कर दिया कि इन अध्युपायों का और इनमें उल्लेखित पूछताछ आदि का उसके मन पर यह प्रभाव पड़ता है कि वह संचरण की और से बंद कर देता है, और इस प्रकार ये अध्युपाय उसकी संचरण की स्वतंत्रता पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धो की ही वैधता पर न्यायालय विचार कर सकता हैं, अप्रत्यक्ष और अदृश्य निर्बन्धो पर नहीं।

विसम्मति प्रकट करते हुऐ न्यायाधिपति कोका सुब्बाराव ने कहा कि ये सारे अध्युपाय अवैध है और ये अनुच्छेद 29 और अनुच्छेद 19(1)(घ) दोनों के ही आधार पर इतना ही नहीं बल्कि साथ ही अनुच्छेद 19(1)(क) के आधार पर भी अवैध है। उन्होंने कहा कि संचरण की स्वतंत्रता अथवा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता अनुच्छेद 19 में दी गई है। इसका अर्थ यह नहीं है कि उसका समावेश अनुच्छेद 29 में दी गई दैहिक स्वाधिनता में नही होता। ये सब मूल अधिकार अलग अलग हैं, परन्तु इनके घेरे एक दूसरे को अंशत: आच्छादित भी करते हैं। इसलिये संविधान का सही विवेचन यह होना चाहिऐ कि यदि कोई भी विधि या कार्यपालक कार्य एक साथ ही मूल अधिकारो के एक से अधिक उपबंधो को छुता हो तो उसे उनमें से प्रत्येक उपबंध को संतुष्ट करना होगा अन्यथा वह अवैध हो जाएगा। उसके लिये यह पर्याप्त नहीं हो सकता कि वह किसी एक उपबंध से बच निकलता है क्योंकि किसी एक उपबंध की मार में आ जाने से वह नष्ट हो जायेगा ओर अन्य उपबंधों की मार में न आना उसे बचाने के लिये कारगर नही हो सकेगा।

विसम्मति प्रकट करने वाले न्यायधिपतियों ने अर्जीदार का यह दावा मान लिया की पुलिस के इन अध्युपायो से अर्जीदार को अपने संचरण के अधिकार के उपयोग के प्रति उत्साह प्रतिरोध में नहीं दिया जाता। इसके अतिरिक्त केवल सत्र न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्ड सुनाए जाने से ही हीनता उत्पन्न होती है और इस प्रकार के अध्युपाय अनुच्छेद 19(1)(घ) के उसके अधिकार का अतिलघंन करते है। उन्होंने यह भी कहा कि अर्जीदार नागरिक का मूल अधिकार केवल एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने का ही अधिकार नही है बल्कि अबाध रूप से जाने का अधिकार है। जब पुलिस रात दिन पीछे पड़ी हो ओर कदम कदम पर पुछताछ व पीछा करती हो तो 'अबाध रूप से मिलने जूलने वाले व्यक्तियों से बोलकर अपने भाव भी व्यक्त नही कर सकता। इसलिये ये अध्युपाय अनुच्छेद 19(1)(क) में दी गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का भी अतिलंघन करते हैं और इस आधार पर भी अवैध हैं। अनुच्छेद 29 के विषय में विसम्मति प्रकट करते हुए न्यायधिपति सुब्बाराव ने एक

बहुत ही महत्वपूर्ण बात यह कही कि इस अनुच्छेद में उल्लेखित दैहिक स्वाधीनता में केवल अबाध रूप से संचरण की ही स्वतंत्रता समाविष्ट नहीं है बल्कि इसमें अपने एकांत (प्राइवेट) जीवन पर अतिक्रमण से स्वतंत्रता भी सम्मलित है।

विद्धान न्यायाधिपति ने कहा–'यह सच है कि हमारे संविधान ने अपनी एकांतता के अधिकार को अभिव्यक्त रूप से एक मूल अधिकार घोषित नही किया है परन्तु यह अधिकार दैहिक स्वाधिनता का एक मर्मभूत अंग हैं।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अपराध शास्त्र एवं आपराधिक प्रशासन – एम.एस.चौहान।
2. बंदी अधिनियम 1894
3. अपराध शास्त्र एवं आपराधिक प्रशासन – मुरलीधर चतुर्वेदी एवं शरतेन्दु चतुर्वेदी।
4. भारत का संविधान – पारस दिवान।
5. भारत का संविधान – जयनारायण पाण्डे।
6. फ्री–प्रेस – इन्दौर।
7. हिम्मत पत्रिका (किरण बेदी) – नई दिल्ली।

****

नागालैण्ड के बेमिसाल उत्सव

डॉ. राजेन्द्र सिंह चंदेल *

प्रस्तावना – विराट प्राकृतिक सम्पदा से भरपूर नागालैण्ड प्रदेश के पश्चिम और उत्तर में असम,उत्तरपूर्व में अरूणाचल प्रदेश और दक्षिण में मणिपुर है। विभाजन के समय नागालैण्ड असम प्रदेश का ही हिस्सा था। जो नागाहिल्स के नाम से जाना जाता था। 1961 में नागाहिल्स को नागालैण्ड नाम दिया गया, जो एक दिसम्बर 1963 को असम से अलग होकर भारत का 16 वॉ राज्य बना,सम्पूर्ण विश्व में भारत ही एक ऐसा देश है जहॉ हर धर्म के लोग आपस में एकता और सौहार्द की मिशाल कायम करते हुए, मिलकर खुशियां बांटते है। ऐसे में भारत के उत्तर पूर्व का एक राज्य नागालैण्ड भी त्यौहारों से अछूता नही रहा है। जनजाति वाला यह राज्य उत्सवों की धरती है, यहॉ की विभिन्न जनजातियों भर रंग बिरंगे उत्सव मनाते रहते है।

नागालैण्ड राज्य में 14 प्रमुख जनजातिया है व कई उपजातिया भी है, इनकी पारंपरिक वेशभूषा एवं रहन-सहन की तरह इनके त्यौहार भी अलग अलग है, लेकिन ये सभी त्यौहार कृषि पर आधारित है। नागालैण्ड की 90 प्रतिशत जनसंख्या कृषि आधारित है। इसी कारणवश लगभग सभी उत्सव अच्छी फसल होने के उद्देश्य से मनाए जाते है। चाहे फसल की बुआई से पहले या बाद में अच्छी फसल होने के लिए भगवान को धन्यवाद दिया जाता है। सभी त्यौहार का रूप लेकर नागाओं लाता है। वैसे तो अलग-अलग उत्सवों की अलग-अलग नागा प्रजातियों की धार्मिक भावनाएं जुटी रहती है, फिर भी सभी में उसी परमात्मा ईष्वर की पूजा की जाती है। सभी जनजातियों के उत्सव मे जानवरों की बलि और चावल से बनी विशेष खीर का समायोजन मिलता है। वही पर नृत्य-गीत की भूमिका अहम होती है।

2001 जनगणना के अनुसार नागालैण्ड प्रदेश में 89.27 प्रतिशत धर्मान्तरण ईसाई है, जो सेवा की आड़ मे ईसाई धर्म तो अपना लिया, लेकिन विदेशी शक्तियॉ उनको उनकी मूल संस्कृति से नहीं हटा पाई । नागा लोग मूल्यता भगवान षिव के उपासक माने जाते है, व इनकी पूजा पद्धति व त्यौहार हिन्दू रिति रिवाजों के अनुसार होती हैं। नागालैण्ड के कुछ उत्सव निम्न है-

1. **चाकेसांग जनजाति –** चांकेसांग जनजाति वर्ष भर में सात प्रमुख उत्सव मनाते है, जिसमें 'सुकरून्ये' महत्वपूर्ण उत्सव है। वास्तव मे, सुकरून्ये 11 दिवसीय त्यौहार हैं। उत्सव का पहला दिन 'सेडू' 15 जनवरी का मनाया जाता है। इस दिन जानवरों की बलि देकर उसके खून को हरेक घर में, मुख्य जगहों पर छिड़का जाता है। केले के पत्ते से बने दोनों में प्रभु को 'सुकरून्ये' शराब अर्पित की जाती है। दूसरे दिन 'सुकरू' पुरूषों के लिये होता है। पुरूष और नए घर को सुकरू के तहत दोषमुक्त किया जाता है। जिस दिन यह रस्म अदा की जाती है, उस दिन पुरूष पक्षियों का पकड़ने जंगल जाते है, और पकडे गए पक्षियों को एक लम्बे बांस पर टांग दिया जाता हैं। यह बांस 'सुकरून्ये' का प्रतीक माना जाता है। तीसरा दिन 'थुनो नुसो' सिर्फ महिलाओं के लिए होता है। चौथा दिन 'मुथी सेल्हु' धार्मिक रस्मों के बंधन से अलग होने का दिन होता है। पांचवे दिन 'सेडू जोगू' का मतलब है, उत्सव की सफलता। अंतिम व छटा दिन 'थुन्टो भुक्रा''कहलाता है। यह सुकरून्ये उत्सव के समाप्त होने का दिन है।

'सुखेन्यी' भी चाकेसांग जनजातियों का एक प्रमुख उत्सव है, यह छ: मई से मनाया जाता है। चार दिन तक चलने वाले इस उत्सव मे पहली सुबह गांव का पुजारी सबसे बागं देने वाले मुर्गे की बलि चढ़ाता है। गांव के पुरूष सुबह सवेरे स्नान कर अपने को पवित्र करते है। उत्सव के दौरान नई शराब और बेहतर मांस का प्रयोग दावत में किया जाता है। साथ ही विभिन्न वर्गो के बीच कई तरह के खेल व गीत प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। कई गांव मे युवक गांव की सुन्दर लड़की की घोषणा करते है। उत्सव के अन्त में पारंपरिक खेल व संगीत में इस्तेमाल किए जाने वाले सभी सामानो को रख दिया जाता है। यह रस्म के 'हाले मेश्वी' कहलाती है। इसका प्रयोग तब तक नहीं होता जब तक अगली फसल उत्सव में इस्तेमाल के लिए जरूरी रस्मों-रिवाज न किए जाए, कुल मिलाकर 'सुखेन्यी' मनोरंजक गतिविधियों और एक अच्छे नये साल के स्वागत का उत्सव है।

2. **कूकी जनजाति –** कूकी जनजाति का मिमकुट उत्सव सबसे महत्वपूर्ण है। मिमकुट उत्सव कुकियों की फसल आने पर मनाया जाता हैं। यह त्यौहार जनवरी की 17 वी तारीख से मनाते है, व एक सप्ताह तक चलता है। ऐसा कहा जाता है कि शैतान 'थिल्हा' को प्रसन्न करने के लिए दी जाने वाली बलियों के क्रम में इन उत्सवों की शुरूआत होती है। गांव का तांत्रिक (ओझा) 'शेम्पू'' देवता को खुश करने के लिए मुर्गे की बलि देता है। उत्सव के समय नृत्य गीत व दावत भी होती है

3. **अंगामी जनजाति –** अंगामियों का 'सेकेरगी' उत्सव प्रमुख त्यौहार है। यह फरवरी माह में मनाया जाता है, यह उत्सव दस दिन तक मनाया जाता है। इस उत्सव क आरंभ मे, चावल के पानी की कुछ बुंदे, एक जग, जिसे 'जुम्हो' कहा जाता है, से लेकर पत्तो में रख घर की महिलाएं तीन प्रमुख जगहों पर रख देती है। उत्सव के पहले दिन घर के सभी जवान व बुढ़े पुरूष गांव के कुएं पर स्नान करते है। रात्रि में दो जवान कुए की सफाई करते है, यहॉ से कोई पानी नही निकालता हैं । साथ ही महिलाओं को कुएं का पानी छुने की इजाजत नहीं होती हैं। दूसरे दिन सभी प्रक्रिया धार्मिक विधियों के अनुरूप की जाती है, इस दिन नए वस्त्र पहनते है और कुए के पानी से अपने आप को पवित्र करते हैं, और फिर मुर्गे की बलि दी जाती है। उत्सव के चौथे दिन से तीन दिनों तक रगांरंग कार्यक्रम चलता है। उत्सव के दौरान,समुदाय की कुंवारी लड़कियां अपने बाल मुंडवाती है, और युवकों के साथ लोकगीत गाती है।

4. **जेलिआंग जनजाति –** जेलिआंग जनजाति के दो प्रमुख उत्सव होते है, 'हेगा' और 'चेगागाही '। हेगा उत्सव 10 से 15 फरवरी तक मनाया जाता है। ईश्वर से समृद्धि , भाग्य और साहस का आर्शीवाद मिले इसी कामनी के

---

* भारतीय जनता पार्टी नार्थ ईस्ट इण्डिया सम्पर्क सेल राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य (म.प्र.) भारत

साथ यह मनाया जाता है। पूरे उत्सव के दौरान कोई भी पुरूष अपनी पत्नि के साथ होता है, ऐसा अशुभ माना जाता है। यह उत्सव नवयुवकों के लिये खास है। वही चेगागाही उत्सव अच्छी फसल व अच्छे स्वास्थ्य के लिए, व ईष्वर से आर्शीवाद मिलने की कामना की जाती है।

5. **चांग जनजाति –** चांग जनजाति के लोग मुख्यत: छ: उत्सव मनाते है। इनमें से तीन 'जिन्यूलेम', 'कुंडैगलेम' और 'पाओंग लेम' हाओगैग जाति और 'मुआंग', नाक्यू और 'मोन्यू लेम' उपजाति द्धारा मनाए जाते है। 'कुंडैगलेम' उत्सव चांग कलैण्डर के आठवे माह (अप्रैल) में मनाया जाता है, जबकि चांग कलेण्डर के अनुसार 'नाक्यूलेम' उत्सव ग्यारवे माह (जुलाई) मे मनाया जाता है। 'नाक्यूलेम' उत्सव के दौरान सूर्यास्त के समय सभी घर में रहते है। घर के आगे पीछे के दरवाजे पर 'बिन्दु लैग' नामक बीज को धान के पुआल के नीचे दबाकर जलाया जाता है। बीज फटकर आवाज करता है, आवाज सुनने के लिए सभी उपस्थित रहते है, अगर बीज फटकर घर से बाहर की ओर छिटकता है, तो शुभ माना जाता है। यह जनजाति के लोग ऐसा मानते है कि इसी दौरान 'शांबुली मुघा' नामक देवता सभी घरों में जाते हैं। इस माह में जन्मी बेटियों का नाम 'मोयू' रखा जाता है।

नाक्यूलेम उत्सव के विषय में कहा जाता है कि पुराने दिनो में दुनिया अंधेरे में ऐसे घिर गई थी, कि दिन और रात का फर्क ही नहीं रहा था। जब सातवें दिन प्रकाश लौट आया, तब लोग खुशी से झूम उठे और ईश्वर को धन्यवाद देने लगे। यही खुशियां 'नाक्यूलेम' उत्सव के तौर पर मनाई जाने लगी, यह उत्सव चांग कैलेण्डर क ग्यारवें माह (जुलाई) मनाया जाता है। उत्सव के दूसरे दिन जो अमावस्या का दिन होता है, 'योजेम' कहलाता है। इस दिन कोई भी गांव से बाहर नहीं जाता है। उत्सव के दौरान खेल प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। महिलाएं 'कोगरवीन' बजाती है। युवा, बुजुर्ग , पुरूष व महिलाएं दिनभर मौज मस्ती करते है, लेकिन नृत्य नहीं होता है। हर घर के आगे एक पेंड़ लगाना जरूरी माना जाता है, ताकि वह बुरी नजर से बचे रहे , इस लिए बच्चे भी इन पत्तियों को अपने कानो मे खोसकर रखते है।

6. **कोन्यक जनजाति का उत्सव –** नागालैण्ड की कोन्यक जनजाति हर वर्ष अप्रैल के प्रथम सप्ताह में आओलियांग मोन्यू उत्सव मनाते है। यह खेतों मे बुआई होने पर, और पुराना साल खत्म होने व बसंत मे फूलों के खिलने की शुरूआत के साथ, नववर्ष के स्वागत मे मनाया जाता है। ईश्वर से अच्छी फसल की प्रार्थना छ: दिनों के इस उत्सव में किया जाता है। पहला दिन 'होई लाई चा निह' आओलियांग मोन्यू की तैयारी का दिन है। इस दिन उत्सव की सभी तैयारियॉ कर ली जाती है, तथा हर परिवार के मुखिया अपने झूम खेतों पर जाकर मुर्गे की बलि देता है। दूसरे दिन 'यि मोक को निह' को पालतू जानवरों की बलि दी जाती है। तीसरे दिन का नाम 'यिन मोक शेक निह' जिसका अर्थ है, जानवरों को मारना है, युवक लांग डूग बनाते है, और जानवरों को मारने के लिए अपने घरों में जाते है। आओलियाग मोन्यू का चौथा दिन 'लिगन्यूनिह' उत्सव का सबसे अच्छा दिन माना जाता है। इस दिन सभी अच्छे गहने पहनते है, और सामुदायिक रूप से दावतो का आयोजन होता है, और नृत्य गीत के साथ मौजमस्ती का आयोजन होता है। पांचवां दिन 'लिग्हा निह' एक दूसरे के सम्मान के लिए मनाया जाता है, उत्सव का अंतिम दिन 'लिंगशाह निह' आओलियांग उत्सव के दौरान गंदे हुए घरों और गांव की सफाई करने के रूप मे मनाया जाता है।

7. **लोथा जनजाति का उत्सव –** लोथा जनजाति का प्रमुख उत्सव 'तोखू इमोग' जो एक फसलोत्सव है। फसल हो जाने और कोठरियां अनाज भर जाने के बाद लोग इसे उत्सव के रूप मे मनाते है। नौ दिवसीय 'तोखू इमाग' नवम्बर के प्रथम सप्ताह में मनाया जाता हैं। सम्पूर्ण गांव के लोग इस उत्सव में भाग लेते है। उत्सव की खास बात यह है, नृत्य,गीत, व मौज मस्ती। दोस्तो के बीच पकाए मांस का आदान प्रदान करना हैं। दोस्ती ज्यादा मजबूत हो इसके लिए अगर कोई 12 टुकड़े भेंट करता है, तो दूसरा मित्र भी वैसा ही करता है। लेकिन औपचारिक सम्बन्धों में केवल छ: टूकड़े मांस का ही आदान प्रदान होता है। उत्सव की घोषणा गांव का पुजारी करता है, और दान स्वरूप चावल जमा करता है। एकत्रित चावल में से थोड़े का प्रयोग जानवर खरीदने में किया जाता है। शेष से शराब बनाई जाती है, उत्सव शुरू होने से पहले अजनबी को गांव छोड़कर जाना होता है। अगर अजनबी नही जाता है, तो उन्हे पूरे उत्सव के दौरान वही गांव मे रहना पड़ता है। उत्सव के दौरान अंतिम संस्कार से जुडे रस्म अदा किया जाता है। साथ ही वर्ष के दौरान मरने वाले लोगो के परिवार जरूरी रस्म अदा करते है, और इससे पहले तक गांव छोड़कर बाहर नहीं जाते, उत्सव के दौरान शादियां भी होती है।

8. **संगतम जनजाति का उत्सव –** वैसे तो संगतम जनजाति वर्ष भर में कुल मिलाकर 12 उत्सव मनाती है। इन सभी उत्सव मे 'एमोगंमोग' सबसे महत्वपूर्ण उत्सव है। इसमें कुल देवता और चूल्हा के तीन पत्थरों की पूजा होती है। जो हर गांव का पुजारी 'बेबरू' पूजा अर्चनाओं के बाद एमोगंमोगं उत्सव मनाने की घोषणा करता है। अच्छी फसल व फसल के अच्छे दोनों के पाने की कामना से यह उत्सव मनाया जाता है। यह छ: दिनों तक चलता है, संगमत समुदाय के लिए छ: की संख्या काफी मायने रखती है। एमोगंमोगं का अर्थ है, 'सदा का साथ'।

9. **सूमी जनजाति का उत्सव –** सूमी जनजाति मुख्यत: दो उत्सव मनाते है–आहूना व तुलूनी। सूमियों के लिए फसल के बाद, अच्छी फसल होने पर ईश्वर को धन्यवाद देने के साथ नए वर्ष के लिए शुभ का उत्सव है। जो नवम्बर माह में मनाया जाता है। वही 'तुलूनी' दावतों का उत्सव है। इस उत्सव की खास बात है, चावल की शराब पीना,जो केले के पत्ते से बने दोने में परोसी जाती है। इस शराब को तुलूनी कहा जाता है। तुलूनी जुलाई माह में मनाई जाती है। सम्पूर्ण उत्सव के दौरान लोकगीत व लोक कथाओं वाले गीत गूंजते रहते है।

10. **कद्दारी जनजाति – बिशु और बैसान उत्सव –** कद्दारी जनजाति वर्ष भर में कई उत्सव मनाते है, लेकिन इनके दो उत्सव सबसे प्रमुख है–दिमासा कद्दारियों द्धारा 'बिशु' या 'बिशु जिना' और बोरो काद्दरियों द्धारा बसंतोत्सव 'बैसान' उत्सव मनाया जाता है, बिशु और बैसान उत्सव एक ही तरीके से मनाया जाता है। सामाजिक सास्कृतिक गतिविधियों वाले इन उत्सवों का मुख्य उद्देश्य फसल तैयार हो जाने के बाद मनाया जाता है।

11. **खियामनियूंगन जनजाति – मियु और सोकुम उत्सव –** खियामनियूंगन जनजाति के दो महत्वपूर्ण उत्सव है, मियुमामा और भांजे–भांजियों के बीच अच्छे सम्बन्धों का त्यौहार है। 'सोकुम' उत्सव अक्टुबर के प्रथम सप्ताह में मनाए जाते है, यह उत्सव अच्छी फसल और जानवरों की रक्षा के लिए अपने देवताओं को धन्यवाद देने का है। लोग अपने देवताओं को प्रसन्न करने के लिए उत्सव के दौरान मिथुन,भैंस,गाय व सुअरों आदि की बलि चढ़ाते है।

12. **रेग्मा जनजाति का नगादा उत्सव –** खेती की समाप्ति के बाद नवम्बर के अंत में रेग्मा जनजाति नगादा उत्सव मनाते है। आठ दिवसीय इस उत्सव में ईश्वर को धन्यवाद देने, खुशियां व मौज मस्ती मनाने का सिलसिला

चलता है। गांव का पुजारी 'फेंन्सेगू' आसव के दिन घोषणा करता है, उत्सव के दौरान चावल की शराब बनायी जाती है। महिलाएं तीसरें दिन अपने सम्बन्धियों के पास जाकर केले के पत्तों में रखकर चावल की शराब चढ़ाती हैं। उत्सव के दौरान दावत मनाती है, और खेलों का आयोजन किया जाता है।

13. पोचरी जनजाति का येमशे उत्सव – नागालैण्ड के पोचरी जनजाति का प्रमुख उत्सव है। 'येमशेय जिसे वे दो तरीके से बड़ा येमशे व छोटा येमशे मनाते है। इस उत्सव को सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से शुरू होकर अक्टुम्बर के प्रथम सप्ताह तक मनाया जाता है। 'येमशेयउत्सव वर्ष भर की कड़ी मेहनत के बाद नई फसल के स्वागत का भी उत्सव है। यह उत्सव खासकर युवाओं व किसानों के लिए खुशियो से भर होता है।

14. इमचूंगर जनजाति – इमचूंगर जनजाति वर्ष भर में दो प्रमुख उत्सव 'मेतुमन्यू' और 'सूंग कामनय' मनाते हैं। बाजरे की फसल के बाद हर वर्ष के अगस्त माह के 4 से 8 तारीक तक मेतूमन्यू उत्सव मनाते है।यह उत्सव मृतात्माओं के लिए प्रार्थना से जुडा है। सबसे बुजुर्ग व्यक्ति 'खिमपुरू' की प्रार्थनाओ के बाद पांच दिवसीय शिटो, जिहिवो, जुमटो, खेहरे, सूक और सेरे सूक शुरू होती है। मेतूमन्य कृषि आधारित होने की वजह से उत्सव के दिनों कृषि यन्त्रों को साफ कर धार दी जाती है, और पुजा की जाती है। उत्सव के दौरान युवा सगाई करते है। नए शिशुओं के माता–पिता को पुजारी उपहार स्वरूप मांस का टुकड़ा देता है। लडकी को सिर्फ पांच टुकडे और लड़के को छः मांस दिया जाता है। इसके पीछे मान्यता यह है, कि पुरूषों की छः आत्माए होती है, और महिलाएं की पांच आत्माए होती है।

ठमचूगंर जनजाति के लिए 'सूग कामन्यू' भी महत्वपूर्ण उत्सव है। यह उत्सव प्रत्येक वर्ष की 14 से 16 जनवरी तक मनाया जाता है। यह उत्सव भी वर्ष भर की कृषि उपलब्धियों को मनाने का उत्सव है। उत्सव के दौरान युवक युवतियां गांव में घूम–घूम कर नृत्य करतें, और खुशियॉ मनाते है। बदले मे हर घर से उन्हें मांस, शराब और भात (भात) दिया जाता है।

नागालैण्ड राज्य की जनजातियों द्वारा पूरे वर्ष भर त्यौहारों का बेमिसाल सिलसिला चलता रहता है, वह चाहे फसल के शुरूआती दौर हो या अंतिम दौर दोनों समग्र वह लोग इन फसलों को त्यौहार के रूप में बदल देते है। यह सब ही हिन्दू सस्ंकृति में ही सम्भव है। सबसे अनोखी बात यह कि यह लोगों के त्यौहार आज भी हिन्दू कैलेण्डर के अनुसार पाये जाते है। नागालैण्ड की जनजातियों को भले ही ईसाई मिशनरियों ने उनका धर्मान्तरण कर अलग नागालैण्ड की मांग की हो लेकिन उन्होंने आज भी अपनी पूजा पद्धति व अपनी सस्ंकृति को नहीं छोड़ा। ईसाइयों ने जनजातियों को धर्म से ईसाई बनाया है, लेकिन उनका मन आज भी नहीं बना पाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

पंचायतीराज अवधारणा आवश्यकता एवं महत्व

डॉ. शोभा राठौर *

प्रस्तावना – भारत में पंचायती राज की अवधारणा नवीन नहीं है। यह प्राचीन संस्थाओं से संबंधित अवधारणों का ही परिवर्तित स्वरूप है। 'पंचायती राज' शब्द का अस्तित्व स्वतंत्र भारत में बलवन्तराय मेहता के 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण' प्रतिवेदन से उदय हुआ, जो अनवरत् अपने अस्तित्व को बनाये हुऐ है।

पंचायती राज का अर्थ – शाब्दिक दृष्टि से पंचायती राज शब्द हिन्दी भाषा के दो शब्दों 'पंचायत और राज' से मिलकर बना है। जिसका संयुक्त अर्थ होता है 'पांच प्रतिनिधियों का शासन'। परन्तु पंचायती राज की अवधारणा के संबंध में राजनीति विज्ञान तथा लोकप्रशासन के विचारकों में मतैक्य नहीं है। वर्तमान समय में पंचायत राज के सन्दर्भ में विभिन्न प्रकार की अवधारणाएं है। जो राजनीति, नौकरशाही तथा सामाजिकता से सम्बद्ध है।[1] कुछ राज्यों में पंचायत राज की अवधारणा का अभिप्राय सामुदायिक विकास के उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधन मात्र से लिया जाता है।

पंचायती राज के संबंध में दूसरी अवधारणा है कि पंचायती राज ग्रामों तक राजनीतिज्ञों के बीच अनुकूलता स्थापित करने के लिए लोकतंत्र का विस्तार मात्र है। 'पंचायती राज के बारे में एक अवधारणा यह भी है कि 'नौकरशाही पंचायत राज को स्थानीय स्तर तक प्रशासन का विस्तार मानती है। 'पंचायती राज की एक अन्य अवधारणा जो गांधीवादियों से संबंधित है वह यह है कि 'राजनीतिक शक्तियों का विकेन्द्रीकरण आर्थिक शक्तियों तथा सम्पत्तियों के विकेन्द्रीकरण के साथ ही होना चाहिए।'[2]

भारत के प्राचीन साहित्यिक ग्रंथों में भी पंचायत तथा पंचायती शब्द को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। उनके अनुसार 'पंचायत' शब्द संस्कृत भाषा के 'पंचायतन्' शब्द से उद्भूत हुआ है। संस्कृत भाषा के ग्रंथों के अनुसार किसी अध्यात्मिक पुरूष सहित पांच पुरूषों के समूह अथवा वर्ग को पंचायतन् के नाम से संबोधित किया जाता था। परन्तु शनै: शनै: पंचायत की इस आध्यात्मिकता युक्त अवधारणों में परिवर्तन होता गया और वर्तमान में पंचायत राज की अवधारणा का अभिप्राय: इस प्रकार की निर्वाचित सभा से है, जिसकी सदस्य संख्या प्रधान सहित पांच होती है, और जो स्थानीय स्तर के विवादों को हल कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गांधीजी ने भी पंचायत शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'पंचायत शब्द का शाब्दिक अर्थ ग्रामवासियों द्वारा चयनित पांच प्रतिनिधियों की सभा से है।'[3]

पंचायत राज का स्वरूप – पंचायत राज की स्थापना भारतीय लोकतंत्र की एक बहुत ही महत्वपूर्ण उपलब्धि है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायत राज दोनों एक दूसरे के पयार्यवाची है। पंचायत राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था इस प्रकार है –

1. ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत
2. विकासखण्ड स्तर पर पंचायत समिति या जनपद पंचायत।
3. जिला स्तर पर जिला परिषद् या जिला पंचायत।

इसी समूची व्यवस्था को पंचायती राज के नाम से पुकारा जाता है। पंचायत राज का उद्देश्य प्रारम्भ से लेकर अंत तक जनता को विकास योजनाओं से संबद्ध करना और प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर जनता को सक्रिय रूप से भागीदार बनाना है। अपने वर्तमान स्वरूप में पंचायत राज सामुदायिक विकास योजना की एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था है। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि पंचायत राज की उत्पत्ति सामुदायिक विकास योजना से हुई और उसी में उसका विकास हुआ है।

पंचायत राज की आवश्यकता – पंचायत राज के स्वरूप का सही चित्रण पाने के लिये यह जानना आवश्यक है कि किन सिद्धांतों पर देश में पंचायत राज अपनाया गया है। इन सिद्धांतों को भारत सरकार के सामुदायिक विकास एवं सहभागिता विभाग के एक प्रकाशन में निरंतर प्रस्तुत किया गया है

1. भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। सत्ता को दिल्ली की लोकसभा या राज्य विधान मण्डलों तक ही यदि सीमित रखा जाये तो देश पनप नहीं सकता। अत: आवश्यक है कि सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर गांव से जिला स्तर तक स्थानीय स्वशासित संस्थाओं का एक ढ़ांचा बनाया जाये। यह एक ऐसी व्यवस्था है, जिससे देश का हर ग्राम और ग्राम का हर परिवार दिल्ली की लोकसभा से जुड जायेगा।
2. पंचायती राज संस्थाएं सामुदायिक विकास की एजेन्सी बने, सहकारिता को प्रोत्साहन दे, स्वयं की कोई नीति न बनाकर सरकारी नीति को अमल में लाये।
3. सरकार अपने कुछ कार्यो का दायित्व ऐसी संस्थाओं को सौंप दे जो अपने क्षेत्र की उन्नति के लिए स्वप्रेरणा से काम लें। इसके लिए समुचित अधिकार प्रदान किये जाये।
4. संस्थाओं को काम करने के लिए इतने साधन और नियंत्रण के इतने अधिकार दिये जाये कि वे सौंपे कार्यो को समुचित रूप से कर सके।
5. इस प्रकार व्यवस्था बनायी जाये कि भविष्य में अधिकार सौपनें में सुविधा हो।

वास्तव में पंचायती राज लोकतंत्र का सही रूप है। जनता एवं सत्ता का आपसी समन्वय है। इसमें गांव से दिल्ली तक के प्रशासन के सभी स्तरों पर जनता का अधिकार एवं कर्तव्यों का बराबर–बराबर बंटवारा है। वास्तविकता में पंचायती राज हमारी प्राचीन पंचायतों का ही बढ़ा हुआ रूप है, परन्तु आधुनिक युग के अनुरूप इसमें नये उद्देश्यों, नई शक्ति और नये तरीकों का समावेश कर दिया गया है। पंचायत राज व्यवस्था में विकास का काम सक्षमता की दृष्टि से तीन स्तरो पर इस तरह से बांट दिया गया है कि समग्र ग्रामीण

---

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, पेटलावाद, जिला – झाबुआ (म.प्र.) भारत

विकास का दायित्व सरकार हटाकर जनता की त्रिस्तरीय लोकतांत्रिक संस्थाओं के हाथ में आ गया है।

इस प्रकार पंचायत राज व्यवस्था में त्रिस्तरीय व्यवस्था अपनाते हुए यह सुनिश्चित किया गया है कि गांव के मसले, ग्राम पंचायतें सुलझायेगी। जो मसले उससे संभव नहीं होंगे उन्हें पंचायत समिति निपटायेगी। पंचायत समिति अपने क्षेत्र का कार्य करेगी, जो उससे न होगा उसे वह जिला परिषद के सामने रखेगी। जिला परिषदें जिलो के काम के साथ ही पंचायत समिति की कठिनाईयों को भी निपटायेगी।

दूसरी तरफ जिला परिषद् की सलाह पंचायत समीतियों को बराबर मिलती रहेगी। पंचायत समिति अपनी सलाह एवं सूचना ग्राम पंचायत को दे देगी। विधान सभा जो योजना एवं नीति बनायेगी, जिला परिषद् उन्हें अमल में लायेगी। विधासभा का लोकसभा से संबंध है जो देश के लिए योजना बनाती है। इस प्रकार राज्य सरकार और संसद का संबंध जुड़ा है। पंचायत राज में ग्रामसभा से विधानसभा तथा लोकसभा तक विचारों का आदान-प्रदान चलता है। ग्राम सभा के कामों का प्रभाव लोकसभा तक पहुंचता है। इस तरह ज्ञान गंगा ऊपर से नीचे और कर्म की सुगंध नीचेऊपर पहुँचती है। क्योंकि लोक प्रतिनिधियों को इसमें स्थान दिया गया है।

स्पष्ट है कि उपयुक्त व्यवस्था के माध्यम से सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर दिया गया है और इस मान्यता को साकार रूप दिया गया है कि विकेन्द्रीकरण एवं लोकतंत्र में घनिष्ठ संबंध है तथा दोनों एक-दूसरे के पूरक है। बलवंतराय मेहता के अनुसार 'लोकतंत्र की परिकल्पना यह है कि केवल ऊपर से ही शासन न चलाया जाये बल्कि स्थानीय प्रतिभाओं का विकास किया जाये। यह तभी संभव है, जबकि वे सक्रियता से सरकार के कार्यो में भाग ले सकें। यही सत्ता का विकेन्द्रीकरण अथवा पंचायत राज है।

पंचायत राज का महत्व - पंचायत राज व्यवस्था का महत्व इस कथन से स्पष्ट होता है कि यदि निहित स्वार्थो तथा नौकरशाही, पूंजीशाही अथवा उससे भी खराब महन्तशाही की बुराईयों से छुटकारा पाना है, तो पंचायत राज का सुदृढ़ आधार पर स्थापित करना होगा। पंचायत राज संस्थाओं की प्रकृति के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि'ग्राम पंचायतें जनता की संस्थाएं है। उनको कानून और व्यवस्था स्थापित करनी है, इसके साथ ही ग्राम की नागरिक एवं सामुदायिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना होती है।'[4]

भारतीय संविधान सभा में पंचायत राज के महत्व का वर्णन करते हुए पं.नेहरू ने कहा था कि 'पंचायत सरकार इमारत की नींव है, यदि यह नींव मजबूत न होगी, तो उस पर खड़ी हुई इमारत कमजोर होगी।'[5]

लोकतांत्रिक व्यवस्था की सफलता के लिए पंचायत राज संस्थाओं के महत्व को स्पष्ट करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने विचार व्यक्त किया था कि 'पंचायती राज संस्थाओं द्वारा ही प्रजातंत्र में उचित रूप की स्थापना होगी।'[6] उन्होंने यह भी कहा ' हमारे राष्ट्र में लोकतंत्र की बुनियाद मजबूत करने में पंचायत राज संस्थाओं का प्रमुख स्थान रहा है। इनमें जो बड़ी आशाएं की गई है, वे सभी पूर्ण हो सकती है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले कमजोर वर्ग के लोग ग्रामीण शासन में सक्रिय रूप से भाग ले।'[7]

प्रशासनिक एवं राजनीतिक दृष्टि से भी पंचायत राज संस्थाओं का अपरिमित महत्व है। एक तरफ जहां पंचायती राज संस्थाएं स्थानीय स्तर अर्थात् ग्रामीण क्षेत्र में प्रशासन की आधारभूत इकाईयां है। वही दूसरी ओर पंचायती राज संस्थाएं स्थानीय स्तर पर नागरिकों को राजनीतिक प्रशिक्षण प्रदान कर उनको राष्ट्रीय एवं राज्य की राजनीति में सहभागी होने के योग्य बनाती है। इसके अतिरिक्त पंचायती राज संस्थाएं, राष्ट्र के विकास से संबंद्ध नीतियों पर आदर्श जनमत निर्माण में भी सहायक सिद्ध होती है। अत: पंचायती राज संस्थाओं के स्वरूप की उपयोगी बनाये, रखने के लिए हमें सतत् सचेष्ट रहने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नारायण इकबाल 'द कान्सेप्ट ऑफ पंचायत राज एण्ड इट्स इंस्टीट्शनल इम्प्लीमेंटेशन इन इंडया ' एशियन सर्वे भाग 5, 1965 पृष्ठ 456
2. खान.एच.इल्तिजा, गवर्नमेंट इन रूरल इंडिया, एशिया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई 1961, पृष्ठ 31
3. गांधी, एम.के.विलेज स्वराज, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद 1962 पृ.67
4. डे.एस.के.पंचायती राज-एच सिन्थीसिस, एशिया पब्लिशिंग हाउस बाम्बे, 1961 पृ.91
5. नेहरू जवाहरलाल, सामुदायिक विकास एवं पंचायत राज, सस्ता साहित्य मण्डल, 1965 पृ.104
6. गांधी, इंदिरा, राष्ट्रीय सम्मेलन एवं इंसान, अखिल भारतीय पंचायत परिषद्, नई दिल्ली, नवम्बर-दिसम्बर, 1973
7. श्रीवास्तव सच्चिदाशरण, सहकारिता, लखनऊ, 1976 पृष्ठ-475

****

सूचना का अधिकार

डॉ. अनिल कुमार जैन * बल्लु सिंह मुवेल **

प्रस्तावना – राष्ट्रपति महात्मा गांधी ने कहा था कि जब तक आप मांगेंगे नहीं तब तक आपको हक नहीं मिल सकता। वास्तव में हक की लड़ाई के लिए आवाज उठाना हमारा कर्तव्य है और सूचना का अधिकार हक की लड़ाई का एक सशक्त हथियार है।

हेराल्ड जे. लॉस्की और आइजनर ने कहा है कि – 'जिन लोगों को सही और विश्वसनीय सूचनाएँ प्राप्त नहीं हो रही है, उनकी आजादी असुरक्षित है। उसे आज नहीं तो कल समाप्त ही हो जाना है। सत्य किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी थाती होती है। जो लोग और जो संस्थाएँ उसे दबाने–छिपाने का प्रयास करती है अथवा उनके प्रकाश में आ जाने से डरती है, ध्वस्त और नष्ट हो जाना उनकी नियति है।'

सूचना प्राप्त करना हमारा संवैधानिक है, किन्तु संविधान के निर्माण के पश्चात से विभिन्न कार्यालयों मे नौकरशाहों का इतना वर्चस्व स्थापित हो चुका था कि सूचनाओं को प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य होता था। नौकरशाह किसी भी सूचना, तथ्य या जानकारी को आम आदमी को आसानी से उपलब्ध नहीं कराते थे, प्रत्येक कार्य को टालने की एक सामान्य सी आदत बन चुकी थी, इस के साथ भ्रष्टाचार भी अपनी चरम अवस्था में पहुँच चुका था। इन समस्याओं से निपटने के लिए एक ऐसे अधिनियम की आवश्यकता महसूस हुई, जो इन समस्याओं से राहत प्रदान कर सकें और इसी तारतम्य में सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 अस्तित्व में आया।

भारत में सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 का शुभारंभ साठ के दषक में हो गया था । परन्तु यह केवल चर्चा तक ही सीमित रहा । तात्कालिक सरकार के प्रथम कार्यकाल के अन्तर्गत मई 2004 में न्यूनतम साझा कार्यक्रम के द्वारा स्वच्छ एवं पारदर्शी शासन प्रदान किये जाने के अन्तर्गत यह घोषणा की गई थी। 23 दिसम्बर 2004 को सूचना के अधिकार अधिनियम से संबंधित विधेयक के समक्ष प्रस्तुत किया गया। यह विधेयक लोकसभा में 11 मई तथा राज्यसभा में 12 मई 2005 को लागू किया गया था । संसद में इस विषय पर काफी तर्क–वितर्क किए तथा सौ से अधिक संशोधन लागू गए । यह अधिनियम 15 जून 2005 को महामहिम राष्ट्रपति द्वारा अनुमोदित हुआ एवं इस अधिनियम की प्रमुख धाराएँ तुरन्त प्रभावी हो गई । शेष धाराएँ एक सौ बीसवें दिन अर्थात 12–13 अक्टूबर 2005 से लागू की गई है।

इस कानून की राह में रोड़े अटकाने वालो की कमी नही है और दुर्भाग्य से इस दुश चक्र में ऐसे प्रमुख लोग भी सम्मिलित हैं, जिन पर इस कानून को बनाने की जिम्मेदारी है। लम्बे संघर्ष के बाद भारत में 12 अक्टूबर 2005 को सूचना का अधिकार कानून लागू हुआ। दुनिया के 70 से ज्यादा देशों में यह कानून लागू है। स्वीडन में सन 1766 से ही यह कानून लागू है। 1766 में स्वीडन में फ्रीडम ऑफ द प्रेस एक्ट पारित हुआ जिसमें लोग दस्तावेजों तक पहुँच का अधिकार दिया गया था, इसके पश्चात् 1949 में फ्रीडम ऑफ द प्रेस एक्ट 1949 के रुप में लागू किया गया, इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 1948में घोषणा की कि जानकारी पाने की इच्छा रखना, उसे प्राप्त करना तथा किसी माध्यम द्वारा जानकारी एवं विचारों को फैलाना मनुष्य का मौलिक अधिकार है, अमरीका ने प्रशासनिक प्रणाली अधिनियम, 1947 की धारा तीन में संशोधन के रुप में सूचना की स्वतंत्रता अधिनियम 1966 लागू किया। इसी प्रकार फ्रांस ने 1978 में तथा ऑस्ट्रेलिया में फ्रीडम ऑफ इनफॉरमेशन एक्ट, 1982 के रुप में सूचना का अधिकार आम नागरिकों को दिया गया था।

लोकतंत्र में जनता के चुने हुए प्रतिनिधि शासन सूत्र संभालते है और प्रशासन तंत्र पर कार्यान्वयन का जिम्मा होता है। यह सारी व्यवस्था जनता के खजाने से चलती है। इसलिए जन प्रतिनिधि हो या प्रशासन तंत्र, उनकी जवाबदेही निश्चित रुप से जनता के प्रति है। उसमें पारदर्शिता का होना तथा जनता की भागीदारी आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य है, अनिवार्य है। गोपनीयता और अन्यान्य बहानों से कदम–कदम पर जिम्मेदार पदधारी इस जवाबदेही से मुँह चुराते रहे है। जनमत के दबात में सूचना का अधिकार कानून अस्तित्व मे जरुर आ गया है किन्तु शासन–प्रशासन की नीयत में इस कानून के अमल और उसमें निहित मंशा के प्रति खोट है। यही वजह है कि शासन–प्रशासन की ओर से बारम्बार ऐसी कोशिशें सामने आती है जिनसे यह कानुन कमजोर हो जाए। पहले कोशिश हुई कि फाइल नोटिंग को सूचना का अधिकार कानून के दायरे से बाहर निकाला जाए। जब नागरिक संगठनों के प्रबलप्रतिरोध के कारण शासन–प्रशासन की यह मंशा परवान नहीं चढ़ पाई तब शब्द–सीमा में सूचना कानून को बांधने की कोशिश की गई। न्यायपालिका भी चाहती है कि उसे सूचना का अधिकार कानून से परे रखा जाए। आखिरकार सी.बी.आई. को इस कानून से मुक्त कर ही दिया गया है।

पूर्व प्रधानमंत्री श्री मनमोहनसिंह ने सूचना–आयुक्तों के सम्मेलन में सूचना का अधिकार कानून के दुरुपयोग पर चिन्ता जताई। उनका कहना था कि इस कानून के डर से ईमानदार सरकारी अफसर फाइलों पर अपनी राय व्यक्त करने से डर रहे हैं। जैसा कि प्राय: सभी कानूनों के साथ होता है, सूचना का अधिकार कानून के दुरुपयोग की भी शिकायत है।

अदालतों ने कई बार मुकदमें की सुनावायी के दौरान तथा उसके बाद अपने निर्णयों के माध्यम से भी इस कानून पर असंतोष व्यक्त किया है। न्यायमूर्ति रविन्द्रन तथा न्यायमूर्ति पटनायक की पीठ ने भी सूचना का अधिकार कानून के कुछ हिस्सों की समीक्षा का सुझाव दिया था। सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी उस समय आयी जब वे छात्रों द्वारा अपनी उत्तर पुस्तिकाएँ देखे

---

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

जाने के अधिकार पर निर्णय दे रहे थे। इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि छात्रों को परीक्षा के दौरान लिखी हुई उत्तर पुस्तिकाएँ देखते तथा उन पर दिए गए अंको को जानने का अधिकार है। किन्तु इसके साथ ही अदालत ने यह भी कहा कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि सूचना का अधिकार भ्रष्टाचार से लड़ने का एक सशक्त माध्यम होने के बावजूद इसे राष्ट्रीय विकास, एकता और अखंडता को नष्ट करने के लिए इस्तेमाल करने की इजाजत नहीं दी जा सकती। सुप्रीम कोर्ट ने चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि यदि इस कानून के दुरुपयोग को नहीं रोका गया तो इससे समाज मे कई समस्याएँ खड़ी हो जाएँगी।अपने निर्णय में अदालत ने यह भी कहा कि कोई भी राष्ट्र यह नहीं चाहेगा कि सरकारी विभागों के 75 प्रतिशत कर्मचारी अपने कामकाज के 75 प्रतिशत समय में केवल सूचनाओं को देने में उलझे रहें और रोजमर्रा के कामकाज बाधित होते रहें।

प्रधानमंत्री और सुप्रीम कोर्ट की चिंता से सहमत होने वालों की समाज में अच्छी खासी संख्या है। सरकारी दफ्तरों में तो ऐसे लोगों की संख्या ज्यादा है जो सूचना–अधिकार के कानुन से अपने आप को त्रस्त मानते लगे है। इसमें कोई संदेह नहीं कि दुसरे कानूनों की तरह सूचना–अधिकार कानून के भी दुरुपयोग के मामले आ रहे है। कुछ जगहों पर इसे ब्लेकमेल का हथियार बनाने की खबरें भी आई हैं। इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि सूचना अधिकार के अन्तर्गत आवेदनों की संख्या इतनी बढ़ गई है कि स्टाफ की कमी से जूझती सरकारी संस्थाओं को रोजमर्रा के काम निपटाने में बाधा आने लगी है। अपीलिय अधिकारियों और सूचना आयुक्तों के यहाँ फाइलों की संख्या में लगातार इजाफा हो रहा है। मुकदमों के निपटारे में लगने वाला समय बढ़ने लगा है, आठ से दस महीने का समय लगना तो अब सामान्य सी बात हो गई है।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की प्रस्तावना में इसके उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि – यह प्रत्येक लोक प्राधिकरण के कार्य करने, सूचना आयोग एवं राज्य सूचना आयोगों के गठन मे पारदर्शिता तथा उत्तरदायित्व बढ़ाने के क्रम में लोक प्रधिकरणों के नियंत्रण के अधीन सूचना तक पहुँच सुनिष्चित किये जाने हेतु नागरिकों के लिए सूचना के अधिकार की व्याहारिक व्यवस्था किये जाने के लिए और उससे सम्बन्धित अथवा उसके आनुशांगिक मामलों के लिए उपबंध करने हेतु एक अधिनियम है।

अन्य कानूनों की तरफ सूचना का अधिकार कानून में भी कमियाँ हो सकती हैं, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि इस कानून ने भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया है। लाखों लोगों को पुलिस के आतंक से निजात दिलाई है। इस कानून के खौफ ने भी लाखों लोगों को सरकारी आतंक का शिकार होने से बचाया है। गोपनीयता की आड़ में किए जो रहे भ्रष्टाचार को उजागर किया है। आम आदमी की गाढ़ कमाई से वसूल किए जाने वाले टैक्स के उपयोग का लेखा–जोखा मिलना शुरु हुआ है। यही कारण है कि यह कानून जनप्रतिनिधियों और नौकरशाहों को पसन्द नहीं आ रहा है। इस कानून का अपना अलग सकारात्मक आतंक है। इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि न्यायापालिका ने अपने आप को इससे अलग रखने की पूरजोर कोशिश की है।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 लागू होने के पश्चात् से आम जनता शासन में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर रही है। इसी के साथ शासकीय कार्यो में पारदर्शिता, खुलापन एवं जवाबदेही में पूर्व की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई है। शासन व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को कम करने, शासकीय योजनाओं को सही समय पर वास्तविक लाभार्थी तक पहुँचाने के लिए तथा शासकीय प्रक्रिया के अनावश्यक बोझ से बचने में सूचना का अधिकार महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है। यह कानून आम आदमी से सरकार के तीनों अंगों – व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की अव्यवस्थाओं से संबंधित प्रश्नों को मुस्तैदी से उठाया है। धीमी गति लेकिन मजबूत गति से कानून आगे बढ़ रहा है। आम आदमी ने गाँव और शहरों मे इसकी ताकत को जाना है, लेकिन कानून का अश्वेत पक्ष यह है कि इस कानून के प्रभावी कार्यान्वयन में सरकारी नौकरशाही हरसंभव खड़ं कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मीणा, डॉ. जनकसिंह, ग्रामीण विकास में सूचना का अधिकार, प्रतियोगिता दर्पण, मार्च 2009
2. द्विवेदी, डॉ. राधेश्याम, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 सुविधा लॉ हाउस, भोपाल 2009
3. विजयदत्त श्रीधर, मासिक पत्रिका, आंचलिक पत्रकार, जनवरी 2012
4. सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 भारत लॉ हाउस प्र.लि., नई दिल्ली 2010
5. कुमार, डॉ. नीरज, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (2005 का अधिनियम संख्याक 22), अनुभाग एक (क) भारत का राजपत्र असाधारणन्न पृ. 685

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

लोकतंत्र में महिलाओं की राजनीतिक भूमिका - छत्तीसगढ़ के संदर्भ में

अनिल किशोर वर्मा * डॉ. मनीषा शर्मा **

प्रस्तावना - किसी राष्ट्र की सभ्यता एवं संस्कृति के निर्माण तथा विकास में नारी का योगदान बहुत महत्वपूर्ण होता है, यदि हम विश्व इतिहास पर दृष्टि डालें तो हमें पता चलता है कि संस्कृति की नींव डालने का श्रेय सर्वप्रथम नारी को दिया जाता है। पुरूष और स्त्री को भले ही भारतीय संविधान में बराबरी का दर्जा दे दिया गया हो, लेकिन लोकतंत्र में महिलाओं को कभी भी पुरूषों के समान दर्जा नहीं मिल सका। आज भारत की जनसंख्या वर्ष 2011 के अनुसार 121 करोड़ है, इसमें स्त्रियों की जनसंख्या 58 करोड़ 64 लाख है। भले ही महिलाएं आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हों, लेकिन सत्ता में महिलाओं की संख्या 15 प्रतिशत पार नहीं कर सकी। हर पांच साल बाद लगता है, यह ग्रेट इंडियन वोट मेला। लेकिन हर बार यह मेला महिलाओं को नि:शक्तता का अहसास दिलाकर चला जाता है। हर बार पार्टियों में बजती है, चुनावी डुगडुगी, टिकट ले लो, टिकट ले लो। लिहाजा लगती है। पार्टी की दफ्तरों में टिकट के खरीददारों की होड़ और वंचित रह जाती है, ये आधी आबादी की प्रतिनिधित्व करती नारी। सवाल केवल यह नहीं है कि आधी आबादी को क्यों नहीं मिल रही है, जनसंख्या के हिसाब से सत्ता में भागीदारी? बल्कि सवाल यह भी है कि आजादी के बाद से आज तक क्यों नहीं बढ़ रही है, सत्ता में इनकी भागीदारी? क्या यह समझ लिया जाए कि आजादी से आज तक महिलाएं गुलाम है। यदि नहीं तो लोकतंत्र के पहरूए क्यों छीन ले रहे हैं महिलाओं की राजनैतिक आजादी। आधी की बात तो दूर आखिर क्यों नहीं मिल रही है, उन्हें एक तिहाई प्रतिनिधित्व का मौका? वे क्यों नहीं तोड़ पा रही हैं लोकतंत्र में पुरूषक्षेत्र का वर्चस्व? कौन है इसके लिए जिम्मेदार हमारा समाज, हमारा संविधान, लोकतंत्र या पुरूषप्रधान समाज या फिर स्वयं महिलाएं।

इतिहास गवाह है कि आबादी के हिसाब से महिलाओं को सत्ता में कभी भी उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिला। स्त्री परिवार व समाज की केन्द्र बिन्दु है। इसके बावजूद पुरूष प्रधान समाज ने सदियों से उसका शोषण किया है। आज भी नारी आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र, भावनात्मक रूप से परिपक्व और बौद्धिक रूप से सजग महिला है। अगर लोकसभा में ही आधी आबादी के प्रतिनिधित्व मुद्दे को लिया जाए तो यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि लोकसभा में या राज्य विधानसभा में महिलाओं का प्रतिशत आज तक 15 प्रतिशत नहीं पार कर सकी है। लोकतंत्र में महिलाओं की राजनीतिक स्थिति नगण्य है।

'अर्धो वा एष आत्मनों यज्जाया।' शतपथ ब्राम्हण

नारी को अर्द्धांगिनी तथा पुरूष का अर्द्ध शरीर माना गया। अर्थ और राजनीति के क्षेत्र में स्त्रियों की समान रूप से प्रतिभागिता थी।

1. लोकतंत्र में भूमिका - भारत के संविधान की धारा 14, 15 एवं 16 में महिलाओं के लिए समानता, स्वतंत्रता और न्याय की पर्याप्त व्यवस्था की गयी है। निश्चित रूपेण महिलाएं समाज की मुख्य धारा से जुड़ रही है। लेकिन आजादी बाद से आज तक महिलाओं की स्थिति लोकतंत्र में नगण्य है। लोकसभा में महिला प्रतिनिधित्व 3.4 प्रतिशत से 11.25 प्रतिशत की सीमा रेखा के अंदर ही सिमटी रही। छठीं लोकसभा (1977-80) में इनकी संख्या सबसे कम 19 रही जो लोकसभा की कुल सदस्यता का मात्र 3.4 प्रतिशत हिस्सा है, वहीं 16 वीं लोकसभा (2014) में महिलाओं की भागीदारी सर्वाधिक 61 रही, जो लोकसभा की कुल सदस्यता का मात्र 11.24 प्रतिशत है। अन्य चुनावों में इनकी भागीदारी की प्रतिशत घटती-बढ़ती रही। वर्ष 2014 के आम चुनाव में 1300 से अधिक महिलाओं ने चुनाव लड़ा, जिसमें से सिर्फ 61 महिलाएं ही जीत कर संसद पहुंच सकी, जबकि 2003 में 53 महिलाएं जीती थी। लोकसभा के इतिहास में महिलाओं की मौजूदगी दूसरे लोकसभा चुनाव में खड़ी होने वाली महिला उम्मीद्धारों में 48.89 प्रतिशत ने चुनाव जीतने में सफल रही, तीसरे लोकसभा चुनाव में 46.97, चौथे चुनाव में 43.28 प्रतिशत और पांचवे चुनाव में 24.49 प्रतिशत महिला उम्मीदवारों ने चुनाव में जीत दर्ज की थी, छठे चुनाव में 27.14, प्रतिशत सातवें चुनाव में 19.58 प्रतिशत, आठवें लोकसभा में 25.15 प्रतिशत, 9वें चुनाव में 15.69 प्रतिशत, 10वें चुनाव में 11.51 प्रतिशत, 11वें चुनाव में 6.68 प्रतिशत, 12वें चुनाव में 15.69 प्रतिशत, 13वें चुनाव में 17.25 प्रतिशत, 14 वें लोकसभा चुनाव में 12.68 प्रतिशत, 15वें चुनाव में 10.61 प्रतिशत और 16वीं लोकसभा चुनाव में सबसे कम 4.69 प्रतिशत महिला उम्मीद्धारों ने चुनाव जीती।

महिलाओं के चुनाव लड़ने के संबंध में महिला प्रतिभागियों की सर्वाधिक संख्या 2014 के लोकसभा चुनाव में 1300 से अधिक थी। यह 1980 की सातवीं लोकसभा थी, जब महिला उम्मीदवारों ने 100 के आंकड़े को पार किया। उससे पहले महिला उम्मीदवारों की संख्या हमेशा 100 के नीचे ही रही थी।

सन 1947 से सन 2016 तक 16 महिलाएं ही मुख्यमंत्री बनी, जबकि एक अनुमान के अनुसार देश के सभी 29 राज्यों में अब तक दो सौ से अधिक पुरूष मुख्यमंत्री हो चुके हैं। वर्तमान में 04 राज्यों में महिलाएं ही मुख्यमंत्री हैं। तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, जम्मू एंड कश्मीर **(सारणी देखे अगले पृष्ठ पर)**

2. छत्तीसगढ़ में भूमिका - लोकतंत्र में छत्तीसगढ़ की महिलाओं की भूमिका, लोकतंत्र की अगुआई कर रहे छत्तीसगढ़ में भी महिलाएं राजनैतिक हाशिए पर हैं। भारतीय संघ में छत्तीसगढ़ राज्य का उदय 1 नवंबर 2000 को हुआ, तब से लेकर अब तक इन 14 वर्षों में महिलाओं का राजनैतिक प्रतिनिधित्व नगण्य है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार छत्तीसगढ़ राज्य की जनसंख्या 2 करोड़ 55 लाख 40 हजार 196 थी, जिसमें महिलाओं की जनसंख्या 1 करोड़ 27 लाख 12 हजार 281 थी, जो राज्य की आबादी का 50 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करती हो, लेकिन भारतीय लोकतंत्र में छत्तीसगढ़ की महिलाओं की उपस्थिति न के बराबर है। चाहे लोकसभा चुनाव हो या राज्य विधानसभा चुनाव। छत्तीसगढ़ विधानसभा के 1998 के चुनाव में कुल 53 महिलाएं खड़ी हुई, उसमें 6 महिलाएं चुनाव जीतीं। राज्य गठन के

---

* शोधार्थी , पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत
** प्राध्यापक, डॉ. रा0 बा0 शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय, दूधाधारी मठ, रायपुर (छ.ग.) भारत

बाद पहली बार विधानसभा के चुनाव में 62 महिलाएं चुनावी मैदान में उतरी थी, जिसमें से 5 महिलाएं विजयी हुई थी, जिसका जीत का 8.06 प्रतिशत था। सन् 2008 के चुनाव में 94 महिलाओं ने किस्मत आजमायी थी, जो छत्तीसगढ़ की महिला आबादी में राजनीति में शामिल होने के प्रति बढ़ी ललक और इच्छा का शुभ संकेत है। उसमें से 11 महिलाओं ने चुनाव जीती, जिसमें जीत का 11.70 प्रतिशत था। सन् 2013 के छत्तीसगढ़ विधान सभा चुनाव में 85 महिलाओं ने अपनी किस्मत आजमायी थी, जिसमें 10 महिलाओं ने चुनाव जीता और जिसका 11.76 प्रतिशत था। **(सारणी देखे)**

छत्तीसगढ़ राज्य गठन के बाद 4 मंत्रिमंडलों में महिलाओं की संख्या नगण्य रही है। छत्तीसगढ़ में अब तक कुछ महिलाएं मंत्री बनी। छत्तीसगढ़ विधानसभा में अब तक कोई महिला न तो अध्यक्ष बन सकी, न ही उपाध्यक्ष और न ही मुख्यमंत्री बन पाईं। 2013 के विधानसभा चुनाव 10 महिलाएं चुनाव जीती पर एक महिला को मंत्री होने का सौभाग्य मिला।

3. स्थानीय शासन में – लोकतंत्र की सबसे निचली ईकाई पंचायत है और स्थानीय शासन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। पंचायती राज हमारे देश के लिए कोई नई उपलब्धि नहीं है, भारत में इसकी परंपरा बहुत पहले भी रही है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने देश के स्वतंत्र होने से पहले ही पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से पिछड़े हुए वर्ग के हाथ में सत्ता हस्तांतरित करने की कल्पना की थी। स्वतंत्रता के बाद इसे लागू करने का फैसला लिया गया। सत्ता का विकेन्द्रीकरण करके सही अर्थो में पिछड़े व दलित वर्गो को भागीदार बनाने **संशोधन** पारित करके महिलाओं को पंचायतों तथा नगर निकायों में एक तिहाई स्थान आरक्षित करके मूल स्तर पर राजनीतिक सत्ता में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर दी गई।

केन्द्र सरकार ने 1993 में पंचायत और नगर पालिका बिल पारित कर पंचायत, नगरपालिका और नगर निगम सरीखे स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान बना दिया लेकिन पंचायती राज व्यवस्था में 50 प्रतिशत आरक्षण देकर प्रावधान निकल गया। छत्तीसगढ़ और कुछ राज्यों में पंचायतों में 50 प्रतिशत आरक्षण दे दिया और छत्तीसगढ़ को देश का पहला ऐसा राज्य बनने का गौरव हासिल है। आज महिलाएं पुरूषों के कंधों से कंधा मिला कर चल रही है । शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं बढ़-चढ़ कर चुनावों में हिस्सा ले रही है और ग्राम प्रधान, ब्लाक प्रमुख, जिला पंचायत सदस्य, महापौर आदि चला रही हैं। इस प्रकार पंचायती राज, नगर पालिका व्यवस्था में जहां एक ओर विकास के द्वार खोले हैं, वहीं दूसरी ओर पुरूष तथा स्त्री के मध्य जो सामाजिक विषमता थी, उसमें काफी कमी आई है। पंचायती राज संस्थाओं व स्थानीय निकायों में उनकी बढ़ती सक्रियता और भागीदारी से जो नया मार्ग प्रशस्त हुआ है, वह अंतत: संसद और विधानसभा तक जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बी.बी.सी. हिन्दी डॉट कॉम ।
2. छत्तीसगढ़ विधानसभा चुनाव रिपोर्ट ।
3. नवप्रदेश समाचार पत्र 4.4.2016

लोकसभा की महिला सदस्य

लोकसभा	कार्यकाल	सीटों की संख्या	महिला सदस्यों की संख्या	प्रतिशत
01	1952-57	499	22	4.4
02	1957-62	500	27	5.4
03	1962-67	503	34	6.7
04	1967-71	523	31	5.9
05	1971-76	521	22	4.8
06	1977-80	544	19	3.4
07	1980-84	544	28	5.1
08	1984-89	544	44	8.1
09	1989-91	529	28	5.5
10	1991-96	509	36	7.1
11	1996-98	543	43	7.9
12	1998-99	543	43	7.9
13	1999-2004	543	42	7.6
14	2004-2009	539	44	8.1
15	2009-2014	543	59	10.8
16	2014	543	61	11.12

छत्तीसगढ़ विधानसभा में महिलाएं

विधानसभा	कार्यकाल	सीटों की संख्या	महिला सदस्यों की संख्या	प्रतिशत
01	1998-2003	90	6	6.66
02	2003-2008	90	5	5.55
03	2008-2013	90	11	12.22
04	2013	90	10	11.11

(स्रोत : छ.ग. विधानसभा, चुनाव रिपोर्ट)

****

मध्यप्रदेश की राजनीति में जातियों की भूमिका

शम्भू सिंह सिसोदिया *

प्रस्तावना – आधुनिक युग में प्रजातांत्रिक शासन-प्रणाली वाले देशों में निर्वाचन एक महत्वपूर्ण व आवश्यक क्रिया है, जिसके अभाव में प्रजातंत्र संभव नहीं। इस व्यवस्था के अंतर्गत होने वाले चुनावों में जीतने के लिये अनेक मुद्दे प्रभावी होते है, जिनका प्रयोग राजनीतिक दलों द्वारा किया जाता है। वर्तमान समय में जाति के मुद्दे का उन सभी मुद्दों में महत्वपूर्ण स्थान है।

विगत कुछ वर्षो में मध्यप्रदेश को देखे तो प्रदेश की राजनीति कई अन्य सामान्य व प्रचलित मुद्दों के अलावा एक नए पक्ष जाति पर बहुत कुछ आधारित दिखाई देती हैं, जहाँ अब विकास, गरीबी उन्मूलन, शिक्षा, स्वास्थ्य व रोजगार की चुनौतियों का सामना करने के साथ-साथ विभिन्न जातिवर्गो के विकास के नारे को भी चुनावी घोषणा-पत्रों में शामिल किया जाता है। प्रदेश में सत्तासीन दलों द्वारा अलग-अलग जातिवर्गो के लाभ हेतु विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं की घोषणा कहीं ना कहीं यहाँ पर जातियों के कल्याण के वादे की आड़ में विभिन्न जातिवर्गो के मतों को प्राप्त करने की मंशा दिखाई देती है।

मध्यप्रदेश में विभिन्न निर्वाचनों में चाहे वह प्रदेश स्तरीय हो, जिला स्तरीय या स्थानीय स्तर के जाति की भूमिका विशेष रही है। वे भूमिका कभी इस रूप में रही है कि प्रदेश में कुछ ही जातियों का प्रतिनिधित्व बार-बार देखने को मिलता है तथा कहीं-कहीं पर इन जातियों की सहभागिता बदलती भी रहती है।

मध्यप्रदेश में जिला व जनपद पंचायतों, नगरपालिका/पंचायतों कृषि उपज मंडी समितियों, ग्राम पंचायतों आदि समस्त स्थानीय निर्वाचित संस्थाओं में दलों द्वारा प्रत्याशी चयन व विजयी प्रत्याशी में जाति का तत्व महती भूमिका निभाता है तथा स्थान के अनुसार बदलता भी रहता है। किसी भी मतदाता या राजनीतिक दल के लिये मतदान का आधार क्या हो यह अत्यधिक महत्व रखता है। क्योंकि एक तरफ जहाँ इससे एक आमजन को उसकी सरकार प्राप्त होती है, तो किसी राजनीतिक दल को सत्ता।

किसी भी प्रदेश की राजनीति में वे तत्व महत्वपूर्ण होते हैं जो कि उसे प्रभावित करते है। वर्तमान समय में मध्यप्रदेश की राजनीति में एक प्रमुख प्रभावक तत्व जाति है। इस तत्व के संदर्भ में यह जानना अपेक्षित है कि जातियाँ किस प्रकार प्रदेश की राजनीति व चुनावों को प्रभावित करती हैं। कौन-सी जातियाँ है, जो कि प्रदेश की राजनीति के अलग-अलग स्तरों पर सहभागिता रखती है तथा जिन जातियों के मतों की प्राप्ति के लिये राजनीतिक दलों में होड़ होती है। प्रदेश की जाति व राजनीति के अंतर्सबंधों को इस संदर्भ में समझना और जानना महत्वपूर्ण हो गया है।

भारत में जाति एवं राजनीति – भारतीय संस्कृति में जाति परम्परा का इतिहास हमारे प्राचीनतम ग्रन्थों जैसे वेद, उपनिषद एवं श्रीमद् भगवत्गीता आदि के विस्तृत अध्ययन से अति स्पष्ट होकर हमारे समक्ष उजागर होता है। इन ग्रन्थों के माध्यम से यह भी विदित होता है कि प्रारम्भ से जाति का सम्बन्ध केवल व्यवसाय से था और जन्म या वंश के आधार पर किसी को कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं था। व्यक्तियों में ऊँच-नीच की भावना नहीं थी। कालान्तर में जातियाँ जन्म से संबद्ध हो गई और विशेषाधिकार की व्यवस्था उसके साथ जोड़ दी गई। जातियों में ऊँच-नीच की भावना आ गई। कुछ व्यक्तियों को सम्मान विशेषाधिकार, सत्ता व शक्तियाँ प्राप्त हुई, जबकि अन्य जातियाँ इनसे वंचित रही।

किन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया, जाति प्रथा के मापदण्डों में भी परिवर्तन होता गया और वह कर्म पर आधारित न रहकर जन्म पर आधारित व्यवस्था में परिवर्तित होती चली गई। इसका दुष्प्रभाव यह हुआ कि एक जाति से दूसरी जाति में अंतक्रिया असंभव हो गई। अपने मौलिक रूप में जातिप्रथा भारतीय समाज में श्रम-विभाजन के मूल्यवान सिद्धान्त पर आधारित थी। अत: उसने आर्थिक क्षेत्र में निपुणता के तत्व का समावेश किया था किन्तु धीरे-धीरे उच्चता व निम्नता के भाव से समाज में जातियों के बीच असमानता का बीजारोपण हुआ।

धीरे-धीरे इन जातियों में विखण्डन की प्रक्रिया शुरु हो गई और एक मुख्य जाति का टूटकर विभिन्न जातियों में बँट जाने और विभिन्न उपजातियों द्वारा एक ही जाति का नाम ग्रहण कर लेने की प्रक्रिया शुरु हो गई।

जाति एवं निर्वाचन – राष्ट्रीय स्तर से लेकर पंचायत स्तर तक विभिन्न स्तरों पर निर्वाचन के समय राजनीतिक दल अपने उम्मीदवारों का चयन उनकी योग्यता के आधार पर न करते हुए इस बात को ध्यान में रखकर करते है कि उम्मीदवारों की जाति की संख्या तथा वर्चस्व संबंधित क्षेत्र में सर्वाधिक होना चाहिये ताकि जातिवादी तत्व पार्टी के उम्मीदवार को जिताने में निर्णायक भूमिका निभा सके। प्रो. रजनी कोठारी के अनुसार 'राजनीति के प्रभाव के फलस्वरूप जाति नया रूप धारण कर रही है।' लोकतांत्रिक राजनीति के अंतर्गत राजनीति की प्रक्रिया प्रचलित जातीय संरचनाओं को इस प्रकार प्रयोग में लाती है, जिससे संबद्ध पक्ष अपने लिये समर्थन जुटा सके तथा अपनी स्थिति को सुदृढ़ बना सके। जिस समाज में जाति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण संगठन माना जाता है। उसमें यह अत्यन्त स्वाभाविक है कि राजनीति इस संगठन के माध्यम से अपने आप को संगठित करने का प्रयास करे।

मतदान व्यवहार में जाति – वैसे तो मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले अनेक तत्व हैं और ये तत्व देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग हो सकते है किन्तु यदि मतदान व्यवहार को लेकर पूरे देश में मतदाताओं का विस्तृत अध्ययन किया जावे तो जातिवाद जैसा तत्व पूरे देश के मतदाताओं को समान रूप से प्रभावित करता है। फिर भी बिहार, उत्तरप्रदेश, राजस्थान और केरल में इस तत्व का प्रभाव सर्वाधिक है।

मतदान व्यवहार के मद्देनजर हमें यह भी देखने में आता है कि पंचायत

---

* (राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

नगरपालिका और को-ऑपरेटिव सोसायटियों जैसे निम्न स्तर के चुनावों में जाति का मतदान व्यवहार पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। जबकि राज्य और देश के चुनावों में मतदान व्यवहार पर जाति का असर अपेक्षाकृत कुछ कम रहता है क्योंकि कभी-कभी प्रादेशिक और राष्ट्रीय ज्वलंत मुद्दे जातिवादी प्रवृत्ति पर कुछ रोक लगाने में सक्षम हो जाते है। यह भी देखा गया है कि यदि किसी राज्य में किसी जाति विशेष की प्रधानता होती है। तो उस राज्य की राजनीति में वह जाति एक प्रभावकारी भूमिका अदा करने में सफल हो जाती है।

निर्णय प्रक्रिया में जाति की भूमिका – भारत में जातियाँ संगठित होकर प्रशासनिक निर्णय प्रक्रिया को भी प्रभावित करने की क्षमता रखती है। हमारे संविधान में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं अन्य पिछड़े वर्ग की जातियों को राजनीति, शिक्षा तथा रोजगार जैसे सभी क्षेत्रों में आरक्षण की सुविधा उन्हें आगे भी अनिश्चित काल तक मिलती रहे। जबकि अन्य जातियाँ चाहती है कि वर्तमान आरक्षण को समाप्त कर केवल आर्थिक आधार पर ही आरक्षण दिया जाये ताकि देश के हर वर्ग के गरीब व्यक्ति को इसका लाभ मिल सके। हमारे देश में यह अक्सर देखने में आता है कि किसी जाति विशेष के निर्वाचित सदस्य अपनी जाति की माँगों को पूरा करवाने के लिये सरकार पर शासकीय निर्णयों में परिवर्तन के लिये दबाव बनाने का प्रयास करते रहते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण, अक्टूबर 2008, पृ. 55.
2. दीपिका गुप्ता, स्वतंत्र भारत में राजनीति और जाति अंतर्क्रिया एवं प्रभाव, पृ. 422.
3. एन. के. श्रीवास्तव, मध्यप्रदेश की भू-राजनीतिक स्थिति का समकालीन भारतीय राजनीति पर प्रभाव, मध्यप्रदेश राजनीति - विविध आयाम, पृ. 310-311.
4. सुभाष कश्यप, दल-बदल और राज्यों की राजनीति, पृ. 112-113.
5. समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ.

****

भारत-अमेरिका सम्बन्ध नव शीत युद्ध के संदर्भ में

डॉ. संजय मिश्र *

प्रस्तावना -विगत 69 वर्षों में भारत-अमेरिका संबंध मधुरता और तनाव के पालने में झूलता रहा है। इसका कारण था कि भारत का भू-राजनीतिक महत्व अमेरिकी नीति के निर्माण-कर्त्ताओं के लिए कभी महत्वपूर्ण नहीं रहा। इसके विपरीत अमेरिका भारत को सदैव अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अवरोध मानता रहा। यद्यपि दोनों ही देश स्वतन्त्र हैं और दोनों ही लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले निरपेक्ष देश हैं, फिर भी दोनों देशों का अलग-अलग दृष्टिकोण रहा है, जो की भारत-अमेरिका संबंध को भली-भांति समझने में रूकावटें पैदा करता रहा है। शीत युद्ध के काल में भारत अमेरिकी गुट के विरूद्ध खड़ा था। इन वर्षों में भारत की करीबी दोस्ती सोवियत संघ से थी। ऐसे में अमेरिका को लगा कि सैन्य शक्ति के दायरे में सोवियत संघ को मात दे पाना मुश्किल है। अमेरिका ने ढांचागत ताकत और सांस्कृतिक प्रभुत्व के दायरे में सोवियत संघ से बाजी मारी। इसका प्रभाव संघ के मित्र राष्ट्रों पर भी पड़ना था, जिनमें भारत भी था। साथ ही सोवियत संघ की केन्द्रीकृत और नियोजित अर्थव्यवस्था उसके लिए अंदरूनी आर्थिक संगठन का एक वैकल्पिक मॉडल तो थी, लेकिन पूरे शीतयुद्ध के दौरान विश्व अर्थव्यवस्था पूंजीवादी तर्ज़ पर चली, जिससे भारत दूर रहना चाहता था।

पूर्व सोवियत संघ के अंतिम राष्ट्रपति मिख़ाइल गोर्बाचोफ़ का कहना है कि दुनिया एक और शीत युद्ध के मुहाने पर खड़ी है और रूस से बातचीत करके विश्वास बहाल किया जाना चाहिए। 1 दिसंबर 1991 में सोवियत संघ जो की भारत का एक करीबी मित्र था के विघटन के बाद माना जाने लगा कि शीत युद्ध ख़त्म हो गया है। ऐसा इसलिए, क्योंकि सोवियत संघ के विघटन के बाद साम्यवादी खेमा कमज़ोर हो गया था। रूस सामरिक तौर पर तो मज़बूत था, लेकिन उसकी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वह वैश्विक स्तर पर साम्यवाद के प्रसार के लिए मुहिम छेड़ सके। विश्व एकध्रुवीय हो गया था, जिसके केंद्र में अमेरिका ही था।पूरी दुनिया में साम्यवाद का विरोध होने लगा लेकिन महज़ बीस साल बाद ही एक बार फिर शीत युद्ध का ख़तरा मंडराने लगा है।[1] वैश्विक स्तर पर ऐसा परिदृश्य बन रहा है, लेकिन इस बार साम्यवाद का प्रतिनिधित्व रूस नहीं, बल्कि भारत का पड़ोसी चीन कर रहा है। एक दूसरा अंतर यह भी है कि इस बार साम्यवाद और पूंजीवाद के बीच टक्कर नहीं है, बल्कि अमेरिका यूरोप एवं कुछ अन्य देशों के सहयोग से अपना वर्चस्व बचाए रखने की कोशिश कर रहा है। दूसरी ओर चीन अपना वर्चस्व क़ायम करने के लिए गुटबंदी कर रहा है, जिसके लिए वह अमेरिका द्वारा उठाए गए क़दमों का विरोध करके अपने समर्थकों की संख्या बढ़ा रहा है।

अमेरिका और चीन दोनों ही नव शीत-युद्द के प्रमुख धुरी राष्ट्र बन कर उभर रहें हैं,अमेरिका कभी भी एक धुर्विय व्यवस्था कों दिधुर्विय या फिर बहुधुर्वीय व्यवस्था में तब्दील नहीं होने देगा,इस् हेतु वह दाम-दण्ड व भेद की नीति का प्रयोग करेगा।ऐसे में भारत के गुटनिरपेक्षता का महत्व भी बढ़ेगा।

इस वक़्त अमेरिका और चीन कई मुद्दों पर आमने-सामने खड़े हैं। न केवल आर्थिक मुद्दों पर, बल्कि सामरिक तौर पर भी दोनों देश एक-दूसरे को पीछे छोड़ने की कोशिश कर रहे हैं। अमेरिका ने चीन की आर्थिक नीति की जमकर आलोचना की है। उसका कहना है कि चीन जानबूझ कर अपनी मुद्रा युआन की क़ीमत कम कर रहा है, ताकि उसका निर्यात बढ़ सके। इन विभिन्न मुद्दों पर भारत ने अधिकतर अमेरिका का ही साथ दिया है।

एपेक की बैठक में भी दोनों देशों के बीच विवाद हुआ। एपेक देशों के बीच मुक्त व्यापार संबंधी अमेरिकी प्रस्ताव से चीन असंतुष्ट है। उसका कहना है कि अमेरिका उसे अपने अनुसार चलाने की कोशिश कर रहा है। अमेरिका यह प्रस्ताव चीन का प्रभाव कम करने के लिए लाया था। इसके अलावा भी कई आर्थिक मुद्दों पर दोनों देशों के बीच तनातनी है, जिससे साफ होता है कि दोनों देश आर्थिक महाशक्ति बनने के लिए एक-दूसरे को पीछे छोड़ना चाहते हैं। न केवल आर्थिक, बल्कि सामरिक तौर पर भी दोनों देश एक-दूसरे को मात देने की कोशिश में लगे हैं। अमेरिका ने आस्ट्रेलिया के साथ नौसैनिक समझौता किया है, जिसके तहत 2500 अमेरिकी पोत ऑस्ट्रेलिया के उत्तरी तट पर तैनात किए जाएंगे। चीन ने प्रशांत महासागर में प्रभाव बढ़ाने के इस अमेरिकी प्रयास का विरोध किया है। चीन यह कभी नहीं चाहेगा कि उसके पास के क्षेत्रों में अमेरिकी नौसेना मौजूद रहे।

ऑस्ट्रेलिया ने भी भारत को यूरेनियम देने की बात मान ली है। हालांकि उसके देश में ही इसका विरोध हुआ है, जबकि अमेरिका ने ऑस्ट्रेलिया के इस क़दम का स्वागत किया है। एक तरह से अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया के बीच इस समझौते से भारत को कोई दिक़्क़त नहीं है, क्योंकि चीन से भारत को भी परेशानी है। अमेरिका ताइवान का समर्थन करता रहा है। उसने हाल-फिलहाल 4 बिलियन पाउंड के हथियार ताइवान को बेचे हैं, जिसका चीन ने जमकर विरोध किया। चीन भी गुटबंदी का कोई मौक़ा नहीं छोड़ रहा है। जब अमेरिका ने पाकिस्तान को हक़्क़ानी नेटवर्क से संबंध रखने के कारण धमकी दी तो चीन के उप प्रधानमंत्री ने पाकिस्तान का दौरा किया और किसी भी स्थिति में उसका साथ देने की बात कही।[2]

हाल में नाटो सेना ने पाकिस्तानी क्षेत्र पर हमला किया, जिसमें 25 सैनिक मारे गए तो चीन ने उसे पाकिस्तान की संप्रभुता पर हमला बताया और पाक के साथ अपने संबंध मज़बूत करने की कोशिश की। ईरान के मुद्दे पर भी चीन ने अमेरिकी प्रतिबंधों का विरोधा किया है। उसने तर्क दिया कि ऐसे प्रतिबंधों से ईरान अलग-थलग पड़ जाएगा, लेकिन बात कुछ और है। यही नहीं, उसने लीबिया और सीरिया को भी गुपचुप तरीक़े से समर्थन दिया। यह भी उसकी कूटनीति का हिस्सा है। देखा जाए तो संयुक्त राष्ट्र संघ हो या आसियान, दक्षेस हो या कोई अन्य क्षेत्रीय संगठन, हर जगह पर चीन और अमेरिका आमने-सामने होते हैं। बात अगर चीन और अमेरिका के बीच की होती तो यह कोई गंभीर मुद्दा नहीं था, क्योंकि कोई भी देश हो, वह आगे

---

* अथिति विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मऊगंज, जिला - रीवा (म.प्र.) भारत

बढ़ने के लिए अपने प्रतिद्वंद्वी को नीचा दिखाना चाहेगा।अभी चीन और अमेरिका सबसे बड़ी आर्थिक शक्तियां हैं। सामरिक तौर पर भी चीन किसी रूप में अमेरिका से कम नहीं है, लेकिन बात है गुटबंदी की। दोनों देश विश्व को दो गुटों में बांटने की कोशिश कर रहे हैं। अमेरिका अपने समर्थकों की सूची बढ़ा रहा है और चीन अपने समर्थकों की।यही स्थिति द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पैदा हुई थी और पूरी दुनिया चालीस सालों तक युद्ध के ख़ौफ़ के साए में रही। चूंकि दोनों गुट परमाणु शक्ति संपन्न थे, इसलिए युद्ध नहीं हुआ, लेकिन डर तो बना ही रहा। इस गुटबंदी का असर अल्प विकसित और अविकसित देशों पर पड़ा, क्योंकि उन्हें किसी एक का सहयोग ही मिल पाया। हथियार हासिल करने की होड़ मच गई, जिससे विकास का पैसा हथियारों पर ख़र्च होने लगा। अगर वही स्थिति फिर आती है तो उसका खामियाजा विकासशील और अल्प विकसित देशों को ही भुगतना पड़ेगा। ऐसे में एक बार फिर गुट निरपेक्ष आंदोलन को मज़बूत करने की ज़रूरत है, ताकि शीत युद्ध के ख़तरे से दुनिया को बचाया जा सके।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद विश्व वातावरण में आये परिवर्तनों ने भारत-अमरीका देशों को अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों को पुन: मूल्यांकन करने का अवसर दिया है। अमरीका ने भारत द्वारा किये गये आर्थिक उदारीकरण उपायों का गर्मजोशी से स्वागत किया है। क्योंकि इससे अमरीका बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को एक तरफा बहुप्रतीक्षित लाभ होगा। इस विशाल बाजार का व देश के प्राकृतिक संसधानों का खुला दोहन कर सकेगी। इसीलिए भारत में सबसे पहले व सबसे अधिक पूंजी निवेश अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने किया है भारत अमरीकी सम्बन्धों की उल्लेखनीय विशेषता वर्तमान एक तरफा व्यापार और पूंजी निवेश की खुली छूट है।[3]

मई 1998 में भारत ने सुरक्षात्मक कारणों से परमाणु परीक्षण किये। अमरीका ने भारतीय आवश्यकता को नजर अंदाज करते हुये आर्थिक प्रतिबन्धों की घोषणा कर दी। भारतीय वैज्ञानिक अनुसंधान सहायता पर रोक तथा भारतीय वैज्ञानिकों के अमेरिका गमन पर रोक लगा दी। अमेरीकी सत्ता प्रतिष्ठान ने हमारी परमाणु परीक्षण की कार्यवाही को विश्वास घात की संज्ञा दी। जो देश एक ध्रुवीय विश्व तथा एकल चौधराहट का सपना बुन रहा हो किसी अन्य राष्ट्र भले वह लोकतांत्रिक देश हो को परमाणु शक्ति बनते कैसे देख सकता था।[4]

भविष्य में भारत-अमरीका सम्बन्धों की प्रकृति क्या हो सकती है, प्रस्तुत है अध्ययन के अनुसार तीन परिदृश्यों की परिकल्पना की जा सकती है। वे परिदृष्य हैं।

1. तनाव पूर्ण अथवा शत्रुवत सम्बन्ध,
2. तनाव मुक्त अथवा मित्रवत सम्बन्ध,
3. तनाव सहयोग मिश्रित सम्बन्ध। इन परिदृश्यों में से कौन से परिदृश्य की उत्तर बुश काल में बनने की सम्भावना दिखाई देती है।

राजनीतिक और सामरिक दृष्टि से भी उपरोक्त निष्कर्ष खरा उतरता हैं इस तथ्य को रेखांकित करने की आवश्यकता नहीं कि अब अमेरिका एक मात्र वैश्विक महाशक्ति है और इसलिए उसके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने में भारत की दिलचस्पी है। दूसरी ओर यह बात भी निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि अमेरिका भारत की उपेक्षा नहीं कर सकता। क्योंकि उसकी जनसंख्या विश्व में चीन के बाद सबसे अधिक है। उसके प्राकृतिक संसाधान विशाल हैं। उसने औद्योगिक, प्रौद्योगिकी और प्रतिरक्षा के क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है और तीसरी दुनिया के राष्ट्रों में उसका महत्वपूर्ण स्थान है और अन्त में भारत विश्व का सबसे बड़ा जन तांत्रिक देश है।[5]

निष्कर्ष - जब हम भारत-अमेरिका सम्बन्ध के विगत पर दृष्टि डालते है तो हम देखते है कि निक्सन काल में सम्बन्ध की प्रकृति मोटे तौर पर प्रथम परिदृश्य की थी। कैनिडी काल में सम्बन्धों को मोटे तौर पर दूसरा परिदृश्य उभरा। रीगन और बुश कार्यकाल में सम्बन्धों में जो परिदृश्य बना वह मोटे तौर पर तीसरा परिदृश्य था। उपरोक्त परिदृश्यों के निर्माण में कई कारक सक्रिय रहे एवं कई प्रकार के मुद्दे द्विपक्षीय, क्षेत्रीय और वैश्विक उभरे है। वो मुद्दे जो इन सम्बन्धों को गहनता से प्रभावित कर सकते हैं, उन्हें गहराने, तिरोहित होने अथवा उनकी यथा स्थिति के बने रहने की सम्भावनाओं का हमने विश्लेषण किया। ताकि यह दर्शाया जाए कि सम्बन्धों की उभरती प्रवृत्ति किस परिदृश्य को इंगित करती है।[6] शीत युद्ध के समय भारत सोवियत संघ का घनिष्ट मित्र था और भारत का झुकाव समाजवाद की तरफ था सोवियत संघ के अवसान के बाद नरसिम्हा राव के शासन काल में भारत ने उदारीकरण का रास्ता अपनाया भारत की यह नीति भारत अमेरिका सम्बन्धो को मधुरता प्रदान करती है भारत कभी भी नहीं चाहता की उसका पड़ोसी चीन अंतर्राष्ट्रीय जगत में दूसरे ध्रुव के रूप में उभर कर आये और न ही किसी प्रकार का संघर्ष ही चाहता है।

वर्तमान समय मे अंतर्राष्ट्रीय जगत मे मात्र एक ही ध्रुव रहा गया है जो अमेरिका है। अब दुनिया के समस्त राष्ट्र यह चाहते है की आपसी भाई चारे और प्रेम की भावना के साथ रहे और परस्पर सहयोग के आधार पर विकास कार्य करे। अवश्यकता इस बात की है कि अमेरिका अपनी चौधराहट के दम पर नहीं वरना सहयोग के दम पर अपने दाइत्व का निर्वाह करे। भारत को भी अधिक से अधिक अमेरिका से सहयोग प्राप्त करना चाहिए चूंकि भारत भी एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप मे अंतर्राष्ट्रीय जगत मे उभर रहा है, उसे अब किसी भी देश से डरने और दबने की अवश्यकता नहीं है। आजादी के बाद से ही भारत की प्रमुख समस्या राष्ट्र के विकास की रही है और आज भी वही है। इसलिये भारत के लिये जरुरी है की आपसी सहयोग और सामंजस्य से अपनी उन्नति करे इसके लिये जरुरी है की अमेरिका का सहयोग उसको अधिक से मिले और साथ ही साथ पड़ोसी राज्यो में शांति बनी रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बी बी सी समाचार 9 नवम्बर 2014
2. संदीप कुमार नव शीत-युद्धः एक चुनौतीपूर्ण आकंलन 14 lZgb 2013
3. ओशपा शील के राजस्थान पत्रिका 8 जुलाई 1999, पाकिस्तानी आतंकवाद
4. राजस्थान की पत्रिका, आव्हान, जुलाई 1999
5. महेश, तालिवान के सन्दर्भ में अमरीकी आपातकाल, राजस्थान पत्रिका 19 जुलाई 1999
6. दैनिक भास्कर, 11 जुलाई 1999 मानवता के लिए खतरा, ओसामा बिन लादेन रस रंग जयपुर

****

भारत में विकास का सच - आंकड़ों के आईने

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – सब का विकास, सब के साथ। भारतवासियों का हर अगला दिन विकास के रथ के पायदान पर। यह सच है आज का प्रत्येक भारतीय, सिर्फ विकास के स्वप्न देख रहा है। अपनी इस प्रबल इच्छा–आकांक्षा का प्रमाण जनता, लोकसभा में सरकार को स्पष्ट बहुमत देकर दे चुकी है। एक तरफ भारतीय जन आकाक्षाऐं मंगल तक की ऊँचाईयों को स्पर्श करने के लिए, व्याकुल है तो दूसरी तरफ विकास का सामाजिक पैमाना दूसरी कहानी कह रहा है।

विकास के सच का आकलन सचमुच दुरूह है। आर्थिक विकास और राजनीतिक जागरूकता और अधिकार सामाजिक प्रगति के पैमाना नहीं हो सकते है। चीन और भारत के लिए यह एक बड़ी चुनौती है, जिन्हें विश्व में आर्थिक महाशक्ति के रूप में देखा जा रहा है।

आर्थिक राजनीतिक और सामाजिक सभी क्षेत्रों में हमारे विकास की गति का निर्धारण, विविध संगठनों द्वारा आंकड़ों के माध्यम से लगाया जाना सबसे सुविधाजनक और प्रामाणिक विधि हो सकती है। यद्यपि आंकड़ों की बाजीगरी, औसत और मध्यम बिन्दु का सच तब सबसे बड़ा झूठ सिद्ध हो जाता है, जब हमारों परिवारों की आय और एक अरबपति की आय के सम्मिलित औसत से देश की खुशहाली का आंकलन हो जाता है, तद्यपि व्यापक और जमीनी अध्ययन के लिए आंकड़ों का ठीक से अध्ययन करके हम सच्चाई के अधिक निकट होते है। चुनावों में मतदान पूर्व का विविध एजेन्सियों द्वारा कराया गया सर्वेक्षण कई बार उपयोगी सिद्ध हुआ है।

विकास का लक्ष्य समतायुक्त और शोषण मुक्त समाज की स्थापना है। इसके लिये सर्वप्रथम शिक्षा का प्रसार महत्वपूर्ण है। शिक्षा के माध्यम से बेरोजगारी के विरूद्ध संघर्ष तेज किया जा सकता है। शिक्षा रोजगार सृजन का महत्वपूर्ण साधन है। भारत में शिक्षा के प्रति रूझान जरूर बढ़ा है, लेकिन हर उच्च शिक्षित व्यक्ति के हाथ के पास रोजगार नहीं पहुँच सका है। भारत में प्रत्येक वर्ष करीब 30 लाख युवा स्नातक उपाधि पाते हैं, लेकिन रोजगार मूलक शिक्षा नहीं होने से शिक्षित बेरोजगारों की संख्या भी निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। आंकड़े बताते है कि निरक्षर बेरोजगार व्यक्ति प्रति हजार 440, प्रायमरी शिक्षा प्राप्त 478, हायर सेकेण्डरी तक 305, डिप्लोमा प्राप्त 275 तथा स्नातक एवं उच्च शिक्षा प्राप्त प्रति हजार 343 युवा बेरोजगार है।

राजनीतिज्ञ प्राय: विकास के दावे करते हैं, नेशनल सेम्पल सर्वे ऑफ इंडिया 30 अप्रैल 2014 के आंकड़े बताते है कि विकास के महत्वपूर्ण घटक रोजगार सृजन में सन् 2004 से 2011 के मध्य मेन्युफेक्चरिंग क्षेत्र में सिर्फ भारत में पश्चिमी बंगाल में 24 लाख, गुजरात में लगभग 15 लाख रोजगार सृजन हुए परन्तु बिहार में 0.6, हरियाणा में 0.01 तथा देश के सबसे बड़े राज्य उ.प्र. में सिर्फ 3.3 लाख रोजगार सृजन हुए है।

समतामूलक और शोषण मुक्त समाज की स्थापना में जनता को मानव अधिकारों की उपलब्धि होना नैतिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। देश में करोड़ों मामले लंबित है, वहीं लाखों विचाराधीन कैदी जेल में बंद है। इनकी जिन मामलों में सुनवाई हुई है, आश्चर्यजनक रूप में दोषमुक्ति की दर ही अधिक रही है। जैसे वर्ष 2011 में दोषसिद्ध की दर 41.1 प्रतिशत तथा दोष मुक्ति की दर 59.9 प्रतिशत, वर्ष 2012 में दोषसिद्ध की दर 38.5 प्रतिशत तथा दोषमुक्ति दर 61.5 है, इसी प्रकार वर्ष 2013 में दोषसिद्ध की दर 40.2 प्रतिशत तथा दोषमुक्त दर 59.8 प्रतिशत रही है। दोषमुक्त लोगों की शत्रु सरकार या समाज या परम्पराऐं ही रही है। विचाराधीन कैदियों की संख्या वर्ष 2012 में देश में 2,54,857 थी। इसी तरह वर्ष 2012 तक 3,227 जजों के पद नीचली अदालतों में पद रिक्त थे।

समाज के समग्र विकास का सपना, महिलाओं और बच्चों के कल्याण कार्यो के अभाव में अधूरा रहता है। दु:खद सत्य यह है कि पड़ोसी देश चीन और पाकिस्तान की तुलना में हमारे यहा बच्चे गुम होने की संख्या बहुत बड़ी है। इनमें 45 फीसदी बच्चों का कोई पता नहीं चल पाता है। भारत में सन् 2011 में 90564 बच्चे गुम हुए, जिनमें 34406 तथा सन् 2013 में 135262 बच्चे गुम हुए जिनमें 68869 गुम हुए बच्चें का पता नहीं लगा। औसतन प्रतिवर्ष एक लाख बच्चे गुम होते है। सर्वोच्च न्यायालय की चिंता के बाद भी स्थिति में कोई बदलाव नहीं दिखाई देता है।

महिलाओं के प्रति अपराध में भारत वैश्विक स्तर पर बदनाम हैं। सन् 2011 में 228650 सन् 2012 में 244270 तथा 2013 में 3095 में 309546 अपराधों की संख्या रही, इनमें सिर्फ क्रमश: 27, 21 व 22 प्रतिशत को ही सजा मिली। बच्चों व महिलाओं को न्याय दिलाने में हमारा तंत्र संवेदनशील नहीं हैं।

हमारे देश का प्रशासन तंत्र आज भी गुलामी वाली व्यवस्था की मानसिकता से मुक्त नहीं हुआ है। अफसर देश की जनता के सेवक के स्थान पर अपने को स्वामी समझते है। पुलिस बल अपराधों पर अंकुश लगाने के स्थान पर साझेदारी के स्तर तक बेईमान होने के प्रमाण मिले है।

देश के सभी राज्यों की सरकारें स्वास्थ्य सेवाओं पर पर्याप्त राशि व्यय करती है फिर क्यों स्वास्थ्य सेवा ज्यादातर नीति क्षैत्र पर निर्भर है। देश में सन् 2015 तक छ: करोड़ लोग ह्रदय रोग और चार करोड़ लोग मधुमेह से पीड़ित है। चिकित्सा शिक्षा अत्यधिक महंगी होने के साथ–साथ भ्रष्टाचार की पूरी पकड़ में है। म.प्र.का व्यापम चिकित्सा शिक्षा सेवा प्रवेश प्रकरण शर्मनाक होकर प्रतिभावान युवाओं के प्रति क्रूर अन्याय का बड़ा प्रमाण है। चिकित्सकों का अभाव, ग्रामीण क्षेत्र में जाने के प्रति अनिच्छा तथा सरकारी से नीजि क्षैत्र में अधिक आप की संभावना से देश की स्वास्थ्य सेवा पूरी तरह झोला छाप चिकित्सकों तथा विज्ञापनों द्वारा भ्रमपूर्ण प्रचार से चरमरा गई है। बड़े–बड़े अस्पताल की सेवा आम आदमी की पहुँच से पूरी तरह बाहर है। चिकित्सकों में धनार्जन की होड़ मची है।

भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी हमारे तंत्र का अघोषित स्वीकृत हिस्सा बन

---

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

गई है। इसी प्रकार परिवार में भाई भतीजावाद, जातिवाद, शोषण, अनैतिकता, पक्षपात तथा अन्याय आदि विकास सहायक रूप में भूमिका निभाते हुए सामाजिक विकास के हमारे सभी प्रयासों को विकृत कर देते है। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि देश के लोकतंत्र में जनकल्याण के प्रयासों के प्रति प्रतिबद्धता में निरन्तर वृद्धि हुई है, परन्तु भौतिकतावादी चिन्तन की मानसिकता के कारण नैतिक मूल्यों का पतन, चरम सीमा पर पहुँच गया है। धर्म और आदर्शो के प्रति आस्था का प्रदर्शन तो व्यापक रूप में इस सीमा तक हो रहा है कि आश्चर्य होता है, यह वस्तुत: आध्यात्म है या भौतिक सुख सुविधाओं की आकांक्षा में भीड़ तंत्र की आंतरिक तृष्णा का उत्सव है।

समाज में आर्थिक असमानता ने अपने सारे रेकार्ड तोड़ दिये है। कालेधन में बढ़ोतरी में वर्ष 2002 में जहां भारत से 7.9 अरब डालर कालाधन विदेशी बैंकों में जमा हुआ, वहीं 2011 में यह बढ़कर 84.9 अरब डालर हो गया। अनुमान है कि अब तक 343.9 अरब डालर धन भारत से विदेश गया है। वर्तमान सरकार अपने धन वापस लाने के वायदे के अनुसार यद्यपि एस.आई.टी.का गठन कर पूरे प्रकरण को गंभीरता से ले रही है, तथापि देश में मौजूद कालाधन भी एक गंभीर समस्या है। इसका सरल समाधान दिवा स्वप्न ही सिद्ध हो रहा है। प्रत्येक भारतीय के खाते में 15 लाख का जुमला, सरकार का सिरदर्द बन गया है।

देश के आम लोगों को अपने अच्छे दिन का इंतजार है लेकिन यह भी सच है कि हमारे सांसद जनता की आंकाक्षाओं पर खरे नहीं उतर रहे हैं। वैसे उनकी स्थिति अपने दल में सिर्फ बंधुओं जैसी होती है। यह अभूतपूर्व आश्चर्यजनक तथ्य है कि हमारा एक सांसद औसतन 2290368 जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि अमेरिका में लगभग 731000 चीन में सिर्फ 456735 तथा पाकिस्तान में भी केवल 429435 औसत पर एक सांसद होता है। आरक्षण के कारण लोकतंत्र का स्वरूप अप्रमाणिक होता जा रहा है। बहुसंख्यक के टेक्स का धन मुफ्त अनाज वितरण तथा मनरेगा जैसे माध्यमों द्वारा अल्पसंख्यकों को याने दलितों, आदिवासियों आदि पर उड़ाया जा रहा है। स्वावलम्बन की प्रवृत्ति के पैरों, शासन पर आश्रित बनाकर वोट की राजनीति के खेल ने, लेपटॉप, कम्प्यूटर, स्मार्टफोन तथा रसोई गैस आदि के मुफ्त वितरण ने चुनावों को शराब, साड़ी, पैसा, आतंक तथा जाति व परिवार के प्रभाव का प्रतिफल बना दिया है।

भारत की स्वतंत्रता को 70 साल पूरे हो गए है। संसदीय लोकतंत्र ने अपने दायित्व का निर्वाह किया है। संविधान तथा न्यायपालिका की गरिमा और मर्यादा लगभग अक्षुण्य रही है। विश्व की तकनीकी प्रगति और संचार क्रांति ने देश की सोच में भी भारी परिवर्तन उपस्थित किया है। सूचना के अधिकार तथा इलेक्ट्रानिक मीड़िया ने सत्ता तथा समाज में पारदर्शिता लाने में जो भूमिका निभाई है, उससे जहां जनता में जागरूकता आई वहाँ लोगों में निर्भिकतापूर्वक अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का लाभ लिया जा रहा है।

वर्ष 2015 में 33–37 करोड़ अनुमानित इन्टरनेट उपभोक्ताओं की आबादी वाला भारत विश्व का दूसरा देश होगा। सन् 2009 में इंटरनेट के उपभोक्ताओं की संख्या 6.9 करोड़ थी, वह बढ़कर 2014 में 21.3 करोड़ हो गई। इसी तरह टेलीविजन 53 प्रतिशत से बढ़कर 63 प्रतिशत, फेस बुक 01 करोड़ से बढ़कर 10 करोड़, स्मार्टफोन 03 करोड़ से बढ़कर 07 करोड़ तथा यूट्यूब उपयोगकर्ता की संख्या 50 लाख से 06 करोड़ हो गई। अफसोस की बात यह है कि जहां इंटरनेट उपभोक्ता का विस्तार हो रहा है वहाँ इसकी औसत रफ्तार एशिया में सबसे कम है। न्यूनतम औसत रफ्तार तथा अधिकतम रफ्तार में जापान 12.8 व 53.7 पर है, सिंगापुर 7.9 व 59.1 पर है तथा दक्षिण कोरिया 21.9 व 64.4 पर है, भारत सिर्फ 1.5 व 10.9 पर है।

निष्कर्ष यह कि प्रजातंत्र के चौथे स्तम्भ की भूमिका में प्रिंट तथा इलेक्ट्रानिक मीडिया की भूमिका ने विकास के सच को आंकड़ों व दृश्यों की प्रमाणिकता के साथ जिस तरह निरन्तर उजागर किया है, इससे समाज व सत्ता को नई दिशा भी मिली। मोबाईल आज हर हाथ का श्रृंगार है। लेपटॉप से आर्थिक और राजनीतिक गतिशीलता में अपूर्व वृद्धि हुई है। इसने कला, साहित्य, संगीत तथा विज्ञान सभी क्षेत्रों के ज्ञान के दरवाजे खोलकर आंकड़ों का प्रमाणित संसार उपलब्ध कराकर सच को हर आदमी की मुट्ठी में उतार दिया है। ग्लास आधी भरी है, तो आधी खाली है, परन्तु आशा और विश्वास में निरन्तर वृद्धि हो रही है, इसको अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

आर्थिक विकास ही सामाजिक प्रगति का पैमाना नहीं होता, सामाजिक प्रगति में न्यूजीलैंण्ड प्रथम है, जर्मनी, ब्रिटेन, जापान व अमेरिका क्रमश: 12 वें, 13 वें, 14 वें तथा 16 वें स्थान पर है। चीन 90 तथा भारत 102 वें स्थान पर है। इस दिशा में चिन्तन आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अमर उजाला 9 मई 2014 आगरा परिक्षेत्र।
2. अमर उजाला 26 जून 2014 आगरा परिक्षेत्र।
3. गृह मंत्रालय भारत, चीन एवं पाकिस्तान के आधिकारिक आंकड़े 11 अगस्त 2014
4. राज्यसभा (भारतीय उच्च सदन) अमर उजाला 26 जुलाई 2014.
5. पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो 19 जून 2014
6. सोशल प्रोग्रेस इम्परेटिव दैनिक समाचार अमर उजाला 10 अप्रैल 2014
7. लोकसभा न्यायिक विभाग (विधि मंत्रालय) संसदीय समिति 23 अगस्त 2014
8. एन.सी.आर.बी., कानून मंत्रालय 14 अगस्त 2014
9. ग्लोबल निसियल इंटीग्रिटी (जी.एफ.आई.) अमर उजाला 11 जून 2014 आगरा परिक्षेत्र।

****

History of Kol Tribes of Madhya Pradesh

Dr. Aditi Pitaniya *

Abstract - The Kol are an ancient tribal community, one of the original inhabitants of northern and central India. They are densely populated in the Districts of Rewa, Sidhi and Satna in Madhya Pradesh. Kol, besides Gond, is the second largest tribe of Madhya Pradesh. In addition to Madhya Pradesh, this tribe also resides in Uttar Pradesh, Bihar, Orissa and Maharashtra. They have a unique origin and history.

Keywords - History, Kol, Madhya Pradesh.

Introduction - As many as 22 sub-branches of the Kol tribe are accepted. They are located throughout the states of Uttar Pradesh, Bihar, Jharkhand, Madhya Pradesh, Maharashtra and Tripura. In Uttar Pradesh, they are mainly distributed in nine districts of Allahabad, Mirzapur and Varanasi. In the adjoining state of Madhya Pradesh where they are also known as Gonthiya or Gondhya, their population is smaller but they inhabit twenty-three districts within the state. The Kols consider themselves as native of Farenda and Kurali villages in Rewa district. In Madhya Pradesh the people of this tribe lives in Rewa, Sidhi, Satna, Shahdol, Jabalpur and Mandla districts.

History - Kol is one of the most ancient tribes of India, whose mention is found in the Rig Veda and many other mythological scriptures. According to Anthropology, the Kols fall in Kolarian or Munda group, which is considered as a primitive group. The term "Kol" means human. Both Kol and Korku are terms of Mundari language group. In the original language of Kol and Munda tribes terms, Kore Hor are still used for man. Once upon a time the Kols were so influential and their biological spread was so wide that group of many sub-tribes originated from them were named as Munda or Kolarian group by anthropologists. Probably, due to long association with other communities they no longer remember their origin myth or songs etc.

Origin - As per the Munda myth, the Kols and Bhumijas are progenies of Oto Boram and Singh Bonga i.e. the Sun God. In mythological legends, details of Kol origin are found. According to such an mythological legend, the Kols, the Mundas, the Shabars and the Bhumijas were born when Kamdhenu hit the earth with her horns.

The Kamdhenu cow, that fulfills all wishes, was with sage Ashtavakra. Indra wanted to take her away to Indraloka. They both fought for her. Kamdhenu with her horns hit the earth and people with arms and weapons, pick-axe, spades and crowbar kept coming out from earth. Seeing all at them Indra ran way. It is believed that, those who were born having pick-axe were Kols, those having bow and arrows were called Mundas and those who had crowbar came to be known as Shabar. According to another legend, the Kols were born with all other tribes from the body of Raja Ven, who was the son of the earth.

Language - The Kol have largely forgotten their ancient language. Today they speak Hindi and use the Devanagari script to write it. They speak the Angika dialect in Bihar, Marathi in Maharashtra and Bengali in Tripura.

Social Organization - Like all tribes the Kols also have a panchayat and some panchayat office bearers in every village such as Mahato, Barua, Bhuihar, Ojha, Panda, Dewar and Neutia. Mahato or Choudhary is head of the village. Neutia delivers good bad news from any family and also gives invitation to the villages on important occasions. Pachayat is considered competent to settle all types of disputes.

The Kol are divided into different endogamous groups and exogamous clans in the different states they live in. In Madhya Pradesh they have several groups like Rautiya, Thakuriya, Birtiya, Garbhariya, Gondhiya, Bhumiya and Rawtele. The Rautiya are considered the highest in their social hierarchy. In Uttar Pradesh they are currently divided into seven exogamous kuris (clans), namely, Barwarira, Kol, Momasi, Rautia, Rojaboria, Thakuria and Tukrel.

Food Habit and Housing - The Kols have meager needs and are happy by eating Kodai Bhaji. They are also fond of Madain or Mahua liquor and hunting. Besides farming, collection of forest produce is their main occupation. Their diet includes wheat, rice, jowar, maize and lentils. Vegetables, fruits, as well as milk and milk products, and chicken, eggs, fish, mutton and pork are all included in their normal food and drink. The Kol do not eat beef, although it was enjoyed by their aboriginal ancestors. Tobacco is smoked or chewed in its various forms.

The people of Kol tribe like to live by constructing houses in front of each other in Tolas, which are called Kolhin Tola. If entire village is inhabited by the Kols then it is called Kolhan. Walls of Kol house are built by mixing straw in clay. Rope made of the bark of Bakohada tree is used for tying

---

* **Translator, Center For Excellence, IGN Tribal University, Amarkantak (M.P.) INDIA**

the bamboo-poles. Like other tribal communities the Kols also treat the cattle as part of their family so one room of their four roomed house is meant for them.

Marriage - Although polygamy is not forbidden, the Kol are generally monogamous. Marriages are arranged through negotiation between family members on both sides. Marriages by elopement and intrusion also take place among them. Child marriages are still practiced but adult marriages are becoming more common. In the case of child marriages, gaona (ritual departure of the bride to her husband's residence) is performed upon the girl attaining puberty.

Sindur (vermilion), lac and glass bangles are the symbols of married women. Divorce is socially permitted as is remarriage of widows, widowers and divorcees. Junior sororate and junior levirate are prevalent. Junior levirate is a form of marriage in which a widow marries the younger brother of her dead husband. Junior sororate is form of marriage in which after the death of his wife, the husband marries her younger sister.

All sons inherit an equal share of the parental property, while the eldest succeeds as the head of the family. The women of this people group are granted a secondary status to men. The Kol women attend to all the domestic chores.

Culture - The dresses, festivals and marriages etc have become like those of other local communities to a considerably extent and they do not have a distinct identity of their own. The ornaments of their women still have impact of tribal communities.

This tribal community has their own folk songs and folk dances and an indigenous percussion instrument, the dholak, accompanies both. The Kol women tattoo their bodies with depictions of flowers, leaves and animal forms some of which has religious significance. The Kol visit the sacred places of pilgrimage like Allahabad, Haridwar, Bandakpur and Maihar Mata and celebrate festivals like Holi, Ramanavmi (Rama's birthday), Diwali (Festival of Lamps), Janamashtami (Krishna's birthday), Shabri Jayanti (Shabri's birthday, she being the tribal lady who fed a wandering Rama berries).

Among the Kols, the dead body of a married person is cremated while that of an unmarried person is buried. Both death and birth pollution are observed for ritually specified time periods.

Religious Belief - The Kol worship all the deities of the Hinduism. The Kol living in rural forested areas still worship their tribal gods. Their Hinduism is intermingled with their animistic beliefs. Kol invoke their tribal god Sing-Bonga to avert sickness or calamity and to end this, sacrifices of white goats or white cocks are offered by them. They also worship Marang Buru, the mountain god, who is supposed to reside in the most prominent hill in the neighbourhood, and who controls rainfall and is appealed to in the time of drought and epidemics. Animals are sacrificed to him.If the heads leaves during the pooja, rituals are appropriated by the priest.

Other such deities preside over rivers, tanks, wells and springs, and it is believed that when these gods are offended they cause bathers to be afflicted by skin diseases and leprosy. Deswali is their traditional village god and every Kol village has a shrine to him. He is held responsible for a good harvest and receives an offering of a buffalo at their agricultural festival.

There is a strong belief in evil spirits and witchcraft and usually a sokha (witch-finder or witch doctor) is employed. Cases of possession by the Devi (goddess) are reported and involve piercing their cheeks with tridents.

References :-

1. Crook, William. Tribes and Castes of North Western Provinces and Oudh
2. A Hasan & J C Manohar .People of India Uttar Pradesh Volume XLII Part Two, Manohar Publications
3. Chisholm, Hugh, ed. (1911). "Kols". Encyclopædia Britannica (11th ed.). Cambridge University Press.

****

वीर तेजाजी की लौकिक धारणा

बनवारी लाल यादव *

प्रस्तावना – तथ्यों और प्रमाणों के आधार पर किया गया विवेचन ही इतिहास की परिधि में आता है। जब हम सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास की बात करते हैं, तब इतिहास की इस परिभाषा का स्वरूप कुछ व्यापक हो जाता है तथा तथ्य और प्रमाण के अतिरिक्त अन्य बिन्दु भी इतिहास के आधार बनते हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना के प्रतीक संत, भक्त और लोकदेवताओं के जीवन चरित्र को समझने के लिए सामाजिक मन्यताएं, लोक आस्था और लोकविश्वास महत्वपूर्ण साधन हैं। इनका आधार लेकर उनके जीवन की कई बातें उद्धाटित की गई हैं। इनमें कई बातें इतिहास की कसौटी पर खरी उतरती हैं, तो कई अप्रामाणिक आभासित होती हैं फिर भी इनमें कई ऐसी जानकारियाँ उपलब्ध हैं, जो अन्यत्र नहीं मिलती। अत: इनका भी अपना एक अलग महत्व है तथा इनके माध्यम से यहाँ के सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश की पृष्ठभूमि को सहजता से समझा जा सकता है।[1]

जिस व्यक्तित्व को लौकिक धारणाएँ अलौकिक स्वरूप प्रदान करें और जो चरित्र लोक आस्था व लोक विश्वास से निर्मित हो उसका ऐतिहासिक आधार खोजना आसान नहीं है। ऐसे चरित्र के जीवन सन्दर्भों में विविधता और विभिन्नता मिलना स्वाभाविक है। इन सभी सीमाओं और संभावनाओं के बीच हम तेजाजी के जीवन प्रसंगों के संबंध में विचार करते हुए उनके ऐतिहासिक संदर्भ तलाशने का प्रयास करेंगे।[2]

तेजाजी की जन्मतिथि के संबंध में अब तक समसामायिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं हुए हैं। अत: तथ्य और प्रमाण के अभाव में प्रामाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता कि इनकी सही जन्म तिथि कौनसी है। इस सम्बन्ध में अब तक विभिन्न आधार लेकर जो मत व्यक्त किये गये हैं वे इस प्रकार हैं–

1. डॉ. विक्रमादित्य चौधरी ने उल्लेख किया है कि कुछ लोग उनका जन्म भादो सुदी 10 वि.सं. 1010 मानते हैं। पर डॉ. चौधरी ने इस मान्यता का कोई आधार प्रस्तुत नहीं किया है। अत: इस काल्पनिक तिथि को तेजाजी की जन्म तिथि नहीं माना जा सकता है। जहाँ तक लोगों की मान्यता का सवाल है तो यह बात उससे भी मेल नहीं खाती क्योंकि लोकमान्यता के अनुरूप तो यह तेजाजी के परलोक वास की भी तिथि (मात्र तिथि संवत नहीं) है। भादो सुदि 10 को प्रदेश में तेजा दशमी के नाम से उत्सव होता है। अत: यह मान्यता ऐतिहासिक दृष्टि से मेल नहीं खाती।
2. ठाकुर देशराज के अनुसार तेजाजी का जन्म वि.सं. 1040 के आसपास हुआ था। इस मान्यता के लेखक का यह मानना है कि तेजाजी का मृत्यु समय मार्गशीर्ष सुदी दशमी संवत् 1072 विक्रमी बताया है। लेखक ने तेजाजी की मृत्यु तिथि का यह हवाला तवारीख अजमेर के आधार पर दिया है। तेजाजी के युवावस्था में परलोक वास होने की कथा आम रूप से प्रचलित है। उसी भावना से प्रेरित हो लेखक ने यह अनुमान लगाया कि तेजाजी की मृत्यु संभवत 30–32 वर्ष की आयु में हुई होगी और अपने इसी अनुमान से यह तिथि निश्चित की है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से स्वीकार्य नहीं हो सकती।
3. डॉ. पेमाराम ने तेजाजी के वंश के भाट की बही के आधार पर तेजाजी का जन्म वि.सं. 1130 की माघ शुक्ला चतुर्दशी बृहस्पतिवार को होना बताया है। लोकगीतों में भी गया जाता है–

शुभदिन चौदस वार गुरु, शक्लमाघ पहचान।
सहस्र एक सौ तीस में, प्रकटे अवतारी ज्ञान।[3]

डॉ. पेमाराम ने तेजाजी की यह जन्म तिथि नई खोजी है, अपने शोध प्रबन्ध के लेखन के समय। इसका आधार उन्होंने डेगाना के भैरू भाट की बही को बताया है। इसका साक्ष्य या स्रोत तो प्रस्तुत किया है पर उस बही के रचनाकाल और लिपिकाल के संबंध में लेखक मौन है। जब तक यह ज्ञात नहीं होता तब तक हमें यह पता नहीं लगा सकते कि यह साक्ष्य या आधार किस समय का है। तब तक उसकी समसामयिकता और विश्वसनीयता के बारे में अधिकार पूर्वक कुछ भी नहीं कहा जा सकता।[4]

तेजाजी के संबंध में अब तक उल्लेखित तिथियों में डॉ. पेमाराम द्वारा बताई गई जन्ततिथि सबसे उपयुक्त प्रतीत तो होती है परन्तु इसका आधार या स्रोत बही है, वह कितनी विश्वसनीय है, कितनी समसामयिक है, उसकी सत्यता को परखने के बाद ही इसे प्रामाणिक तिथि कहा जा सकता है। इस बही के लेखन काल का व लिपिकाल का उल्लेख न होना। तथा समसामयिक साक्ष्य का अभाव तेजाजी की जन्म तिथि की विश्वसनीयता पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। दूसरी बात यह कि राजस्थान के पाँचों प्रमुख लोकदेवताओं का काल 13वीं 14वीं शताब्दी का है और इन्हीं पांचों प्रमुख लोक देवताओं से जो पाँच पीर भी माने जाते हैं, इनसे 'लोकदेवता' की अवधारणा का आरंभ होता है, अत: इससे पूर्व तेजाजी का जन्म होना संदिग्ध लगता है। यदि इससे पूर्व तेजाजी का जन्म होना सिद्ध हो जाता है, तो उनके लोक देवता के रूप में उपस्थित होने का प्रश्न ही नहीं होता। संभव है कालान्तर में उन्हें लोकदेवता के रूप में प्रतिष्ठापित किया गया। अत: इस दिशा में अभी शोध अपेक्षित है।[5]

तेजाजी का जन्म मारवाड़ के नागौर परगाने के खड़नाल नामक गांव में जाट जाति के धोळ्या गोत्र में हुआ था। रिपोर्ट मरदुमशुमारी राजमारावाड़ में मुंशी देवीप्रसाद की खोज के अनुरूप खड़नाल को ही तेजा का जन्म स्थान माना गया है। डिस्ट्रीक्ट गजेटियर अजमेर डॉ. महीपाल सिंह राठौड़ तथा डॉ. पेमाराम ने मुंशी देवी प्रसाद के मत को ही स्वीकार करते हुए खड़नाल को तेजा जी का जन्मस्थल उल्लेखित किया है। यही बात यहाँ के लोकगीतों में भी मिलती है। कुछ लोग तेजाजी की जन्मभूमि रूपनगर (किशनगढ़) मानते हैं। हाड़ौती के लोक गायन के आधार पर भी तेजाजी को रूपनगर राज्य किशनगढ़ का निवासी बतलाया गया है।[6]

ठाकुर देशराज ने एक मत यह भी व्यक्त किया है कि तेजाजी के पिता

---

* शोधार्थी (इतिहास व संस्कृति) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

का राज्य विस्तृत क्षेत्रफल वाला था–'जिसके अन्तर्गत रूपनगर और खिड़नाल दोनों ही आ जाते थे। तेजाजी भक्त प्रकृति के व्यक्ति थे। इसलिए वे घर के और राजा के प्रबंध से उदासीन होकर साधु संतों की सेवा में लगे रहते थे। वे खिड़नाल और रूपनगर दोनों ही स्थानों पर जब जहाँ इच्छा होती रहते थे।'

ठाकुर देशराज ने रूपनगर को तेजाजी का जन्म स्थान मानने की बात लिखी फिर 'खिड़नाल और रूपनगर' दोनों ही स्थानों को तेजाजी का निवास स्थान माना है पर इसका कोई आधार प्रस्तुत नहीं किया है। पण्डित लज्जाराम मेहता ने हाड़ौती के लोक गायन के आधार पर तेजाजी का जन्म स्थान रूपनगर होना बताया है।[7]

रूपनगर को तेजाजी का जन्म स्थान बताने वाले यह बात जानते हैं कि रूपनगर किशनगढ़ राज्य में स्थित। इसी किशनगढ़ राज्य में तेजाजी का ससुराल था। लोक गायन के गायक भ्रमवश रूपनगर (किशनगढ़) को तेजाजी का जन्म स्थान मान बैठे हों। फिर कुछ लोग तो तेजाजी का ससुराल रूपनगर और रूपनगर के आसपास होने की बात करते हैं। ऐसी स्थिति में ससुराल को जन्म स्थान कैसे माना जा सकता है?[8]

जन्मतिथि और जन्मस्थान की भाँति तेजाजी के माता–पिता के नाम में भी मतभेद देखने को मिलता है। डॉ. पेमाराम ने डेगाना के भैरू भाट की बही के आधार पर अपने शोध प्रबन्ध में यह दर्शाया है कि तेजाजी के पिता का नाम ताहड़ जी और माता का नाम रामकुंवरी था। इस बात में मूलचन्द प्राणेश, डॉ. विक्रमादित्य चौधरी इत्यादि कई विद्वान सहमत हैं तथा मारवाड़ में प्रचलित तेजाजी की कथा में भी इसका उल्लेख मिलता है। डॉ. महेन्द्र भानावत और पण्डित लज्जाराम ने तेजाजी की मां का नाम लछमा बताया है।[9]

ठाकुर देशराज ने अपने जाट इतिहास में पिता का नाम ताहड़जी का उल्लेख तो किया है पर साथ ही यह मत व्यक्त किया है कि कुछ लेखकों ने इनमे पिता का नाम बक्साराम लिखा है। पण्डित लज्जाराम मेहता की भी यही मान्यता है कि तेजा के बाप का नाम बख्शराम था।

पण्डित लज्जाराम मेहता व ठाकुर देशराज ने तेजाजी के पिता का नाम क्रमश: बख्शराम (बक्साराम) का उल्लेख तो किया है पर इसका कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है।

प्रमाण के अभाव में इस मान्यता को अधिक स्वीकृति नहीं मिली। इसकी बजाय डेगाना के भैरू भाट की बही के आधार पर जो बात कही गयी है, उसको व्यापक समर्थन भी प्राप्त हुआ। इसी मत को तर्क सम्मत और अधिक विश्वसनीय समझकर कई परवर्ती लेखकों ने इसका उल्लेख और अनुसरण किया। अत: इसी मत को सर्वाधिक उपयुक्त माना जा सकता है।[10]

तेजाजी की पत्नी के भी कई नाम मिलते हैं। बदना जाट की बेटी बोदल तेजाजी को ब्याही थी। तेजाजी रो विवाह किसनगढ़ रै गांव पनेर रे चौधरी बदने जी री बेटी बोदल दे रे साथै हुयोड़ौ हुतौ। पण्डिज लज्जाराम मेहता ने भी तेजाजी की पत्नी का नाम बोदल और बोडल बतलाया है। सागरमल शर्मा ने तेजाजी की पत्नी का नाम भोडल (पेमल) लिखा है। यहाँ उल्लेखित तेजाजी की पत्नी के नाम बोदल, बोडल, भोडल इत्यादि नाम तो वस्तुत: एक ही माने जा सकते हैं क्योंकि यह तो एक ही शब्द के विभिन्न रूपभेद हैं। यह भेद स्थानीय बोली के आधार पर आना स्वाभाविक हैं।

उपर्युक्त नामों से भिन्न डेगाना के भैरू भाट की बही के आधार पर डॉ. पेमाराम ने तेजाजी की पत्नी काना पेमल बताया है जो पनेर के रायमल की पुत्री थी। डॉ. महेन्द्र भानावत ने तेजाजी की पत्नी का नाम रतना बताया है।[11]

यदि बोदल के अन्य रूपभेदों को छोड़ दें तो तेजा जी की पत्नी के नामों में मुख्य रूप से बोदल व पेमल दो नाम मिलते हैं। ये दोनों नाम ही ज्यादा प्रचलित हैं। बोदल के विभिन्न रूप भेद भी लोक में ज्यादा प्रचलित हुए चाहे वह लोकगीत हो, लोक काव्य हो, या लोकगाथा हो। इतना होने के बावजूद भी यह बात दृष्टव्य है कि मारवाड़ में तेजाजी की पत्नी के रूप में पेमल का नाम ही ज्यादा प्रचलित है।

तेजाजी के मृत्यु स्थल को लेकर भी सभी का एक मत नहीं है। मुंशी देवीप्रसाद की खोज के अनुसार तेजा के आत्म विसर्जन का स्थान पनेर है। पण्डित लज्जाराम मेहता ने उकलाना को तेजाजी का मृत्यु स्थल माना है।

सागरमल शर्मा ने ब्यावर से 10 कि.मी. दूर सैदरिया को तेजाजी का मृत्यु स्थल माना है क्योंकि वहां लोक मान्यता है कि यहां पर तेजाजी को नाग ने डसा था। डॉ. पेमाराम और मूलचन्द प्राणेश इन सब स्थालों से भिन्न तेजाजी की मृत्यु सुरसरा (किशनगढ़) में होना मानते हैं। जाटों की गौरवगाथा में भी यही उल्लेखित है। प्राय: सभी लेखकों में तेजाजी के प्रसिद्ध धामों में सुरसरा का उल्लेख किया है अत: अन्य स्थानों की बजाय इसको ही तेजाजी का मृत्यु स्थल मानना ज्यादा उचित है।[12]

तेजाजी के सर्पदंश सम्बन्धी विवरण में भी विभिन्न लोक गाथाएँ मिलती हैं– प्रथम लोकगाथा के अनुसार जब तेजाजी ससुराल जा रहे थे तो रास्ते में एक साँप को जलने से बचाया। उसकी नागिन जल चुकी थी। अत: नाग बड़ा क्रोधित हुआ। वह नाग शापग्रस्त था। आग में जलने के बाद वह शापमुक्त हो सकता था शापमुक्ति से वंचित रह गया। आग बबूला होकर उस नाग ने तेजाजी को डसना चाहा तेजाजी ने उसे वचन दिया कि ससुराल जाकर मैं तुम्हारे पास आऊँगा तब डस लेना। मेरों के साथ युद्ध में अत्यधिक घायल होने के बाद भी तेजाजी अपने वचन को निभाने हेतु साँप के पास पहुँचे। साँप ने कहा तुम्हारा सारा शरीर घावों से भरा हुआ है, कहाँ पर डसूँ? इस पर तेजा जी ने जीभ निकाली और सर्प ने डस लिया।[13]

दूसरी गाथा के अनुसार तेजाजी जब गायें चराने जाया करते थे। तब एक गाय अलग होकर एक बिल के पास चली जाती थी, जहाँ एक साँप निकलकर गाय का दूध पी जाता था। यह ज्ञात होने पर तेजाजी ने साँप को हमेशा दूध पिलाने का वादा किया था, किन्तु एक दिन किसी कारण वश साँप को दूध पिलाना भूल गये। इस कारण साँप ने उन्हें डसना चाहा। इस पर तेजाजी ने ससुराल से वापिस लौट आने पर, उसने का वादा किया। जब तेजाजी ससुराल से गायें को छुड़ाने के कारण घायल अवस्था में उसी स्थान पर वापिस आये तो साँप ने तेजाजी के घायल शरीरांगों को देखकर कहा कि कहाँ डसूँ? तब तेजाजी ने जीभ बाहर निकाली और साँप ने उस पर डस लिया।[14]

तीसरी गाथा के अनुसार– 'तेजा मेरों के पीछे गया और लड़ कर गायें छुड़ा लाया लेकिन खुद भी जख्मी होकर गिरा वहाँ एक साँप बैठा था उसने उसकी जबान पर काट खाया जिससे वह मर गया।

सर्पदंश की इन गाथाओं के अतिरिक्त नाग वंशी बालू नामक व्यक्ति द्वारा तेजाजी को मारने का उल्लेख भी मिलता है। यह बालू नाग सुरासुरा का शासक था। तथा तेजाजी से शत्रुता रखता था। सागरमल्ल शर्मा ने भी तेजाजी के शत्रु के रूप में 'काला' नागवंश के बालू जाट का नामोल्लेख किया है तथा उसके द्वारा घायल तेजाजी को धराशायी करना एवं तेजाजी की पत्नी पेमल द्वारा तलवार के वार से बालू नाग को मारने का विवरण दिया है। शर्मा आगे यह भी लिखते हैं कि– लोगों ने उसे विषधर सर्प माना। एक बार तेजाजी ने उसकी प्राण रक्षा भी की थी, फिर भी विद्वेष की अग्नि में जलता हुआ वह खुद भी मरा और तेजाजी का भी जीवन समाप्त कर गया।'[15]

ठाकुर देशराज ने भी इस प्रसंग को उल्लेख करते हुए लिखा है कि- 'बालू नाम के नाग ने उनका रास्ता घेर लिया। उसने शत्रुता निभाने का यह सबसे अच्छा मौका समझा। कहा जाता है कि पहली बार इसने तेजाजी को ललकारा था, किन्तु इस समय तेजाजी ने उससे यह इच्छा प्रकट की थी कि मैं ससुराल जाना चाहता हूँ, अपनी स्त्री से मिलने के बाद मैं अवश्य इधर आऊँगा। घायल तेजाजी और उनकी धर्मपत्नी मारे गये, किन्तु बालू नाग को भी उन्होंने धराशायी कर दिया। बालू ने तेजाजी की अचेतावस्था में जिव्हा काटने का प्रयत्न किया था। नाग बालू के मारे जाने से अन्य नाग भी उस प्रान्त को छोड़कर भाग गए। चारों ओर शांति हो गई। नाग बडे क़ड़वे मिजाज के और सभी लोगों को दु:खदायी थे।'

उपर्युक्त लोकगाथा का ऐतिहासिक आधार इस प्रसंग में निहित हैं। इस प्रसंग के अनुसार ऐतिहासिक सत्य यह प्रतीत होता है कि नाग जाति के लोग क्रूर व अत्याचारी थे। जनता उनसे परेशान थी। नाग वंश व तेजाजी के वंश के लोगों के बीच संघर्ष हुआ। तेजाजी तथा तेजाजी के वंश के लोगों ने नाग जाति के लोगों को वहां से खदेड़कर जनता को नाग जाति के भय और आतंक से मुक्त किया। इससे नाग जाति उनकी शत्रु हो गई और मौका देखकर बालू नामक नाग ने तेजाजी को घायल अवस्था में थे। उस समय उनको मार दिया। इसी तथ्य को लोगों ने अपने ढंग से गाथाओं में व्यक्त किया। तेजाजी के शौर्यपूर्ण कृत्य व गौरक्षा, वचन पालन जैसे आदर्शो की रक्षा हेतु प्राणोत्सर्ग करने का कार्य उन्हें महापुरुष के रूप में मण्डित करते हैं। उनके इन्हीं कार्यो की वजह से लोक ने उन्हें देवत्व प्रदान कर लोक देवता के रूप में स्वीकार किया। लोक देवता के रूप में प्रतिष्ठापित होने पर कई काल्पनिक और चमत्कारिक बातें भी उनके साथ जुड़ गई। सांप को काटने के बाद उनके नाम की ताँती या डसी बांधने, उनके भोपों द्वारा सांप के काटे व्यक्ति का उपचार करने जैसे कार्यो में लोक की आस्था आज भी है और उनकी यह आस्था और अटूट विश्वास निरर्थक नहीें है। बहुत से लोगों को इसी पद्धति से जीवन दान मिला जिसके कई लोग प्रत्यक्षदर्शी भी हैं और अनेक लोगों ने ऐसे चमत्कारिक आख्यान सुने हैं। लोक विश्वास और लोक मान्यता का यह आधार आश्चर्यजनक भले ही लगे पर लोक आस्था से जुड़ा है और लोक जीवन के व्यवहार में अपनाया गया अनुभव सिद्ध सत्य है।[16]

तेजाजी की मृत्यु तिथि पर भी मतभेद है। ठाकुर देशराज ने 'तवारीख अजमेर' में दर्शायी गई मृत्यु तिथि मार्गशीर्ष सुदी दशमी संवत् 1072 विक्रमी को स्वीकार किया है। परन्तु इस तिथि से भिन्न भादो सुदी 10 की तिथि जनसाधारण में प्रचलित है। इस संबंध में पण्डित लज्जाराम मेहता लिखते हैं 'तेजा का परलोकवास भाद्रशुक्ला 10 को हुआ था। इसमें किसी तरह का संदेह नहीं। राजपूताना भर में इसी दिन तेजा दशमी के नाम से उत्सव होता है।' मरदुमशुमारी रिपोर्ट में लिखा है- 'प्रारंभ में तेजाजी के मृत्यु-स्थल सुरसरा में लोगों ने उनकी देवली बनाई और पूजने लगे। जाट और गूजर तेजाजी की मृत्यु तिथि यानि भादौ सुदी दशमी को आते थे और वे गाय बैल भी साथ लाते थे।'[17]

इन दोनों तिथियों से भिन्न तिथि का भी उल्लेख मिलता है। सागरमल्ल शर्मा के अनुसार 'तेजाजी और उनके घायल साथी काफी देर तक युद्ध करने के बाद वीरगति को प्राप्त हुए। उस दिन (वि. 1160) की माघ कृष्ण की चतुर्थी थी। डेगाना के भैरूभाट की बही में भी यही तिथि है इसका उल्लेख डॉ. पेमाराम ने इस प्रकार किया है- 'भाट की बही में उनकी मृत्यु का समय वि.सं. 1160 माघ कृष्ण चतुर्थी दिया हुआ है।'[18]

तेजाजी के परलोक गमन की विभिन्न तिथियों का उल्लेख मिलता है फिर भी मारवाड़ में तथा समस्त राजस्थान में जहाँ-जहाँ तेजाजी के स्थल या स्मारक मन्दिर इत्यादि बने हैं। वहाँ तेजाजी की निर्वाण तिथि के उपलक्ष्य में भादौ सुदी 10 को उत्सव मनाया जाता है और इस तिथि को 'तेजा दशमी' के नाम से जाना जाता है। अत: जन साधारण में भी तिथि प्रचलित है, इसलिए इस तिथि को तेजाजी की मृत्यु तिथि यदि मान लिया जाए तो लोक मान्यता के अनुरूप होगा।[19]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, नीरज शर्मा, राजस्थानी ग्रन्थागार, पृ. 43
2. इण्डिया आर्कोलॉजी, ए रिव्यू 1958-59, गवर्मेन्ट ऑफ इण्डिया
3. राजस्थानी लोक संस्कृति एवं लोक देवी-देवता, डॉ. सुरेश सालवी, हिमांशु पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2009, पृ. 187
4. वहर, पृ. 18
5. राजस्थान डिस्ट्रीक गजेटियरस, नागौर, के.पी. सहगल
6. राजस्थान की सांस्कृतिक परम्पराएँ, तंवर महेन्द्रसिंह, राजपाल एण्ड कम्पनी, इलाहाबाद, 2009, पृ. 143
7. राजस्थान का धार्मिक अनुशीलन, पेमाराज चौधरी, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 21
8. वही, पृ. 22
9. राजस्थान डिस्ट्रीक गजेटियरस, नागौर, के.पी. सहगल।
10. राजस्थान के प्रमुख पर्व एवं त्यौहार, राजस्थान पत्रिका, जयपुर, अंक 32, पृ. 46
11. वही, पृ. 47
12. राजस्थान डिस्ट्रीक गजेटियरस, नागौर, के.पी. सहगल।
13. राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1989, पृ. 345
14. प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, प्रो. वी.सी. पाण्डेय, खण्ड-2, पृ. 661
15. अजमेर का इतिहास, गौरी शंकर हीराचन्द ओझा, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 151
16. दयालदास री ख्यात, पृ. 2, 95, दलपत विलास, पृ. 15, 79
17. राजस्थान वैभव, सांस्कृतिक धरोहर, विविध पक्षो का विवेचन, सत्यप्रकाश बंसल, नई दिल्ली, 1988, पृ. 222
18. राजस्थान का धार्मिक अनुशीलन, पेमाराम चौधरी, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 35
19. राजस्थान का राजनैतिक व सांस्कृतिक इतिहास, मुल्कराज आनन्द, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाशन, जोधपुर, 1988, जोधपुर, पृ. 36

****

भारत छोड़ो आंदोलन का क्षेत्रीय अध्ययन (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रूक्मणी परते *

शोध सारांश – इस प्रकार मण्डला जिले में भी भारत छोड़ो आंदोलन की लहर दौड़ गई। इस आदिवासी प्रधान पिछड़े हुऐ जिले मण्डला ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को अपने योगदान का इतिहास अपने रक्त और त्याग से लिखकर इस भूमि का नाम इतिहास में अमर कर दिया। तीन ओर से नर्मदा नदी से घिरा यह जिला आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। यहाँ के सघन वनों में गोंड आदिवासी बड़ी संख्या निवास करते हैं। संचार साधनों का अभाव होते हुये भी महात्मा गांधी के आव्हान पर सैंकड़ों आदिवासी निर्भय होकर आगे आये।

इस वीर स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के अतिरिक्त अन्य अनेक व्यक्तियों ने भी अपनी गिरफ्तारियों द्वारा भारत छोड़ो आंदोलन में अपना अनुपम योगदान दिया। जिसमें श्री गिरिजाशंकर अग्निहोत्री, जुगलकिशोर कस्तवार, हेमराज घोप, उदयचंद जैन, मन्नुलाल मोदी, गयाप्रसाद, अमीरचंद जैन आदि प्रमुख थे। इस आंदोलन में आदिवासियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जिनमें गबडू कोल, रमनसिंह गोंड, गोकुलसिंह मरकाम, तेजूलाल कोल आदि के नाम प्रमुख है।

शब्द कुंजी – भारत छोड़ो आंदोलन।

प्रस्तावना – महाकौशल के मण्डला जिले में भी भारत छोड़ो आंदोलन की लहर दौड़ गई। इस आदिवासी प्रधान पिछड़े हुऐ जिले ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में भूमिका निभाई। यहाँ स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों ने अपने योगदान का इतिहास अपने रक्त और त्याग से लिखकर इस भूमि का नाम अमर कर दिया। यहाँ के सघन वनों में निवासरत् आदिवासियों ने भी इस पुनीत कार्य में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

देशव्यापी गिरफ्तारियों के दौर में 9 अगस्त 1942 को सर्वप्रथम जिले के अग्रणी नेता श्री गिरिजाशंकर अग्निहोत्री को गिरफ्तार कर लिया। स्थानीय जनता द्वारा शासन के इस कृत्य का घोर विरोध किया गया। 10 अगस्त 1942 को श्री बाबूलाल यादव के नेतृत्व में लगभग 2000 व्यक्तियों ने गांधी चौंक में एकत्रित होकर पूरे मण्डला शहर में जुलूस निकाला और विरोध प्रदर्शन किये।[1]

12 अगस्त को मण्डला के अग्रणी नेता श्री शंकरलाल पागल को गिरफ्तार किया गया और उन्हें 9 माह की सजा दी गई। इसके बाद लाल सेना के सदस्य श्री बल्लवदास बड़ोनिया को, जिन्होंने आंदोलन के दौरान शासकीय संपत्ति को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया था, त्रस्त होकर शासन ने, गिरफ्तार कर लिया और 7 माह 22 दिन के लिऐ जेल भेज दिया गया। 15 अगस्त 1942 को मण्डला के श्री जुगलकिशोर कस्तवार को पुलिस इंस्पेक्टर पंजाबराव ने गिरफ्तार किया और उन्हें 29 सितम्बर 1942 लगभग 45 दिन मण्डला जेल में नजरबंद रखा गया। इसी दिन महाराजपुर मण्डला के उग्र विचारधारा वाले आंदोलनकारी श्री भगवानसिंह मुस्ताजर भी गिरफ्तार कर लिये गये और उन्हें 15 अगस्त 1942 से 2 सितम्बर 1943 तक मण्डला व जबलपुर जेलों में बंद रखा गया।

इसके पश्चात् 17 अगस्त 1942 को बम्हनी बंजर के श्री घसीटा कुर्मी को गिरफ्तार कर 4 माह के कैद की सजा सुनाई गई। मण्डला के श्री अनंतराम बनिया भी गिरफ्तार हुऐ और उन्हें 22 सितम्बर 1942 से 1 मार्च 1943 तक कैद में रखा गया। इनके अतिरिक्त मण्डला के सहदेव प्रसाद अग्रवाल को 7 माह, श्री मुरारीलाल डोंगरसे, जंतिपुर मण्डला के श्री तुलसीराम को 15 दिन, और मण्डला के ही श्री हेमराज घोप को इस आंदोलन के तहत 7 दिन तक मण्डला जेल कारावास की सजा दी गई। इन नेताओं के साथ ही बिछिया के आदिवासी नेता श्री अकलू गोंड को भी गिरफ्तार किया गया और उन्हें 13 अक्टूबर 1942 से 2 अप्रैल 1943 तक मण्डला जेल में रखा गया।[2]

उदयचंद जैन की शहादत – 15 अगस्त 1942 तक मण्डला जिले के सभी अग्रणी नेता बंदी बना लिये गए थे। इनमें स्थानीय जगन्नाथ हाईस्कूल के छात्र नेता श्री उदयचंद जैन श्री मन्नुलाल मोदी, श्री गयाप्रसाद यादव, और श्री अमीरचंद जैन के नाम प्रमुख हैं। 15 अगस्त 1942 की प्रात: कांग्रेस कार्यकर्ताओं के अलावा बड़ी संख्या में जनसमूह एकत्र हुआ। जनता ने ब्रिटिश शासन की दमनात्मक कार्यवाही के विरोध में नारे लगाऐ और जुलूस निकाला। आरंभ से ही वे राष्ट्रीय विचारधारा से ओतप्रोत थे। उदयचंद जैन और उनके अनेक साथी जुलूस में सम्मिलित हो गए। पुलिस की नजरें उदयचंद जैन तथा मन्नुलाल मोदी की ओर थी। इसी समय जुलूस एक सभा में तब्दील हो गया। मन्नुलाल ने सभा को संबोधित कर अपना भाषण जारी रखा। जिसके फलस्वरूप उन्हें गिरफ्तार कर लिया। लाठी चार्ज के दौरान छात्र उदयचंद जैन एक ओर अकेले खड़े थे। पुलिस ने उन्हें कहा भाग जाओ नहीं तो गोली मार दी जाएगी। उदयचंद ने अपना सीना खोलकर कहा **'चलाओ गोली'** पुलिस ने छात्र उदयचंद पर गोली चला दी।[3] गोली छात्र उदयचंद जैन को जा लगी वे खून से लथपथ होकर नीचे गिर पड़े। पुलिस दल उन्हें उठाकर अस्पताल ले गया। गोली चलने पर भीड़ इधर-उधर हो गई। प्रात: होते-होते वीर उदयचंद शहीद हो गए।[4] इस प्रकार उदयचंद जैन का बलिदान मण्डला जिले के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास सदैव अविस्मरणीय रहेगा।

इस घटना के बावजूद गिरफ्तारियों का तांता लगा रहा। जिले के कोने कोने से आंदोलनकारी गिरफ्तार कर लाए गऐ। मण्डला जेल खचाखच भर गया। टेम्परेरी बैरेक्स बनाए गए थे। नजरबंदी कैदी क्रमश: जबलपुर और नागपुर जेल में भेजे जाते रहे। विचाराधीन बंदियों पर मुकदमे चलाए गए।

---

* वरिष्ठ अध्यापक, शासकीय उत्कृष्ट विद्यालय, पांढुर्णा, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

उन्हें 6 माह से लेकर 2 वर्षों तक की सजा दी गई।

शहादत के बाद – मण्डला जिले के उदयचंद जैन के बलिदान से जनाक्रोष फूट पड़ा तथा तोड़फोड़ की विध्वंसक कार्यवाहियाँ प्रारंभ हो गईं। लगभग प्रतिदिन जुलूस और सभाएँ होने लगी।[6] शीघ्र ही समूचे मण्डला जिले में महिला मंडल द्वारा उदयचंद जैन के सम्मान में जुलूस निकाले गये। जिसका नेतृत्व स्थानीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी श्री जीवनलाल घोप की पत्नि श्रीमती सोनाबाई ने किया।

शराब की पिकेटिंग की गई और विदेशी वस्त्रों की होलियाँ जलाई जाने लगी। मण्डला, बिछिया, नैनपुर, डिण्डौरी, पिंडरई और अनेक दूरदराज के इलाकों में आंदोलन का विशाल तथा उग्ररूप देखा गया। इतना ही नहीं जिले में क्रांतिकारी गतिविधियाँ भी सक्रिय हो गईं।[7] इसके अलावा फूलसागर के ही छुट्टूलाल ढीमर तथा परसादीलाल, श्री शंकरलाल गोंड, श्री दुर्जनसिंह गोंड, श्री मूल्लुकहार, श्री भूपे ढीमर आदि को गिरफ्तार कर 15 से 25 बेतों की सजा दी गई। इसी अपराध में श्री गबरू कोल 2 वर्ष की सजा दी गई। उन्हें 29 सितम्बर 1942 से 4 जुलाई 1944 तक मण्डला जेल में रखा गया। फलस्वरूप उन्हें 2 वर्ष की कठोर सजा दी गई। इसी तरह मण्डला के हरिप्रसाद लोहार को 2 वर्ष के लिये जेल भेज दिया गया।

अत: फूलसागर पुल षडयंत्र काण्ड के लगभग सभी अभियुक्तों को सजा दी गई।[8] ग्राम खेरी मण्डला के श्री सुमारू कोल, श्री गिनैया कोल, श्री लहरी कोल, श्री छोटू कोल और श्री दादू कोल गिरफ्तार कर लिऐ गऐ। इस सभी आंदोलनकारियों को 15–15 बेतों की सजा दी गई। इस संदर्भ में कहा जाता था कि बेतों की सजा होना जेल की सजा से अधिक भयानक होती थी।[9] इस प्रकार आंदोलन के दौरान ब्रिटिश अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा पैशाचिक अत्याचार किये जाते थे।

इस तरह उपर्युक्त समस्त कार्यकर्ता विभिन्न आंदालनों में पूर्णत: सक्रिय रहे एवं गिरफ्तार किऐ गऐ। किसी–किसी को लंबी–लंबी अवधि तक कारावास की सजा दी गई। किसी को बेंतों की तथा अधिकांश को अर्थदण्ड देकर छोड़ा गया। मण्डला के इतिहास में जितने भी आंदोलन हुऐ उनमें इन सेनानियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

आदिवासी आंदोलनकारी – मध्यप्रदेश का मण्डला जिला एक पिछड़ा एवं आदिवासी बहुल जिला रहा है तथापि यहाँ के आदिवासी अथवा वनवासी राष्ट्रीय भावनाओं से अत्यधिक ओतप्रोत थे। उन्होंने 1942 के आंदोलन में अपनी सशक्त भागीदारी प्रदान कर यह प्रमाणित कर दिया कि वे भी देश की आजादी के लिऐ मर मिटने को तैयार हैं। इस आंदोलन में सक्रिय भूमिका अदा करने के फलस्वरूप उन्होंने गिरफ्तारियाँ दीं जेल कारावास सही अर्थदण्ड पाया और बेतों की अमानवीय यातनाएँ झेली। लेकिन उन्हें मण्डला जिले के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में उचित स्थान नहीं मिल पाया। उन आदिवासी सेनानियों का विवरण इस प्रकार है–

1. बम्हनी बंजर के छिबलु गोंड को 8 की सजा एवं 50 रू. का अर्थ दिया गया।
2. डिण्डौरी क्षेत्र में श्री धरमू गोंड को 20 अर्थदण्ड दिया गया।
3. छपारा के श्री लामू को 45 रू. का अर्थदण्ड दिया गया।
4. नारायणडीह डिण्डौरी के श्री बाराती गोंड पर 12 रू. का जुर्माना किया गया।
5. धमन गाँव डिण्डौरी के श्री रूपसिंह अहीर एवं बैगा सिंह गोंड पर 12–12 रू. का अर्थदण्ड दिया गया।
6. ग्राम गोरा छापर डिण्डौरी के श्री दुई को 15 बेतों की सजा की गई।
7. शहपुरा तहसील के अंतर्गत ग्राम ठोड़ा के अनेक आदिवासी आंदोलनकारी ब्रिटिश शासन के कोप–भाजन बने, उनमें श्री बंशी गोंड को 6 माह का कारावास दिया गया। इसी ग्राम के श्री बहादुर ठाकुर तथा ननकू गोंड को भी 6–6 माह का कारावास तथा 50–50 रू. का अर्थदण्ड दिया गया। शहपुरा के श्री मोतीलाल गोंड तथा श्री धुन्धा अहीर को 6–6 माह का कारावास तथा 50–50 रू. का अर्थदण्ड दिया गया।
8. ग्राम भानपुर (समनापुर) के श्री खल्लूगोंड को आंदोलन के अंतर्गत 1 वर्ष का कारावास दिया गया था।
9. ग्राम कमरा सोढ़ा (अमरपुर) के श्री बाबूदीन गोंड आंदोलन के दौरान भूमिगत रहकर कार्य करते रहे। ब्रिटिश शासन ने उनके विरूद्ध गिरफ्तारी, वारंट जारी कर रखा था। यहाँ के ही श्री बुद्धू कोल, श्री द्वारका कोल, श्री प्रेमा कोल आदि पर 12–12 रू. का जुर्माना किया गया। ग्राम पिंडरूखी (अमरपुर) के परसादी कोल पर 10 रू. का अर्थदण्ड लगया गया।
10. ग्राम महेन्दवानी के श्री बुद्धू गोंड, घुघलैया गोंड, डुलडुल गोंड, सुनहर कोल एवं श्री गुल्लू कोल पर 10–10 रू. का अर्थदण्ड लगया गया।
11. ग्राम खेरी के सुमारू कोल, अधारी कोल, डुमारी व महमू कोल, गनेशा व कारू गोंड,नोखेलाल तथा भागीरथी कोल, नत्थू एवं कालू कोल, चैतराम कोल, गिरधारी कोल, तैजू व लिटुया कोल, गिनैया कोल, शीतल कोल और छोटू को आंदोलन में भाग लेने के कारण 15 बेतों की अमानुसिक सजा दी गई।
12. ग्राम ग्वारी के दुर्जन गोंड और परसादी गोंड को 15 बेतों की सजा दी गई थी। [10]

इसके अतिरिक्त जिले में कई अज्ञात आदिवासी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी भी थे,जो पुलिस के भय से भूमिगत रहकर स्वाधीनता आंदोलन में संलग्न रहे और देश सेवा करते रहे। इसी कारणवश उनके नाम जिला स्वतंत्रता संग्राम की शासकीय सूची शामिल न हो सके।

निष्कर्ष – इस प्रकार मण्डला जिले में भी भारत छोड़ो आंदोलन की लहर दौड़ गई। इस आदिवासी प्रधान पिछड़े हुए जिले मण्डला ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों ने अपने योगदान का इतिहास अपने रक्त और त्याग से लिखकर इस भूमि का नाम इतिहास में अमर कर दिया। तीन ओर से नर्मदा नदी से घिरा यह जिला आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। यहाँ के सघन वनों में गोंड आदिवासी बड़ी संख्या में निवास करते हैं। संचार साधनों का अभाव होते हुये भी महात्मा गांधी के आव्हान पर सैंकड़ों आदिवासी निर्भय होकर आगे आये।

15 अगस्त 1942 को मण्डला की जनता तथा छात्रों द्वारा आयोजित सरकार विरोधी जुलूस निकाला गया। पुलिस ने इस पर लाठी चार्ज किया जुलूस पर लाठियों का कोई प्रभाव न होते देख पुलिस द्वारा गोलियाँ चलाई गई। जिसमें उदयचंद जैन नामक युवक घटनास्थल पर ही मारा गया। इस प्रकार अगस्त क्रांति में वीर प्रसविनी मण्डला के वीर उदयचंद जैन का बलिदान मध्यप्रदेश के इतिहास में सदा स्मरणीय रहेगा।

मध्यप्रदेश के नागोद के तरूण कवि 'सुधेश' ने 'उदय–काव्य' लिखकर शहीद उदयचंद जैन के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। इस वीर स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के अतिरिक्त अन्य अनेक व्यक्तियों ने भी अपनी गिरफ्तारियों द्वारा भारत छोड़ो आंदोलन में अपना अनुपम योगदान दिया। इस आंदोलन में आदिवासियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जिनमें गबडू कोल, रमनसिंह गोंड, गोकुलसिंह मरकाम, तेजूलाल कोल आदि के नाम प्रमुख है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, गिरिजाशंकर; स्वाधीनता संग्राम मण्डला–डिंडोरी, पृ. 145
2. जेल रिकार्ड 1942–43 एवं मण्डला कलेक्टर ऑफिस की विज्ञप्ति/2/73/61 दिनांक 6 जून 1963 एवं एस.सी/2/74/9086 दिनांक 9 अप्रैल 1974 से उद्धृत
3. पाण्डे, एन.पी.; मध्यप्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजटियर मण्डला एवं डिण्डौरी 2000 पृ. 41
4. अग्रवाल, गुलाबचंद; स्वतंत्रता संग्राम सेनानी 'संघर्ष से सृजन तक' 2007, पृ. 41
5. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी खण्ड 1, जबलपुर संभाग पृ. 202
6. अग्रवाल, गिरिजाशंकर; वही पृ. 169
7. जेल रिकार्ड 1942–43 एवं मण्डला कलेक्टर ऑफिस की विज्ञप्ति वही
8. कामरेड गुलाबचंद अग्रवाल स्वतंत्रता संग्राम द्धारा प्राप्त जानकारी।
9. कार्यालय कलेक्टर मण्डला की अधिसूचना क्र. एस.सी./2/77 मण्डला दिनांक 12 जुलाई 1977 से उद्धृत।

****

व्यक्तिगत सत्याग्रह एवं बालाघाट जिला

डॉ. संकेत कुमार चौकसे *

शोध सारांश – इंग्लैण्ड द्वारा भारतीयों से परामर्श के बिना भारत को द्वितीय विश्वयुद्ध में शामिल किये जाने की पूरे देश में प्रतिक्रिया हुई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रतिक्रिया बड़ी संतुलित और शालीन थी तथा कांग्रेस ने इसके विरोध स्वरूप महात्मा गांधी के नेतृत्व में व्यक्तिगत सत्याग्रह संचालित किया। गांधीजी इस आंदोलन के माध्यम से भारतीय भावनाओं को व्यक्त करना चाहते थे, साथ ही वह ब्रिटिश सरकार की गंभीर स्थिति का अनुचित लाभ नहीं उठाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने सीमित स्तर पर व्यक्तिगत सत्याग्रह करने का निर्णय लिया। यह आंदोलन नैतिक विरोध की अभिव्यक्ति मात्र था। प्रस्तुत शोध पत्र में व्यक्तिगत सत्याग्रह की पृष्ठभूमि एवं घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही इस सत्याग्रह में बालाघाट जिले के अवदान को बतलाया गया है।

पारिभाषिक शब्द – व्यक्तिगत सत्याग्रह।

प्रस्तावना – व्यक्तिगत सत्याग्रह भारतीय स्वाधीनता आंदोलन की श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिश शासन और कांग्रेस के मध्य पूर्ण स्वतंत्रता के प्रश्न पर कोई समझौता नहीं हो सका। अतएव महात्मा गांधी के नेतृत्व में यह आंदोलन संचालित किया गया। यह आंदोलन एक व्यक्तिगत प्रयास था जिसके अंतर्गत गांधीजी द्वारा चयनित सत्याग्रही जनसमूह के समक्ष युद्ध विरोधी नारे अथवा भाषण प्रस्तुत कर गिरफ्तार होने तक सत्याग्रह करता रहता था। मध्यप्रांत के लिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण बात थी कि व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन का केन्द्र वर्धा के निकट स्थित गांधीजी का सेवाग्राम आश्रम था। यही पर प्रत्येक प्रांतीय कांग्रेस समिति सत्याग्रहियों की सूची गांधीजी के अनुमोदनार्थ भेजती थी तथा उनके द्वारा अनुमोदित व्यक्ति ही सत्याग्रह कर सकते थे।

गांधीजी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह का क्रियान्वयन दो चरणों में किया। प्रथम चरण में 17 अक्टूबर से 24 दिसम्बर 1940 तक की अवधि में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी तथा कांग्रेस कार्य समिति के सदस्य, केन्द्रीय विधानसभा तथा प्रांतीय विधान परिषदों के कांग्रेसी सदस्य तथा गांधीजी द्वारा चुने गये कुछ अन्य लोगों द्वारा सत्याग्रह किया गया। गांधीजी ने प्रथम सत्याग्रही के रूप में विनोवा भावे का चयन किया था। विनोवा भावे ने 17 अक्टूबर 1940 को वर्धा से 6 मील दूर पावनेर नामक स्थान पर 575 व्यक्तियों की सभा में युद्ध विरोधी भाषण देकर व्यक्तिगत सत्याग्रह का शुभारंभ किया।[1] इसके पश्चात् अनेक व्यक्तियों द्वारा सत्याग्रह किया गया। इन सत्याग्रहियों ने प्राय: नगरों में जनसभाओं को संबोधित किया। कहीं-कहीं सत्याग्रहियों ने साप्ताहिक बाजारों तथा मेलों के अवसर पर लोगों की संबोधित किया। सत्याग्रहियों द्वारा जनसभाओं में ब्रिटिश सरकार के युद्ध कार्यों में सहयोग न करने की अपील की जाती थी जिसका लोगों पर व्यापक प्रभाव पड़ रहा था। सीमित होने के बावजूद इस आंदोलन ने प्रथम चरण में एक जन आंदोलन का स्वरूप ले लिया था।

गांधीजी ने 24 दिसम्बर 1940 से 4 जनवरी 1941 तक क्रिसमस के अवसर पर आंदोलन को स्थगित करने की घोषणा की। इसका उद्देश्य यह था कि गांधीजी ईसाईयों के इस पवित्र पर्व पर ब्रिटिश सरकार तक अपनी सद्भावना पहुँचाना चाहते थे परंतु शासन ने 31 दिसम्बर की रात को कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना आजाद को गिरफ्तार कर लिया इससे गांधीजी ने आंदोलन का द्वितीय चरण आरंभ कर दिया।[2] उन्होंने स्पष्ट किया कि अब इस संघर्ष में प्रत्येक कांग्रेस जन को भाग लेना होगा, अर्थात सत्याग्रह अब केवल कांग्रेस के उच्च पदाधिकारियों तक सीमित न रहकर साधारण कांग्रेस कार्यकर्ताओं तक फैल गया। प्रत्येक कांग्रेस कार्यकर्ता को गांधीजी के निर्देशानुसार तथा उनसे अनुमति प्राप्त होने पर अपने निवास स्थान से सत्याग्रह प्रारंभ करने का आग्रह किया गया। व्यक्तिगत सत्याग्रह का द्वितीय चरण प्रथम की अपेक्षा अधिक व्यापक और प्रभावशाली रहा। इस चरण में जिला एवं तहसील कांग्रेस कमेटियों तथा स्थानीय संस्थाओं के कांग्रेस सदस्य ही नहीं अपितु बड़ी संख्या में साधारण कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया। 5 जनवरी 1941 से प्रारंभ हुए आंदोलन के द्वितीय चरण में मध्यप्रांत के प्राय: सभी जिला मुख्यालयों, तहसील मुख्यालयों, नगरों एवं ग्रामों में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन उत्साहपूर्वक संचालित किया गया। 17 अक्टूबर 1941 को देशभर में इस आंदोलन की जयंती मनायी गई। इसके पश्चात् सत्याग्रहियों के उत्साह में कमी आने लगी। अतएव गांधीजी ने उत्साह में कमी देखते हुए 30 दिसम्बर 1941 को इस आंदोलन को कांग्रेस के नेतृत्व से मुक्त कर स्थगित कर दिया।[3]

बालाघाट जबलपुर संभाग के अंतर्गत मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्वी छोर पर स्थित है। इस जिले में सतपुड़ा का दक्षिण पूर्वी क्षेत्र तथा ऊपरी बैनगंगा घाटी सम्मिलित है। यह जिला उत्तर में मण्डला, दक्षिण में महाराष्ट्र राज्य के भण्डारा जिले की सीमा को स्पर्श करता है। पूर्व में जिले की सीमा छत्तीसगढ़ राज्य के राजनांदगाँव जिले और पश्चिम में सिवनी जिले से लगी हुई है। उत्तर पश्चिम में बैनगंगा नदी इस जिले को सिवनी से अलग करती है।[4] ब्रिटिशकाल में यहाँ का अधिकांश क्षेत्र वनाच्छादित तथा उबड़-खाबड़ भू-भाग वाला होने के कारण शिक्षा एवं संचार की दृष्टि से अधिक विकसित नहीं हो सका था। लेकिन इसके बावजूद भी इसकी स्वाधीनता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका रही तथा यहाँ के निवासियों ने व्यक्तिगत सत्याग्रह में अविस्मरणीय भूमिका का निर्वाह किया।

यहाँ सत्याग्रहियों का नामांकन किया गया तथा उनके प्रशिक्षण हेतु सत्याग्रह शिविर लगाये गये। आंदोलन के दोनों चरणों में यहाँ के कांग्रेसी कार्यकर्ताओं द्वारा कुशलतापूर्वक कार्य किया गया, जिससे यहाँ आंदोलन ने व्यापक रूप धारण कर लिया। इस सत्यागह के संघर्ष के लिए जिला

---

* अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

कांग्रेस बालाघाट के पदाधिकारियों की गिरफ्तारी व अनुपस्थिति से सत्याग्रह प्रभावित न हो, इसलिए पन्नालाल दुबे जिला कांग्रेस व्यवस्थापक मनोनित हुए। वे व्यक्तिगत सत्याग्रह हेतु इच्छुक व्यक्तियों से आवेदन पत्र प्राप्त करते, उन्हें गांधीजी की स्वीकृति के लिए भिजवाते तथा स्वीकृति प्राप्त होने पर स्वयंसेवकों को सूचना देते कि उन्हें कब और किस स्थान पर सत्याग्रह करना है। अपने उत्तरदायित्व को उनके द्वारा अत्यंत कुशलतापूर्वक निभाया गया। सत्याग्रह पर जाने वाले व्यक्ति को मध्यप्रांत कांग्रेस कमेटी एवं जिला कांग्रेस कमेटी की ओर से निम्नलिखित मसौदे का एक प्रमाणपत्र दिया जाता था।[5]

प्रमाण पत्र

सत्याग्रही न. .....यह पत्र वाहक सज्जन................ वल्द................. उम्र........जाति..............निवास....................तहसील................जिला............. प्रांत.............. के सत्याग्रही है। इन्होंने दिनाँक..........को मुकाम.......... पर सत्याग्रह किया है और गिरफ्तार न किये जाने पर श्री महात्मा गाँधी के आदेशानुसार दिल्ली यात्रा में जा रहे हैं। जिन स्थानों से होकर ये यात्रा पर जावे वहाँ के सज्जनों से हमारी प्रार्थना है कि इनके लिये समुचित प्रबंध करे, जिससे इनको कोई कष्ट न होने पावे।

दिनाँक ....

विनीत

पन्नालाल दुबे	**गिरजाशंकर अग्निहोत्री**
व्यवस्थापक	**व्यवस्थापक**
जिला कांग्रेस कमेटी बालाघाट	**म.प्र. कांग्रेस कमेटी**

इस प्रमाण पत्र के प्राप्त होते ही व्यक्तिगत सत्याग्रही जिला मजिस्ट्रेट को अपने सत्याग्रह की अग्रिम सूचना निम्न प्रकार के प्रारूप में देते थे।[6]

बनाम जिला मजिस्ट्रेट बालाघाट

महोदय,

1. मैं पूज्य महात्मा गाँधीजी द्वारा सत्याग्रह करने के लिये चुना गया हूँ।

2. आदेशानुसार मैं तारीख............दिन..........को 4 या 6 बजे शाम को ....से....................मील की दूरी पर ....गाँव से.................के रास्ते पर सत्याग्रह करूंगा और दिल्ली की ओर आगे प्रस्थान करूंगा। मैं......................बजे से नारे लगाकर सत्याग्रह का प्रारंभ करूंगा। जिसके द्वारा जनता से अनुरोध करूंगा कि युद्ध संबंधी मामलों में सरकार की जन या धन संबंधी किसी भी प्रकार की सहायता न की जाये, साथ ही उन्हें यह सुझाते हुये कि सारे युद्ध और साम्राज्यवाद को अंत करने का सरल साधन अहिंसात्मक आंदोलन ही है।

भवदीय

इस प्रकार की लिखित सूचना सार्वजनिक रूप से जिला मजिस्ट्रेट को देकर सत्याग्रही अपनी कार्यवाही प्रारंभ करता था अर्थात गिरफ्तार किए जाने के पूर्व तक सत्याग्रह करते हुए दिल्ली की ओर प्रस्थान करता था। आंदोलन के दौरान अनेक सत्याग्रही बालाघाट से पैदल रवाना हुए तथा नरसिंहपुर, बाह्मणघाट, चांवरपाठा तक गए। वहाँ उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया तथा एक सप्ताह बाद छोड़ दिया गया।[7] जिले में 31 अक्टूबर 1940 तक सत्याग्रहियों की संख्या 36 थी। जो फरवरी 1941 तक बढ़कर 261 हो गई।[8] जिले के सत्याग्रही में करामात हुसैन, कन्हैयालाल मुंशी, शंकरलाल तिवारी, धरमचंद सोलंकी, कंसलाल गढ़ेवाल, प्रेमलाल गढ़ेवाल, रामदयाल गढ़ेवाल, वंशीलाल, बालकृष्ण रामटेक्कर, विक्टर, हरिशंकर अग्रवाल, सुखराम कतिया, टेकचंद जैन, दद्दूलाल बोरकर, बद्रीनारायण अग्रवाल, श्यामलाल, शांतिलाल जैन इत्यादि उल्लेखनीय है।[9]

इस प्रकार कांग्रेस की ओर से प्रारंभ किया गया यह सत्याग्रह नियमपूर्वक संचालित होता रहा। बालाघाट और वारासिवनी की उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी राष्ट्रीय युवक संघ के माध्यम से सत्याग्रहियों की सहायता कर रहे थे। इसी दौरान विदेशी शासन युद्ध के लिए भारतीयों का सहयोग लेने के लिए प्रयासरत था। इसी अभियान के अंतर्गत बालाघाट हाईस्कूल में तत्कालीन कलेक्टर वाटसन व उनके साथ रायसाहेब का आगमन हुआ। उनके द्वारा युद्ध में सहायता के लिए भाषण दिए गए एवं कांग्रेस की आलोचना की गई। इससे छात्रों में उत्तेजना फैल गयी तथा सभा में ही छात्रों ने इन भाषणों का तीव्र विरोध किया और सभा भंग करवा दी। दूसरे दिन प्रार्थना के समय 'झण्डा ऊँचा रहे हमारा' तथा वंदेमातरम् की गीतों का गायन कर देश के प्रति अपने प्रगाढ़ प्रेम का परिचय दिया गया। शासन द्वारा कुछ छात्र नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया।[10] इन गिरफ्तार छात्रों में करूणाशंकर व्यास, अनंत सिवराम लोहरकरे, वसंतसिंह, चंदुसिंह बिसेन, अनंत पन्नालाल शुक्ला, जुगलकिशोर, विश्वेश्वर प्रसाद शुक्ला थे। इस गिरफ्तारी का प्रतिकार छात्रों ने आम हड़ताल से किया तथा बालाघाट के मोतीतालाब के किनारे गोकुलसिंह बैस द्वारा एक छात्र सभा आयोजित की गई।[11]

नवयुवकों व छात्रों के संगठन में उस समय गोकुलसिंह बैस एक प्रमुख कार्यकर्ता थे। जिन्होंने केवल छात्र संगठन ही नहीं वरन् वानरसेना तथा आजाद फौज बालाघाट शाखा के संचालन का भी कार्य किया। छात्रों के मध्य कार्य करने वालों में सुंदरलाल वर्मा वकील तथा जयनारायण दुबे भी थे। स्मरणीय है कि नगर में जिन नवयुवकों ने सत्याग्रह आंदोलन को गति प्रदान की थी, उनमें दुर्गाप्रसाद दीक्षित, ठाकुर फत्तेसिंह, मोहनलाल फुलसुंगे, लल्लूभाई सुनार का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। वारासिवनी में छात्रों की गतिविधियों को ठाकुर सीताराम सिंह, धरमसिंह सोलंकी, मुदलियार, कस्तूरचंद वर्मा तथा शांतिलाल जैन संचालित करते थे।[12] इस प्रकार व्यक्तिगत सत्याग्रह में जिले के शीर्षस्थ नेताओं से लेकर साधारण नागरिकों ने भी जेल यात्राएँ की तथा सत्याग्रह उत्साहपूर्वक भाग लेकर इसे सफल बनाया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ठाकुर,डॉ.(श्रीमती)एग्नेश ;मध्यप्रांत एवं बरार में दलीय राजनीति तथा स्वाधीनता आंदोलन,शारदा पब्लिशिंग हाउस,दिल्ली, 1998ब पृ. 232
2. शर्मा, देवेश ; मध्यप्रांत में व्यक्तिगत सत्याग्रह , वैभव प्रकाशन,रायपुर,, 2006, पृ. 96–97
3. ठाकुर, डॉ. (श्रीमती) एग्नेश ; वही, पृ. 237
4. सिन्हा, ए.एम.; मध्यप्रदेश जिला गजेटियर बालाघाट 1998, पृ. 1
5. तिवारी बृजबिहारी, बालाघाट जिले के 50 वर्ष, द्वितीय सोपान, पृ. 22
6. वही, पृ. 23
7. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, भाग– एक, सूचना प्रकाषन विभाग,1978, पृ. 166
8. एम.पी.सी.सी. पेपर्स फाईल नं. पी– 12/1940–41 भाग एक
9. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी ,वही, पृ. 169–196
10. वही, पृ. 167
11. तिवारी बृजबिहारी, वही, पृ. 24
12. वही

****

चन्द्र सिंह गढ़वाली - योजनाकार के रूप में

डॉ. पूनम भट्ट *

प्रस्तावना -वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली जैसे बहुआयामी व्यक्तित्व का पर्यविक्षण करने से पेशावर विद्रोह के महानायक त्याग, तपस्या, संघर्ष तथा वैचारिक रूप से क्रांन्तिकारी व्यक्तित्व के साथ-साथ एक सफल योजनाकार के भी दर्शन होते हैं।

23 अप्रैल सन् 1930ई0 को विश्व पटल पर मानवता के सच्चे रक्षक की भूमिका निभाते हुए फौजी हुक्म की तामील का विद्रोह करने वाले चन्द्र सिंह भण्डारी से बीर चन्द्र सिंह गढ़वाली के नाम का उभार हुआ।

सुविचारित व परिपक्व क्रान्तिकारी चेतना के रास्ते होते हुये 'गढ़वाली सीज फायर'' के शब्दों ने चन्द्र सिंह गढ़वाली का नाम पेशावर विद्रोह के महानायक के रूप में इतिहास के पन्नों में स्वर्ण अक्षरों में अंकित हुआ।

चन्द्र सिंह गढ़वाली जी के जीवन से जुड़े विविध आयामों के आधार पर कहा जा सकता है कि 25 दिसम्बर सन् 1891ई0 को पौड़ी जिले के चौथान पट्टी के गांव रौणीसेरा (मासो) में जन्में[1] चन्द्र सिंह ने तत्कालीन दुर्गमता, बीहड़ता व ब्रिटिश साम्राज्यवादी राज के कष्टों से जूझते हुए बेहद रोचक व स्मरणीय व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। बचपन में गांव के एक भड़ (वीर) से लेकर एक अनुशासित सिपाही, एक आर्यसमाजी, एक देशप्रेमी, एक विद्रोही, एक अभियुक्त, एक साम्यवादी के रास्ते होते हुए एक योजनाकार व जनसेवक तक पहुंचकर चन्द्र सिंह ने जीवन की सौद्देश्यता को प्राप्त किया।

योजनाकार के रूप में - पेशावर सैन्य विद्रोह के नायक चन्द्र सिंह गढ़वाली सच्चे देश भक्त के साथ-साथ एक सफल योजनाकार भी थे। देश की आजादी के बाद चन्द्र सिंह गढ़वाली ने पर्वतीय क्षेत्रों के विकास व आजीविका के साधनों को सुदृढ़ीकरण करने के लिए अनेकों योजनाएं तत्कालीन केन्द्र व उत्तर प्रदेश सरकार के समक्ष प्रस्तावित की। बागवानी व पर्यटन को गढ़वाली पहाड़ी आजीविका की रीढ़ मानते थे। इसलिए उन्होंने निम्न योजनाओं को विस्तार देना चाहा था।

उनकी प्रथम योजना -

1. दूधातोली में गढ़वाल नगर की स्थापना (1962) - दूधातोली वनखण्ड गढ़वाल व कुमाऊं के मध्य स्थित है। जिसका क्षेत्रफल 200 वर्ग किमी है। दूधातोली के कोदिया बगड़ नामक स्थान पर उन्होंने गढ़वाल नगर बसाए जाने की योजना प्रस्तावित की थी। इसी सन्दर्भ में उन्होंने सन् 1962ई0 में तत्कालीन जिलाधीश कुंवर हरीश चन्द्र को भी उस स्थान की महत्ता बताते हुए भ्रमण करवाया था व अपनी योजना उन्हें बतायी थी। परन्तु इस योजना को सरकार की मंजूरी न मिल सकी।[2] वे दूधातोली को एक सैलानी केन्द्र के रूप में विकसित करना चाहते थे। दूधातोली के परिपेक्ष में उनकी दूसरी योजना थी उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय की स्थापना दूधातोली में हो। उनका मानना था कि विश्वविद्यालय की स्थापना ऐसी जगह पर होनी चाहिए जो दोनों मण्डलों (गढ़वाल व कुमाऊं) को समान रूप में लाभान्वित कर सके।

उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय स्थापना - उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय कहां हो? के विषय में सर्वप्रथम बैठक 14 अक्टूबर 1969 को नैनीताल में हुई थी। इस बैठक में यह तय किया गया कि विश्वविद्यालय की स्थापना नैनीताल में ही होगी। इस बैठक में यह भी फैसला किया गया कि इस विश्वविद्यालय का नाम उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय होगा जो कि अल्मोड़ा, नैनीताल और श्रीनगर तीन परिसरों में विभाजित होगा।

गढ़वाली जी ने इस प्रश्न पर विचार विमर्श हेतु सम्बन्धित शासनाधिकारियों, नेताओं व बुद्धिजीवियों से सम्पर्क स्थापित किया। तथा तत्कालीन गर्वनर, मुख्यमंत्री उ.प्र., शिक्षामंत्री चतुर्भुज शर्मा, गढ़वाल सांसद भक्तदर्शन व अन्य नेताओं, नारायणदत्त तिवाड़ी, बलदेव सिंह आर्य, शिवानन्द नौटियाल, नरेन्द्र बिष्ट, शेरसिंह दानू, किशन सिंह पंवार, मेहरबान सिंह कण्डारी, हरदत्त काण्डपाल, चन्द्रमोहन नेगी, गोविन्द सिंह नेगी, डूंगर सिंह बिष्ट, नरेन्द्र सिंह भण्डारी आदि बुद्धिजीवियों से इस सन्दर्भ में पत्र व्यवहार किया।[3]

गढ़वाली जी ने सर्वप्रथम उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय का नारा बुलन्द किया था। वे संसाधन विहीन होने के बावजूद भी इस विश्वविद्यालय की स्थापना के लिये हमेशा संघर्षरत रहे। जिसके पहल-कदमी से आज उत्तराखण्ड में तीन विश्वविद्यालय हैं। उन्होंने उत्तराखण्ड में सैनिक स्कूल के लिए भी संघर्ष किया। बैरिस्टर मुकन्दीलाल जी व चन्द्र सिंह गढ़वाली जी के अथक प्रयासों से ही घोड़ाखाल में सैनिक स्कूल स्थापित हो सका।[4]

विश्वविद्यालय हेतु दूधातोली की उपयोगिता पर गढ़वाली जी ने निम्न तर्क पेश किए थे-

1. दूधातोली कम से कम 6 जिलों के मध्य में स्थित है। अल्मोड़ा, नैनीताल, रामनगर, कोटद्वार, पौड़ी, चमोली, टिहरी से लगभग समान दूरी पर स्थित है।
2. वन शोध विज्ञान (F.R.I.) आर्युवेद विज्ञान (जड़ी-बूटी शोध संस्थान) इण्डोलोजी विज्ञान, लोटेम्परेचर हाई आल्टीट्यूड, फिजिक्स, ऋति विज्ञान आदि।
3. हस्तकला- तांबा, लोहा, अभ्रक, रिंगाल काष्ट कला(पापटी) मत्स्यपालन, ट्रउटफिश, मधुमक्खी और फलोद्यान के अति उज्जवल भविष्य निहित है।
4. भूमि की उपलब्धता स्वच्छ जल, शुद्ध वायु, प्राकृतिक सौंदर्य, पर्वतारोहण, हिमक्रीड़ा, जलक्रीडा आदि।
5. दूधातोली में हवाई पट्टी और अनेकों हैलीपैड बन सकते हैं। और तिब्बत सीमा पर रिमखिम, टोपीढुगा, बाड़ाहोती जैसे विकट स्थानों से हमारे सीमा रक्षक जवान बीमार होने पर एक घंटे के अंदर इलाज के लिए दूधातोली में लाए जा सकते हैं।[5]

भरत नगर योजना - चन्द्र सिंह गढ़वाली जी की दूसरी योजना भरत नगर निर्माण के संदर्भ में थी। उनका मानना था कि जिस वीर बालक के नाम पर देश का नाम भारतवर्ष पड़ा उस बालक के नाम का एक नगर होना चाहिए।

---

* हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, जिला - गढ़वाल (उत्तराखंड) भारत

इसी बात को मद्धेनजर रखते हुए, उन्होंने इस नगर की स्थापना के लिये जगह का चुनाव किया वह जगह थी कण्णवाश्रम (कोटद्धार के समीप) जहां बालक भरत का जन्म हुआ था।

प्रस्तावित भरत नगर का निर्माण समुद्र तल से 9600 फीट से 5000 फीट की ऊंचाई तक की भूमि पर होगा। भरत नगर गढ़वाल के दक्षिण में अंतिम पर्वत का हिस्सा है। यह चरेख ग्राम की समतल भूमि है। यहां से हिमालय की कई महत्वपूर्ण चौटियों के विहंगम दृश्य देखे जा सकते हैं।

गढ़वाली जी ने इस योजना के सम्बन्ध में पं0 जवाहर लाल नेहरू जी से भी चर्चा की थी, नेहरू जी ने खूब प्रशंसा की। चूंकि वे तब भारतीय प्लानिंग कमेटी के अध्यक्ष भी थे। उन्होंने इस योजना को कार्यरूप में परिणित करने के लिए आश्वासन भी दिया था। परन्तु नेहरू जी की असामयिक मृत्यु के कारण वे अपना आश्वासन को पूरा नहीं कर पाए।[7]

गढ़वाली जी का मानना था कि इस प्रस्तावित योजना को 'विलेज एण्ड टाउन डेवलपमेंट' विभाग को सौंपा जाना चाहिए। जिससे प्रस्तावित भरत नगर का मास्टर प्लान तैयार किया जा सके। इस संदर्भ में गढ़वाली जी ने चीफ इन्जिनियर प्रेम मनोहर Town Contry Planning Dept U.P. Lucknow के साथ पत्र व्यवहार कर उन्हें अवगत कराया। इस योजना के सम्बन्ध में गढ़वाली जी ने कई गणमान्य व्यक्तियों से पत्र व्यवहार किया, जैसे उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ0 सम्पूर्णानन्द[8], योजना मंत्री, निजि सचिव नई दिल्ली आज्ञाराम शर्मा,[9] प्राइवेट सेक्रेटरी इनफोरमेशन ब्रोडकास्टिंग नई दिल्ली N.K. Seshan,[10] पर्यटन विभाग भारत सरकार नई दिल्ली,[11] Town Contry Planning Depit Haridwar S.K. Bannerjee,[12] plan (Tech) Govt. of U.P. Lucknow V.S. Singh.[13]

बनारसी दास चतुर्वेदी[14] गढ़वाल के सांसद जगमोहन सिंह[15] उ0प्र0 कांग्रेस कमेटी लखनऊ, एच0एम0 बहुगुणा[16] आदि से पत्र व्यवहार करके अपनी इस योजना को साकार रूप देने की पूरी कोशिश की। परन्तु उन्हे सफलता नहीं मिल सकी।

बृहद उत्तर प्रदेश विभाजन – तीसरी महत्वपूर्ण योजना थी, उत्तर प्रदेश को तीन भागों में विभाजित करना। उन्होंने इस संदर्भ में तत्कालीन गृहमंत्री भारत सरकार श्री चौधरी चरण सिंह जी को पत्र लिखकर इस मांग से अवगत करवाया था।[17] जिसमें उन्होने तत्कालीन माननीय गृहमंत्री को अपने निम्न सुझाव प्रस्तुत किए थे।

1. उत्तर प्रदेश राज्य का विस्तार 294 लाख वर्ग किमी क्षेत्र में फैला है और जनसंख्या 1971 की जनगणना के आधार पर 8,83,64,779 थी। जिसमें 12 कमिश्नरी और 55 जिलों का प्रान्त है। इस प्रदेश की राजधानी लखनऊ है। और हाईकोर्ट इलाहाबाद में जो कि पर्वतीय क्षेत्रों से बहुत दूर है।
2. उ0प्र0 को विभाजित कर 3 अंचल बनाए जाएं।

पहला अंचल – 20 जिलों को सम्मिलित कर यह अंचल होगा, जिसकी राजधानी लखनऊ में प्रस्तावित है।

दूसरा अंचल –17 जिलों को शामिल कर राजधानी शाहजहांपुर या बरेली प्रस्तावित है।

तीसरा अंचल –18 जिलों को शामिल कर प्रस्तावित राजधानी आगरा अथवा बद्रीनाथ होगी। गढ़वाली जी द्वारा गढ़वाल क्षेत्र को तीसरे अंचल में शामिल किया गया था। जिस पर गढ़वाली जी ने इस अंचल की राजधानी बद्रीनाथ में प्रस्तावित करने की बात कही।

उ0प्र0 के विभाजन के संदर्भ में गढ़वाली जी ने भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री मोरारी जी देसाई को कई बार लिखा लेकिन जनता सरकार कुछ की समय में टूट गयी और यह योजना कागजों में ही सिमट कर रह गयी।

बालावली से थलीसैण रेल मार्ग – यह योजना दूधातोली में प्रस्तावित गढ़वाल नगर को रेल मार्ग से जोड़े जाने को लेकर उनकी महत्वपूर्ण योजना थी। उन्होंने तत्कालीन उ.प्र. सरकार के समक्ष यह प्रस्ताव रखते हुए कहा था कि पर्यटन की दृष्टि से यह स्थान रेल मार्ग से जुड़ना चाहिए। बालावली से चीला, स्वर्गाश्रम, व्यासघाट होते हुए पूर्वी नयार से सतपुली कोलागाड़ बैजरों, स्यूसीं, थलीसैण से दूधातोली तक पहुंचेगी। जिससे दूधातोली विश्व मानचित्र पर पर्यटन केन्द्र बनेगा। यह पत्र उन्होंने तत्कालीन पर्यटन निदेशक बी0एस0 मलकानी के माध्यम से उ0प्र0 सरकार को दिया था।[18]

गढ़वाली जी अपनी योजनाओं को क्रियान्वित रूप देकर गढ़वाल के पलायन को रोकना चाहते थे। वास्तव में गावों के विकास व नियोजन की सही नीति व योजनाओं के अभाव में पलायन के कारण पर्वतीय क्षेत्र के गांव गैर आबाद हो रहे हैं। ऐसे में गढ़वाली जी द्वारा कई दशक पूर्व प्रस्तावित की गयी योजनाओं का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि यदि देश की आजादी के बाद हमारे नीति नियंताओं ने गढ़वाली जी की योजनाओं को साकार रूप दिया होता तो गढ़वाली द्वारा प्रस्तावित योजनाओं पर राज्य व देश की सरकारों के द्वारा ध्यान दिया जाए तो एक अप्रतिम योजनाकार की प्रमुख योजनाओं को साकार रूप दिया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राहुल सांकृत्यापन – वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली, किताब महल, इलाहाबाद, संस्करण 1957 पृ0सं0–1
2. कर्मभूमि साप्ताहिक, वर्ष–30, अंक–30, 2 अगस्त 1969, संपादक भैरव दत्त धूलिया, कोटद्धार गढ़वाल, गढ़वाली चन्द्र सिंह का लेख–उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय दूधातोली में बने।
3. कर्मभूमि साप्ताहिक पूर्वोक्त अंक।
4. भरत नगर पुस्तिका – बालक (सर्वदमन) सम्पादक कुंवर सिंह नेगी 'कर्मठ' लेखक–पी0डी0 देवरानी, कोटद्धार गढ़वाल।
5. कर्मभूमि, साप्ताहिक–पूर्वोक्त।
6. भरत नगर पुस्तिका– पूर्वोन्त पृ0सं0–15
7. भरत नगर पुस्तिका द्वितीय खण्ड पृ0सं0–22–23
8. उ0प्र0 के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री सम्पूर्णानन्द जी के नाम पत्र दिनांक 6–8–1961 व 23–2–1965
9. डी0सी0एच0 605/65, 5 फरवरी 1966
10. 16 फरवरी 1965 Information and Broadcasting New Delhi.
11. Dept of Tourism No-8/TPL III (J) 166 New Delhi 1969
12. No 169j/TP/RPH/166 Date 2 march 1966
13. D.O. No 304/Plan (Tech) 132/65 Date 18 August 1965
14. 19 अगस्त 1975, बनारसी दास चतुर्वेदी।
15. 5 अगस्त 1961, जगमोहन सिंह नेगी।
16. उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी, 19 केसर बाग, लखनऊ, दिनांक 24 जून 1960।
17. गृहमंत्री, चौधरी चरण सिंह के नाम गढ़वाली जी का पत्र दिनांक 11 मई 1977
18. कर्मभूमि सप्ताहिक, अंक 18 दिसम्बर 1974, – चन्द्र सिंह गढ़वाली का लेख।

****

भारतीय-राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की सहभागिता

डॉ. पद्‌मा सक्सेना *

प्रस्तावना – राजनीति और प्रशासन में महिलाओं की सहभागिता प्रागैतिहासिक काल से रही है। भारत में देवी पूजन की परंपरा भी यह सिद्ध करती है । देश के विभिन्न क्रांतिकारी कार्यक्रम एवं स्वाधीनता आंदोलन में भी सक्रिय भाग लेकर उन्होंने अपनी प्रतिबद्धता को सिद्ध किया है। स्तुत: भारत में पुनर्जागरण और राजनैतिक चेतना का विकास साथ-2 प्रारंभ हुआ। सन् 1885 में क्रांग्रेस की उत्पत्ति समय से ही महिलाओं की राजनीति में रूचि किसी न किसी रूप में दृष्टिगोचर होने लगी थी। इस संदर्भ में ए.ओ.हयूम ने एक बार कहा था कि जब तक देश के उत्थान के लिये महिलाऐं अपनी भागीदारी को सिद्ध नहीं करेगी। उनके मताधिकार के प्रयास लगभग असफल ही रहेगें। 1900ई में महिलाओं ने पहली बार कांग्रेस अधिवेशन में भाग लिया और तदन्तर वे राजनीति में सक्रिय भाग लेने लगी।

1905 के बंगाल विभाजन के समय कुछ उत्साही और विदुषी महिलाओं ने बिटिश सरकार के विरोध में आंदोलन का संचालन किया और बंगाल में एकता स्थापित करने की शपथ ली। उन्होने रक्षा बंधन समारोह का आयोजन करके हिन्दू मुस्लिम एकता का उदाहरण प्रस्तुत किया तथा प्रभात फेरियों के माध्यम से बंगाल की एकता का प्रदर्शन किया। 1913 ई में श्रीमती एनी बेसेन्ट ने भारत की महिलाओं को राजनीति में प्रवेश करने की प्रेरणा प्रदान की। उन्होने मार्गेट काजिन्स और सिस्टर निवेदिता के साथ मिलकर वेक अप इण्डिय नामक आंदोलन चलाया जो कि कालान्तर में होमरूल आंदोलन में बदल गया। एनीबेसेन्ट के नेतृत्व में महिलाओं को पुरूषो के समान मतदान करने की मांग को उठाया गया तथा कुछ प्रमुख महिलाओं का एक शिष्ट मण्डल भारत मंत्री माटेग्यू तथा वाइसराय चेम्सफोर्ड से मिला इस घटना को केवल महिला जागृति का प्रतीक नही कहा जा सकता अपितु राजनीति के क्षेत्र में सक्रिय योगदान का प्रतीक कहा जा सकता है इस संघर्ष के परिणाम स्वरूप ही सन 1917 में महिलाओं को बिटिश ससंद के द्वारा मताधिकार एवं प्रांतीय विधान परिषदों द्वारा सीमित रूप में चुनाव लड़ने का अधिकार प्राप्त हुआ। श्रीमती कमला देवी चट्टेपाध्याय प्रथम महिला थी जिसने दक्षिण कनारा क्षेत्र में चेन्नई विधान परिषद के लिये चुनाव लड़ा था। 1914-18 प्रथम विश्व युद्ध के दौरान भी महिलाओं की सक्रियता देखने की मिलती है जबकि उन्होने पुरूषों की अनुपस्थिति में घर बाहर काररवाने कार्यालय व्यापार इत्यादि की जिम्मेदारी को पूर्ण उत्साह के साथ पूरा किया।

1919 में ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित रौलेट एक्ट के विरोध में तथा जलियॉवाला बाग जैसी दुर्घटनाओं का भी उन्होने विरोध किया और पुरूषों के समान लाठी और गोली रवाई । 1920 में जब गांधी जी ने असहयोग आंदोलन चलाया तब महिलाओं ने बहुत बड़ी संख्या में इस आंदोलन से जुडकर आंदोलन उन्हें अपना सहयोग व समर्थन प्रदान किया। असंख्या महिलाऐं खादी ओर चरखे के विक्रय हेतु गली-2 गई उन्होंने रवादी को लोकप्रिय बनाने के लिये जुलूसों का आयोजन किया ओर विदेशी वस्त्रों की होली जलाई ताकि स्वदेशी के प्रचलन को बल मिले शराब की दुकानों पर धरना दिया और शराब के लाइसेंस की सरकारी नीलामी में बाधाऐं उत्पन्न की।

1921 ई. में महिलाओं ने मुम्बई में राष्ट्रीय स्त्री सभा का गठन किया। प्रिंस ऑफ वेल्स की भारत यात्रा के विरोध में पूरे बम्बई शहर में हड़ताल का आयोजन किया गया। इस विरोध प्रदर्शन में महिलाऐं भी बड़ी संख्या में शामिल हुई। श्रीमती सरोजनी नायडू और मार्गेट काजिन्स ने 1926 में अखिल भारतीय महिला परिषद की स्थापना की । परिषद के सम्मेलनों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी बनी रही। 1930 में गांधी जी के सविनय अवज्ञा आंदोलन व डांडी यात्रा में महिलाऐं शामिल हुई गांधी जी ने डांडी पहुॅचने के बाद महिलाओं का एक सम्मेलन बुलाया और उनके दायित्व निश्चित किऐ।

कम्यूनिस्ट और राष्ट्रवादी महिलाओं ने 1930 के दशक में पहली बार राजनैतिक बंदियों की मुक्ति के लिए देश व्यापी अभियान में संयुक्त रूप से कार्य किया। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान जब ब्रिटिश सरकार ने सभी बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया था। तब अरूणा आसफ अली सुचेता कृपलानी और उषा मेहता जैसी कुशल महिलाओं ने अज्ञातवास करते हुऐ भी आंदोलन को जारी रखा । उन्होंने राजनैतिक बंदियों की सहायतार्थ धन एकत्रित किया। प्रशिक्षण शिविर स्थापित किऐ पुलिस उत्पीड़न का साहस के साथ सामना किया तथा आत्मरक्षा हेतु लाठी तथा तलवार चलाने का भी प्रशिक्षण प्राप्त किया। महिलायें धैर्य पूर्वक वंदेमातरम् का गीत गाते हुये और नारे लगाते हुऐ पुलिस आत्याचारों का दृढतापूर्वक सामना करती रही। इसके साथ ही भारतीय क्रांतिकारी महिलायें विदेशो में भी सक्रिय रही और उन्होंने सुभाष चन्द्र बोस की महिला सेना मे भर्ती होकर स्वतंत्रता संग्राम को सफल बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Chandra Bipan and other's – India's Strnggle for Independence
2. Chandra Bipan – Modern India
3. Dr Khhranna & chahhan – Women in Indian History
4. Khnrana – Indian National Movement
5. Majumdar R.C – History of Freedom Movement (vol.III)
6. Sarkar Sumit – Modern India (1885-1947)
7. Tara chand – History of the Freedom Movement (vol. II & III)

---

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

The Changing Pattern of Agrarian Social Structure in Independent India

Amit Kumar Sharma *

Abstract - India is primarily an agriculture country. Even after more than 65 years of independence 64 % of the total work force is still engaged in this activity. After independences the beginning of a new phase in the history of agrarian structure and the main objective of the Indian state was to transform the stagnant and backward economy and to make sure that the benefits of transformation and growth were not monopolized by a particular section of the society. After independent the process of planning for development during the early decades of independence made a certain degree of familiarity with agrarian economy essential for them. From Land Reforms to the Green Revolution, agriculture had been central to the development initiatives of the Indian state. The impact of these programme many changes has comes in the agrarian society and emerge a different new classes and power relationship. In this paper through literature review (whatever literature is available on this subject), we focus on: (1) The socio- economic profile of the agrarian society, (2) Rapid transforming of agrarian society form subsistence economy to market economy like peasant to farmer, (3) Higher levels of consumption.

Key words - Agrarian Social Structure, Green Revolution, System, Change.

Introduction - Agrarian structure is a framework of social relationship in which all agriculture activities such as production, marketing and consumption are carried out. **Denial Thornier(1976)** uses the terms ‘agrarian structure’ to refer to the network of relations among the various groups of persons who draw their livelihood from the soil. It is the “sum total of ways in which each operates in relation to other groups”. Agrarian means anything related to land, its management or distribution. Related to land distribution is also the aspect of ‘equitable division of land’. Agrarian society is one relying for its subsistence on the cultivation of crop through the use of Plows and draft animals. Agrarian society cultivating the land is the primary source of wealth. Such a society may acknowledge other means of livelihood and work habits but stresses the importance of agriculture and farming.

The agrarian structure in India is changing slowly and inequality in distribution of land is getting reduced at least statistically. Reduction in inequality is more for household operational holdings, than for household ownership holdings. The term ‘agrarian change’ means change in total system of relationship concerned in agrarian economy and society. The system includes technological and environmental factors and social and cultural ones as well. A wide range of processes affect such systems and may contribute to bringing about changes within them. The idea of an ‘agrarian system’ broadly refers as different from that of a ‘Farming System’ **(see Rothenberg : 1980).**

In India close interrelation between caste hierarchy and agrarian structure. The economic inequalities and cleavages are aggravated by social disabilities and conflicts rooted in the caste system. Caste system, as found in India are much more typical of agrarian societies where lifelong agriculture routines depend upon a rigid sense of duty and discipline. The emphasis in the modern West on personal liberties and freedoms was in large part a reaction to the steep and rigid stratification of agrarian societies**.(Brown: 1988)** In spite of all the changes that have taken place during the last quarter of a century since Independence, the ownership of land is still generally confined to the members of the up-per and the middle castes, tenants are mostly drawn from the middle castes, and those who belong to the bottom rungs of the caste hierarchy are, by and large, agricultural labourers.

The landowning strata typically combine government, religious, and military institutions to justify and enforce their ownership, and support elaborate patterns of consumption, slavery, serfdom, or peonage is commonly the lot of the primary producer. Rulers of agrarian societies do not manage their empire for the common good or in the name of the public interest, but as a piece of property they own and can do with as they please. **(Lenski and Nolan: 2010)**

The British colonial rule had created class relation in Indian agriculture . These class relation have been found in India. three major revenue system were prominent in india – royatwari, mahalwari and zamindari. These revenue system is a basic source or primary accumulation of capital. The basic characteristic of each system was the attempt to incorporate elements of the preceding agrarian structure. The *Ryotwari*system instituted in some parts of British India

---

***Research Scholar (Sociology) University of Allahabad, Allahabad (U.P.) INDIA**

by 1820. Under this system, the actual land tillers were given formal property rights over land. The Royat was a tenant of the state, responsible for paying revenue directly to the state treasury, and could not be evicted as long as he paid his revenue. The Mahalwari system was introduced by 1822 with the estate or mahals' proprietary bodies where lands belong jointly to the village community technically called the body of co-shares. The body of co-shares is jointly responsible for the payment of land revenue though individual responsibility was not left out completely.The British land revenue system gave rise to a more or less similar agrarian class structure in Villages in India. They were the three classes of the landowners (Zamindars), the tenants and agricultural labourers. The landowners (Zamindars) were tax gatherers and non – cultivating owners of land. They belonged to the upper caste groups likes rajput, barhman, rai. The agricultural labourers were placed in a position of bondsmen and hereditarily attached labourers. They belonged to the lower caste groups likes chamar, kori, paasi, etc.

After independence, By land reform abolishing large intermediaries, conferring ownership right on tenants, minimising the skewness in the distribution of landownership through the imposition of ceilings on landholdings and redistribution of surplus land among the landless or semi-landless workers, consolidating fragmented holdings, organising small and marginal holdings along co-operative lines and regulating the wages and working condition of agriculture labourers. **K.L. Sharma(2006)** has discussed the problem of agrarian stratification and argues that agrarian structure in India have always been uneven. The land tenure system has greatly affected the social structure. He writes: The variations in the relationship between land tenure system and social structure created an uneven feudal order in the pre- British and British periods. The shadow of the colonial and feudal inequality is still seen by us in various aspects of society. .**(Bandhopadyay: 2008)**says that redistribution of land could provide a permanent asset base for a large number of rural landless poor for taking up land based and other supplementary activities.

The Green Revolution in the 1960s led to the emergence of commercially oriented land lords. Rich farmers belonging generally to upper and intermediate castes prospered. But the fortune of the poor peasantry and the agricultural labourers did not improve. The green revolution in India the made of Indian agriculture has completely changed. **Dhanagare (1993)** studied the process of agricultural development and emergence of social inequality. He pointed out the Green Revolution has been be understood more as broader ideology of rural transformation, whereas programmes such as High yielding varieties Programme (HYVP). Integrated Rural Development Programme (IRDP) etc. were specific institutionalized measures for achieving it. Green Revolution was a package of large scale application of science and technology to agriculture. **P.C. Joshi (1976)** has summarized in the following manner the trends in the agrarian class structure and relationship : (i) It led to the decline of feudal and Customary types of tenancies. It was replaced by a more exploitative and insecure lease arrangement. (ii) it gave rise to a new commercial based rich peasant class who were part owners and part tenants. They had resource and enterprise to carry out commercial Agriculture. (iii) it let to the decline of feudal land lord class and another class of commercial farmers emerged for whom agriculture was a business. They used the non-customary type of tenancy .

This has led to accentuation of class conflicts and tensions. Agrarian unrest in India has now become a common feature in various parts in India 1970- 75. Farmer in India want through multiple exploitation they had last control over land dust their ignorance and lack of knowledge. But in modern world change in rural village signifies major shift in established social structure in India Villages this sift have to defined as process of transition.**Yogendrasingh**(1973) writes The change in rural India villages have brought about a process of rapid change or restructuration through to this process segmentory mode of social change has breakdown.

Change in structure is due to rise of new middle class of power, massive use of science and technology in yield or agriculture, substantial change in traditional values and beliefs, green revolution (Farmer become aware to new technology as well as). Various development programs runs by government and NGOs for rural development and increasing social mobility due to advance transportation etc.**Singh (1988)** has examined the relationship between the rural elite and the agrarian power structure in historic-evolutionary setting and link between institutional and social structure factors. Emerging elites located on the power hierarchy immediately above the segment of rural leader, are generally new entrants into the elite sector.

Salim Mohammmad(1986) conducted his study on farmers of Umrahan and Barain village under Chiraigaon Block in Varanasi District. He has found his study caste system and untouchability are perceived as not conducive to the economic development of rural society. Jajmani system is failed SC and marginal landholders are favour of the abolition of the system, whereas high caste and bid landlord favour to continuance. In traditional Indian agriculture society in found extended family in this family considered necessary for that performance of agriculture activities. However, the new agriculture technology has change the pattern and conditions of work in agriculture techniques.

Green revolution areas where there has been a spectacular increase in mechanization and chemical inputs, the dependence on the vagaries of the weather and on the insufficiency and irregularity of electrical supply and other infrastructural inputs out of gear. **Harriss (1992)** talk about apart from the wider debate on the nature of changing agrarian relation in different regions of India, scholars have also written on other aspects of agricultural labour, changing patterns of their employment, forms of payment, patterns of migration etc. green Revolution technology has had a far-reaching impact on the laboring class. In this respect, India agriculture is different from some other regions of the world as 'poor people in India are not primarily "small farmers" but those dependent on irregular and unreliable wage income'

The change in division of labours, power structure, and intercaste relationship etc also effect the agrarian relation for example Jajmani System based of solidarity in Rural Society but technological change to its breakdown. Open many opportunity different areas. So distance and leave the traditional occupation. Result in rural society crises of land labour and skill persons doing work on machine out of village. They come many outsider person has comes for his work in rural society. Emergence the many new classes in rural society. Many changes have also come in mode of production in rural society. Now not importance role in family member in production and so mostly work doing the workers**. Gupta (2005)** talk about Villager today want to be a farmer if given an opportunity elsewhere. Indeed, there are few rural institutions that have been mauled severely from within. The joint family is disappearing, the rural caste hierarchy is losing its tenacity, and the much romanticized of village life It in the recent years due to increasing urbanization agriculturally land is rapidly getting changed to non – agricultural uses.

The ever increasing Price of the land in encouraging peasants to sell their agricultural land and as a result of the economics we as well as socio – cultural changes are taking place in village community. Before green revolution land take as a mother villager and connect emotionally but Today land as a use property. **Just, Schmitz and Zilbermen(1979)** says The impact of Technology on real land values is inconclusive since, while increasing a perfectly competitive .However in cases where output prices are unaffected by technology, the impact on land values is positive.

India is a traditional society so adoption of new think and technology is a gradual process and much influenced to socio-economic condition of farmers. These farmer have economically well and socially well place that people of keep high level of adaptation. Tractor and Thresher is used on hire basis. for using irrigation Pumping sets Tube-well canal. Presently Agriculture is integrated with the market and farmer farming commercial crop. Even those areas where the Green Revolution technology had not been introduced are now catching up. The growing integration of agriculture into the market economy also means the growing vulnerability of the agricultural sector. Agrarian society transition into industrial societies when less than directly engaged in agricultural production. The use of crop breeding, better management of soil nutrients, and improved weed control have greatly increased yields per unit area. Before farmer and farmer's family are so close to each other that it is difficult to separate them but presently change this situation and emerged individualism and creak the joint family (many region) and now famer activity influence by market. Presently in rural areas work many developmental agencies and mass media of communication forces. A large number of primary co-operative credit societies, land development banks and regional rural banks are in rural society the supply of credit to farmers in time and at low interstates.

References :-

1. Bandopadhayay , D. 2008 . "Does land Still Matter", in *Economic and Political Weekly*.
   March 8-14 , Vol. XLIII No.10.
2. Beteille, Andre . 1974 *. Studies in Agrarian social structure .* Delhi : oxford University Press.
3. Brown , D.E. 1988. Hierarchy History, and Human Nature, 112.
4. Dhanagare, D.N. 1987 ." Green Revoulation and Social Inequalities in Rural India". in *Economic and Political weekly*, Vol. 22, Nos. 19-21.
5. Gupta, Dipankar.2005."Whither the Indian Village : Culture and Agriculture in Rural India" in *Economic and Political Weekly*, Vol. 40, No.8,pp.751-758.
6. Joshi, P.C. 1976 . *Land Reforms in India : Trends and Perspectives*. New Delhi :Allied Publishers.
7. Just, E. Richard, Andrew Scmitz and David Zilbermen. 1979. "Technological changein agriculture",*The Scientific Monthly*, Vol. 206, No. 4424, pp.1277-1280.
8. Lenski ,Gerhard and Patrick Nolan. 2010. " The Agricultural Economy",35-37.
9. Singh, Rajendra. 1988. *Land , Power and people*. New Delhi: Sage Publication.
10. Salim , Mohammed . 1986*. Rural Innovationtions in Agriculture* .Allahabad : Chug.
11. Sharma, K.L. 2007. *Social Stratification and Mobility* .New Delhi : Rawat Pablication.
12. Singh, Yogendra .1973 .*Modernization of Indian Tradition*. Delhi : Thomson Press (India) Ltd.
13. Thornier, P Daniel . 1976. *Agrarian Prospect of India* . Bombay : Allied Publishers.

****

भारतीय समाज में अल्पसंख्यक समुदाय की प्रस्थितियाँ

डॉ. नीलम महाडिक *

प्रस्तावना – भारत विविधताओं का देश है, इसमें अनेक धर्म, सम्प्रदाय, जाति, प्रजाति, एवं भाषा से सम्बन्धित लोग निवास करते हैं, एक तरफ यहाँ हिन्दू धर्म को मानने वाले लोग निवास करते है। जिन्हें हम बहुसंख्यक समुदाय की संज्ञा दे सकते हैं, तो दूसरी तरफ अल्पसंख्यक, मुस्लिम, ईसाई, पारसी, जैन, बौद्ध, सिक्ख, जनजातीय एवं अन्य धर्मावलम्बी भी निवास करते हैं। अन्य धर्मो एवं भाषा भाषियों को हम अल्पसंख्यक कहते हैं। धर्म एवं भाषा की दृष्टि से अल्पसंख्यक समाज की अपनी अनेक समस्याएँ हैं। भारतीय समाज तभी प्रगति कर सकता है, जब विभिन्न धर्मो के अनुयायियों में एक–दूसरे के प्रति सहिष्णुता हो, वे परस्पर उदारतापूर्वक व्यवहार करें और धर्म को राष्ट्रीयता के मार्ग में बाधक के रूप में न आने दें।

भारत में अल्पसंख्यक समुदाय – भारत में अल्पसंख्यकों को मुख्यत: तीन श्रेणियाँ में विभाजित किया गया है: (1) धार्मिक अल्पसंख्यक, (2) भाषायी अल्पसंख्यक, (3) जनजातीय अल्पसंख्यक। प्राय: सभी देशों में धर्म और भाषा के आधार पर अल्पसंख्यक समूहों को मान्यता प्रदान की गई हैं। धार्मिक, जनजातीय एवं भाषायी अल्पसंख्यक समूहों का उद्देश्य राज्य से कुछ ऐसी सुविधाएँ प्राप्त करना होता है, जिनके द्वारा वे अपने धर्म, संस्कृति एवं भाषा को सुरक्षित रख सकें, जिससे कि बहुमत के साथ उनका विलय न हो और वे अपनी विशिष्टता बनाए रख सकें।

सन् 1981 से 2011 तक की जनगणना के अनुसार भारत में विभिन्न धर्मो के अनुयायियों को निम्नांकित तालिका द्वारा दर्शाया गया है–

तालिका 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 के अध्ययन से स्पष्ट है कि भारत में हिन्दु बहुसंख्यक है और मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख, बौद्ध, जैन, पारसी आदि अल्पसंख्यक हैं। भारत में हिन्दुओं के अतिरिक्त अन्य धर्मो के अनुयायियों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। भारतीय समाज में विभिन्न धर्मो के अल्पसंख्यक समुदाय है, कुछ धर्मो का प्रादुर्भाव तो भारत में ही हुआ है, जैसे बौद्ध, जैन, सिख आदि तथा कुछ धर्मावलम्बी दूसरे देशों से आए है–जैसे मुस्लिम, ईसाई, पारसी आदि। इनका संक्षिप्त अध्ययन निम्नानुसार है –

मुस्लिम अल्पसंख्यक – भारत के अल्पसंख्यकों में सर्वाधिक जनसंख्या मुस्लिमों की 14.02 करोड़ है। अंग्रेजी शासन काल में भारत की 40 करोड़ जनसंख्या में 9 करोड़ मुस्लिम थे। अंग्रेजों के समय मुस्लिमों का सर्वप्रथम संगठित आन्दोलन बहावी आन्दोलन था। जो प्रारम्भ में एक धर्म–सुधार आन्दोलन था, किन्तु बाद में इसमें राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक तत्व भी जुड़ गये। भारत में एक लम्बे समय तक मुस्लिमों का शासन रहा। इस दौरान इनके संरक्षण की कोई समस्या नहीं थी। किन्तु अंग्रेजों ने शासन करने के लिये फूट डालो और राज करो की नीति अपनाई तथा हिन्दुओं और मुस्लिमों को एक–दूसरे के विरूद्ध खड़ा किया। 1906 में भारत में मुस्लिम लीग की स्थापना की गई। अन्तत: 15 अगस्त, 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ और उसके साथ ही देश का विभाजन हुआ।

पाकिस्तान के निर्माण के बाद भी एक बड़ी संख्या में मुस्लिम भारत में ही रह गये। स्वतन्त्रता के बाद जब देश में प्रजातन्त्र की स्थापना की गई और बहुमत के आधार पर जनप्रतिनिधि चुने जाने लगे, तो अल्पसंख्यक मुस्लिमों को यह भय पैदा हुआ कि बहुसंख्यक लोग उनके हितों की अनदेखी करेंगें। स्वतन्त्र भारत में मुस्लिमों को भी अन्य लोगों की भाँति ही कानून द्वारा समानता, स्वतन्त्रता एवं न्याय प्राप्त करने के संवैधानिक अधिकार दिये गए हैं और नि:संदेह ये देश के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं। केन्द्र और राज्यों के सांसद मन्त्री और विधायक के रूप में न्यायालयों के न्यायाधीश तथा भारतीय और प्रान्तीय प्रशासनिक सेवा के अनेक पदों पर कई मुस्लिम कार्य कर चुके हैं तथा वर्तमान में भी कार्यरत हैं।

ईसाई अल्पसंख्यक – भारत में धार्मिक अल्पसंख्यक में मुस्लिमों के बाद ईसाईयों का स्थान है। 2001 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या में इसका प्रतिशत 2.3 तथा इनकी जनसंख्या 2.4 करोड़ है। अंग्रेजी शासनकाल में ईसाई लोगों का शासन रहा। भारत के अधिकांश ईसाई यहीं के निवासी हैं और ईसाई मिशनरियों के प्रभाव के कारण अपना धर्म परिवर्तन कर वे ईसाई बने हैं। ईसाईयों की संख्या केरल और दक्षिणी भारत के अनेक राज्यों में अधिक है। इनका कोई राजनीतिक दल नहीं है। ईसाईयों ने राजनीति की अपेक्षा अपने को सामाजिक, धार्मिक और शैक्षणिक कार्यो में लगा रखा है।

सिक्ख अल्पसंख्यक – 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में सिक्खों की जनसंख्या 1.92 करोड़ अर्थात कुल जनसंख्या का 1.9 प्रतिशत हैं। सिक्खों को केन्द्रीय मन्त्रीमण्डल, संसद तथा विधानसभाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त हैं। इस समुदाय के ज्ञानी जैलसिंह भारत के राष्ट्रपति रह चुके हैं। बूटासिंह भारत के गृहमंत्री रह चुके हैं। सेना, पुलिस एवं प्रशासन में भी सिक्खों का प्रतिनिधित्व अन्य समुदायों की तुलना में अधिक है।

बौद्ध – भारत का एक अन्य अल्संख्यक समूह बौद्ध लोगों का है। भारतभूमि में जनमा बौद्ध धर्म ही एक ऐसा धर्म है, जो पूर्वी एशिया व पूर्वी दक्षिणी एशिया में फैला है, परन्तु भारत में इसके अनुयायी सागर में बूंद के बराबर है। सदस्यता की दृष्टि से भी यह धर्म विश्व में चौथा स्थान रखता है। इसके प्रणेता

---

* प्राचार्या, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

गौतम बुद्ध थे। इनका कार्यकाल ईसा से छह शताब्दी पूर्व है।

भारत में 8 वीं शताब्दी आते-आते बौद्ध धर्म का लोप हो गया। इसका मुख्य कारण यह है कि बौद्ध धर्म के नीति शास्त्र और दर्शन में ब्राह्मणवाद से कोई गहरा अन्तर नहीं था। बौद्ध धर्म की अनेक बातों का हिन्दू धर्म में समावेश हो गया। वास्तविकता तो यह है कि बौद्ध धर्म हिन्दू धर्म में विलीन हो गया। पिछले कुछ वर्षो में हम भारत में बौद्ध धर्म का पुनर्जागरण देखते हैं डॉ.अम्बेडकर ने इस धर्म का गहन अध्ययन किया। उनका दृढ़ विश्वास था कि अस्पृश्य जातियों के लिये हिन्दू धर्म में रहते हुए मुक्ति का कोई उपाय नहीं है। उन्होंने स्वयं भी बौद्ध धर्म स्वीकार किया और हजारों की संख्या में सामूहिक धर्म परिवर्तन कराए। बहुत से बौद्ध अपने को नव-बौद्ध कहते हैं जो आज भी बौद्ध धर्म के प्रचार प्रसार के प्रयास कर रहे हैं।

जैन - 'जैन' का शाब्दिक अर्थ है 'विजेता'। बौद्ध धर्म की भाँति इस धर्म के संस्थापक वर्धमान महावीर भी वैशाली के क्षत्रिय राजवंश में पैदा हुए।

जैन धर्मावलम्बियों के अनुसार जैन धर्म एक आदिधर्म है। वह वैदिक धर्म से अलग हुआ कोई आन्दोलन नहीं था। महावीर तो चौबीसवें तीर्थंकर थे। उनसे पूर्व 23 तीर्थंकर और हो चुके थे। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव थे। इस धर्म के अनुसार 'कैवल्य पद' (अर्थात् मोक्ष) प्राप्त करने का त्रिविध मार्ग है, जिसे त्रिरत्न कहा जाता है-सम्यक् विश्वास, सम्यक् ज्ञान तथा सम्यक् आचरण। जैन धर्म सार इस वाक्य में निहित है-'अपना कर्त्तव्य करो और इसे जहाँ तक हो सके मानवीय ढंग से करो।' सभी जैन अनुयायी कर्म और मोक्ष में विश्वास करते हैं, मोक्ष का अर्थ कर्म बंधनों से मुक्ति प्राप्त करना है। लगभग 82 ई.पू. में जैन धर्म भी दो सम्प्रदायों में बँट गया, दिगम्बर तथा श्वेताम्बर। दोनों ही सम्प्रदाय जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों में विश्वास करते हैं।

पारसी - पारसी भी भारत का एक महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक समूह है। पारसी धर्म अथवा जरथुस्त्रवाद (Zorastrainism) भारत-भूमि के बाहर का धर्म है। पारसियों का भारत में आगमन 8वीं सदी में हुआ। इस समुदाय के लोग ईरान के मूल निवासी है। जब ईरान पर मुस्लिमों का कब्जा हो गया, तो अनेक पारसी वहाँ से भारत की ओर प्रस्थान कर आए। 786 ई. में ये काठियावाड़ क्षेत्र में आ बसे। इनकी संख्या गुजरात में सर्वाधिक है।

भारत के औद्योगिक विकास में इस समुदाय ने अनेक अग्रणी ने दिये जैसे दादाभाई नौरोजी, सोहराब जी बेन्गाली, फारदूनी, तथा के.आर. कामा।

यहूदी - यहूदी धर्म भी अति प्राचीन धर्म है। उनका विश्वास है कि उनके पैगम्बर मूसा (Moses), जो उनके प्रथम धर्मवेत्ता माने जाते हैं। इनसे पहले भी उनके अन्य पैगम्बर हुए थे। यहूदी धर्म एक सरल धर्म है, जो नैतिक जीवन पर अधिक जोर देता है। यहूदियों के अनुसार, सम्यक, आस्था से अधिक महत्वपूर्ण सम्यक् आचरण है। प्रत्येक वह व्यक्ति जो सम्यक् आचरण वाला है, उसके लिये स्वर्ग में स्थान सुरक्षित है। यहूदी धर्म संवेगवाद से मुक्त है और स्व-आरोपित कठोर तप द्वारा आत्मपीड़ा तथा सन्यासवाद के विरूद्ध हैं। जेरूसलम (Jerusalem) यहूदियों का पवित्र नगर है। भारत में यहूदी धर्म के अनुयायी तीन भागों में विभक्त हैं, बेनिस्टाईल, कोचीन यहूदी तथा बगदादी यहूदी।

सामाजिक दृष्टिकोण से अल्पसंख्यक समुदायों के बारे में निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट होते हैं-

- मुस्लिमों में नगर में रहने वालों का अनुपात ज्यादा है, इसी प्रकार जैन धर्म भी नगरीय पृष्ठभूमि वाला धर्म दिखाई देता है। सिक्ख जनसंख्या ग्रामों और नगरों दोनों में हैं और यही बात ईसाईयों और बौद्धों पर लागू हो रही है।
- प्रजनन दर की दृष्टि से सबसे ऊँची प्रजनन दर मुस्लिमों और फिर क्रमशः, बौद्ध, हिन्दू, सिक्ख, जैन तथा ईसाईयों में पाई जाती हैं, ईसाईयों में सबसे कम वृद्धि दर पाई जाती है।
- धर्मों का जनांकिकीय अध्ययन लिंग अनुपात की दृष्टि में भी किया जा सकता है। वैसे तो सभी धार्मिक सम्प्रदायों की जनसंख्या में नारी अनुपात पुरूषों की अपेक्षाकृत कम है, परन्तु ईसाईयों में अन्य धार्मिक सम्प्रदायों की तुलना में नारी अनुपात सर्वाधिक है, जबकि सिक्खों में यह अनुपात सबसे कम है।
- भारत में सभी प्रमुख अल्पसंख्यक अपनी धार्मिक विशेषताओं को बनाए रखने का प्रयास करते रहे हैं। सभी धर्मो की अपनी अलग-अलग उपासना विधि है, अलग परम्पराएँ और प्रथाएँ हैं। यह अन्तर रहन-सहन और खान-पान की व्यवस्था तथा प्रतिदिन के व्यवहार में भी स्पष्टतः परिलक्षित होता है, जो विदेशी मूल के धर्म भारत में आए, वे भी आज भारतीय समाज के अभिन्न अंग बन गए हैं।
- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत को एक लौकिक राज्य के रूप में स्वीकार किया गया। भारतीय संविधान में यह स्पष्ट शब्दों में लिखा हुआ है कि सभी धर्मो के लोग एक समान हैं तथा उन्हें समान अधिकार प्राप्त हैं। धर्म जाति, लिंग, प्रजाति के आधार पर किसी नागरिक से किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा।
- व्यवहारिक रूप में आज भी हमारे देश में सरकार अनेक धार्मिक मामलों तथा विवादों से अपने आपको अलग नहीं रख पा रही है। कुछ धार्मिक सम्प्रदायों के नेताओं ने तो यह स्पष्ट घोषणा तक कर दी है कि उनके धर्म तो सर्वग्राही धर्म हैं और इस नाते वे सामाजिक, धार्मिक व राजनीतिक सभी पक्षों को अपने में समेटे हुए हैं। वे यह तर्क देते हैं कि उनमें राजनीतिक तथा अन्य बातों को अलग-अलग करना उनके धर्म की अस्मिता को चोट पहुँचाना है।
- के.एल.शर्मा के अनुसार, पारसियों, जैनियों, यहूदियों एवं ईसाइयों में साक्षरता दर अधिक हैं। ईसाइयों के अपवाद के साथ अल्पसंख्यक सम्प्रदाय व्यापार में अधिक संलग्न है। पारसियों, यहूदियों तथा जैनियों को व्यापार में काफी अग्रणी माना जाता है। मुस्लिम अधिकांशतः सेवा व्यवसाय में संलग्न है।

भारतीय समाज एवं संस्कृति में धार्मिक विविधता के बावजूद धार्मिक एकता सदैव विद्यमान रही है। सत्य तो यह है कि धर्म हमारी सबसे बड़ी सांस्कृतिक सम्पत्ति रही है। सभी धर्मों और पंथों के सिद्धान्त प्रायः एक ही हैं। भारतीय धर्म एक प्रकार से सभी धर्मों का समन्वय है। सब धर्म मोक्ष, कर्म, पुनर्जन्म, और ईश्वरवाद के सिद्धान्तों को मानते हैं। वास्तव में भारत को लोकतांत्रिक राज्य घोषित करना, इसमें पाई जाने वाली धार्मिक एकता का ही सूचक है। आध्यात्मिकता भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता रही है, जो किसी भी धर्म एवं सम्प्रदाय से सदैव ऊपर रही है।

References :-

1. Bill great Kantwell Smith : Morden Islam in India; A Social Analysis.
2. Sharma Nalin : Minority politics in India, Roll and Inpact of Kiswan in Panjub politics Book ; Sera Publishars.
3. Sethi D.L. Mahajan, (1964) : Minority Identics and the Session Stant, Oxford, University.
4. J.M. Malastead, Education of Muslim children in the U.K.: Critical analysis.

Web Site :
1. www.yahoo.com
2. www.dauniv.ac.in
3. www.wikipedia.org

तालिका 1– भारत में विभिन्न धर्म एवं उनके अनुयायी

धर्म	1981		1991		2001		2011	
	जनसंख्या (करोड़ों में)	प्रतिशत	जनसंख्या (करोड़ों में)	प्रतिशत	जनसंख्या (करोड़ों में)	प्रतिशत	जनसंख्या (करोड़ों में)	प्रतिशत
हिन्दू	54.97	82.30	67.26	81.53	80.5	80.46	96.63	79.8
मुस्लिम	7.56	11.75	9.52	13.81	13.4	13.43	17.22	14.2
ईसाई	1.62	2.44	1.89	2.4	2.3	2.34	2.78	2.3
सिक्ख	1.31	2.0	1.63	1.92	1.9	1.99	2.08	1.7
बौद्ध	0.47	0.70	0.63	0.74	0.8	0.77	0.84	0.7
जैन	0.32	0.47	0.34	0.43	0.4	0.41	0.45	0.4
अन्य (पारसियों सहित)	0.28	0.9	0.35	0.66	0.6	0.43	0.79	0.7

स्रोत : जिला शिक्षा केन्द्र उज्जैन

****

आदिवासी महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूह की भूमिका (झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. सुमा थंकाचन *

प्रस्तावना – महिला सशक्तिकरण का आशय यह सुनिश्चित करना है कि महिलाओं को राष्ट्र के सामाजिक ,राजनैतिक व आर्थिक जीवन मुख्य धारा में उचित स्थान मिल सके ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार हो। महिला सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण उद्देश्य संसाधनों महिलाओं की पहुंच और इन पर महिलाओं का नियंत्रण बढ़ाने के लिए प्रयास करना तथा महिलाओं से संबंधित मुद्दों के बारे में व्यापक पैमाने में जागरूकता पैदा करना। सशक्तिकरण लाने के विभिन्न आयम होते है जैसे –शिक्षा के माध्यम से सशक्तिकरण,रोजगार को बढ़ाकर महिलाओं सशक्त बनाना। इस क्षेत्र में महिलाओं के सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण ,स्वयं सहायता समूह का विचार उभर कर सामने आया है। सहायता समूह ऐसे गरीब महिलाओं का समूह है, जिसकी आर्थिक व सामाजिक स्थिति एक जैसी होती है। स्वयं सहायता समूह वाला में बहुत ही छोटे पैमाने पर चलाया जाने वाला बैंक है। जिसके सदस्य एक निश्चित राशि बचाकर जमा करते है, जिस पर उन्हें ब्याज मिलता है,जरूरत के समय ये सदस्य पैसा ऋण के रूप में ले सकते है, जो पैसा ऋण के रूप में लिया जाता है, उस पर ब्याज भी देना है। जब यह समूह छह महीने या एक वर्ष कार्य करके अनुभवी हो जाते है तो उसे बैंक के साथ लिंक कर दिया जाता है। इस प्रकार समूह महिलाओं के रोजगार सृजन में तथा आर्थिक व सामाजिक रूप से सशक्त बनाने का महत्वपूर्ण माध्यम है। प्रस्तुत शोध में सहायता समूह के द्वारा महिलाओं के रोजगार सृजन में एवं आर्थिक दृष्टि से सशक्त बनाने की भूमिका का मूल्यांकन किया गया साथ ही स्वयं सहायता समूह से प्राप्त ऋणों से महिलाओं के जीवन स्तर में हुई वृद्धि का पता लगाया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य –

- आदिवासियों महिलाओं के गरीबी उन्मूलन रोजगार सृजन में स्वयं सहायता समूह के योगदान का पता लगाना।
- स्वयं सहायता समूह के प्राप्त ऋणों से महिलाओं के जीवन स्तर में हुए सुधार को ज्ञात करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ –

- स्वयं सहायता समूह आदिवासी महिलाओं के रोजगार सृजन में सहायक है।
- स्वयं सहायता समूह द्वारा प्रदत्त ऋणों से महिलाओं का जीवन ऊँचा उठा है।

शोध पद्धति – शोध संरचना का निर्माण प्राथमिक समंको के आधार पर किया गया है। प्राथमिक समंकों के संकलन हेतु ' जिला सहकारी बैंक ' में खाता खोले गए, स्वयं सहायता समूह को आधार बनाया। अध्ययन हेतु बैंक के कुल 848 समूहों में से 2 प्रतिशत अर्थात समूहों का दैव निदर्शन पद्धति के आधार पर चयन कर प्रत्येक समूहों के 10–10 सदस्यों का इस प्रकार 160 सदस्यों का सर्वेक्षण गया। सर्वेक्षण के माध्यम से स्वयं सहायता समूह द्वारा प्रदत्त ऋणों का महिलाओं के रोजगार व जीवन स्तर पर पड़ने वाले प्रभावों को किया गया।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष –

आयु संरचना – प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया कि स्वयं सहायता समूह में शामिल महिलाओं की आयु किस प्रकार की है।

तालिका क्रमांक 01

(महिलाओं की आयु संरचना) की स्थिति

आयु संरचना	आयु	प्रतिशत
0–20	33	21
20–40	90	56
40–60	18	11
60–80	19	12
योग	**160**	**100**

प्रस्तुत तालिका से स्पष्ट है कि 21 प्रतिशत महिलाऐं 0–20 वर्ष,56 प्रतिशत महिलाऐं 20–40 वर्ष ,11 प्रतिशत महिलाऐं 40 –60 वर्ष ,12 प्रतिशत महिलाऐं 60–80 वर्ष के बीच की है। इस प्रकार स्पष्ट है कि अधिकतम 20–40 वर्ष के बीच की महिलाऐं समूह की सदस्य है।

महिलाओं का शैक्षणिक स्तर – ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं में निरक्षरता उसके आर्थिक विकास में बाधक है, अत:सर्वेक्षण के द्वारा स्त्रियों के साक्षरता की स्थिति को ज्ञात करने का प्रयास किया गया।

तालिका क्रमांक –02

महिलाओं का शैक्षणिक स्तर

महिलाओं का शैक्षणिक स्तर	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
निरक्षर	100	63
साक्षर	27	17
प्राथमिक	10	6
माध्यमिक	12	7
उच्चतर माध्यमिक	11	7
योग –	160	100

प्रस्तुत तालिका से स्पष्ट हैं कि झाबुआ जिले में 63 प्रतिशत महिलाऐं निरक्षर , 17 प्रतिशत साक्षर ,6 प्रतिशत प्राथमिक ,7 प्रतिशत महिलाऐं माध्यमिक व 7 प्रतिशत महिलाऐं उच्चतर माध्यमिक है। इस प्रकार समूह की अधिकांश महिलाऐं निरक्षर है।

---

* सहायक प्राध्यापक, गुलमोहर कॉलोनी, संजू ढाबे के सामने परासिया रोड, परतला छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

कार्य, पशुपालन, सब्जी बेचना, हाट –मेले में क्रय–विक्रय का कार्य करती है। सर्वेक्षण के द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया कि समूह की महिलाऐं व्यवसाय करती है।

तालिका क्रमांक –03

महिलाओं की व्यवसायिक स्थिति

महिलाओं की व्यावसायिक स्थिति	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
सदस्य व्यवसाय करती है	146	92
सदस्य व्यवसाय नहीं करती	14	8
योग	160	100

प्रस्तुत तालिका से स्पष्ट है कि 92 प्रतिशत महिला सदस्य व्यवसाय में संलग्न है. जबकि 8 प्रतिशत महिलाऐं व्यवसाय में संलग्न है। जबकि 8 प्रतिशत महिलाऐं व्यवसाय में संलग्न नहीं हैं।

व्यवसाय के प्रकार – ग्रामीण क्षेत्र में मात्र पुरूष की आय से परिवार का पालन –पोषण नहीं होता बल्कि महिलाऐं भी पुरूषों के साथ खेती में मजदूरी का कार्य करती है। सर्वेक्षण के द्वारा यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया कि क्या समूह की महिलाऐं व्यवसाय में जुड़ी है।

तालिका क्रमांक –04

व्यवसाय के प्रकार

व्यवसाय के प्रकार	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
स्वयं का व्यवसाय	11	8
खेतीहर मजदूर	90	61
नौकरी	20	14
अन्य	25	17
योग	146	100

प्रस्तुत तालिका से स्पष्ट है कि 8 प्रतिशत महिलाऐं स्वयं के व्यवसाय में संलग्न है , 61 प्रतिशत खेतीहर मजदूर – 14 प्रतिशत महिलाऐं नौकरी तथा 17 प्रतिशत महिलाऐं अन्य कार्य में संलग्न है।

सदस्यों की ऋण स्थिति –स्वयं सहायता समूह का उद्देश्य ग्रामीण निर्धनों को सेठ ,साहूकारों का चंगुल से मुक्ति दिलाना है। अत:समूह अपने सदस्यों को उत्पादन ,उपभोग ,स्वास्थ्य ,शिक्षा व अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण प्रदान करता है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर कि समूह के माध्यम से कितने सदस्यों ने ऋण लिया है। सर्वेक्षण कार्य किया है।

तालिका क्रमांक –05

सदस्यों की ऋण स्थिति

ऋण स्थिति	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
ऋण लिया है	150	94
ऋण नहीं लिया है	10	6
योग	160	100

प्रस्तुत तालिका से स्पष्ट है कि समूह के माध्यम से 94 प्रतिशत सदस्यों ने ऋण लिया तथा 6 प्रतिशत ने ऋण ग्रहण नहीं किया। इस प्रकार स्पष्ट है कि अधिकांश महिलाओं का ऋण लिया है।

ऋण राशि की स्थिति – स्वयं सहायता समूह के माध्यम से ग्रहण राशि के आकार को ज्ञात किया गया है। विश्लेषण से प्राप्त तथ्य इस प्रकार है।

तालिका क्रमांक –06 (देखे अगले पृष्ठ पर)

रोजगार की स्थिति – प्रस्तुत शोध के द्वारा यह ज्ञात करने ता प्रयास किया गया कि यदि समूह के द्वारा उत्पादन कार्य के लिए प्रदत्त ऋण का महिलाओं के रोजगार सृजन जैसे –सब्जी ,बेचना ,बकरी पालन ,हाट में परचून का सामान बेचना इत्यादि से रोजगार प्राप्त हुआ।

तालिका क्रमांक –08

रोजगार की स्थिति

ऋण के उद्देश्य	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
रोजगार प्राप्त हुआ	68	61.8
रोजगार प्राप्त नहीं हुआ	42	31.1
योग	110	100

ऋण पश्चात् उपभोग वस्तुओं की स्थिति – सर्वेक्षण के द्वारा यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया कि यदि उपभोग कार्य के लिए ऋण लिया है तो ऋण लेने के पश्चात् महिलाओं के जीवन स्तर में कितनी उन्नति हुई है इसकी माप की गई है।

तालिका क्रमांक –09

ऋण पश्चात् उपभोग वस्तुओं की स्थिति

उपभोग की वस्तुओं की स्थिति	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
मकान मरम्मत	6	40
टी.वी.	5	34
अन्य	4	26
योग	15	100

स्वयं सहायता समूह की समस्याएँ व सुझाव –

- समूहों के सदस्यों में जागरूकता आना आवश्यक है जिससे वे अपने अधिकारों व कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक हो सके।
- समूहों के सचिवों व अध्यक्षों को प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए, जिससे वे समूहों का संचालन कुशलता से कर सकें।
- बैंकों के साथ लिंक करने के पूर्व कम से कम दो वर्ष तक स्वयं संचालित होना चाहिए और समूहों का कार्य संतोषजनक होने पर ही उसे बैंक के साथ लिंक करना चाहिए।

अध्ययन से स्पष्ट है कि स्वयं सहायता समूह महिलाओं को आत्म –निर्भर और सशक्त बनाने का महत्वपूर्ण साधन है परन्तु कुछ समस्याएं ऐसी है, जो समूह के प्रभावशीलता को कम करती है। यदि इन समस्याओं के समाधान हेतु उपयुक्त सुझावों पर अमल कर लिया जाये तो निश्चित ही स्वयं सहायता समूह महिलाओं के शक्तिकरण में सार्थक यंत्र सिद्ध होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'सृजन' राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक की गृह पत्रिका (अप्रैल –जून 1999) रविशंकर नगर ,भोपाल
2. स्वयं सहायता समूह गरीबों की उन्नति की राह –राष्ट्रीय कृषि व विकास बैंक की गृह पत्रिका वर्ष 2002 ,रविशंकर नगर ,भोपाल
3. महिला स्वयं सहायता समूह मध्यप्रदेश आर्थिक विकास निगम 24 जोन 2, एम.पी.नगर ,भोपाल।
4. प्रगति – महिला सशक्तिकरण के बढ़ते कदम – समाज कल्याण फरवरी 2003
5. स्वशक्ति – महिला सशक्तिकरण की दिशा में पहल अप्रैल 2003

तालिका क्रमांक -06

ऋण की स्थिति

ऋण स्थिति	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**	**ऋण के उद्देश्य**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
0-1000	10	7	उत्पादन	110	73
1000-2000	35	23	उपभोग	15	10
2000-3000	18	12	स्वास्थ्य	7	5
3000-4000	25	17	शिक्षा	10	7
5000 से अधिक	50	33			
योग -	150	100	योग	150	100

****

'बैगा समुदाय के पारिवारिक संरचना पर संचार का प्रभाव' एक समाजशास्त्रीय अध्ययन - (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में)

राफिया आबिद (ज्योति सिंह)*

प्रस्तावना - परिवार मानव समाज के इतिहास की धुरी है, समस्त मानव समाज का इतिहास परिवार का इतिहास है। मनुष्य अपने जन्म के साथ से ही परिवार का सदस्य हो जाता है और अपने जीवन के अंतिम काल तक वह किसी रुप में परिवार का सदस्य रहता है। परिवार वह महत्वपूर्ण संस्था है, जो मानव समाज की विरासत की रक्षा करता है और उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करने में मदद करता है। परिवार एक ऐसी संस्था है, जिसके अभाव में मानव अस्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती है।

मैकाइवर और पेज के अनुसार- 'परिवार वह समूह है जिसके अंतर्गत स्त्री पुरुष यौन-संबंध पर्याप्त निश्चित हो जिससे संतान उत्पन्न हो और उनका पालन-पोषण भी किया जाये।'

आदिवासी परिवारों का संगठन उनकी अपनी परंपराओं के अनुरुप होता है। मध्यप्रदेश के आदिवासी परिवार मुख्यत: पितृमूलक, बहुविवाही तथा न्याष्टिक प्रकार के हैं।

बैगा समाज में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है। विवाह होने तक पुत्र पिता के साथ एक ही परिवार में रहता है, तब पिता का संयुक्त परिवार होता है, विवाह होने के बाद पुत्र और पुत्र-वधु के लिये पास में अलग मकान (झोपड़ी नुमा) बना दिया जाता है। पुत्री विवाह होने के बाद लमसेना की स्थिति में अपने पति के साथ तीन से सात वर्ष तक पिता के साथ रहती है। पुत्र या पुत्री दामाद विभाजित रहने पर भी पिता के परिवार से बराबर संपर्क रखते हैं। माता-पिता अपने किसी भी पुत्र के साथ स्वेच्छा से रह सकते हैं। बैगा समुदाय के परिवार में बड़ों का सम्मान होता है, छोटा उनकी आज्ञा सदैव मानते हैं, परिवार में सबसे बड़ा व्यक्ति मुखिया होता है। बैगा समुदाय में परिवार महत्वपूर्ण इकाई है, गढ़ स्त्रोत और जाति के नियमों का पालन परिवार के माध्यम से किया जाता है।

बैगा समुदाय 'टोलो' में रहते हैं, यह एक ही स्थान पर अलग-अलग घर बना के रहते हैं, ये संयुक्त परिवार के रुप में नहीं झुण्ड में रहना पसंद करते हैं।

प्रस्तुत शोध मंडला जिले के चयनित 06 विकासखण्डों के ग्यारह ग्रामों के 500 उत्तरदाताओं में परिवार की पृष्ठभूमि में देखी गई है। प्रस्तुत शोध में अवलोकन, साक्षात्कार अनुसूची एवं अनौपचारिक वार्तालाप के माध्यम से उत्तरदाताओं से तथ्य एकत्रित किये गये हैं।

निम्नलिखित तालिकाओं से बैगा समुदाय के परिवार की संरचना स्पष्ट की गई है।

तालिका क्रमांक 01

परिवार का स्वरुप

क्र.	परिवार का स्वरुप	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1	एकाकी परिवार	418	83.6
2	संयुक्त परिवार	82	16.4
	योग	**500**	**100**

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 500 उत्तरदाताओं में 83.6 प्रतिशत उत्तरदाता का परिवार एकाकी है, 16.4 प्रतिशत उत्तरदाता का परिवार संयुक्त है।

प्रस्तुत शोध में 500 उत्तरदाता के परिवार की सदस्य संख्या 1515 पाई गई है, जो कि निम्न तालिका से स्पष्ट है।

तालिका क्रमांक 02

उत्तरदाता की पारिवारिक संरचना में आयु वर्ग

आयु वर्ग	उत्तरदाता के परिवार की सदस्य संख्या	प्रतिशत
10 वर्ष से कम	462	30.49
10-20	491	32.40
20-30	248	16.36
30-40	142	9.37
40-50	96	6.33
50-60	54	3.56
60 वर्ष से अधिक	22	1.45
योग	**1515**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 500 उत्तरदाता के परिवार के 1515 सदस्य संख्या में सबसे अधिक 32.40 प्रतिशत 10 से 20 वर्ष के सदस्य हैं। 30.49 प्रतिशत 10 वर्ष से कम आयु वर्ग के सदस्य हैं। 16.36 प्रतिशत 20 से 30 वर्ष के सदस्य हैं। 30 से 40 वर्ष के 9.37 प्रतिशत सदस्य हैं, 6.33 प्रतिशत 40 से 50 वर्ष के सदस्य हैं। 3.56 प्रतिशत 50 से 60 वर्ष के आयु के सदस्य हैं। 60 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के सदस्य सबसे कम 1.45 प्रतिशत हैं।

तालिका क्रमांक 03

उत्तरदाताओं के परिवारों की सदस्य संख्या

क्र.	परिवार का सदस्य संख्या	उत्तरदाता का परिवार	प्रतिशत
1	1 से 3	308	61.6
2	4 से 6	185	37.00
3	7 से 9	7.0	1.4
	योग	**500**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि संपूर्ण 500 उत्तरदाता के परिवार में अधिकतम 61.6 प्रतिशत 1 से 3 सदस्य संख्या वाले परिवार हैं, 37 प्रतिशत 4 से 6 सदस्य संख्या वाले परिवार और 1.4 प्रतिशत 7 से 9 सदस्य संख्या वाले परिवार हैं।

---

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय नैनपुर, मण्डला (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 04
उत्तरदाताओं के परिवारों की सदस्य संख्या

क्र.	परिवार की सदस्य संख्या	उत्तरदाता का परिवार	प्रतिशत
1	1 से 3	673	44.4
2	4 से 6	789	52.1
3	7 से 9	53	3.5
	योग	**1515**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 500 उत्तरदाता के परिवार के 1515 सदस्यों में 44.4 प्रतिशत 1 से 3 सदस्य वाले परिवार हैं। 52.1 प्रतिशत 4 से 6 सदस्य संख्या वाले परिवार हैं तथा 3.5 प्रतिशत 7 से 9 सदस्य संख्या वाले परिवार की है।

तालिका क्रमांक 05
उत्तरदाताओं के परिवार की लैंगिग स्थिति

क्र.	लिंग	उत्तरदाता के परिवार की सदस्य संख्या	प्रतिशत
1	महिला	881	58.15
2	पुरुष	634	41.84
	योग	**1515**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 500 उत्तरदाता के परिवार की सदस्य संख्या 1515 में 58.15 प्रतिशत
महिला एवं 41.84 प्रतिशत पुरुषों की सदस्य संख्या है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उत्तरदाताओं की पारिवारिक पृष्ठभूमि में ज्यादातर परिवार 'एकाकी परिवार' में रहते हैं, जिनका प्रतिशत 61.6 है, 22 प्रतिशत 'विस्तृत परिवार' एवं 16.4 प्रतिशत 'संयुक्त परिवार' में रहते हैं।

500 उत्तरदाताओं के परिवार में परिवार की सदस्य संख्या 1515 पाई गई, जिसके 62.8 प्रतिशत 10 वर्ष से कम उम्र एवं 20 वर्ष तक की आयु के हैं। 09.49 प्रतिशत 40 से 60 वर्ष के आयु वर्ग के हैं तथा 60 वर्ष से अधिक के सबसे कम 1.45 प्रतिशत सदस्य हैं

उत्तरदाताओं के परिवार में महिला सदस्यों की अधिक संख्या 59.15 तथा 41.84 प्रतिशत पुरुष सदस्य पाये गये हैं। बैगा समुदाय में लड़के और लड़कियों के मध्य विभेद नगण्य है। जिससे महिलाओं की संख्या में अधिकता पाई गई।

उत्तरदाताओं के परिवार में 4 से 6 सदस्यों संख्या वाले परिवार ज्यादा 52.07 प्रतिशत पाये गये हैं, सबसे कम 3.49 प्रतिशत 7 से 9 सदस्यों की संख्या वाले परिवार पाये गये हैं।

संचार के प्रभाव से अब बैगा समुदाय में देरी से विवाह एवं शिक्षा के प्रति रुझान ने परिवार के सदस्य संख्या में वृद्धि की है, तथा परिवार में अविवाहितों की संख्या ज्यादा पाई गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी डॉ. शिवकुमार शर्मा डॉ. कमल, 'मध्यप्रदेश की जनजातियाँ' (2009) अष्टम (आवृति) म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी शिवम पब्लिकेशन, भोपाल म0प्र0।
2. बघेल प्रवीण सिंह, डॉ. श्रीमती सिंह बघेला, 'नातेदारी, परिवार एवं विवाह का समाजशास्त्र', (2014) कैलाश पुस्तक सदन हमीदिया रोड, भोपाल।
3. चौरसिया, डॉ. विजय (2009), 'प्रकृति पुत्र बैगा', म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी।

****

ग्रामीण समाज में परिवर्तन एवं विकास के विविध आयाम - एक समाजशास्त्रीय मूल्यांकन

राहुल पाण्डेय *

शोध सारांश – भारत में अधिकांश जनसंख्या (68.84% 2011 की जनगणना के अनुसार) गॉव में रहती है। उनका व्यवसाय कृषि या कृषि से सम्बन्धित है परन्तु गॉव पहले की तरह सामांगी नहीं है। भारतीय समाज में परिवर्तन परम्परा से आधुनिकता की तरफ है। वर्तमान में परम्परा और आधुनिकता के संक्रमण की अवस्था से गुजर रहे हैं, हम कह सकते है, एक प्रकार का समन्वय (परम्परा और आधुनिकता) है। आधुनिक शिक्षा, विकास कार्यक्रमों व अन्य परिवर्तन की प्रक्रियाओं के कारण गांव में बदलाव आए हैं। भारत में विकास के प्रति चिन्तन की दशाएँ समय-समय पर बदलती रही है, जैसे 1960 में मानव विकास, 1980 में सशक्तीकरण के साथ विकास 1990 में पुन: विकास, 2012 में विशेष विकास। इन विकास की अवधारणा का केन्द्र हमेशा गॉव ही रहा है क्योंकि अधिकांश जनसंख्या गॉव में ही रहती है जहॉ परम्परा, रूढ़िया, जातिगत भेदभाव आदि पाया जाता हैं इन परिवर्तन शील दृष्टिकोण पर आधारित नीतियों एवं कार्यक्रमों में भी परिवर्तन होता रहा है। प्रस्तुत शोध प्रपत्र उपलब्ध द्वितीयक स्त्रोतो एवं पूर्व अध्ययनो की समीक्षा पर आधारित है। जिसमें ग्रामीण समाज में विकास व परिर्वतन के मुद्दो का विश्लेषण किया गया हैं।

शब्द कुंजी – समाजिक संरचना, संस्कृति, परिवर्तन, ग्रामीण विकास।

प्रस्तावना – विकास का सम्बन्ध किसी भी प्रकार के सकारात्मक परिवर्तन से है जिसके कारण कोई भी समाज प्रगति करने में सफल होता है अर्थात् विकास समाज में होने वाले प्रगतिवादी परिवर्तन से सम्बन्धित है। यह चाहे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या राजनैतिक क्षेत्र में हो। विकास का समाजशास्त्र के अन्तर्गत विकास के सभी पहलुओं को सम्मिलित करता है। ये पहलू विकास के क्षेत्र को अत्यन्त व्यापक कर देते हैं क्योकि सभी पक्ष कही ना कहीं एक दूसरे से सम्बन्धित व निर्भर है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विकास की प्रक्रियाओं का अध्ययन मानव सम्बन्धी क्रियाओं और मान्यताओं के साथ इसके परस्परिक सम्बन्ध और प्रभाव को दृष्टिकोण में लाये बिना पर्याप्त और सन्तोषजनक नहीं हो सकता।

विकास के अनेक पहलू है,जिसमें आर्थिक विकास व सामाजिक विकास प्रमुख हैं। आर्थिक विकास में न केवल उत्पादन में वृद्धि को शामिल किया जाता है अपितु प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि एवं नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार भी आर्थक विकास के सूचकांक है। समाजशास्त्र में पहले सामाजिक विकास के अध्ययन को कम महत्व दिया जाता था परन्तु आर्थिक विकास द्वारा अविकसित देशों की समस्या समाप्त नहीं हुई। उसके बाद समाज वैज्ञानिकों ने सामाजिक विकास की अवधारणा दी। समाजिक विकास एक सर्वागीण विकास है जिसमें आर्थिक विकास शामिल हैं। (चौधरी: 1993)

मदन (1940, हाबहाऊस 2008 से उद्धृत) के अनुसार 'विकास से मेरा अभिप्राय किसी भी प्रकार की प्रगति से है, जिससे कि मनुष्य सम्बन्धित है।' समाजिक विकास का अर्थ लोगों की मानसिकता में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना तार्किक मनोवृत्ति का विकास, धर्म, अन्धविश्वास एवं भाग्यवादिता का खण्डन करना है साथ ही एक खुली लोचदार सामाजिक संरचना का निर्माण करना है।

सच्चिदानन्द (2007) के अनुसार अगर हम वास्तविकता में जाकर ग्रामीण समाज का अध्ययन करके योजना नहीं बनायेगें तो विकास के कार्यक्रम असफल रहेगा। लोगों की सक्रिय सहभागिता के द्वारा ही ग्रामीण विकास कार्यक्रम सफल रहेगा।

चौहान (1966) ने भारतीय गॉव का वर्गीकरण जाति के आधार पर किया है। उनका मानना है कि भारत के गॉव कुछ इस प्रकार वर्गीकृत हो सकते है। एक गॉव में एक ही जातियॉ रहती है एक गॉव में बहुत सी जाति रहती है बहुत से गांवों में बहुत सी जातियॉ रहती है। सिंह (1973) में उ.प्र. के गॉवां का अध्ययन करके बताया कि जाति एवं वर्ग साथ-साथ चलते हैं और उच्च जातियॉ अब भी शक्तिशाली है मगर धीरे-धीरे इसमें परिवर्तन हो रहा है।

मुखर्जी (1957) ने बंगाल के 6 गॉव का अध्ययन करके बताया कि भारतीय गॉव में वर्ग समूह और जाति की उच्चतर परस्पर सम्बन्धित हैं। उन्होंने विभिन्न जातियों को 9 व्यवसायिक वर्गो में बाटा है इनका विभाजन दो आधार पर किया है एक कृषि से सम्बन्धित कार्य दूसरा गैर-कृषि कार्य से सम्बन्धित।

के0एल0 शर्मा ने अपनी पुस्तक इण्डियन सोसायटी में ग्रामीण सामाजिक इकाई की चर्चा की है। उन्होंने कहा ग्रामीण भारत में परिवर्तन की प्रक्रिया को बहुआयामी आधार पर समझना होगा। यदि हम जाति व्यवस्था को देंखे तो गाँवों में जाति आज भी प्रभावी है क्योंकि विवाह जाति में ही होता है। परन्तु छुआ-छुत के नियमों का पालन अब उस रूप में नहीं देखते है जैसे पहले था, अब विभिन्न जाति के लोग (खासकर नवयुवक) आपस में साथ बैठकर विचार-विमश करते हुए देखे जा सकते हैं इनका कहना है कि संस्थाओं में परिवर्तन व इनकी गति व मात्रा भारत में एक समान नहीं हैं।

दुबे (1994) ने शमीर पेट गॉव में देखा कि प्रत्येक सेवा करने वाली जाति एक पंचायत होती है कोई भी व्यक्ति पंचायत के दण्ड के भय के कारण किसी दूसरे के स्थान पर कार्य करने के लिए तैयार नहीं होती हैं। आस्कर लेविस (1958) ने रामपुर के अध्ययन में बताया जातियॉ परम्परागत रूप से जजमानी व्यवस्था द्वारा परस्पर सम्बन्धित हैं। विवाह, जन्म और मृत्यु तथा विभिन्न उत्सवों के अवसर पर कमीन जातियाँ जजमानों की सेवा करती हैं और बदले में उन्हें जजमान विभिन्न प्रकार से भुगतान करता था। परन्तु धीरे-

---

* शोध सहायक, आई. सी. एस. एस. आर. प्रोजेक्ट(समाजशास्त्र) इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

धीरे यह व्यवस्था टूट रही हैं और लोग वैकल्पिक संसाधनों का प्रयोग करने लगे है तथा पारम्परिक रोजगार में ह्रास हो रहा है।

श्रीनिवास (1967) ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि भूतकाल में जातियों के एक दूसरे से पृथक होने की और वर्तमान में एक दूसरे से जुड़ने की प्रक्रिया ज्यादा तेज हुई है। आज हित समूह के रूप में कई जातीय संघ बनते जा रहे है, और कहीं-कहीं जातियों के महासंघ की बन रहे है।

देसाई (1964) ने गुजरात के महुआ क्षेत्र में 423 परिवारों का सर्वेक्षण किया और बताया कि नाभिकीयता में वृद्धि हो रही है और संयुक्तता में हास हो रहा है लेकिन व्यक्तिकता की मनोवृत्ति में वृद्धि नहीं हो रही है। नातेदारी की परिधि छोटी होती जा रही है। ए0एम0शाह ने 1980 में अपनी पुस्तक फैमिली इन इण्डिया में कहा संयुक्त परिवार अभी भी प्रकार्योत्मक रूप से पाया जाता है जो कारण पहले संयुक्त परिवार टूटने के थे वह आज भी है, जैसे झंगडे जननाकीय घटना (मृत्यु), अनिवार्य प्रव्रजन (काम काज के अवसर)।

भूमण्डलीकरण के दौर में भारतीय ग्रामीण समाज में भारी मात्रा में परिवर्तन आया है। मुख्यरूप से ये परिवर्तन विकास की परियोजना के माध्यम से आते है। स्वतंत्रता से पहले ग्रामीण विकास के महत्वपूर्ण परियोजनाएँ भारत के अलग-अलग राज्य में स्वयं सेवी संस्थाओं के द्वारा ज्यादातर किया गया है। स्वतंत्रता के बाद पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रम की शुरूआत हुई। 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा 1959 में पंचयती राज से परिवर्तन की प्रक्रिया और तेज हुई। इसके बाद भूमिसुधार कार्यक्रम, 1971 में डी0ई0पी0, 1975 में आई.सी. डी.एस., हरितक्रान्ति 1976 में न्यूनतम आवश्यकता प्रोग्राम, 1979 में आई.आर.डी.पी., 1980 में एन.आर.ई.पी., 1981 में आर.एल. जी.पी. एवं 1986 में इन्द्रिरा आवास योजना की शुरूआत हुई। 2000 में स्वर्ण जयंती रोजगार, 2000 में नरेगा बाद में मनरेगा, सर्व शिक्षा अभियान, स्वास्थ ग्रामीण मिशन आदि।

गॉव में अनेक कारणों से संरचनात्मक परिवर्तन हुए है किन्तु यह परिवर्तन संरचना में परिवर्तन है। कोई आमूल-चूल (संरचना का परिवर्तन) परिवर्तन नहीं आया है। भूमि सुधार द्वारा निम्न जातियॉ की स्थिति बेहतर हुई है। पंचायतीराज संस्था ने ग्रामीण राजनैतिक ढॉचे को नए प्रजातंत्रिक आयाम दिये तथा समाज के निचले तबके से समाज को जोड़ने का काम किया हैं।

दुबे (1958) ने सामुदायिक विकास कार्यक्रम का मूल्यांकन किया था और कहा खण्डी गॉव में क्रियान्वित किये गये कार्यक्रमों में जो कार्यक्रम संस्कृति कें अनुरूप नहीं थे वो असफल रहा। जैसे - शौचालय, लोगों ने इसका प्रयोग नहीं किया क्योंकि वह खुली जगह में जाते थे। वह 3x3 के कमरे में नहीं जाते थे वह इसे अशुद्ध मानते थे। वह शौचालय का प्रयोग लड़की रखने या जानवर बॉधने में करते थे।

हरित क्रान्ति के बाद एक नई प्रकार की गतिशीलता कृषि सम्बन्धों में आई। बाजार उन्मुख कृषि का उत्पादन हो गया, उत्पादन में वृद्धि हुई। रोचकता की बात यह है कि जहॉ हरित क्रान्ति हुई वहॉ-वहॉ किसान आन्दोलन की भी शुरूआत हुई, किसानों की नई-नई मांगे सामने आई। यद्यपि सुलझाने का प्रयास 1970 के बाद हुए मगर 1980 के बाद आन्दोलन और तेज हुए। (जोधका एवं पॉल: 2009)

बी0बी0 मोहन्ते (2001) ने भारत के 13 राज्यों में एस0सी0, एस0टी0 की भूमि स्वामित्व का अध्ययन किया और पाया कि 50 वर्षा के बाद भी भूमि स्वामित्व की व्यवस्था में एस0टी0, एस0सी0, ओ0बी0सी0 समूह की भागीदारी में कोई खास वृद्धि नहीं हुई।

प्रसाद (2009) के अनुसार ग्रामीण समाज की कई समस्याऐं है जैसे गरीबी, असमानता, भूखमरी, पोषण, अज्ञानता आदि। प्रसाद के अनुसार आजकल उभरती हुई दशाए निम्नलिखित है -(1) आज विकास का अर्थ दृष्टि एवं सामाजिक विकास से हैं। (2) आज विकास का सम्बन्ध निर्भरशीलता एवं शोषण से मुक्ति है, किसी पर निर्भर रहेगे तो शोषण का शिकार भी होगा। (3) हर समाज की अपनी संस्कृति होती है, लोगों की आवश्यकताएं संस्कृति के ऊपर आधारित होती है। इसलिए विकास का कार्यक्रम के ऊपर आधारित होती है इसलिए विकास का कार्यक्रम लोगों की संस्कृति को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

निष्कर्ष - उपयुक्त अध्ययनों की समीक्षा से स्पष्ट है, भारत में 1960 तक भारतीय समाज व उसकी संस्थाओं का अध्ययन मुख्य विषय रहा हैं 1960-70 के दशक में जमीनदारी उन्मूलन, भूमि सुधार, हरित क्रान्ति, कृषक आन्दोलन, पंचायतीराज आदि प्रमुख विषय रहे है, 1980 के लगभग महिला (लैगिक) विषयों पर अध्ययन किए गए। वर्तमान में भूमण्डलीकरण, उदारीकरण व विकास कार्यक्रमों की भूमिका व प्रभाव विश्लेषण व अध्ययन का मुख्य विषय समाजशास्त्रियों का रहा है। उपर्युक्त अध्ययन व व्यक्तिगत अध्ययन क्षेत्र के आधार पर कहा जा सकता है, आज भारतीय गॉव में आधुनिक मूल्यों को स्पष्ट देखा जा सकता हैं। लैगिक भेदभाव में कमी आई है। शिक्षा व जागरूकता के कारण लोगों में तार्किक मनोवृत्ति का विकास हुआ। गॉव व शहर के बीच अन्तर कम हुआ है तथा दोनों में निरन्तरता है आवागमन के साधन व रोजगार के नये-नये अवसर बढ़ने से लोगों की (निम्न जातियों) आर्थिक स्थिति बेहतर हुई है। लोगों में कृषि के ऊपर निर्भरता कम हुई है। जजमानी सम्बन्ध लगभग समाप्त हो गए है, यह अब केवल प्रतीकात्मक ही रह गए है।

संयुक्त परिवार संरचनात्मक रूप से टूट रहे है, मगर भावनात्मक रूप से जुड़े है। शादी-ब्याह या कोई कार्यक्रम में निर्णय बड़ो से राय लेकर ही किया जाता है। घर के मामलों (निणर्य) में नातेदारों का महत्व कम हो गया हैं महिलाओं की भी राय ली जाती है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के बीच विचारों का आदान-प्रदान बढ़ा है, एक लचीलापन आया है। जीवन चक्र पद्धति में कई परिवर्तन आए है। ज्यादातर उत्तर भरत में उपनयन संस्कार नहीं होता है, वह विवाह से पहले ही होता है। पुत्र प्राथमिकता आज भी पाई जाती है पितृवंशीयता चलाने के लिए अगर पुत्र नहीं है, तो किसी के पुत्र को गोद नहीं लेते अपनी सम्पत्ति व आवास अपनी लड़की को ही देते है। विवाह साथी चुनने में नातेदारों का प्रभाव कम हो गया है। विवाह कार्य अब वरिष्ट सदस्य न करके माँ-बाप ही करते हैं। निम्न जातियाँ अपनी सामाजिक स्थिति उँचा उठाने के लिए उपनाम का प्रयोग करती है। जातिगत भेदभाव कम हो गया हैं मगर आज किन्ही अन्य कारण (व्यक्तिगत लाभ) के लिए उनमें संघर्ष पाया जाता हैं। सार्वजनिक जीवन में ऊँच नीच, छुआछुत की भावना समाप्त हो गई ऐसा कई वैधानिक प्रावधानों के कारण है, निजी क्षेत्र में अभी भी हैं।लोग आधुनिक तकनीकी वस्तुओं जैसे - मोबाइल टी0बी0, फ्रीज केबल, कार, मोटर साइकिल आदि का प्रयोग अब एक सामान्य घटना है।

आधुनिकरण, वैश्वीकरण और विकास की संस्कृति से गॉव में श्रम विभाजन और विशेषीकरण बढ़ रहा है। इसके प्रभाव से परिवार की सरंचना, ग्रामीण मूल्य और संस्कृति में वैश्विक और शहरी मूल्य दिखायी पड़ रहा हैं। सरकारी योजनाओं और नीतियों के प्रभाव से गॉव की शिक्षा व्यवसाय, खानपान, रहन सहन, आय और संस्कृति के आयामों में सकारात्मक बदलाव आया है। भारतीय गॉव एक पारम्परिक समाज है, जहॉ परिवर्तन एका-एक

नहीं आ सकता है। धीरे–धीरे सकारात्मक परिवर्तन हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चौधरी, एस0के0 993'मोयोपिक डेवलपमेन्ट एण्ड कल्चरल लेन्स' नई दिल्ली : इण्टर इण्डिया पब्लिकेशन।
2. चौहान, बी0आर0 .1966' ए राजस्थान विलेज' वीर पब्लिकेशन हाउस ।
3. जोधका, सुन्दर एवं पॉल डिसूजा 2009 'रूरल एण्ड एग्रेरियन स्टडीज' में योगेश अटल (सम्प) फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन सोशियोलॉजी एण्ड सोशल एन्थ्रोपोलॉजी आई0सी0एस0 एस0आर0. दिल्ली : प्रियर्सन पब्लिकेशन।
4. मोहन्ते, बी0बी01999 'एग्रीकल्चरल मॉर्डनाइजेशन एण्ड सोशल इनक्वलिटी केस स्टडी ऑफ सतरा डिस्ट्रिक', इकोनॉनिक एण्ड पॉलिटिकल विकली, 34 (26)' ए 50–85।
5. प्रसाद, आर0आर0 1967 'डेवलपमेन्ट स्टडीज इन इण्डिया' में योगश अटल (सम्पा0) फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन सोशियोलॉजी एण्ड सोशल एन्थ्रोपोलॉजी आई0सी0एस0एस0आर0. नई दिल्ली : प्रियसर्न पब्लिकेशन।
6. मुखर्जी, रामकृष्ण 1957 'डायनामिक्स ऑफ रूरल सोसाइटी' बंगाल: पापुलर प्रकाशन।
7. मदन, जी0आर0. 2008' परिवर्ती एवं विकास का समाजशास्त्र' दिल्ली : विवेक प्रकाशन।
8. लेविस, आस्कर .1958 'लाइफ इन नार्थ इण्डियन विलेज', अरबना: यूनिवार्सिटी ऑफ लिनोइस।
9. दुबे, एस0 सी0 1958 'इण्डिया चेन्जिंग विलेजेज' लन्दन: राउटलेज एण्ड केगन पॉल।
10. दुबे, एस0 सी0 1994 'इण्डियन सोसाइटी' नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट ।
11. देसाई, आई0पी01964 'सम असपेक्ट ऑफ फैमिली इन महुआ' नई दिल्ली: मुन्शीराम मनोहर पब्लिशर्स।
12. श्रीनिवास, एम0एन0 1967 'आधुनिक भारत में सामजिक परिवर्तन' नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
13. शर्मा,के0एल0 2007'सोशल स्ट्राक्चर एण्ड चेज' नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशन।
14. सच्चिदानन्द, 2003 'सस्टेनेबल डेवलपमेन्ट एण्ड दा क्वालिटी ऑफ लाइफ इन इण्डिया' में ए0के0 लाल0 (सम्प0) अदर बैक वर्ड क्लासेज एण्ड सोशल चेन्ज, एशेज इन ऑनर ऑफ डॉ0 विन्देश्वरी पाठक नई दिल्ली: कन्सेप्ट पब्लिकेशन्स।
15. सिंह, योगेन्द्र 1973'मार्डनाइजेशन ऑफ इण्डियन ट्रेडीशन्स' दिल्ली: थॉमसन प्रेस।

****

भारत में आपदा प्रबन्धन

डॉ. अनामिका प्रजापति *

प्रस्तावना – किसी राष्ट्र को केवल उसकी आर्थिक समृद्धि या सामरिक शक्ति के आधार पर विकसित या विकासशील नहीं माना जा सकता। विकसित और विकासशील राष्ट्र होने के लिये आवश्यक है आधारभूत सेवाओं जैसे स्वास्थ्य, परिवहन, संचार, शिक्षा आदि का विश्वस्तरीय होना। ये मानक विकास के है और इन्हीं मानकों में से एक है– 'आपदा प्रबन्धन'। आज के भौतिकवादी एवं प्रगतिशील युग में प्राकृतिक युग में प्राकृतिक आपदाओं का आना कोई नई बात नहीं है। प्रश्न यह है कि इन आपदाओं को कैसे नियन्त्रित किया जाये।

प्राकृतिक शक्तियों पर अपना अत्यधिक हित साधने के प्रयास में मानव ने अपने आरंभिक काल से ही प्राकृतिक शक्तियों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया। अपने इस प्रयास में वह काफी हद तक सफल भी रहा जिसका परिणाम प्राकृतिक आपदाओं के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित है। आपदा प्रबन्धन आकस्मिक विपदाओं से निपटने के लिए संसाधनों का योजनाबद्ध उपयोग और इन विपदाओं से होने वाली हानि को न्यूनतम् रखने के कुंजी है। प्रत्येक राष्ट्र की भौगोलिक स्थिति के हिसाब से आपदाओं को वर्गीकृत करके उनके उचित प्रबन्धन की दिशा में कदम उठाने चाहिए।

भारत विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा देश है। यह प्राकृतिक और मानवजन्य दोनों ही प्रकार की आपदाओं के प्रति संवेदनशील है। इस कारण भारत जैसे विकासशील देश के लिए आपदा प्रबंधन एक महत्वपूर्ण आयाम है, क्योंकि यहां जनसंख्या का घनत्व बहुत अधिक है और बुनियादी ढांचे तथा वित्तीय संसाधनों की बहुत कमी है। भारत का भू-भाग 135.79 मिलियन वर्ग किलोमीटर है, जो कि विश्व का 2.4 प्रतिशत है। जबकी इसकी जनसंख्या विश्व जनसंख्या की 16.7 प्रतिशत है। भारत की भू-वैज्ञानिक तथा भौगोलिक संरचना ऐसी है, जो इसे आपदाओं की दृष्टि से अत्यधिक संवेदनशील बनाती है। विश्व में 90 प्रतिशत आपदाएं विकासशील देशों में घटती है। भारत में 70 प्रतिशत क्षेत्र सूखा प्रवृत्त, 12 प्रतिशत बाढ़ प्रवृत्त, 60 प्रतिशत भूकंप प्रवृत्त तथा 8 प्रतिशत चक्रवात प्रवृत्त है। प्रतिशतता के ये आकड़े दर्शाते है कि हमें एक ऐसी प्रशिक्षित जनशक्ति की आवश्यकता है जो आपदा के समय सहायता कर सके और आपदा नियन्त्रण की योजनाओं, निगरानी तथा प्रबन्धन में मदद कर सके।[1]

हिन्दी में Disaster को अनेक शब्दों जैसे प्रलय, विपदा, प्रकोप, विपत्ति, खतरा आदि नामों से जाना जाता हैं। शाब्दिक दृष्टि से यदि आपदा को विश्लेषित करे तो आपदा का अंग्रेजी शब्द `Disater' है, जो फ्रांसीसी शब्द `Desastere' से आया है। यह दो शब्दों कमे और `astere' से बना है जिसका अर्थ है तारे या ग्रह। वर्तमान समय में ये उन घटनाओं के रूप में व्यक्त किया जाता है, जिससे सभी प्रकार की हानियाँ होती है। आपदा का अर्थ है– अचानक होने वाली एक विध्वंसकारी घटना जिससे व्यापक भौतिक क्षति होती है। जान-माल का नुकसान होता है। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने अपनी तीसरी रिपोर्ट में आपदा के लिए 'डिसास्टर' के स्थान पर 'क्राइसिस' शब्द प्रयुक्त किया है। यह वह प्रतिकूल स्थिति है, जो मानवीय, भौतिक, पर्यावरणीय एवं सामाजिक कार्यकरण को व्यापक तौर पर प्रभावित करती है। आपदा प्रबन्धन अधिनियम, 2005 में आपदा से तात्पर्य किसी क्षेत्र में हुए उस विध्वंस, अनिष्ट, विपत्ति या बेहद गंभीर घटना से है जो प्राकृतिक या मानव जनित कारणों से या दुर्घटनावश या लापरवाही से घटित होती है और जिसमें बहुत बड़ी मात्रा में मानव जीवन की हानि, सम्पत्ति की हानि एवं पर्यावरण का भारी क्षरण होता है।[2]

प्रबन्धन का अर्थ है, तत्कालिक उपलब्ध संसाधनों से बचाव और नियन्त्रण करना। यदि आपदाओं से निपटने की पूर्व तैयारी हो तो उससे होने वाले हानिकारक प्रभावों और जान-माल के नुकसान को बहुत कम किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में आपदा प्रबन्धन प्रकृति और मानव के मध्य उपयुक्त समायोजन की प्रक्रिया है। जिसमें उचित नियोजन, विश्लेषण, मूल्यांकन द्वारा संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग तथा प्राथमिकताओं में परिवर्तन निहित है। वास्तव में आपदा प्रबन्धन उन तैयारियों को कहते हैं, जो किसी भी प्रकार की आपदाओं के समय मानव के सामान्य जन जीवन को कम से कम प्रभावित करते हुए राहत और पुनर्वास के कार्य को सुचारू रूप से करे तथा इस कार्य में सभी को स्वयं सेवक के रूप में पीड़ितों की सहायता करनी चाहिए। आपदा प्रबन्धन में मुख्यत: चार बातों को महत्व दिया जाता है। जिसमें पूर्व तैयारी, दूसरा जवाबी कार्यवाही, तीसरा सामान्य जीवन पर लौटना और चौथा रोकथाम का आयोजन और दुष्प्रभावों को कम करने के लिए कार्यवाही।[3]

आपदा एक असामान्य घटना है, जो थोडे ही समय के लिये आती है और अपने विनाश के चिन्ह लम्बे समय के लिए छोड़ जाती है। ये आपदायें मानव सभ्यता और संस्कृति को बुरी तरह प्रभावित करती है। इन आपदाओं को हम दो प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं–

(अ) प्राकृतिक आपदाएं –

1. **हिमस्खलन–** गुरूत्व घर्षण, भूकम्प, बरसात तथा मानव निर्मित कृत्यों से चट्टानों के खिसकने के कारण भूस्खलन होता हैं। 16 जून, 2013 को उत्तराखण्ड में बादल फटने से आई विध्वंसकारी बाढ़ एवं भूस्खलन ने बढ़ी मात्रा में जान-मान का नुकसान किया। इस प्राकृतिक आपदा में हजारों लोग काल-कलवित हुए एवं लाखों बेघर हो गये। इस आपदा ने एक बार फिर हमारी

---

*सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला-विदिशा (म.प्र.) भारत

आपदा से निपटने एवं उसके प्रबन्धन पर प्रश्न चिन्ह् खड़ा कर दिया है।

2. भूकम्प – भूकम्प पृथ्वी के आंतरिक दबाव एवं उनके समायोजन के कारण आते है। भारत को भूकंप की संभावनाओं के आधार पर पांच भूकंपीय जोनो में बांटा गया है। भूकंप की दृष्टि से अत्यधिक संवेदनशील क्षेत्र सामान्यत: हिमालयी, उप हिमालयी क्षेत्रों, कच्छ, अण्डमान तथा निकोबार द्वीप समूह में स्थित है। भयंकर भूकंपो जैसे उत्तरकाशी (1991), लातूर (1993) तथा जबलपुर (1997) के अतिरिक्त साधारण तथा हल्के भूकंप भी बड़ी संख्या में देश के विभिन्न भागों में आए हैं। भारत के भू-भाग का लगभग 59 प्रतिशत भूकम्प की संभावना वाला क्षेत्र है। हिमालय और उसके आस-पास के क्षेत्र, पूर्वोत्तर गुजरात के कुछ क्षेत्र और अंडमान निकोबार द्वीप समूह भूकंपीय दृष्टि से सबसे अधिक सक्रिय है।[4]

3. ज्वालामुखी– ज्वालामुखी के फटने या पत्थरों के गिरने से होने वाला ईरप्शन अपने आप में एक आपदा हैं। ज्वालामुखी से निकलने वाला लावा रास्ते में आने वाले भवनों और पौधों को नष्ट कर देता है। ज्वालामुखी की राख जल के साथ मिश्रित होने पर एक ठोस पदार्थ में तब्दील हो जाती है। उचित मात्रा में इकट्ठा होने पर इसके वनज से छते ढह सकती है। इसकी राख सांस में चले जाने से व्यक्ति में बीमारी भी पैदा करती है। विश्व में 10 लाख ऐसे खतरनाक ज्वालामुखी है, जो बड़े क्षेत्र को प्रभावित कर सकते हैं।

4. बाढ़– कम समय में अधिक बारिष होने से विषेष रूप से चिकनी मिट्टी, कम दबाव के क्षेत्र तथा निकास-बहाव के कम होने के कारण बाढ़ आती है। भारत दूसरा अत्यधिक बाढ़ प्रभावित देश है, जहां वर्षा ऋतु में यह आम बात है। प्राय: प्रत्येक वर्ष भयावह बाढ़ आती है, जिसके कारण जान की क्षति, स्वास्थ्य की समस्या तथा मनुष्यों की मृत्यु आदि जैसी घटनाएं घटित होती है। राष्ट्रीय बाढ़ आयोग रिपोर्ट (1980) में देश में 40 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रफल को बाढ़ प्रवृत्त क्षेत्र निर्धारित किया गया है। देश में गंगा, ब्रह्मपुत्र, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा तथा कावेरी नदी घाटी अत्यधिक बाढ़ प्रवृत्त क्षेत्र हैं।

5. सूखा– सूखा बारिश के कम मात्रा में होने के कारण पड़ता है। सूखा मुख्य रूप से तीन प्रकार का होता है– मौसम विज्ञान से संबंधित, जल विज्ञान से संबंधित तथा कृषि से संबंधित। देश में 16 प्रतिशत क्षेत्र सूखा प्रवृत्त है। बीसवीं शताब्दी में वर्ष 1941, 1951, 1979, 1982, तथा 1987 में भयंकर सूखा पड़ा था। देश का उत्तर-पश्चिमी भाग अत्यधिक सूखा प्रवृत्त क्षेत्र है।

6. चक्रवाती तूफान – महासागरों में भूकम्प आने के कारण समुद्री तूफान (सूनामी) आते हैं। चक्रवात समुद्र में तापमान तथा दबाव में भिन्नता होने के कारण आते हैं। बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर में प्रतिवर्ष औसतन 5-6 उष्ण कटिबंधी चक्रवात आते हैं। बंगाल की खाड़ी में पूर्वी तट के समानान्तर पश्चिम बंगाल, ओडिशा, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु तथा अरब सागर राज्यों में पश्चिमी तट के समानान्तर गुजरात एवं महाराष्ट्र चक्रवात तथा सुनामी की अत्यधिक संभावना वाले क्षेत्र है।

7. दावानल– जंगल की आग या दावानल बरसाती जंगलों या लम्बे पत्ती वाले पेड़ों के जंगल में लगती है। गर्म तथा शुष्क क्षेत्रों में शंकुवृक्ष तथा सदाबहार बड़े पत्ते वाले वृक्षों के जंगलों में प्राय: जंगल की आग लगती है। जंगल की आग पर्यावरण, कृषि भूमि, पशुओं तथा कीड़ों के लिए खतरनाक होती है।

(ब) मानवजनित आपदाएं– मानवीय आपदाएं मनुष्य की गलतियों जैसे- रेल, वायुयान आदि की दुर्घटनाएं, औद्योगिक दुर्घटनाएं, आंतकवादी कार्यवाही एवं सभी प्रकार के युद्ध के कारण आती है। यहां पर यह बता देना अति आवश्यक हो जाता है कि मानवीय दखल से एक नये प्रकार की आपदा से मनुष्य को दो चार होना पड़ रहा है वह है- पर्यावरणीय आपदा वैश्विक उष्मन (Global Warming)

आपदा को उस विषम स्थिति या घटनाओं से जोड़कर देखा जा सकता है, जो विनाशक दशाओं को जन्म देती है और भौतिक पर्यावरण और सामाजिक स्थिति को प्रभावित करती है। आपदायें लोगों के जीवन और संपत्ति, आधारभूत ढांचे और विकास प्रक्रिया में बाधा पहुंचाती है। आपदाओं से निपटने में होने वाला खर्च इतना अधिक होता है कि इससे विकास प्रक्रिया जनहित के कार्यो में लगने वाले संसाधन, आपदाओं के प्रबंनधन में लगाये जाते है, जिससे सामान्य जिंदगी अवरोधित होती है।

आपदा प्रबन्धन के कार्य :

1. आपदा प्रबन्धकों को प्रभावित क्षेत्रों में सामान्य जीवन को बहाल करने का कार्य करना पड़ता है। आपदा ग्रस्त क्षेत्र में सभी आवश्यक सहायक साधन और सुविधाएं सही समय पर उपलब्ध हो सके इस हेतु आपदा प्रबन्धन व्यावसायिक समन्वयक के रूप में कार्य करता है।5
2. आपदा प्रबन्धन विशेषज्ञों का एक समूह होता है जैसे- डॉक्टर, नर्स, सिविल इंजीनियर, दूरसंचार विशेषज्ञ, वास्तुशिल्प, इलेक्ट्रिशियन इत्यादि। आपदा के समय इनकी सेवाएं अनिवार्य होती है।
3. आपदा प्रबन्धन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य आपदाग्रस्त सीमा-क्षेत्र और होने वाली क्षति का आंकलन करना है। आपदाग्रस्त क्षेत्रों की भौगोलिक एवं आर्थिक स्थितियों के कारण चुनौती और भी बढ़ जाती है।

आपदा प्रबन्धन की चुनौतियां – आपदाओं से निपटने के लिए केन्द्र के सामने अनेक चुनौतियां है। अधिकांश आपदाएं जलीय और मौसम विज्ञान संबंधी खतरों के कारण आती है। दुर्भाग्यवश इनकी भयावहता और तीव्रता बढ़ती ही जा रही है। आपदा प्रबन्धन हेतु हमारे समक्ष अनेक चुनौतियां है, जैसे-

1. आपदा प्रबन्धन क्षेत्र में विशेषज्ञ वृत्तिजीवियों की आवश्यकता है ताकि आपदाओं को रोका जा सके, किन्तु इस हेतु मानव कौशल विकास की उपलब्ध क्षमता अपर्याप्त है।
2. अनेक राज्यों में आपदा प्रबन्धन प्राधिकरण अभी-भी काम करने की स्थिति में नहीं है।
3. आपदा प्रबन्धन के लिए सबसे अधिक आवश्यक है, जोखिम की अच्छी समझ। सभी राज्य सरकारे जोखिम के विस्तृत आंकलन की पद्धति से परिचित नहीं है।
4. आपदा के जोखिम के कम करने के प्रयासों को विकास के एक मुद्दे के रूप में देखा जाना चाहिए। 10 वीं और 11 वीं पंचवर्षीय योजनाओ में स्पष्ट रूप से ऐसा कहा गया है, परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं हो रहा है।
5. कृषि, खाद्य सुरक्षा, जल संसाधन, अधोसंरचना और स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इन क्षेत्रों से जुड़े संबंधित विभागों को अपने वैकल्पिक प्रयासों में आपदा जोखिम शमन को प्रमुखता से सम्मिलित करना होगा।
6. मानव संसाधन विकास को व्यवस्थित रूप देना होगा। क्षमताओं के विकास के लिए मात्र प्रशिक्षण ही पर्याप्त नहीं होगा साथ ही पुनश्चर्या प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रावधान भी करना होगा।

7. भीषण आपदाओं से बचने के पारंपरिक ज्ञान को पुनर्जीवित कर कुछ वैज्ञानिक पुट देकर उन्हें ओर सुदृढ़ बनाया जाये।

गौरतलब है कि आपदा प्रबन्धन की जिम्मेदारी केवल आपदा प्रबन्धन विभाग की ही नहीं अपितु सभी विभागों और विकास सहभागियों का उत्तरदायित्व है। प्राकृतिक आपदा हो या मानव जनित आपदा हो प्रत्येक स्थिति में जनता अपने चुने हुए प्रतिनिधियों एवं उच्चाधिकारियों की और आशा भरी नजरों से देखती है। अत: शासन प्रशासन की आपदा प्रबन्धन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सारांशत: सुनियोजित आपदा प्रबन्धन तकनीके, जागरूकता अभियान एवं प्रशासनिक समन्वय द्वारा आपदाओं को न्यूनतम किया जा सकता है।

वास्तव में हमारे देश में सुनामी आने के पश्चात् ही और इससे होने वाले नुकसान को देखकर ही आपदा प्रबन्धन के विषय में तीव्र गति से सोचने पर मजबूर कर दिया गया। राष्ट्र ने इस भयंकर त्रासदी को बहुत गहराई से महसूस किया। हमें सामरिक रूप से बहुत हानि हुई। अंडमान निकोबार में हमारा नौसैनिक अड्डा नष्ट हो गया। हमारी दक्षिणी सीमा को निर्धारित करने वाले दक्षिणी बिन्दु इंदिरा प्वाइंट समुद्र के गर्भ में समा गया। सुनामी से हुई अपार जन-धन की क्षति के बाद ही भारतीय वैज्ञानिक ढांचे का सबसे केन्द्र बिन्दु समुद्री भूकम्प और उससे पैदा होने वाली सुनामी लहरों की पूर्व सूचना प्राप्त करने में रहता है। सुनामी के लिए हैदराबाद स्थिति भारतीय सागर सूचना केन्द्र में ही एक अंतरिम सुनामी पूर्व सूचना केन्द्र की स्थापना की गयी जो भारत से सटे समुद्रों की सतह पर आये 6.5 तीव्रता के भूकम्प के बारे में तत्काल सूचना मुहैया करा सकता है तथा सुनामी लहरें बनने की अग्रिम सूचना भी दे सकता है।[6] इस प्रकार सूचना मिलने पर संबंधित राज्य की सरकारे तटवर्ती नगरों के नागरिकों को सुरक्षित स्थान तक पहले ही पहुंचा सकती है।

निष्कर्षत: किसी भी योजना को सफल बनाने के लिये नागरिकों का योगदान बहुत आवश्यक है। अत: आवश्यक है कि आपदा प्रबन्धन के आधारभूत तत्वों की जानकारी राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को होनी चाहिए। विशेषकर युवावर्ग को। क्योंकि आपदाओं के आने पर युवा वर्ग ही श्रेष्ठ स्वयं सेवक बन कर सरकारी और गैर सरकारी आपदा राहत संस्थाओं के साथ राहत और बचाव कार्य को कर सकते है। इसके लिए आपदा प्रबन्धन का एक अनिवार्य पाठ्यक्रम होना चाहिए और प्रत्येक नागरिक के लिए इसका प्रशिक्षण अनिवार्य होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. http;//bharatdiscovery.org/india
2. http;//www.vivacepanorama.com/disaster-management
3. http;//mpinfostatic/rojgar/2015/0507/f03.asp
4. http;//bharatdiscovery.org/india
5. http;//hi.wikipedia.org/wiki/ आपदा प्रबन्धन
6. परीक्षा मंथन, मंथन प्रकाशन, इलाहबाद, 2006-07, पृ. 238

****

भारत में बालश्रम की समस्या

नेहा *

प्रस्तावना – भारत में बालश्रम की समस्या ग्रामीण व शहरी दोनों क्षेत्रों में है परन्तु तुलनात्मक रूप से बालश्रम की समस्या को ग्रसित ग्रामीण क्षेत्र ज्यादा है। ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत 10 वर्ष से कम आयु के बालकों का 60 प्रतिशत है। शहरी क्षेत्र में 23 प्रतिशत बालक व्यापार व व्यवसाय में संलग्न हो जाते हैं इसके अतिरिक्त शहरी क्षेत्र में होटल, रेस्टोरेन्ट में काम करने वाले, चिथेड़े उठाने वाले, फेरी लगाने वाले भी अत्यधिक संख्या में हैं। देश के प्रमुख औद्योगिक नगरों में स्थित अनेक प्रकार के कारखानों, फैक्ट्रियों में कार्यरत बालकों की संख्या भी अनेक सर्वेक्षणों में चौकाने वाली सामने आयी है। एक सर्वेक्षण के अनुसार तमिलनाडू में रामनाजपुरम जिले के शिवकाशी में पटाखों व माचिस की इकाइयों में 45000 बच्चे कार्यरत हैं। उत्तर प्रदेश के फिरोजाबाद के गिलास कारखानों में 45000 बच्चे तथा गलीचे के कारखानों 1,00,000 बच्चे कार्यरत हैं इसके अतिरिक्त अनेक सर्वेक्षणों में सामने आया है कि एक बड़ी संख्या में जयपुर में बहुमूल्य पत्थरों की पिसाई, इकाईयों में, मुरादाबाद के पीतल के बर्तनों के उद्योग में, अलीगढ़ के ताले बनाने की इकाईयों में मर्कापुरा (आंध्र प्रदेश) और अन्य कई प्रान्तों में 60 गलीचे बनाने के कारखानों में कार्यरत हैं। यूनिसेफ के द्वारा कराए गए एक अध्ययन में पाया गया कि उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में 71 प्रतिशत बच्चे भागने की कोशिश में पीटे जाते हैं या उनके साथ दुर्व्यवहार होता है। इनके अधिकांश बच्चे 5-12 वर्ष की आयु समूह के हैं। अध्ययन में हजारों बच्चे ऐसे पाये गये हैं जिन्हें तीन वर्ष तक वेतन नहीं दिया गया। जिन्हें वेतन दिया गया उन्हें 15 घंटों के काम के लिए (अथवा 3000 से 6000 गांठे बांधने के लिए) तीन से पाँच रुपए तक दिए गए हैं। काफी बच्चे टीबी, खून की कमी और आँखों की बीमारी से पीड़ित भी पाए गए।

अधिकांशतया बच्चों को अधिक पसंद किया जाता है क्योंकि वे आज्ञापरायण होते हैं और इसलिए उनका शोषण किया जा सकता है। बालश्रम एक विश्वव्यापी समस्या है, जिनमें प्रमुख रूप से लेटिन अमेरिका, अफ्रीका तथा एशिया (भारत) को शामिल किया जा सकता है। भारतीय इतिहास इस बात की पूर्णत: पुष्टि करता है कि प्राचीन गुरुओं द्वारा अपने शिष्यों से अपने दैनिक गतिविधियों में (आश्रमों में) करवाया जाने वाला कार्य एक प्रकार से बाल श्रम की श्रेणी में ही आता है। हिन्दू व मुसलमानों दोनों समुदायों में भी बाल श्रम की उपस्थिति की विशेषताएँ पाई जाती हैं। बल्कि वर्तमान में परिवारों में कार्य करने हेतु नौकरों के रूप में बालश्रम का उदाहरण मिलता है। बालश्रम एक बालक के शारीरिक, मानसिक व रचनात्मक विकास में सबसे बड़ी बाधा उपस्थित करता है।यह एक गंभीर समस्या है, जो कि न केवल विश्व में अपितु भारत जैसे विकासशील देश में भी प्रमुख रूप से मुखरित हो रही है। इनके काम करने की परिस्थितियों में इन्हें न तो साफ हवादार कमरे उपलब्ध कराए जाते हैं और न ही स्वास्थ्य से सम्बन्धित आवश्यक चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती है। उद्योगों में काम करते हुए होने वाली दुर्घटनाओं के प्रति भी गैर जिम्मेदाराना रवैया अपनाया जाता है। इन्हें 24-24 घंटे बिना किसी प्रकार की शारीरिक व मानसिक राहत के काम करना पड़ता है। मिजोपुर भदीर्र के कालीन उद्योग का अध्ययन करने के उपरांत यह बात सामने आई है कि इन बच्चों का दैनिक कार्य सवेरे 5 बजे से प्रारंभ होकर रात के 9 बजे तक अनवरत जारी रहता है।

बाल श्रम विकट रूप से बंधुआ श्रम से जुड़ा हुआ है। आंध्र प्रदेश में 21 प्रतिशत बंधुआ मजदूरों में 16 वर्ष से कम आयु के बच्चे है। उड़ीसा, तमिलनाडू व कर्नाटक में स्थिति यह है कि ऋण न चुका पाने की स्थिति में आठ से दस वर्ष की पुत्रियों को नौकरानी के रूप में बेच दिया जाता है। देश के कई भागों में बंधुआ पिता जो 40 वर्ष से अधिक आयु के हैं, उनके पुत्रों को बंधुआ बनाकर स्वयं को मुक्त करते हैं। यद्यपि जहाँ एक ओर बालश्रम को बढ़ावा देने में उद्योग मालिकों का धन है, उससे कहीं अधिक बच्चों के स्वयं के माता-पिता इस हेतु जिम्मेदार है जो स्वयं के बच्चों से न केवल उनका बचपन छीन लेते हैं बल्कि उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, प्राकृतिक अधिकारों से भी वंचित कर देते हैं। इन बच्चों को न तो प्राकृतिक नींद मिल पाती है और न ही भरपेट भोजन, जो कि उनके स्वास्थ्य के लिए सर्वाधिक हानिकारक प्रभाव डालता है। उद्योगों में काम करने वाले बच्चे अपना शारीरिक विकास खो देते हैं, जबकि घरेलू नौकरों के रूप में काम करने वाले बच्चों को शारीरिक व मानसिक दुर्व्यव्हार का सामना करना पड़ता है। विशेष रूप से लड़कियों का यौन-शोषण तक का सामना करना पड़ता है।

खानों के कार्यों में बच्चे, अधिकांशतया लड़के, महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आदमी खानों में खुदाई करते हैं और बच्चे कोयले को जमीन की ऊपरी सतह पर पहुँचाते हैं। 12 वर्ष से कम आयु के बच्चे ज्यादा पसंद किएजाते हैं क्योंकि उनके कद के कारण वे सुरंगों में बिना झुके चल सकते हैं। कारखानों के निरीक्षकों द्वारा निरीक्षण किए जाने के दौरान बच्चों को छुपा दिया जाता है, उनकी आयु उन्हें नौकरी के पात्र करने के लिए मनमाने ढ़ंग से बढ़ा दी जाती है या उन व्यक्तियों की जो बालक व्यक्ति की मजदूरी के पात्र हैं, मालिक कार्यो में चालाकी से कम उम्र दिखला देते हैं और इस प्रकार उन्हें अपने वैद्य हिस्से (मजदूरी) से वंचित कर देते हैं। शहरी क्षेत्रों के साथ-साथ ग्रामीण इलाकों में बालश्रम का प्रतिशत निरन्तर बढ़ रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में पाई जाने वाली परिस्थितियों में लम्बे समय तक कार्य, अशिक्षा को बढ़ावा मिलता है। ग्रामीण क्षेत्रों में चाय की दुकानों, खेतों, कपास कताई, भवन-निर्माण कार्यो, दुकानों में यह प्रतिशत सार्वजनिक है।

मिजोरम में पत्थर की खानों में काम करने वाले 7,000 बच्चे पाए जाते हैं। 1981 के आंकड़ों के अनुसार इनकी संख्या केवल 3,000 की जो 1991 में 7,000 हो गयी। पत्थरों की धूल से इनमें जातक बीमारियाँ पैदा होती है।

---

* शोधार्थी, जे.जे.टी. विश्वविद्यालय, झुन्झूनूं (राज.) भारत

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ग्रामीण महिलाओं पर विकास के प्रभाव के अध्ययन में पाया गया कि 245 लड़कियों में से 83 लड़कियाँ 6-11 आयु समूह की (लगभग 33.5 प्रतिशत) किसी आर्थिक गतिविधि में लगी हुई थी। 11-18 आयु समूह की 52.0 प्रतिशत से अधिक लड़कियाँ इसी प्रकार काम कर रही थीं। यह अनुमान लगाया कि उत्तर प्रदेश के भदोई के आसपास दरी बुनने वाले 50,000 श्रमिकों में से 25 प्रतिशत बच्चे थे, जब कि मिर्जापुर में 20,000 श्रमिकों में 8,000 बच्चे थे। कश्मीर में गलीचे बुनने वाला उद्यम कमर तोड़ने वाले काम में छोटी लड़कियों को नियुक्ति देता है। इस क्षेत्र की उन्नति करती हुई कारीगरी (उत्कृष्ट हाथ की कशीदाकारी) में बच्चों को कई घंटों तक एक ही मुद्रा में रहना पड़ता है और पेचीदे नमूनों पर आँख गड़ाए रखना पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप प्राय: शारीरिक विकृतियाँ एवं आँखे क्षतिग्रस्त हो जाती है। सूरत (गुजरात) में और आसपास कई बच्चे तो किशोर अवस्था में है, बड़ी संख्या में हीरे काटने के काम में लगे हुए हैं जिसका आँखों पर बहुत हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है।

बाल श्रम के कारण - देश के चहुँमुखी विकास में बच्चों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान होता है। यही वे महत्वपूर्ण धरोहर हैं जो कि एक देश का भविष्य निश्चित करती है। अत: प्राथमिक रूप को किसी भी देश की सरकार का सबसे महत्तवपूर्ण कार्य यह होना चाहिए कि वे उन्हें शारीरिक व मानसिक स्तर पर विकास करने का समुचित अवसर उपलब्ध करवाए तथा समाज का यह प्रयत्न होना चाहिए कि वह ऐसा वातावरण बनाए जो बच्चों की शिक्षा, विकास और प्रगति की सम्भावनाओं से भरपूर हो। उन्हें उनकी विकासावस्था के दौरान ऐसी शारीरिक और मानसिक कठिनाईयों से बचाया जाना चाहिए, जो कि उनके प्राकृतिक विकास में बाधा पहुँचाने तथा भविष्य को अंधकारमय बनाने का कारण बनती हों, भारत की अधिसंख्यक जनता को दो समय की रोटी के लिए दिन-रात व्यवस्था में जुटना पड़ता है, तब समय की यह माँग हो जाती है कि नन्हें बच्चे भी इस संघर्ष में भागीदार हों। भूख के दानव से बचने के लिए माँ-बाप अपने बच्चों को शोषण और अमानवीय परिस्थितियों में भी काम पर भेजने के लिए मजबूर हो जाते हैं। यही सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ बच्चों को ऐसी घृणित परिस्थितियों में भी काम करने के लिए बाध्य करती हैं।

किसी भी क्षेत्र, देश अथवा समाज की आर्थिक विकास की गति के साथ बालश्रम के उपयोग की सीमा बंधी हुई है। सुहविक्स ने ठीक ही कहा है कि बच्चों के समय का उपयोग समाज में जंगलों में लकड़ियाँ इत्यादि एकत्रित करने तथा अन्य छोटे-मोटे घरेलू उन कार्यो में किया जाता रहा है, जिन्हें वयस्क लोग करना पसंद नहीं करते थे। किंतु वर्तमान में बच्चों का उपयोग सामाजिक स्थिति में परिवर्तन, औद्योगीकरण और नगरीकरण के कारण हो रहा है और यही कारण प्रतीत होता है कि कृषि प्रधान देश भारत में बच्चों के इस समाज का, ग्रामीण वातावरण को नगरीय वातावरण की ओर जीविका के साधन जुटाने के लिए पलायन की क्रिया के सूत्रपात के रूप में हुआ है।

देश की जनसंख्या का लगभग 40 प्रतिशत भाग अत्यधिक निर्धनता व दरिद्रता में जीवन यापन कर रहा है। भारत में बाल श्रम का प्रमुख कारण दरिद्रता व निर्धनता है। इस कारण बच्चे नौकरी करते हैं तथा बिना उनकी कमाई के उनके परिवारों का जीवन स्तर और भी नीचे गिर सकता है। अत: बेरोजगारी, गरीबी व अपराध से बचने के लिए कम आयु वर्ग के बच्चे काम में लग जाते हैं।

संवैधानिक प्रावधान, राजकीय प्रयास तथा बाल श्रम में सुधार की राष्ट्रीय नीति भारत में बाल श्रम को एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में मान्यता प्रदान कर इसके उन्मूलन के प्रयास अंग्रेजी शासनकाल से ही होते आए हैं। अंग्रेजी शासन काल में बालकों के नियोजन और कार्य के घण्टों को नियंत्रित करने के लिए पहला अधिनियम, 1881 का फैक्ट्री एक्ट है। बाल नियोजन की न्यूनतम आयु को निर्धारित करने के लिए 1829 में अंग्रेजी सरकार द्वारा एक आयोग नियुक्त किया गया। इस आयोग की सिफारिश पर बाल श्रम अधिनियम 1933 में पारित किया गया। जिसमें 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को नियुक्ति पर प्रतिबंध लगाया गया। विकासशील एवं विकसित देशों की सरकारों ने अपने-अपने ढंग से इस समस्या के समाधान के लिए समय-समय पर संवैधानिक व्यवस्था के अन्तर्गत व्यवस्था की है। परन्तु जानकारी के अभाव में तथा मजबूरी की वजह से बच्चे अपने अधिकारों के प्रति अनजान हैं। 1986 (प्रतिरोध व नियम) अधिनियम बाल कल्याण को सुनिश्चित करने हेतु बनाया गया जिसमें यह व्यवस्था की गई कि किसी बालक से जो कि 14 से कम आयु का है से गैर-जोखिमपूर्ण कार्यो में एक दिन में 5 घण्टे से अधिक कार्य नहीं कराया जायेगा। लगातार 3 घण्टे से अधिक काम, ओवर टाईम, सायं 7 बजे प्रात: 8 बजे तक कार्य निषेध किया गया है। इसके अतिरिक्त धाराओं में श्रम से सम्बन्धित प्रावधान हैं:-

धारा-7 एक दिन में एक से अधिक संस्थाओं पर कार्य से प्रतिबंध, धारा-8 सप्ताह में एक दिन का साप्ताहिक अवकाश, धारा-9 श्रम निरीक्षक को सूचना उपलब्ध करवाना, धारा-10 बालक की आयु निर्धारण हेतु चिकित्सा अधिकारी द्वारा प्रमाणित दस्तावेज, आदि व्यवस्थाएँ की गई हैं। बालकों के लिए राष्ट्रीय नीति किसी भी राष्ट्र की आर्थिक व भौतिक सम्पदा चिरस्थायी नहीं रह सकती, यदि उसकी नई पीढ़ी गुणवत्तायुक्त न हो। मानव संसाधन के लिए बनने वाली राष्ट्रीय नीतियों में बालकों के कार्यक्रमों को प्रमुखता से शामिल किया जाना चाहिए। अत: देश के भविष्य को बेहतर बनाने व सुरक्षित करने के लिए आवश्यक हो जाता है कि बालकों के शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक विकास पर सार्वजनिक ध्यान दिया जाए। प्रथम प्रधानमन्त्री पं. जवाहरलाल नेहरू के जन्म-दिवस 14 नवम्बर, को 'बाल-दिवस' के रूप में मनाया जाता है। 14 तारीख इसी बात को इंगित करती है कि 14 वर्ष से कम आयु के बालक श्रमिकों की श्रेणी में नहीं रखे जा सकते हैं। इस हेतु कई कल्याणकारी योजनाएँ व कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। इसके उपरांत भी बाल श्रमिकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। बाल श्रमिक विश्व के सभी देशों में मौजूद हैं। जिसमें अत्यन्त गरीब देश से लेकर सबसे सम्पन्न देश अमरीका तक शामिल हैं। अमरीका की सरकार ने यह घोषणा की थी कि भारत तथा अन्य एशियाई देशों से वह उन उद्योगों में निर्मित समान आयात नहीं करेगी, जिसमें बाल श्रमिक कार्यरत हैं। दुनिया के अन्य देशों में भी यही स्थिति है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

महिलाओं के पुलिस से संबंधित अधिकार

ऋचा एस. मेहता *

शोध सारांश – भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें सशक्त बनाने के लिए जो कानूनी प्रावधान बनाए गए है, उनका उन्हें सम्पूर्ण ज्ञान हो। महिलाओं के विरूद्ध अपराध एवं घरेलू हिंसा के संबंध में जितने भी शोध हुए उसमें एक तथ्य यह उभरकर आया है कि महिलाएँ कानूनी प्रावधानों की जानकारी नहीं होने के कारण लगातार प्रताड़ित होने के बावजूद लड़ने का साहस नहीं जुटा पाती है। भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कई कानून बनाए गए है तथा कई कानूनों में महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान बनाए गए है। इन कानूनी प्रावधानों में से एक महत्वपूर्ण कानून पुलिस से संबंधित है। इन प्रावधानों में महिलाओं की गिरफ्तारी, थाने में महिलाओं के अधिकार, पूछताछ से संबंधित अधिकार, तलाशी के संबंध में अधिकार महत्वपूर्ण है, इनकी महिलाओं को पूर्ण जानकारी होना चाहिए ताकि वे घरेलू एवं अन्य हिंसा से संबंधित कानूनी लड़ाई लड़ सके।

प्रस्तावना – एक महिला की आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षिक, लिंग तथा अध्यात्म शक्ति को बढ़ाकर उसे सशक्त बनाने को महिला सशक्तिकरण कहते है। महिलाओं को अपनी स्वयं की पहचान बनाने के लिऐ आवश्यक सभी पहलुओं में सशक्त बनाना ही महिला सशक्तिकरण है। महिलाओं को उनके स्वयं के निर्णय लेने के लिये सशक्त बनाना महिला सशक्तिकरण है। उन्हें अपने आपको सक्षम बनाने के लिऐ जो करना हो वह करने की स्वतंत्रता देना महिला सशक्तिकरण है। जब महिलाएँ स्वयं सशक्त बनेगी तभी समाज में उनकी स्थिति बेहतर होंगी।

भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें सशक्त बनाने के लिए जो कानूनी प्रावधान बनाए गए है, उनका उन्हें सम्पूर्ण ज्ञान हो। महिलाओं के विरूद्ध अपराध एवं घरेलू हिंसा के संबंध में जितने भी शोध हुए उसमें एक तथ्य यह उभरकर आया है कि महिलाएँ कानूनी प्रावधानों की जानकारी नहीं होने के कारण लगातार प्रताड़ित होने के बावजूद लड़ने का साहस नहीं जुटा पाती है। भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कई कानून बनाए गए है तथा कई कानूनों में महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान बनाए गए है। इन कानूनी प्रावधानों में से एक महत्वपूर्ण कानून पुलिस से संबंधित है।

महिलाओं के पुलिस से संबंधित अधिकार –पुलिस जनता की सुरक्षा के लिऐ है, इसलिए उन्हें कुछ विशेष अधिकार दिऐ गऐ है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे अपनी मनमानी करें। उन्हें भी कानून के मुताबिक चलना होता है। कानून कहता है कि यदि पुलिस किसी से दुर्व्यवहार करती है, तो उसे भी दण्ड दिया जा सकता है। भारतीय दण्ड संहिता 1960 तथा दण्ड प्रक्रिया 1973 कानूनों के अंतर्गत भिन्न–भिन्न अपराध, उनसे संबंधित सजा, पुलिस एवं न्यायालय की कार्यवाही से संबंधित विस्तृत प्रावधान बनाए गए है। इनमें से कुछ प्रावधान विशेष रूप से महिलाओं के लिए बनाये गये। महिलाओं की सशक्तिकरण के लिये यह आवश्यक है कि इनके संबंध में महिलाओं को जानकारी हो। ये प्रावधान निम्न प्रकार है –

गिरफ्तारी – पुलिस द्वारा महिलाओं की गिरफ्तारी के संबंध में महिलाओं से संबंधित निम्न प्रावधान महिलाओं को सशक्त बनाते है –

- गिरफ्तारी के समय पुलिस को महिला को यह बताना होगा कि उसे क्यों गिरफ्तार किया जा रहा है ?
- महिला को यह बताना भी आवश्यक है कि उसे किस जुर्म के कारण गिरफ्तार किया जा रहा है ?
- पुलिस को महिला की गिरफ्तारी तथा जिस स्थान पर उसे रखा गया है उसकी जानकारी उसके मित्र या संबंधी को देनी होगी।
- महिला गिरफ्तारी पर किसी भी वकील को बुलाकर कानूनी सलाह ले सकती है।
- गिरफ्तार करते समय महिला से जोर जबरदस्ती करना गैरकानूनी है।
- किसी महिला आरोपी को सूर्यास्त और सूर्योदय के बीच गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है। यदि पुलिस ऐसा करना जरूरी समझे तो उसे न्यायिक मजिस्ट्रेट का आदेश लेना जरूरी होगा।
- गिरफ्तारी के समय महिला को हथकड़ी नहीं लगाई जा सकती है।
- गिरफ्तार महिला को गिरफ्तारी के 24 घण्टे के भीतर कोर्ट में पेश करना जरूरी है।
- शनिवार, रविवार या त्यौहार की छुट्टी होने पर भी महिला को स्पेशल मजिस्ट्रेट के समक्ष 24 घण्टे में प्रस्तुत करना होगा।

थाने में महिला के अधिकार – महिला को थाने में रखने से संबंधित प्रावधानों में महिलाओं को निम्न विशेषाधिकार प्राप्त है –

- महिला को पुलिस हिरासत में सताना, मारपीट करना या अन्य तरह की यातना देना गंभीर अपराध है।
- महिला की सुरक्षा के लिऐ उसके पहचान वालों या रिश्तेदारों को पुलिस स्टेशन जाने का अधिकार है। पुलिस उनको साथ चलने से रोक नहीं सकती।
- पुलिस स्टेशन में महिला के साथ मारपीट या बलात्कार आदि हो तो तुरन्त डॉक्टरी जाँच की माँग की जा सकती है। डॉक्टर जाँच करके चोटों की डाक्टरी रिपोर्ट देगा जिसकी तुरन्त मजिस्ट्रेट को शिकायत की जाएगी।
- महिलाओं को केवल महिला लॉकअप में रखा जा सकता है। यदि किसी

---

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ (म.प्र) भारत

पुलिस स्टेशन में महिला लॉकअप न हों तो जिस पुलिस स्टेशन में महिला लॉकअप हो वहाँ उसे भेजना होगा।

- पुलिस स्टेशन में महिला पुलिस उपस्थित रहे इस बात की माँग करने का महिला को अधिकार है।

पूछताछ से संबंधित अधिकार –

- किसी की महिला से पूछताछ केवल उसके घर पर ही की जा सकती है। महिला पूछताछ के लिऐ थाने जाने से मना कर सकती है।
- पूछताछ के लिऐ कानून द्वारा समय निश्चित नहीं किया गया है परन्तु यदि महिला को ऐसा लगता है कि पुलिस ऐसे समय पर पूछताछ करने आती है, जिससे उसे परेशानी होती है या शर्मिन्दगी होती या मर्यादा का उल्लंघन होता हो तो वह मजिस्ट्रेट से किसी समय विशेष पर पूछताछ किए जाने की माँग कर सकती है।
- कोई भी महिला पुलिस द्वारा पूछताछ करते समय अपने किसी मित्र या रिश्तेदार या वकील की मदद ले सकती है।
- पुलिस अफसर महिलों को पूछताछ में डरा–धमका नहीं सकता है। पुलिस केवल पूछताछ के लिए महिला को हिरासत में नहीं ले सकता नहीं थाने में रख सकता है।

तलाशी के संबंध में महिलाओं के अधिकार –

- महिला की तलाशी केवल महिला ही ले सकती है। महिला द्वारा तलाशी लेते समय भी महिला के साथ कोई अभद्रता नहीं होना चाहिए।
- पुरूष पुलिस अफसर द्वारा महिला की तलाशी लेना गैरकानूनी है। कोई महिला किसी पुरूष अफसर को अपनी तलाशी लेने से मना कर सकती है।
- यदि कोई महिला पुलिस तलाशी के लिये उपलब्ध न हों, तो किसी अन्य महिला को तलाशी लेने के लिएकहा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 महिलाओं के पुलिस से संबंधित अधिकार – रचना एवं प्रकाशन मल्टीपल एक्शन रिसर्च ग्रुप प्रायोजन महिला एवं बाल विकास विभाग मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार।
2. महिलाओं के विरूद्ध हिंसा – राम आहूजा रावत पब्लिकेशन, जयपुर 1996
3. महिला उत्पीड़न समस्या एवं समाधान – रायजादा अजीत मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
4. दैनिक समाचार पत्र–पत्रिकाएँ।

****

Badal Sircar : An Able Theatre Man

Jeetendra Singh Rajawat *

Abstract - Indian English Drama has come a long way and Badal Sircar is one of the brightest stars in the constellation of Indian Drama. The importance of the Third Theatre or street theatre and its close proximity with Badal Sircar is an important aspect to discuss. Badal Sircar is a renowned first-generation Bengali dramatist of post-colonial India. He started his writing career with acting and directing in the early fifties. His first contact with the theatre was through the proscenium stage. Sircar wrote more than fifty plays throughout his career and widely known for developing the theatre form of his own, the Third Theatre and also for establishing his theatre group Satabdi. The plays of Badal Sircar show the nature of exploitation sustained by native lower class Indians and their reaction and revolt against it both during and after the colonial period. His motivation for writing has become characterized by a passionate personal response to the injustices and oppressions endured in the lives of poor and disenfranchised people, both of his own country and beyond.

Introduction - This paper is meant for showing Badal Sircar's contribution to Indian drama. Though he wrote his plays in Bengali Language yet he set such norms that he had become a mark of source for contemporary dramatist and theatre man.

Badal Sircar is the greatest playwright of modern times after Rabindranath Tagore in terms of completeness. His serious plays, humours, third theatre-all these bear testimony to the fact. He was a rebel, he changed his name from Sudhindra to Badal.

Although famous all over India as a playwright, Sircar dismisses his contribution to theatre writing, **I prefer doing theatre to writing theatre. Writing is quite laborious for me,** and claims that he started writing plays as a matter of expediency. Familiar with a great deal of dramatic literature since his youth, Sircar started taking an active interest in theatre while he was in Maithon he started a rehearsal club with his friends which gradually began to turn out full-scale productions. While working as a town planner in India, England and Nigeria, he entered theatre as an actor, moved to direction, but soon started writing plays, starting with comedies. Badal Sircar did experiments with theatrical environments such as stage, costumes, and presentation and established a new generation of theatre called **Third Theatre**.

As playwright and director, Badal Sircar evolved and defined his individual content, form, aesthetics and philosophy he called **Third Theatre**, which, in course of time, became synonymous with his name. **Third Theatre** is that kind of performance that establishes and continuously reinforces maximum intimacy between actors and spectators. His strategy and methodology appeared simple and uncomplicated. But peeping behind the apparent simplicity was a philosophy that made theatre a performance for the people, of the people and in a manner of speaking, even by the people. He began by performing in small halls and with benches and stools to create varied shades of relationship between actors and spectators. He moved on to the open streets, gardens, parks, everywhere, turning the whole world into a stage without any reference to Shakespeare. He drew theatre out form the confines of the folk and the urban styles and into the **Third Theatre** to expose us to an unconventional theatrical dimension of free theatre, courtyard productions and village theatre.

To execute his ideas Sircar formed a theatre group called **Satabdi** a troupe of devoted actors and workers. Having abandoned the proscenium stage, he began performing either in open areas with the audience sitting around or on the floor of a room. The **Satabdi** has thus exploded the myth that good theatre is a costly affair. Unlike the expensive proscenium stage, the auditorium, the glamorous sets and spot lights imported from Britain a century back the **Satabdi** reduced the cost of their production to barely a hundred rupees or so. The shows are mostly free voluntary donations being collected after the shows. Importantly, though he uninhibitedly interacted with the Western thespians, he never wrote his plays in any language other than Bengali, from which they were later translated by various academicians. To Schechner, he wrote: **My experiences with Satabdi, in theatre, in the cultural jungle of Kolkata, my city; my experiences with other people, with society, with life itself in all its absurdity, sordidness and beauty- all these are no better than a chaotic mass of confusions, and a long history of trying to find a meaningful course, a rational path, through this chaotic agglomeration.**

Sircar has often been called the most middle class of playwrights, and he was that, but he was so much more than that. Perhaps that is where his empathy for the ordinary Calcuttan came from, he wrote of **Satabdi**, his theatre group:

---

* **Research Scholar (English) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA**

None of the Satabdi members are paid anything. They work in banks, schools, offices, factories: they assemble in evenings exhausted by loveless work and sardine – packed public transport.

Sircar used this theatre form as a tool to act out the exploitative history and the adverse effect of colonial rule in India since he found that the British style proscenium stage was not susceptible to fulfill his aim. Proscenium stage had some limitations of its own and there was a line of demarcation between the actor and spectator in it. Most of Sircar's emphasis was on direct communication and on the reduction of the use of sets, lights, costumes, background music and mechanical devices like tape recorders and projectors. One of his critics Chadha says:

Badal Sircar opposes the theatre becoming a commodity for sale to the audience resulting in a detachment between players and spectators. Sircar has always argued in favour of spectators being an integral part of his theatre.

Badal Sircar was deeply inside theatre, a perfect theatre lover. He was a great writer, actor, director and organizer. He was also a great student, had a great job, but sacrificed his career for theatre in our socioeconomic conditions. Badal Sircar wrote some great plays but after some time realized that it is not possible to continue with meaningful theatre in this manner. Badal Sircar belonged to the first generation of dramatists after India got independence from British rule and known for developing a theatre form of his own the Third Theatre. Sircar's Third Theatre is seen as a reaction against British style proscenium stage which was prevalent in Indian cities during colonial rule as well as the unification of the best qualities of both the theatre forms: Westerns influenced urban theatre and Indian folk theatre.

It would be meaningless to valorize one and condemn the other. What we need to do is to analyse both the theatre forms to find the exact points of strength and weaknesses and their causes, and that may give us the clue for an attempt to create a Theatre of Synthesis a Third Theatre.

Doing theatre was his passion. More than writing, Sircar prefers doing theatre. Badal Sircar was perhaps the first playwright to abandon the stage for the street theatre. As he writes:

What can I write? I am no writer of essays. I am a theatre man. I wrote some plays to perform them. I am a theatre person that is all.

These questions, which are difficult to answer, Sircar continuous to grapple with in his exploration of the **Third Theatre.** The Third Theatre is an outcome of his interest in involving himself in theatre. He was at this time influenced by his tours to U.S.A. and Czechoslovakia. Sircar's **Satabdi** was the first group in the Bengali theatre that recognized the validity of a poor theatre. Grotowski's concept of the need to renounce all outward technique and concentrate on analyzing the closeness of the living organism struck a synonymous chord in Sircar's imagination. His theatre gradually minimized its use of sets, costumes, background, music, tape, recorders and projectors. The body of the actor and its relation to the space on the stage were Sircar's most immediate concern as a director. Sircar also attempted to break down barriers in theatrical time and space by emphasizing the simultaneous action of his play as its non – sequential mode of narration.

Along with **Spartacus**, Sircar's later plays **Micchil (Procession), Bhoma** and **Basi Khabar (Stale News)** are based on the concepts of Third Theatre. Procession is one of Sircar's most intricately structured plays with innumerable transactions and juxtapositions. The relentless flow of events in the text is most skillfully concretized in the choreographic movement of the scenes. The actors are constantly on the move, walking, running, dancing, and jogging through the room.

The **Satabdi** together with Angan manch as they described the small room theatre and the Gram Parikramas i.e. walks undertaken by choir group performing and singing in various villages has taken theatre to every nook and corner of Calcutta nay the whole of Bengal. There are no career prospects in this form of theatre nor any chances of becoming a star, he explains. But he loves the medium, constantly thinks about it and, in fact, it is his life.

There are three strands in Badal Sircar's life which mesh well to give a striking texture to his work and introduces a new value to Indian theatre. These strands are his professional career as an urban planner, plus his training as a civil engineer, his inner life as a playwright and its outward expression in his role as a theatre director and actor. More than writing Sircar prefers doing theatres.

Today Badal Sircar stands in the forefront of a new theatrical movement in India. He has become virtually synonymous with the contemporary Indian theatre. His involvement with the stage is complete. Sircar has contributed his full mite to improve and develop the modern Indian theatre, stage literature as well as dramaturgy. Sircar is determined to revolutionise the theatre movement. A natural corollary to his determination is his strong view about the various facets of drama depiction. He opposes the theatre becoming a commodity for sale to the audience resulting in a detachment between players and spectators. Sircar has always argued in favour of spectators being an integral part of his theatre.

Badal Sircar gave a potent weapon in the hands of the theatre groups by way of his third theatre. It would not be out of place to look into the reasons of emergence of street theatre, the various themes handled in the street theatre and the effect of street theatre.

To understand the contribution of Sircar and Satabdi in making process of the Third Theatre it is necessary to look up the annoying effort of Sircar and his group Satabdi. It is a long history of dedicated activity, most of it far from the glare of the national spotlight that has periodically shined on him. His exploration has never been motivated by a desire to experiment for the sake of experiment alone. He has never believed in maxims like **art for art sake** or **theatre for the sake of theatre**. Truly a man of the theatre, Sircar has nurtured a group that is now in its 45th year. He has generated a movement that continues to attract new people even decades after Third Theatre has passed from the dominant theatrical and critical interest. His influence is inductive. He conducts workshops with individuals who become stimulated to do their own theatre. As a result, elements of Third Theatre have traveled far and wide, crossing boundaries of language, class, culture and nationhood.

If there is any playwright in the contemporary Bengali theatre who is capable of creating a genuine people's theatre a theatre supported and created by the people and not merely performed by the people, it is Badal Sircar.

References :-

1. A Letter from Badal Sircar to Richard Schechner, November 23, 1981.
2. Chadha, Tara; Badal Sircar: From Proscenium to Free Theatre, New Direction in Indian Drama, Edi. Sudhakar Pandey and Freya Barua, New Delhi, Prestige Books, 1994.
3. Mitra, Shayoni; Badal Sircar: Scripting a Movement, The Drama Review, Vol. 48, Issue 3. USA: MIT Press, Sep. 2004.
4. Sircar, Badal; On Theatre, Calcutta, Seagull Books 2009.
5. Sircar, Badal; Voyages in the Theatre: IV Shri Ram Memorial Lecture, On Theatre, Calcutta Seagull Books, 2009.
6. Speaking Volumes: Badal Sircar the conscience keeper, published in the Business Standard, May 17, 2011.
7. Tandon, Neeru; Perspectives and Challenges in Indian English Drama, New Delhi, Atlantic Books, 2006.

****

A study of Feminine consciousness in Anita Desai's Cry the Peacock and Bye-Bye Black Bird

Dr. Mani Mohan Mehta * Saurabh Mehta **

Abstract - This paper critically examines the fictional world of Anita Desai, a prominent Indian women writer to understand her outlook and standpoint on the socio- cultural issues of female freedom and empowerment. The study finds that Desai while depicting psychological plight of female characters in her novel makes clear that Indian feminism is quite different from the Western one. Besides this paper show how authentically the writer represents the deplorable status of women in Indian patriarchal society.

Keywords - Western Feminism, Indian Feminism, Feminist Perspective, Indian Social milieu.

Introduction - Anita Desai was born in Mussorie on 24th June, 1937. She had a Bengali father and German mother. When she was a child her parents, sisters and brother used German for conversation. At the age of seven, she began to write prose, mainly fiction and they were published in children's magazines. The family lived in Delhi and here she had her education- first at Queen Mary's school and then at Miranda House, Delhi University. She passed her Bachelor's degree in English Literature in 1957.

Anita Desai worked for a year in Max Muller Bhawan, Calcutta. She was married to Ashvin Desai. She has four children. She takes proper care of them. As she has lived in metropolitan cities- Calcutta, Bombay, Delhi, Poona and Chandigarh, she describes these cities in her novels.

Many readers appreciate Anita Desai's achievements in creating characters independent of social or political issues, but they concentrate mainly on the thematic aspects of her works. Anta Desai's art is not traditional: her personages are engaged in contemplation, not action. Notwithstanding this limitation, she has been successful in capturing and holding the attention of her readers by her narrative skill. Her freshness and spontaneity indicate her rich creative faculty. She creates a character in order to tell a tale and embody her vision of life.

Desai published her first novel, '*Cry the Peacock*', in 1963. She considers *'Clear Light of the Day' (1980),* her most autobiographical work as it is set during her coming of age and also in the same neighborhood in which she grew up. In 1984 she published *'In Custody'*- about an Urdu poet in his decline days- which was shortlisted for the Booker Prize In 1993 she became a creative writing teacher at Massachusetts Institute of Technology.

In 1993, her novel, *'In Custody'* was adapted by Merchant Ivory Productions into an English film by the same name, directed by Ismail Merchant, with a Screenplay by Sharukh Husain. It won the 1994 President of India Gold Medal for the Best Picture and stars Shashi Kapoor, Shabana Azmi and Om Puri. Anita Desai has received many awards like sahitya Akademy Award for 'Fire on the Mountain' in 1978 and twice shortlisted, Booker Prize for fiction for '*Clear Light of the Day'* in 1980 and *'Fasting Feasting'* in 1999.

In the last three decades, far- reaching changes in cultural, social and economic pattern have significantly expanded and altered the nature of reality for Indian women. The triumphs, the anguish of these new circumstances have become the subject- matter of some of the most significant novels by Indian women writers in English. The present comparative study of some of these novels has aimed to place the Indian woman writer of fiction in a critical perspective, and indicate the significance of this writing in formulating a new feminist consciousness in keeping with changing times.

The various stages of an evolving feminist consciousness study suggest that these writers are no longer content merely to document reality. These are not writers armed with a polemical feminist ideology, but are strongly informed by a feminist consciousness.

In the last two decades women writers of the vest – Margaret Atwood, Angela Carter, Emma Tennant, Michele Roberts, Alice Walker- have continuously experimented with different fictional modes of subversion realistic pattern of women's writing in lyrical poetic narrative, in fantasy, in parody, in satire while on the other hand, their Indian counterparts have shown an aversion towards experimentation. Anita Desai is critical of this attitude.

In an article on women writers, she voices her feelings:

With all the richness of material at hand, Indian women writers have stopped short- from a lack of imagination,

---

*Asst. Prof. (English) Govt. S.G.S.P.G. College, Ganj Basoda (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

courage, nerve or gusto- of the satirical edge, the ironic tone, the inspired criticism or the lyric response that alone might have brought their novels to life.

Anita Desai, in her first novel (1963) Desai shows the women characters suffering from neurosis. They are guided by fear, guilt, jealousy, aggression and their psyche loses grip of their own central position. The married life of Maya and Gautama results in rupture because the two are not only temperamentally different but mutually opposed.

In *'Cry the Peacock'* Anita Desai has depicted the failure of marriage between Maya and Gautama. Maya marries Gautama who is quite senior in age to her but the two person s are entirely opposed to each other in their emotional responses. The novel is about Maya's cries for love and understanding in her loveless marriage with Gautama and the peacock's cry is symbolic of Maya's agonized cry for love and life of involvement. While Gautama is a practical man to the core, Maya is highly sensitive and emotional.

The Forsterian aspect of rhythm as described in his '*Aspects of Novel'* manifests itself in Anita Desai's 'Cry, the Peacock'. This is a novel where we perceive an intense life in self-enclosed form. The psychological unfolding of Maya's Neurotic mind forms and unfolds the plot of the novel in the definite frame-work of the astrologer's prophecy which is the point of germination and finale of the novel's action. The death of her pet, Toto acts as a reminder of that prophecy which hovers over her married as a shadow. The grief therefore is more due to its apprehension of a bigger loss which would cut her off from life.

As Maya withdraws in the shell of her inner world haunted by the prophecy and cry, she loses her hold on the outside world. Even with her husband she finds it difficult to relate. The tension unshared by anyone else builds into the certain of death.

'Cry, the Peacock' thus has a better claims of being a novel of rhythm not only due to masterly lyricality of the novelist's language but because of the thematic and structural pattern which has a regularity of rhythm.

Desai's third novel *'Bye- Bye Blackbird'*, published in 1971 portrays the plight of Indian immigrants in London. The novel is in three parts 'Arrival', 'Discovery and Recognition' and 'Departure'. Dev arrives in England for higher studies, stays with Adit and Sarah. He is perturbed when he finds Indians being humiliated in both public and private places. In the second part Dev is changed. He begins to feel a charm for the country. In part three Adit develops home sickness for India. Dev stays on there.

'Bye-Bye Blackbird' is a turning loose of emotional and psychic experiences. It is an expression of life, not a form of escapism. Maya, Monisha and Sita are housewives who suffer due to their incapability for adjustment. Sarah, an English girl, wishes to keep her Indian association a secret in the place where she works. Because of her marriage with Adit Sen she becomes apprehensive, unsure of herself in white society to which she feels she does not belong now. She is a poor conversationist, reserved and self-conscious, she suffer from a sense of guilt though she has committed to sin. She avoids the London crowds, their curiosity and their questions. After marriage she stops caring for her past life. She fears the world, their looks and enquires. Her, anxiety, her fears all vanish once she takes up her role of the Head's secretary. To know India and to become Indian are her secrets. She feels that her face is only a mask and her body, only a costume. She wants to enter real world and be sincere and true. She is a picture of women under stress but tries hard to assimilate and to belong. She tries to escape, to hide and to be unnoticed. When Adit decides to go back to India, she consents to follow him like a typical Hindu wife. Before, marriage, Adit once remark:

You are like a Bengali girl…Bengali women are like That-reserved, quiet. May be you were one in your previous life.

Anita Desai has added a new dimension by writing a novel like Bye- Bye Blackbird and Cry, the Peacock to the Indian fiction in English. Probing deep into the bottomless pit of human psyche she brings the hidden contours into a much sharper focus. Desai always emphasized character delineation caring very little for the surrounding. She opts for exceptional circumstances aiming at final essence of subjective life and consciousness. No character is similar to the other.

In Desai's fiction, the female is not a passive creature. She accepts the traditional role but rebels against the whole system of social relationships. They are compelled to make a choice between life and death.

References :-

1. Sources- Wikipedia
2. Anita Desai, "women writer", Quest, 65 (1977) 43.
3. Anita Desai Cry, the Peacock First Edition-2010
4. Anita Desai Bye- Bye Blackbird First Edition 1999, Second Enlarged Edition 2005, REPRINT: 2008
5. Bye-Bye, Blackbird. P. 73.

****

Literature : As The Result Of Rebel

Dr. Pallavi Sharma *

Introduction - In this materialistic world where the importance of science and technology is being so relentlessly stressed the student of literature, may well hesitate, wondering whether this vast and ill-defined territory which he proposes, to explore has any solid rewards to offer?

so it has become very important for all of us to understand firstly- what is literature? In the very widest sense one can say- " Literature is simply anything that is written." The dialogues of Plato are literature. Gibbon's " Decline and Fall of the Roman Empire" is literature. Sophocles, Dante, Milton, Goethe, Ibsen, Hardy, Shakespeare etc. there are so many names come in mind when we look towards literature.

Whenever we study literature we find that there has been a common element present in every writing and that is- Rebel.

In other words one can tell that literature has always been an outcome of rebel since the very beginning. To discuss, this element is present in every literary work, is an impossible task, but like the man who could not define 'Dog' ; yet knew a dog when he saw one we can generally recognize this rebel element when we come across it however varied may be the forms it takes and the moods it expresses.

Literature is about human experiences, but the experiences embodied in literature are not simply the shapeless experiences captured by a mindless unselective camcorder.

Poets, dramatists and story tellers find or impose a shape on scenes and such accounts are memorable not only for their content but also for their form; and while poets dramatists and story tellers are presenting their views, opinions- we always find an element of rebel is hovering there; a rebel which arises either due to their surroundings or due to their passionate approach towards literature . That is why one can see various forms of rebel present in literature in various ages.

The early literature begins with Homer about 940 B.C.- 850 B.C. and continues to about 475 B.C. The life of Homer is shrouded in obscurity. He wrote 'The Iliad' and 'The odyssey'. An Epic poet is normally objective and yet homer rebels when being a blind man, he reveals himself emphatically in the 'Odyssey'.

Literature in itself also rebels when we see that in different ages, different types of poetry and prose flourished. For example while in early literature epic poetry flourished, after the decline of epic poetry emerged elegiac, iambic and lyric poetry, thus the opinions and circumstances of different ages affect the rebellious ability of writers which forced them to pay attention to write different forms of literature .

When we study literary criticism we find Plato, Aristotle, Longinus, Dryden etc. and literary criticism is the best example of searching various types of rebellious elements present in philosophic writings . For example Socrates is a living protest / rebel against sophistry. Plato in his Apology has given an interesting account of how Socrates took up the mission of Philosophy.

Socrates with his well known irony tried to extricate man from the bonds of self complacency. Man has always a fond belief in his cherished dogmas and convictions most of which when exposed to scrutiny are found wanting.

That is why Socrates always said " Know Thyself" so all in all one can clearly visualize a fragrance of rebel in his statement because knowing oneself is a different phenomenon and its applications in physical world completely rebels with its cherished dogmas and convictions.

When we shift our eyes from Socrates to Plato we find rebel in art of writing. Plato mainly wrote dialogues which were highly dramatic. The early dialogues were more dramatic than the later ones.

So such type of rebellious study of literature has its vast aspect which can not be summed up in few pages. From Chaucer, Longinus, Spenser, Dryden, Milton, Pope etc. upto modern writers like H.G. wells, Arnold Bennett, James Joyes, Virginia woolf who have revolutionized the techniques of the novel with their probings into the subconscious one can easily view the rebellious element in their literature.

The modern writing is realistic. It deals with all the facts of contemporary life, the pleasant as well as the unpleasant, the beautiful as well as the ugly and does not present merely a one side view of life.

Such vision rebels from the romantic vision of the age when writers always paid heed towards the bright beautiful and sometimes sensuous side of life. We find modern tone is pessimistic where as romantic tone was always full of

---

***Guest Faculty (English) Govt. S.M.S.P.G. College, Shivpuri (M.P.) INDIA**

wisdom.

An important name W.B. Yeats comes before us when we look towards literature with rebellious approach. His poetry is a battle ground for the clash of opposites. The antimonies of the human and the non human of the spiritual and the physical and the sensuous and the artistic, physical decay and intellectual maturity, the past and the present, the personal and the impersonal, power and helplessness are forever appearing and reappearing in his poetry. In his early poetry such rebel/ opposites are merely rendered but in his later poetry there is also an attempt at reconciling them.

Indian writers like Ravindra Nath Tagore, sarojini Naidu, Jawahar lal Nehru, Shri Aurobindo Kamala das and various other Indian writers also rebel in their writings either in the form of revolt against Britishers or rebel against nature or rebel against the shot comings of Indian society , its vices, its moral values etc.

So all in all we may now agree that literature is writing which expresses or communicates some kind of emotion, thought or attitude towards life. Permanence is probably an essential quality of literature and rebel has been an inseparable constituent of literature.

References :-

1. Personal Research.

****

भवानी प्रसाद के काव्य में जीवन-मूल्य

डॉ. विजय कुमार पाण्डेय *

प्रस्तावना - वादों का प्रवाह इतना तीव्र होता है कि जीवन-दृष्टि संस्कारों का ग्रहण परिमार्जित रूप में करने लगती हैं। काव्य-दृष्टि जीवन के वास्तविक विषयों पर आधारित रहती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि 'नरक्षेत्र के भीतर बद्ध रहने वाली काव्य-दृष्टि की अपेक्षा सम्पूर्ण जीवन क्षेत्र और समस्त चराचर के क्षेत्र मार्मिक तथ्यों का चयन करने वाली दृष्टि उत्तरोत्तर अधिक व्यापक और गंभीर कही जाएगी।'[1] जीवन के सत्य का जिस प्रकार चित्रांकन होता है, वैसी ही दृष्टि चेतना, काव्य-विधान तैयार करती है। जहाँ मार्क्सवादी जीवन-दृष्टि जीवन की उचित व्याख्या तो कर सकी किन्तु 'जीवन-मूल्य' का वास्तविक निदान एवं चरम परिधि प्रस्तुत करने में असमर्थ रही, वहीं समाजशास्त्रीय जीवन-दृष्टि सामाजिक जीवन की उचित व्याख्या के साथ ही जीवन-मूल्य का वास्तविक निदान प्रस्तुत करती आ रही है।

जब जीवन की विकृतियों को परिमार्जित करने का समय आता है, तब उस समय पूर्ववर्ती जीवन-दृष्टि धूमिल पड़ जाती है, तथा तत्कालीन चिंतन धारा मानवीय चेतना को प्रभावित करने लगती है। मानवीय चेतना एक और नए मूल्यों का अन्वेषण करती है, वहीं तत्कालीन चिंतन धारा से प्रभाव चित्र भी ग्रहण करती है।

डॉ0 रामशंकर मिश्र ने जीवन-मूल्य का विश्लेषण करते हुए कुछ निष्कर्ष निकाला है- जीवन-मूल्यों का सर्वेक्षण ही जीवन की वास्तविक व्याख्या है, जीवन-मूल्यों के अंत: संस्कारों का प्रकाशन ही वास्तविक अभिव्यंजना है, जीवन-मूल्यों में अर्थहीन नृत्य नहीं होता है, जीवन-मूल्य के आन्तरिक संदर्भ ही नए सौन्दर्यवाद को जन्म दे सकते हैं।

कविता में जीवन-मूल्य को अनेक रूपों में स्वीकार किया गया है। कविता के उन्नायकों ने जीवन के सभी संदर्भो की व्याख्या प्रस्तुत की है। जीवन के संघर्ष भी मानसिक जीवन को प्रभावित करते हैं।

भवानी प्रसाद मिश्र जी के काव्य में भाव-सत्यों का उन्मेष अधिक हुआ है, जब कवि आत्मरथ होकर गहरे चिंतन में लीन हो जाता है तब उजाले का बाहरी आकर्षण ही सब कुछ नहीं होता। अँधेरे में भी शक्ति होती है तल्लीन कर लेने की, इसलिए कवि हल्के अंधेरे में डूबना चाहता है- 'यह है जीवन की गूढ़ गूढ़तर और गूढ़तम, परिस्थितियों से साक्षात्कार।'[2] जीवन के समूचे आशय का समझने का उपक्रम कवि के आत्म चिंतन का विषय है। यहाँ अंधेरा मन जीवन के वास्तविक अर्थ को गहरी समझ दे रहा है-

अंधेरी रात/पी लेती है जैसी/छाया को
ऐसे पी लेता है/अर्थो को अंधेरा मन।[3]

कवि किरणों की रंगीन आशाओं के बहाने सहज भाव से शुद्ध अंधेरे को और सामान्य जीवन के दु:खी चेहरे को देखते हुए सोचता है कि जीवन बहुत अज्ञेय और अनंत घटनाओं से निर्मित है, इसीलिए रामशंकर मिश्र कहते है- 'जीवन मूल्यों का वास्तविक धरातल अन्तर्जीवन ही है।'[4] मिश्र जी अपनी तमाम कठिनाइयों के बावजूद भी निरनतर संघर्ष कर अनुभवों के व्यापक क्षेत्र को लाँघ जाने के लिए जीवंत संघर्ष करना चाहते हैं। वे मृत्यु से साक्षात्कार करके जीवन के ठोस सत्य को समझते हैं।

कवि जीवन को सांसो का एक छन्द मानता है और जानता है कि शरीर से परे होकर वही दिव्य संगीत की स्थिति पाएगा, इसलिए कवि को शरीर का मोह नहीं हैं, और वह शरीर को त्यागने के लिए तैयार है।

मिश्र जी जीवन की परिवर्तित स्थितियों और चुनौतियों के प्रति पूर्ण सतर्क और जागरूक हैं, किन्तु वे जीवन की समस्याओं से सत्य को ओझल नहीं होने देते- 'यह सच है कि समय का पहिया घूमता है और हम भय के साथ नाचते हैं, व्यक्तिगत, पारिवारिक या आस-पास के दु:खी परिवेश में उलझ जाते हैं किन्तु चिन्ता, दु:ख और वेदना से परे जब हम एकान्त सन्नाटे में अपलक जागते हुए सोचते हैं, तब हमारा समयहीन मन और हमारी समयहीन बुद्धि शाश्वत् समय के चक्र के साथ एकाकार हो जाती है, जिसमें भूल तथा वर्तमान सब लीन हो जाते हैं और हमें समय-हीन शांति का अहसास होता है। इसलिए हमें सामयिक क्षणों को नहीं, शाश्वत काल को पकड़ना होगा तभी हम सही अर्थो में मानव मूल्यों को समझ सकेंगे और तटस्थ चिंतन द्धारा जीवन की सार्थकता को खोज सकेगे।[5]

भवानी प्रसाद जी को जीवन से प्रेम है इसलिए वे कहते हैं- 'बात जूझने से बनती हैं, हम जूझेंगे। जैसे फूलों को या फसलों को उगाने के लिए किसान जमीन में बीज फैलाते हैं, उसे खोदते, और पानी व खाद् छोड़ते हैं तब फसल तैयार होती है, उसी तरह कविता को भी जन-जीवन की यथार्थ धरती से सम्पृक्त करना पड़ता है। धरती का कवि हुए और जन सामान्य के चेहरों से जुड़े हुए सार्थक काव्य का सृजन संभव नहीं-

कविता और फूल/सब एक है
सबको बोना, बखरना, गोड़ना पड़ता है।[6]

कवि को मानव की अटूट शक्ति पर अगाध विश्वास है तथा यह जानता है कि मानसिक परिपक्वता अंधेरे के सत्य का उद्घाटन करती है, जहाँ वह उन्मुक्त प्रसन्नता से निकल कर एक विशिष्ट मन:स्थिति उत्पन्न कर देता है। रामशंकर मिश्र का कथन है- 'जीवन के सत्यों की वास्तविक व्याख्या करने की प्रवृत्ति रचनाकारों की रही है।' मिश्र जी के अनुसार रात और दिन बराबर तृष्णा के पीछे भागने वालों को जीवन में कभी भी चैन नहीं मिलता और वे जीवन भर भटकते रहते हैं।

कवि को महसूस होता है कि शरद के लुभावने सपने और सुरम्य दृश्य आम तौर पर किसी और के हो गए हैं। फिर भी उसका मौन कोलाहल से ज्यादा मुखर है। मिश्र जी के काव्य में आत्म संघर्ष और जीवन्त प्राणशक्ति है, उनकी गतिशीलता में कहीं अवरोध नहीं क्योंकि वे अवसाद और निराशा से आक्रांत नहीं-

---

* अतिथि विद्वान, (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बरही, जिला-कटनी (म.प्र.) भारत

खीचें रहता है वह/अपने रथ-अश्वों की वल्गा/आश्वस्त इस ढंग से
कि चढ़ते हुए उदयाचल/थकते नहीं है उसके अश्व
न हाँफते हैं उनके/न भय होता है उनकी आँखों में
ढ़ीले नहीं पड़ते उनके पाव/चढ़ते-उतरते।[7]

मिश्र जी के काव्य-संग्रह बुनी हुई रस्सी' के मुख्य पृष्ठ में ये पंक्तियाँ ध्यातव्य हैं- 'अनुभव हम सब को होते रहते हैं और ज्यादा से ऐसा होता है कि वे हमें दबाते रहते हैं, घरते रहते हैं और अकेला कर देते हैं। यों यह अकेला हो जाना सारे अनुभवों का राजा है- अकेला पड़ जाना एक उत्सव है किन्तु अकेले पड़ जाने से भीतर बाहर सब जगह गूँगा हो जाना या समुदायों के अनुकरण में जुट जाना एक मृत्यु है।' इसमें संदेह नहीं कि भवानी प्रसाद मिश्र जी अपने अकेलेपन से जूझकर जीवन-मूल्य की भाव-भूमि पर जो अनुभव प्राप्त किए हैं उन्हें अपने शब्दों के माध्यम से सबको बांटा उनका अकेलापन और अपनापन ठीक ढंग से अभिव्यक्त हुआ, तथा मौन मुखरित हुआ। वे सहज काव्य भूमि पर वर्ग विशेष या मत विशेष के सिद्धान्तों से परे अन्य कई कवियों से भिन्न कविता जन्म देने का प्रमाण देते हैं।

'बुनी हुई रस्सी' को उल्टा घुमाकर देखने से उसके रेशे अलग-अलग देखे जा सकते हैं, किन्तु कविता के सभी बिखरे हुए रेशों को समेटने से कवि के बिखरे हुए अनुभवों का संश्लिष्ट रूप दिखाई पड़ता है, जो जीवन के विविध आयामों से प्राप्त अनुभवों का संश्लेषण करता है-

बुनी हुई रस्सी को घुमाएँ उल्टा/तो वह खुल जाती है
और अलग-अलग देखे जा सकते हैं/उसके सारे रेशे
मगर कविता को कोई/खोले ऐसा उल्टा
तो साफ नहीं होगे हमारे अनुभव/इस तरह
क्योंकि अनुभव तो हमें/जितने इसके माध्यम से हुए हैं
उससे ज्यादा हुए है दूसरे माध्यमों से/व्यक्त वे जरूर हुए हैं यहाँ
कविता को/विखरा कर देखने से/सिवा रेशों के क्या दिखता है
लिखने वाला तो/हर विखरे अनुभव के रेशे का
समेट कर लिखता है।[8]

उक्त पंक्तियों में कवि ने जीवन के अनुभवों की बात की है। वे कविता को अनुभव करने की प्रक्रिया मानते हैं। भवानी प्रसाद जी लिखते हैं 'मैं कुछ दिनों से कविता को किसी अनुभव की अभिव्यक्ति नहीं पा रहा हूँ कि वह अनुभव की अभिव्यक्ति का प्रयत्न न होकर अनुभव करने की एक प्रक्रिया है। मुझे लगने लगा है कि कविता अपने को व्यक्त करने का साधन नहीं हैं, कविता एक तरह का जानना है, जो लिख चुके तक हस्तगत होता है, यानि यह जानना एक पद्धति में से गुजर कर उसके पूरा हो चुकने पर हस्तगत होता है। कविता लिखने का मेरा उद्देश्य अब यही जानना हो गया।'[9]

मिश्र जी के ये अनुभव बहते हुए शीतल जल के सदृश प्राणों को दिलासा देते है और भीतर के रहस्यों को उद्घाटित करते हैं। जैसे पेड़ों की शाखाओं की सार्थकता पत्तों और फूलों के माध्यम से अपने मन की बात कहते हैं, उसी तरह अनुभवों को अकेलेपन में महसूस कर रंग, रेखाओं, शब्दों स्वरों आदि विभिन्न अभिव्यक्ति प्रकारों में से किसी माध्यम द्वारा व्यक्त करना आदमी के जीवन की सार्थकता है, अन्यथा उसके जीवन का समूचा आशय अर्थहीन हो जाता है। इसलिए कवि भवानी प्रसाद मिश्र शब्दों के माध्यम से अपने जीवन के अनुभवों की सार्थकता प्रदान करते हैं-

जो किसी प्रकार भी/सपनो को व्यक्त करने की/शक्ति खो देता है
वह पौधा हो चाहे आदमी/किसी मसरफ का नहीं रहता।[10]

अनुभवों की विविधता, व्यापकता और गहराई अपने संश्लिष्ट रूप में कविताओं को जन्म देती है। कविताएँ जल की ऐसी धाराओं के समान हैं, जिनका उद्गम किसी को ज्ञात नहीं होता किन्तु वे हमारे नजदीक विद्यमान रहती है- जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था रस दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द का विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।[11]

कविताओं के बीज नहीं ढूंढ़े जा सकते, क्योंकि व्यक्ति को अनुभव न जाने कितने माध्यमों से होते रहते हैं किन्तु वे हृदय को स्पर्श करने की तीव्र क्षमता रखते हैं।

मनुष्य अपने जीवन के अकेलेपन में अपने अंतरात्मा को समझने की कोशिश करता है, जीवन का अकेलापन पराग या जलधर के समान होता है, जो बरस कर व गरजकर शांति और शीतलता प्रदान करता है। जब जीवन में अकेलापन महसूस होता है, तब मन की तपन शांत होती और हरियाली अंकुरित होती है-

रूके रहो प्रार्थना/कि अकेले पन का यह पराग धन/धाराहत करे
तुम्हारे मन का तप्त विस्तार/फूटे हरीतिमा/उमड़े नदियाँ
सदियाँ सोच लू ठीक है/पराग का यह बादल अलीक है।[12]

जीवन की वास्तविक व्याख्या जीवन के वास्तविक संघर्षो से ही की जा सकती है। राम शंकर मिश्र का मानना है कि - 'जीवन मूल्यों के आन्तरिक सन्दर्भ ही नये सौन्दर्यवाद को जन्म दे सकते हैं।'[13] व्यक्ति के जीवन में मन के साथ ही समय की अनुकूलता और प्रतिकूलता होती है।

मृत्यु जीवन के साथ उसी प्रकार अदृश्य रहती है, जैसे आकाश के साथ हवा रहती है। समय पाकर मृत्यु और हवा दोनों अपना अस्तित्व दिखाते हैं। जब तक शरीर में जीवन है, तब तक मुक्ति नहीं मिल सकती। मुक्ति तो शरीर के अभाव में ही होती है। लेकिन मन की गहराइयों में यदि मुक्ति का अहसास हो जाए तो स्वस्थ शरीर के अभाव में भी शाँति और आनन्द की सहज अनुभूति हो सकती है। मिश्र जी जीवन की गइराई में इसी स्थिति का साक्षात्कार कर रहा है-

मन के अतल गहरे घाव में/फैलकर भी/बँध जाये अगर मुक्ति
तो जिये जा सकते है शायद उससे/शांति और आनन्द और श्रेयस
स्वस्थ गात्र के अभाव में।[14]

कवि इस बात का अनुभव करता है कि धरती और आकाश उसे गोद में लेने के इच्छुक हैं, लेकिन धरती अपने अंक में ले लेती है, और आकाश को नहीं देना चाहती। फिर भी व्यक्ति मरणोपरांत दुबारा इस धरती पर जन्म लेता है।

कवि के व्यापक अनुभवों ने उसे जीवन में परिपक्वता व पूर्णता दी है। उसे इस ख्याल से बहुत हिम्मत और शांति मिलती है कि समय परिवर्तन से ही निखार आता है। मिश्र जी को जीवन के व्यपाक अनुभवों ने जो पूर्णता दी है वहीं कवि के गौरव और आत्म सम्मान का हेतु है। इसके बावजूद भी कवि का मन संतुलित है, क्योंकि कवि को जीवन की शेष रही घड़ियों से मोह है, जीवन के ठोस और विविध अनुभवों से प्राप्त आभा जो शब्दों के माध्यम से मंगल महोत्वस प्रतीत बन गई है।

सारे दु:खों को समेट कर कवि का संवेदन शील मन पवित्र है कवि महसूस करता है कि शीतल सुखद स्पर्श से ही सभी सुख निछावर हैं-

दुख की बनाई इन मेहराबों के ढंगो पर/निछावर है/मेरा सारा सुख
कैसी मेहराबे बना गए है मन पर/मेरा दुख।[15]

मिश्र जी के काव्य में जीवन मूल्यों की स्थितियों का चित्रण ही किया गया है- 'जीवन मूल्य निम्न मध्यवर्गीय श्रेणी के भावना चित्रों मे अधिक पाये जाते है। इस श्रेणी में जीवन संघर्ष की अधिकता के फलस्वरूप अन्तमुर्खता

और मानव सघनता तो होती ही है, किन्तु उसके साथ शिक्षा, स्वाध्याय और समय के अभाव के कारण काव्य सौन्दर्य के विकास के प्रति विमुखता भी दृष्टि गोचर होती है।[16]

इस प्रकार भवानी प्रसाद जी के काव्य में जीवन मूल्यों के अन्त: संस्कारों का प्रकाशन हुआ है। अन्त: संस्कारों से तात्पर्य भाव-विधान और भावाकृतियों से है, भावाकृतियाँ ही संस्कारों के अंकन का पूर्ण प्रतिफलन होती है।

अत: स्पष्ट है कि जीवन मूल्यों की व्याख्या चाहे अंत: साक्ष्य के आधार पर की जाए या बाह्य साक्ष्य के आधार पर दोनों ही स्थितियों में इन तत्वों का विकास ही होता है। भवानी प्रसाद मिश्र जी का काव्य अपने परिपार्श्व में बहुत आगे है तथा इनके काव्य में सामाजिक जीवन की वास्तविक व्याख्या है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चिंतामणि, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ-99
2. अँधेरी कविताएँ, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-21
3. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-26
4. नयी कविता संस्कार और शिल्प, रामशंकर मिश्र, पृष्ठ-24
5. अँधेरी कविताएँ, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-36
6. अँधेरी कविताएँ, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-12
7. अँधेरी कविताएँ, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-108
8. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-172, 173
9. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-6
10. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-133
11. चिन्तामणि, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ-90
12. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-47
13. नयी कविता संस्कार और शिल्प, रामशंकर मिश्र, पृष्ठ-29
14. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-63
15. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृष्ठ-144
16. नयी कविता का आत्म संघर्ष, गजानन माधव मुक्ति बोध, पृष्ठ-29

****

रंगमंच का शिल्पकार - नाटककार मोहन राकेश

डॉ. रंजना मिश्रा *

प्रस्तावना - विश्व की प्रत्येक भाषा के साहित्य में नाटक की परम्परा सर्वाधिक प्राचीन और समृद्ध है। भारतेन्दु ने हिन्दी नाटक को जन्म दिया, किन्तु उनके बाद अनेक वर्षों तक हिन्दी नाटक उपेक्षित पड़ा रहा। जयशंकर प्रसाद ने उस नाट्य परम्परा को पुन: विकसित किया, और वे नाटकों में ऐतिहासिकता और आधुनिकता, नारी पात्रों की प्रधानता, रोमेंटिक वातावरण, काव्यात्मकता, भावुकता और काल्पनिकता की विविध भंगिमाएँ भरते रहे, उनके नाटकों में रंगमंच और अभिनेयता का असंभाव्य रूप ही देखने को मिला। प्रसाद के बाद फिर एकबार नाट्य सृजन की शून्यता देखी गयी, और तभी सहसा हिन्दी साहित्य के क्षितिज पर मोहन राकेश नाट्य की सम्पूर्ण भंगिमाओं को लेकर प्रकट हुए। उन्होंने नाट्य के क्षेत्र में हिन्दी नाटक की पुरानी चली आ रही परम्परा को नकारते हुए नए मौलिक रूप में प्रस्तुत किया है। उसे नाटककार, निदेशक तथा प्रेक्षक से एक साथ जोड़ा है। नाटकों की अभिनेयता और मंच के बाह्य दृश्य विधान के स्थान पर आंतरिक शिल्प की खोज की है। इसीलिए मोहन राकेश को प्रसाद की नाट्य परम्परा में विकसित होने वाला नाटककार कहा गया है। 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस' में तो वे प्रसाद की नाट्य की परम्परा में से निकलते हुए दिखाई देते हैं किन्तु 'आधे अधूरे' एकांकियों तथा बीज पार्श्व नाटकों में वे इस परम्परा को छोड़कर बहुत आगे निकल जाते हैं। उनके नाटकों में आधुनिक मानव के अन्तर्द्वन्द्व की जटिलता के सूक्ष्म स्तरों तक पहुंचने का सार्थक प्रयत्न है, वे आधुनिक संवेदना के नाट्यकार हैं। हिन्दी रंगमंच के संबंध में उनकी विचारणा सांस्कृतिक दृष्टि और भारतीय रंगतत्व की खोज में है।

संस्कृत ने विश्व नाट्य साहित्य को कालिदास, भवभूति, भास और विशाखदत्ता जैसे ख्यातिप्राप्त नाटककार दिये हैं। भारत का यह नाट्य रूप यहाँ की निजी परम्परा है। संस्कृत की नाट्य परम्परा समृद्ध होते हुए भी आगे तक नहीं चल सकी। परवर्ती प्राकृत और अपभ्रंश के साहित्य में नाटकों का नितांत अभाव रहा। ललित साहित्य में तो नाट्य परम्परा का अभाव रहा लेकिन लोक जीवन और लोक साहित्य में यह परम्परा नौटंकी रास और लीला के रूप में विद्यमान रही। सं. 1050 के आसपास नाटकों का साहित्यिक रूप नहीं रहा। हिन्दी प्रदेश के लोकजीवन में कृष्ण लीला और रामलीला का लोकनाट्य रूप प्रचलित रहा किन्तु पद्यसंवाद में। संस्कृत की समृद्ध नाट्य परम्परा यहाँ तक आते-आते क्रमश: लुप्त होती गई। पौर्वात्य और पाश्चात्य नाट्य रूपों के समन्वित रूप को लेकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी नाटक के जन्मदाता हैं। उनके नाटकों में नाट्य रूचि, नाट्यधर्म तथा नाट्याभिनय की मजबूत पकड़ है। उनकी नाट्य सम्पदा पौराणिक, ऐतिहासिक, रोमानी तथा समसामयिक विषयों से जुड़ी है। भारतेन्दु युग में नाट्य सृजन का मूल उद्देश्य मनोरंजनक्रम जनमानस को जागृत करना अधिक रहा है। समाज में मानवीय जीवन मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करना, प्राचीन संस्कृति के प्रति निष्ठा जगाना, अनुकरणीय आदर्श चरित्रों के प्रति समाज को आकृष्ट करना, समाज और जाति में परिष्कार लाना तथा राष्ट्रीयता की भावना को बल देना इस युग के नाटकों की प्रमुख विशेषतायें हैं। द्विवेदी युग के नाटकों में सामयिक जीवन तथा राजनैतिक और सामाजिक जीवन की विकृतियों को उभारा गया है, कहीं-कहीं पौराणिक आख्यानों और चरित्रों से आदर्श स्थापना का प्रयास किया गया है। इस युग में हास्य की सृष्टि करने वाले प्रहसन भी लिखे गये। द्विवेदी युगीन नाटकों में नाट्य शिल्प निर्बल है। भारतेन्दु युग की इस नाट्य परम्परा को प्रसाद ने ही नवजीवन दिया था। प्रसाद ने जैसे साहित्यिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक नाटक लिखे थे, उनके अनुरूप रंगमंच हिन्दी के पास नहीं था। प्रसाद युग के नाटकों में सामाजिक जागरूकता, सांस्कृतिक चेतना, काव्यात्मकता, नाटकीय संघर्ष और महत्वपूर्ण चरित्र निर्माण की विशेषता विद्यमान है। इस युग में प्रचुर मात्रा में नाटक लिखे गये। प्रसादोत्तर युग में रंगमंच और यथार्थ जीवन से जुड़कर नाट्यलेखन प्रस्तुत किया गया है। आधुनिक युगीन इन नाटकों में सामाजिक मनोविज्ञान, भावना और नैतिकता का संघर्ष, तनाव, अंतर्द्वन्द्व, बहिर्द्वन्द्व, मंचीय सार्थकता और नई जटिल अनुभूतियाँ विद्यमान हैं। आधुनिक जीवन की सम्वेदना और रंगमंचीय सफलता इन नाटकों की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

मोहन राकेश आधुनिक युग के सर्वथा मौलिक और पिछले युग से एकदम आगे के नाटककार हैं। उनके नाटकों में प्रयोगधर्मिता के कई स्तर हैं। आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस और आधे-अधूरे जैसे विशुद्ध नाटकों में वस्तुभाषा तथा शिल्प के स्तर पर नाटकीयता लाने की सफल कोशिश है। मोहन राकेश आधुनिक युग के बहुमुखी गद्य लेखक हैं। उनका गद्य लेखन परम्परा का अन्धानुकरण नहीं मौलिकता का सृजन है। वे नयी पीढ़ी के ख्याति प्राप्त साहित्यकार हैं। नाटक के क्षेत्र में तो वे सहसा उदित ऐसे चमकीले नक्षत्र हैं, जो पारसी मंच की व्यावसायिकता को नकारते हैं तथा प्रसाद युग के नाटकों को अभिनेयता की दिशा दिखाते हैं। मोहन राकेश का सम्पूर्ण साहित्य भोगा हुआ यथार्थ है। उनका अपना व्यक्तित्व ही कहानियों-नाटकों आदि में पूरी ईमानदारी के साथ उभारा गया है। उन्होंने प्रसाद की नाटकीय काव्य परम्परा को जीवित किया और रंगमंच तथा अभिनेयता की सभी संभावनाओं को नाटकों का विषय बनाया। नाट्यसृजन में बहुआयामी प्रयोग उन्हें मौलिक चिन्तक का दर्जा देता है।

व्यक्तिगत जीवन में अत्यधिक आर्थिक विपन्नताओं और अनवरत संघर्षों का सामना मोहन राकेश को करना पड़ा। वे अपनी बात कहते हैं- 'घर में शीलन रहती हैं। नालियों से बदबू उठती है। सीढ़ियाँ अँधेरी हैं। घर में दम घुटता है। अन्दर गली में भाग जाता हूँ। पकड़कर लाया जाता हूँ। घर में

---

* हिन्दी विभाग, शासकीय कला वाणिज्य महाविद्यालय, जिला- सागर (म.प्र.) भारत

बन्द रखा जाता हूँ। रो-रोकर बीमार हो जाता हूँ।' यह घुटन और दबाब उनके नाटकों में, कहानियों में, उपन्यासों में है। मुक्ति की छटपटाहट उनके साहित्य में है। उनका यह संघर्ष ही व्यक्तित्व के अन्तर्बाह्य में समा गया। विषम परिस्थितियों में भी वे अध्ययनक्रम को बनाये रहे। धनोपार्जन और परिवार पालन के विचार से बम्बई में अध्यापन कार्य करने लगे। वहाँ के घुटन भरे वातावरण से ऊबकर पद से त्यागपत्र देकर शिमला और उसके बाद जालंधर में अध्यापन शुरू कर दिया। यहाँ पर उन्होंने प्राध्यापक संघ में सक्रिय राजनैतिक भूमिका निबाही, और अन्त में त्यागपत्र देना पड़ा। इसके बाद वे 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' से सम्बद्ध पत्रिका 'सारिका' के सम्पादक हो गए, किन्तु अपनी स्वच्छन्दतावादी, वेपरबाह आदत के कारण उस पद को भी छोड़कर दिल्ली चले आये, और उसी स्थान को जीवन पर्यन्त अपनी साहित्यिक कर्मभूमि बनाए रहे। स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के कारण वे एक जगह नहीं जम सके, जगहों को बदलते रहे। घुमक्कड़ी उनके साहित्यिक जीवन का धर्म बन गया। उन्होंने जोखिम भरी लम्बी-लम्बी यात्राएँ की, और उनको अपने यात्रा वृत्तान्तों में उजागर किया।

उनका आन्तरिक जीवन बाह्य जीवन का विलोम है। वे अपने बाहरी जीवन मुें अव्यवस्थित-अस्तव्यस्त थे, किन्तु आन्तरिक जीवन में साहित्यिक जीवन में व्यवस्थित, संयमित और जिम्मेदार। वे व्यक्ति के रूप में व्यवहार में सांसारिकता के संदर्भ में अव्यवस्थित थे, किन्तु कलाकार के रूप में व्यवस्थित विचारधारा के व्यक्ति।

कलाकार जीवन की विसंगतियों का विरोधी होता हैं, मोहन राकेश में यह दृष्टि अपेक्षाकृत अधिक ही थी। 'आधे-अधूरे' नाटक में मध्यम परिवार के जीवन की विसंगतियों का भोगा हुआ यथार्थ है, और उसे दूर करने की अमिट अभिलाषा। घरवाले कहा करते थे कि मोहन राकेश डाकू बनेगा, पर वह कलाकर बना किन्तु विरोधाभासों का कलाकार। यह सब कुछ भोगी हुई विडम्बना थी। इन सब असंगतियों और विसंगतियों ने उनके मन में समाज के प्रति आक्रोश उत्पन्न किया। साहित्य के प्रति उनका अछूता और मौलिक दृष्टिकोण था। धाराप्रवाह भाषण परिमार्जित भाषा सुगठित और सुनियोजित वाक्य विन्यास तथा सशक्त कथन उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की निधि थे। राकेश ठहाके लगाने वाले इंसान थे। 'दोराहा', 'धुँधला दीप', 'लक्ष्यहीन' तथा 'वासना की छाया' कहानियों में उनके ठहाके हैं। इन ठहाकों के पीछे उनकी जिन्दादिली है। उन्होंने जितना झेला लेखन में उतनी ही शक्ति और निखार आया। मलबे का मालिक, आर्द्रा, अपरिचिता, आखिरी सामान और काला घोड़ा इसी दौर की कहानियाँ हैं।

मोहन राकेश नाटक और रंगमंच के आदमी थे। रंगमंच के लिये ही उन्होंने नाटक लिखे। नाटकीयता और रंगमंच उनके नाटकों एकांकियों, पार्श्वनाटकों और बीज नाटकों में ही नहीं कहानियों उपन्यासों और यात्रा वृत्तांतों में भी है। निदेशक, अभिनेता, रंगकर्मी तथा प्रेक्षक सभी की भूमिकाएं बखूबी निभायीं। वे जीवन भर कला के व्यक्ति स्वातंत्र्य के हिमायती रहे और इसमें अवरोध पैदा करने वाली राजनीति के प्रति उनका आक्रोश हुंकारें भरता रहा। सामाजिक सांस्कृतिक और राजनैतिक विसंगतियों से वे आजीवन जूझते रहे पर उनके सामने झुके नहीं टूट गए। नाटक के बाह्यशिल्प के स्थान पर आन्तरिक शिल्प की खोज हिन्दी नाट्य के लिए उनकी मौलिक देन है। उनके नाटकों के शब्द स्वयं बोलते हैं।

हिन्दी नाटक की परम्परा पर्याप्त समृद्ध रही है। किन्तु अन्य विधाओं की सापेक्षता में उसकी गति शिथिल रही है। हिन्दी के पास सम्पन्न मंच का न होना तथा निदेशक, कलाकार और दर्शक के साथ तालमेल न हो पाना भी उसकी मन्द गतिशीलता का कारण है। अन्य विधायें पाठक की चिन्ता नहीं करती जबकि नाटककार की सबसे बड़ी चिन्ता प्रेक्षागृह में बैठा प्रेक्षक और दर्शक है। इस दृष्टि से मोहन राकेश सशक्त नाटककार हैं। हिन्दी नाटकों में आँतरिक शिल्प की खोज मोहन राकेश की नाट्य जगत को अनुपम देन है, जिसे विकसित करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश।
2. आधे-अधूरे - मोहन राकेश।
3. नव आधुनिक हिन्दी निबंध - राजेश शर्मा।
4. हिन्दी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर - डॉ. रामकुमार गुप्त।
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र।
6. लहरों के राजहंस - मोहन राकेश।

****

मृदुला गर्ग और मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में शहरी एवं ग्रामीण परिवेश

डॉ. नरेन्द्र कुमार *

प्रस्तावना – उपन्यास साहित्य यथार्थ को बहुत नजदीक से परखता है और उसको अभिव्यक्त करता है। उसके लिए यथार्थ सतह पर फैली हुई गंदगी नहीं होता। सतह पर फैली गंदगी के कारण और परिणाम, उसको भोगने वालों की प्रतिक्रियायें, संवेदनायें, अनुभूतियाँ भी उसके विस्तार में प्रत्यक्ष होती हैं। इस अर्थ में औपन्यासिक यथार्थ एक गतिशील यथार्थ होता है।

भारतीय समाज कई तरह से विभाजित है। इस विभाजन में वर्ग आधारित विभाजन सबसे महत्वपूर्ण है। चूँकि सम्पूर्ण मानव जाति प्रकृतित: दो वर्गों में विभाजित है – पुरुष और स्त्री। सामाजिक रूप से समाज दो वर्गों में विभाजित है, शहरी और ग्रामीण। इन परिवेशों को ध्यान में रखते हुए मृदुला गर्ग और मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में आये नारी पात्रों का विवेचन किया गया हैं

मृदुला गर्ग और मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्रों के परिवेश में मूलभूत पार्थक्य यह है कि जहाँ मृदुला जी के लगभग सभी नारी पात्र नगरीय परिवेश के हैं वहीं मैत्रेयी जी के अधिकांश नारी पात्र ग्रामीण परिवेश के हैं। इसके पीछे दोनों रचनाकारों की अपनी रचनात्मक पृष्ठभूमि है। यद्यपि मैत्रेयी जी भी दिल्ली जैसे महानगर में रहकर ही रचनाकर्म को अंजाम देती हैं, परन्तु उनकी रचना की प्रेरणा उनका ग्रामीण परिवेश है, जिसमें वे और उनका परिवार रहा है। उनकी रग रग में बुंदेलखंड की भौतिक, आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के रंग भरे हुए हैं, यही कारण है कि वे दिल्ली में रह कर भी महानगरीय बोध को अपने रचनाकर्म की प्रेरणा नहीं बना पाती। मृदुला जी का ग्रामीण परिवेश से कोई संवेदनात्मक और रागात्मक संबंध नहीं रहा इसलिए उनके सभी पात्र महानगरीय बोध और जीवन विसंगतियों से उद्भूत हुए हैं, उनके रचनाकर्म की प्रेरणा का स्रोत महानगर और उसकी जीवन शैली है।

रचनाकर्म की प्रेरणा का यह परिवेशगत अन्तर ही उनके बीच मूलभूत संवदेनागत अंतर को पैदा करता है। मृदुला जी के सामने अपने 'लेखक' को प्रतिष्ठित करने का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण था इसीलिए उनके अधिकांश नारी पात्र लेखक भी होते हैं। माधवी, मारियान, और गुल। उनके बीच जो वर्गीय अन्तर है वह भी उनके पात्रों के चरित्रों की रेखाओं को बदल देता है। मृदुला जी के नारी पात्रों के सामने 'रोटी कपड़ा और मकान' यानी जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रश्न कभी नहीं रहा इसलिए उनके पात्रों की 'प्रेम' संवदेना और मैत्रेयी जी के नारी पात्रों की 'प्रेम' संवेदना में मूलभूत अंतर देखने को मिलता है। मृदुला जी के 'चित्तकोबरा' 'उसके हिस्से की धूप और 'मैं और मैं' जैसे उपन्यासों में 'प्रेम' के जिस दार्शनिक, उदात्त और द्वन्द्व रहित रूप का विवेचन मिलता है। वह मैत्रेयी के यहाँ सारंग, कदमबाई तथा अल्मा की तरह वास्तविक जीवन की मरुभूमि में कठोर भौतिक संघर्ष और भौतिक रूप में अधिक उपलब्ध होता है।

यह परिवेशगत भिन्नता ही उनके पात्रों के जीवन की प्रमुखताओं को तय करती है। सारंग को श्रीधर मास्टर से प्रेम करने पर जिस सामाजिक और पारिवारिक मानसिक प्रताड़ना को सहना पड़ता है और जिस साहस के साथ सारंग उनका सामना करती है, वह परिस्थितियाँ मृदुला जी के किसी भी नारी पात्र के सामने नहीं आती क्योंकि उनका परिवेश और वातावरण तथा प्राथमिकतायें अलग-अलग हैं।

एक महत्वपूर्ण बिन्दु यह भी है कि मैत्रेयी जी के नारी पात्र अपने परिवेश से किस तरह का संबंध स्थापित करते हैं। क्या वह संबंध द्वंद्वात्मक है? क्या वे अपने परिवेश को बदलने के लिए संघर्षरत हैं? क्या वे आत्ममुग्ध हैं या उनका संबंध समाज और परिवेश से द्वंद्वात्मक रूप से जुड़ा है? मृदुला जी के नारी पात्र प्राय: अपने सामाजिक परिवेश से मुक्त आत्ममुग्धता की अवस्था में रहते हैं। वे उनको परिवेश के बीच द्वंद्वात्मक रूप से संबधं स्थापित करने के संघर्ष में रत चित्रित नहीं करती हैं। उनके चारों ओर अपना एक आभामंडल एक घेरा होता है। जिसमें वे उठती बैठती हैं, सांस लेती और छोड़ती हैं, समाज और तत्कालीन भौतिक वातावरण उनके जीवन में बहुत ही कम आता है। उनके पात्रों का संबंध समाज और परिवेश से द्वंद्वात्मक न होकर प्रवाह में बहते जाने वाली लाश की तरह होता है। वे अपने परिवेश के प्रति न सजग है और न उसे बदलने के प्रति उनमें कोई चेतना है। वे अपने जीवन और जीवन की लगभग स्थिर परिस्थितियों में ही करवट बदलती रहती हैं। परिवेश से द्वंद्वात्मक संघर्ष के साथ जो रिश्ता कायम होता है, उससे जीवन में जो नित नए संघर्ष पैदा होते हैं, उनका सामना करते हुए चरित्रों का जो रूप बनता है वह मैत्रेयी जी के उपन्यासों में दिखाई देता है। मैत्रेयी के स्त्री पात्र सामंतीय जीवन के प्रवाह में बहते-थपेडे खाते, उसके विरूद्ध तैरने की कोशिश करते, रास्ते के मगरमच्छों से घायल होते, उनसे बचते, खपते मगर अन्तत: बहते रहते हैं उसी प्रवाह में। वे अपने लिए कोई नया समुंदर या आकाश चुनने की कोशिश नहीं करते, कोई नया विकल्प नहीं तलाशते।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास संसार का परिवेश मुख्यत: ग्रामीण है। मैत्रेयी जी बुंदेलखंड के ग्रामीण जीवन को अपनी अनुभूति और संवेदना का विषय बनाती हैं। उनका अनुभव संसार ग्रामीण परिवेश में ही विकसित और पल्लवित हुआ है। अत: उनके समस्त नारी पात्र (विजन के नारी पात्र और कही ईसुरी फाग की ऋतु को छोडकर) इसी अनुभव संसार से उद्भूत हुए हैं। उनके उपन्यासों में ग्रामीण जीवन के सभी वर्गों के प्रतिनिधि स्त्री पात्र मिल जाते हैं। जीवन का कोई भी पहलू उनकी लेखनी से बचा नहीं है। ग्रामीण जीवन और निम्न वर्ग तथा निम्न मध्यवर्ग के पात्रों की जीवन विसंगतियाँ, उनके कभी न खत्म होने वाले दु:ख, अमानवीय परिस्थितियाँ, रोज मर्रा की बिलबिलाती जिंदगी और इस सबके बीच जीने की अदम्य लालसा और प्रेरणा, अनवरत

---

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय एस.जी.एस.पी.जी. महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

जीने के लिए किए जाने वाला संघर्ष, हर परिस्थिति में से जीने का सबब ढूँढ लेने की जिजीविषा को देखना हो तो मैत्रेयी के उपन्यासों को देखा जा सकता है।

मृदुला गर्ग और मैत्रेयी पुष्पा के रचनात्मक परिवेश की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं – आधुनिकताबोध और सामंतीय मूल्य। मृदुला जी पूँजीवादी परिवेश में जन्मी आधुनिक चेतना को अपने रचनाकर्म का आधार बनाती हैं या वे आधुनिक चेतना सम्पन्न लेखिका हैं जबकि मैत्रेयी जी उत्तराधुनिक समय में भी सामंतीय जीवन को अपने रचनात्मक व्यक्तित्व की प्रेरणा बनाती हैं। मृदुला जी के उपन्यासों का परिवेश शहरी जीवन है और मध्यवर्गीय चरित्र उनकी संवदेना और विचारों के वाहक हैं। शहरी मध्यवर्ग आधुनिकता के अन्तर्विरोधों में जीने वाला वर्ग है। वह आधुनिकता और मध्यकालीन जीवन मूल्यों के एक नए समीकरण में जी रहा है। इस पृष्ठभूमि में उनके पात्र और परिवेश में एक अलग तरह की जीवन शैली दिखाई देती है। वहीं मैत्रेयी जी के उपन्यासों का परिवेश सामंतीय जीवन है। अत: उनके चरित्र और उनकी जीवन शैली सामंतीय मूल्यों और परिवेश से प्रभावित है। उनके बेतवा बहती रही, इदन्नमम्, चाक, अल्मा कबूतरी, अगनपाखी, कही ईसुरी फाग इत्यादि सभी उपन्यासों में एक सा वातावरण है, एक सी प्रवृत्तियाँ हैं, स्त्रियों के प्रति वही सामंतीय दृष्टिकोण है, हत्या, बलात्कार, अमानवीय रीति–रिवाज और उनका शिकार होती स्त्रियाँ सर्वत्र दिखाई दे जाती हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि मैत्रेयी जी इस सामंतीय वातावरण को तोड़कर आधुनिकता बोध के संकेत नहीं देतीं। उसी वातावरण में अपने लिए बेहतर जीवन तलाशने की कोशिश उनके स्त्री चरित्र करते दिखाई देते हैं।

यहाँ उनके उपन्यासों में आये स्त्री पात्रों का क्रमश: विवेचन किया जा रहा है।

मैत्रेयी जी के ग्रामीण स्त्री पात्रों में चाक की सारंग, इदन्नमम् की मंदा, अल्मा कबूतरी की कदमबाई, अल्मा, कही ईसुरी फाग की रजऊ, अगनपाखी की भुवनमोहिनी, इत्यादि पात्र स्त्री चेतना को अपने तमाम रूढिगत, पितृसत्तात्मक, सामंतीय परिवेश में उत्कर्ष प्रदान करने वाले पात्र हैं। उनके नगरीय स्त्री पात्रों में विजन की डॉ. नेहा और आभा, कहीं इसुरी फाग की ऋतृ इत्यादि हैं।

मैत्रेयी जी के साहित्य में ग्रामीण परिवेश के स्त्री पात्रों के सभी रूप मिलते हैं – माँ, सास, बेटी, बहु, बहिन, दादी, चाची, जेठानी, देवरानी, रखैल, दलित, मध्यवर्गीय, निम्न और अति निम्नवर्ग, जमींदार, मजदूर, शिक्षित, अशिक्षित, संघर्षशील, अन्याय का प्रतिकार करने वाले, अन्याय में भागीदारी करने वाले, अन्याय को चुपचाप सहने वाले, परंपरागत, रूढीवादी, अंधविश्वासों से ग्रस्त, और उनसे संघर्ष और विरोध करने वाले।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि मृद्वला गर्ग एवं मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में आये नारी पात्रों ने समाज के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के स्त्री विमर्श को सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चित्तकोबरा ।
2. उसके हिस्से की धूप ।
3. मैं और मैं ।
4. बेतवा बहती रही ।
5. इदन्नमम् ।
6. चाक ।
7. अल्मा कबूतरी ।
8. अगनपाखी ।
9. कही ईसुरी फाग ।

****

निराला के काव्य में आधुनिकता

डॉ. वारिश जैन *

शोध सारांश – आधुनिक कवियों में निराला का कवित्व एंव व्यक्तित्व सबसे अधिक वैविध्यपूर्ण रहा है। वे छायावादी, प्रगतिवादी, स्वच्छंदतावादी सब एक साथ थे और इसी अर्थ में वे सबसे अधिक आधुनिक थे। साहस, स्पष्टवादिता मान्यताओ एवं सदियों से चली आ रही परंपराओं के प्रति विद्रोह एंव अन्याय एंव असत्य के प्रति न झुकने की जिद ही उन्हें सबसे आधुनिक कवि सिद्ध करती है। 'मुक्त छंद' के प्रवर्तक के रूप में भी उन्हे आधुनिक कहा जा सकता है। उनके व्यक्तित्व एंव कृतित्व में अनेक ऐसी विशेषताएँ है, जो उन्हें आधुनिक सिद्ध करती है। प्रस्तुत लेख में उन पर प्रकाश डाला जा रहा है।

प्रस्तावना – 'आधुनिकता के ढेरो लक्षणो के होते हुए भी विवेक इसका प्राणवायू है इसके बिना आधुनिकता खाली खाली है।'

–डेहरन फोर्ड

आधुनिक शब्द सुनने में जितना साधारण दिखाई देता है, उतनी ही आसानी से हम उसका अर्थ भी लगा लेते है परंतु वास्तव में यह शब्द उतना ही पेचीदा और गहन है। जब हम हिन्दी साहित्य की बात करते है, तो आधुनिकता का प्रारंभ छायावादी दौर में होता है। छायावादी रचनाकारों के यहाँ आधुनिकता वादी काव्य के लेखक की सामाजिक चेतना पूँजीवादी उदारपंथ की अभिव्यक्ति है। हिन्दी में चलने वाले 'आधुनिक चेतना' एंव 'आधुनिकतावाद' के वैचारिक संघर्ष के रूपो को आरंभिक दौर में मिली जुली अभिव्यक्ति मिलती है। 'आधुनिक चेतना' के प्रचार –प्रसार की वैचारिक लड़ाई लड़ने वाले चिंतको ने इस संघर्ष को जनता से और बाद में किसान एंव मजदूर आंदोलन से जोड़ा। इसी क्रम में ये लेखक और साहित्यकार साहित्य में यथार्थवाद का रूपायन करने में सफल भी हुए। वे राजनीतिक – सामाजिक – साहित्यिक आदोलनों को एक ही संबद्ध इकाई के विभिन्न पक्षों के रूप में देखते है। इस तरह की चेतना के आदर्श प्रतिनिधि प्रेमचंद और निराला है। निराला के यहाँ आधुनिकतावाद के एक तत्व के रूप में 'अतिमानव' की छाया लिए हुए 'बादलराग' भी है। अतिमानव की जो झलक प्रारंभिक रचनाओं में है वह क्रमश: क्षीण होती चली जाती है। उसी दौर में अनेक क्रांतिकारी कवि थे जो अतिमानव का चित्रण कर रहे थे पंरतु निराला ने अतिमानव से लड़ते हुए आधुनिक चेतना को क्रमश: अर्जित किया।

मध्ययुग की प्रमुख प्रवृतियाँ, विलासिता, अहंकार, आत्ममोह, निर्बाध उच्श्रृंखलता, व्यक्तिवादी साहस, व्यक्तिवादी निराशा, पाखंड, और आत्मग्रस्तता साथ ही जीवन की पराजय को पलायन से ढकने की कोशिश है परंतु आधुनिकतावाद का प्रमुख तत्व है, विखंडन और विद्रोह। दोनों ही प्रवृतियाँ निराला के व्यक्तित्व एंव कृतित्व में मुखर है। निराला का कान्य कुब्ज समाज सड़ी –गली मान्यताओं और हीन मूल्यों से आक्रान्त था। इस समाज में दहेज प्रथा भी अपने भयंकर रूप में थी। निराला की आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ नहीं थी कि वे पुत्री की शादी में पानी की तरह पैसा बहा सके। अत: उन्होने अपनी दृढ़ता और साहस का परिचय देते हुए, ब्राहमण वर्ग का पूरी तरह बहिष्कार किया और कतिपय साहित्यिकों को ही विवाह में शामिल होने का निमंत्रण दिया। तत्कालीन समाज की दृष्टि में यह एक अनूठा विवाह था लेकिन निराला जैसे क्रान्तिधारी को इसकी क्या चिंता ? वे कान्यकुब्ज समाज में व्याप्त अंधकार से सर्वथा परिचित थे। उन्होंने ऐसे समाज पर बड़ा तीख प्रहार किया है–

'ये कान्यकुब्ज–कुल–कुलांगार
खाकर पत्तल में करे छेद
इनके करकन्या अर्थ खेद'

प्राचीन मूल्यों का अस्वीकार जीर्ण– शीर्ण प्राचीन को नष्ट करने की माँग आधुनिकता की प्रधान प्रवृति है। इसी अर्थ में निराला ने कहा है–

'जला दे जीर्ण– शीर्ण प्राचीन
क्या करूँगा तनजीवन हीन'

यह गीत 1935–36 के आस – पास लिखा गया था। यदि यह आज बीसवीं सदी के अंत में लिखा गया होता तो इसकी व्याख्या उत्तर आधुनिक युग की चेतना के सदंर्भ में होती, परंतु यह गीत आज पढ़ा जा रहा है, इसलिए इसकी व्याख्या उसी संदर्भ में होनी चाहिए। निराला का समय वह समय था जब आधुनिकता अपने प्राथमिक दौर में थी। नई चेतना अभी सृजित नहीं हुई थी, नए क्षितिज अभी कुहासे में ढँके थे, परंतु ' जीर्ण– शीर्ण प्राचीन ' ने जो हमारे जीवन को क्षति पहुँचाई थी उसका संवेदनात्मक ज्ञान हमारे कवियों को होने लगा था। अत: निराला जैसा आधुनिक कवि जो नवीनता के प्रति अधिक आकृष्ट था और जो जड़ हो चुका था, जो मानवीय विकास की गति में बाधक बन रहा था, उससे मुक्ति की आकांक्षा करते हुए एंव उसे समाप्त कर नये सिरे से स्थाई मूल्यों को प्रतिष्ठित करने का प्रयास करता दिखाई देता है।

निराला में ध्वंस के सूत्र अधिक मुखर है परंतु 'निर्माण' की लालसा और अधिक संवेदनशीलता तथा गहराई से व्यक्त हुई है। उनके अनेक गीतो में ध्वंस के साथ – साथ निर्माण भी है। निराला अकेले ध्वंस के कवि हो ही नही सकते। कोई भी महान कवि सिर्फ ध्वंस को विषय नही बना सकता। कबीर की क्रांतिकारिता ध्वंस में नही, विरोध में नहीं, खंडन मे ही नही, नये मूल्यो के सृजन में है। इसी तरह निराला का निरालापन भी ध्वंस की चेतना की स्थापना में नही बल्कि वर्तमान और भविष्य के निर्माण की चेतना की स्थापना में है।

निराला ने परंपरागत तथा प्राचीन मूल्यों को तोडा था। इनमें साहित्य धर्म एंव संस्कृति की चेतना भी थी और आधुनिक चेतना भी। टूटने वाले मूल्यों की जगह उन्होंने कई मूल्यो की पुनर्प्रतिष्ठा भी की है। मृत और जड़ मूल्यों म नई प्राण प्रतिष्ठा का कार्य भी उन्होने किया है, क्योंकि कोई भी आधुनिकतों

---

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, साँवेर (म.प्र.) भारत

केवल ध्वंस नकार एंव विद्रोह का पर्याय नहीं हो सकती उसमें सृजनात्मकता भी अनिवार्य है। जिन मूल्यों को उन्होने पुनर्जीवित किया उनमें सबसे महत्वपूर्ण मूल्य था 'मानव की गरिमा और गौरव की प्रतिष्ठा' और यही आधुनिकता का भी केन्द्रीय मूल्य है, सारी आधुनिकता इसी के इर्द गिर्द चक्कर लगाती है। दूसरे अर्थो में हम कह सकते है, जो सबसे अधिक मानवीय है वही सबसे अधिक आधुनिक होगा और इसी अर्थ में निराला सबसे अधिक आधुनिक थे।

निराला की प्रगतिवादी चेतना को भी उनकी आधुनिक चेतना के संदर्भ में देखा जा सकता है। निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति एंव उनके षोषण का विरोध निराला में प्रबल है– 'राजे ने अपनी रखवाली की, भिक्षुक, तोड़ती पत्थर, कुकुरमुत्ता, विधवा, गर्म पकोड़ी, खजोरहा आदि कविताँए उनकी प्रगतिवादी व आधुनिक चेतना की सशक्त प्रमाण है। 'प्रेयसी' नामक कविता में एक अद्‌भुत आधुनिकता बोध है। इस कविता में नायिका एक जड़ एंव रूढ़िग्रस्तसमाज की युवती है, उसे प्रेम हो जाता है। दोनों भिन्न वर्ग और जाति के है हमारा समाज इस रिश्ते को स्वीकार नही कर सकता, परंतु निराला प्रेयसी को एक स्वतंत्र विकल्प चुनने वाली युवती के रूप में प्रस्तुत करते है, वह स्वंय विकल्प चुनती है और उसको आचरित करती है और अनुभव करती है। –

'रूढि धर्म के विचार
कुल, मान, शील, ज्ञान,
उच्च प्राचीर ज्यो धेरे जो थे मुझे।'

निराला अंतर्जातीय विवाह के समर्थक थे, यह उनके 'वर्तमान हिन्दू समाज' शीर्षक निबंध से पाता चलता है जिसमें वे कहते है

'वर्तमान सामाजिक परिस्थिति पूर्णमात्र में उदार शुभ चिन्ह प्रकार कर रहे है। संसार की प्रगति से भारत की घनिष्टता जितनी ही बढेगी स्वतत्रंता का बाह्य रूप जितना ही विकसित होगा, असवर्ण विवाह का प्रचलन भी उतना ही होता जाएगा।'

आधुनिक युग में जो सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन मानवीय चेतना में हुआ वह यह कि 'मुक्ति' की जगह 'स्वतंत्रता' मानवीय मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित हुई। स्वंतत्रता एक ऐसा मूल्य है जिसके बिना मानवीय जीवन के अन्य श्रेष्ठ मूल्यों की उपलब्धि और उपयोग संभव नहीं। इसीलिए निराला 'स्वतंत्रता' के प्रति सर्वाधिक सचेत रहे। भाव के स्तर पर इनकी कई कवितायों में इसे देख जा सकता है और शिल्प के स्तर पर 'मुक्तछंद' के प्रवर्तन को लिया जा सकता है। जिसके सदंर्भ में उन्होने स्वंय कहा है –

'मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है'

निराला की स्वतंत्रता की अवधारणा उनकी 'आह्वाहन', 'शिवाजी का पत्र' 'दिल्ली', 'बादलराग', 'जागो फिर एक बार', 'तुलसीदास', 'राम की शक्ति पूजा' आदि कविताओं में व्यक्त हुई है।

इन्ही सब कारणों से निराला सबसे अधिक आधुनिक दिखाई देते है। समानता, स्वंतत्रता, मानवीय गरिमा की प्रतिष्ठा, पंरपराओं का अस्वीकार, षोषण का विरोध, नवीनता का स्वीकार, जागरण, उद्बोधन, विवेक, संकल्प और साहस उनके व्यक्तित्व एंव कृतित्व में समाहित ऐसे मूल्य है जो उन्हें तमाम साहित्यकारों से अलग करते है एंव उन्हे सबसे अधिक आधुनिक सिद्ध करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उत्तर आधुनिकता – कुछ विचार।
2. उत्तर आधुनिकता – विभ्रम और यथार्थ।
3. निराला की साहित्य साधना।
4. निराला एक आत्महंता आस्था।
5. क्रांतिकारी कवि निराला।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

कबीर काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य – प्रेम और भक्ति

डॉ. अनसूया अग्रवाल *

प्रस्तावना – “Education is not as end but it means to an end” (शिक्षा साध्य नहीं, साधन मात्र है) की तरह कबीर के लिए कविता लक्ष्य नहीं साधन मात्र था “Poetry was not an end but it means to an end”. उनके विचार उनकी नैसर्गिक अभिव्यक्ति को प्राप्त कर जनग्राहय होते थे। उस मस्तमौला कवि ने अपने मन में, अपनी आत्मा में, अपने हृदय में उदित होने वाले भावों को अपनी वाणी का विषय बनाया ; कागद–कमल का स्पर्श किए बिना सिर्फ उनकी आत्मानुभूमि वाणी ही काव्य की सर्वोत्तम निधि बन गई —

‘यह जनि जानो गीत है, यह निज ब्रहम विचार,
केवल कहि समझाइया, आतम साधन से’

मध्ययुग के इस रामसमाते अल्हड़ संत ने अपनी भावनाओं को शब्दों का जामा पहनाकर, सजा सवॉरकर प्रस्तुत करने की कभी आवश्यकता ही नहीं समझी, वे तो ऑखन देखी पर विश्वास करते हैं। उनके काव्य ‘कलम–कागज जीवी’ नहीं वरन् ‘कण्ठ जीवी’ हैं। न तो उनमें अलंकारों को घटाटोप है न छंदों की बाधाऍं। वे तो गिरिराज की गोद से निकली रस की वे अनुपम सरिताऍं हैं जहॉ भाव माधुर्य के विविध कमल खिलते हैं। वे कबीर हृदय की नैसर्गिक अभिव्यक्ति हैं जो भाषा, अलंकार और छंद की नियमितता से मुक्त रहकर स्वच्छन्द रूप से नि:सृत हुए हैं। उनका एकमात्र उद्देश्य अपनी बात को दूसरों तक पहुँचाना था और कबीर इसमें पूर्णत: सफल रहें। यही ‘प्रेषणीयता’ उनके काव्य की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि रही।

कबीर काव्य का सौंदर्य माली निर्मित उस क्यारी की तरह नहीं हैं जिसके पौधे कैंची से कतरकर ठीक किए जाते हैं और खास तरह की रूचि से विवश होकर सजाए जाते हैं। वे तो प्रकृति के उन उद्यानों की तरह हैं जो जंगलों में, पहाड़ों पर, नदी–तटों पर स्वतंत्र रूप से विकसित होते हैं। वे बनावटी पन और कृत्रिमता से पूर्णत: मुक्त अकृत्रिम–निसर्ग के श्वास–प्रश्वास हैं।

कबीर का काव्य जीवन के खेत में उगा है यद्यपि यहाँ कल्पना ने भी अपना काम किया, रसवृत्ति और भावनाओं ने भी, पर ये सब खाद हैं; जीवन का कटु, मर्मस्पर्शी, सुख–दुख, आत्मा–परमात्मा ये हैं कबीर काव्य के बीज। कबीर के भाव कब बोलचाल की भाषा में काव्य बनकर फूट पड़े – कहा नहीं जा सकता । उनका संबंध जीवन से है, इनमें जीवन के समस्त पक्षों का दर्शन होता है तभी तो ये युगों से हमारे समाज में सिंहरन उत्पन्न करते चले आ रहे हैं।

उनके काव्य का विषय सृष्टि का कण–कण है। सृष्टि के कण–कण में परिव्याप्त प्रेम और भक्ति भावना ही इनके काव्य का प्रमुख प्रतिपाध है। वे मानते हैं कि प्रेम ईश्वर प्राप्ति का सबसे बड़ा आधार है, प्रमुख सोपान है। तभी तो प्रेम के ढ़ाई आखर पर वे अपना सारा शास्त्र ज्ञान न्यौछावर करने को तत्पर है।

बाह्य जगत् ने कबीर काव्य को मुख्यत: दो धाराऍं प्रदान की– एक तो धर्म और समाज के मलबे की सफाई अर्थात कुरीतियों और आडम्बरों पर आक्रमण कर खंडन–मंडन द्वारा सत्य तत्व का उद्घाटन और दूसरा प्रिय की खोज। यही दो भावनाऍं कबीर काव्य के प्रारंभ से लेकर अंत तक फैली हुई है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है —कबीर ‘ज्ञान के हाथी’ पर चढ़े थे पर ‘सहज का दुलीचा’ डाले बिना नहीं, ‘भक्ति के मंदिर’ में प्रविष्ट हुए थे पर ‘खाला का घर’ समझकर नहीं, बाह्याचार का खंडन किया था’ पर ‘निरूद्देश्य आक्रमण की मंशा से नहीं, ‘भगवत विरह की आँच में तपे थे, पर ‘आँखों में आँसू भरकर नहीं’, ‘राम को आग्रहपूर्वक पुकारा था’ पर ‘बालेकोचित् मचलन के साथ नहीं’ – सर्वत्र उन्होंने एक समता (Balance) रखी थी। केवल थोड़े से विषयों में वे समता खो गए थे— अकारण सामाजिक ऊँच–नीच मर्यादा के समर्थकों को वे कभी क्षमा नहीं कर सके ; भगवान के नाम पर पाखंड करने वालों को उन्होंने कभी छूट नहीं दी, दूसरों को गुमराह बनाने वालों को उन्होंने सदैव फटकारा, ऐसे अवसरों पर वे उग्र थे, कठोर थे, आक्रमक थे। पर गुमराह लोगों की गलती बताने में उन्हें एक तरह का रस मिलता था। व्यंग्य करने से उन्हें तृप्ति मिलती थी।’ सचमुच कबीर हिंदी जगत् के पहले विध्वंस विशेषज्ञ हैं, पहले व्यंग्य लेखक हैं । उनके व्यंग्य; जीवन से साक्षात्कार करते हैं, जीवन की आलोचना करते हैं, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश करते हैं। उनके व्यंग्य तीक्ष्ण, नुकीले, बारीक काँच की किरचों के समान एक बार चुभ जाने पर भीतर और भीतर ही प्रवेश करते चले जाते हैं। उनका मूल उद्देश्य समाज, राष्ट्र और संपूर्ण मानवता की मंगल कामना है। उनकी मंशा है आसपास और दूर–दूर तक फैला अव्यवस्था का दलदल; व्यवस्था का स्वच्छ और निर्मल जलाशय बनें।

दूसरी ओर प्रिय की खोज में इस राम दीवाने ने क्या–क्या उपक्रम नहीं किया ? कभी नैनों की कोठरी में, पुतली पलंग बिछाकर, पलकों की चिक डालकर प्रिय को रिझाना चाहा तो कभी प्रिय की प्रतीक्षा में विरह लकड़ी बनकर शनै:–शनै: सुलगना चाहा। परम प्रियतम के प्रति उत्कट अनुराग कबीर को सारे संसार से विरक्त कर देता है । प्रिय पर अपना सर्वस्व–तन, मन, धन अर्पित करके, प्रीति की एकतानता की अभिव्यक्ति करते हुए कवि कहते हैं कि आँखों का एकमात्र कार्य प्रिय का पथ निहारना है और जिव्हा का एकमात्र कार्य प्रिय नाम रटना है । प्रिय दर्शन के लिए व्याकुल उनकी आत्मा ‘सब कुछ’ करने को तैयार है –

‘फाड़ि पुटौला धज करों, कहौ तो कामणियॉ पहराऊॅ,
जिहि–जिहि भेषा हरि मिलै, सोई–सोई भेष धराऊॅ ।’

और जब उस अशरीरी, आध्यात्मिक, अनुपम प्रियतम से कबीर की भेंट होती है तो प्राप्त सुखानुभूति के लिए अभिव्यक्ति के सारे मार्ग अवरूद्ध हो जाते हैं तभी तो कवि ईश्वर को ‘अनिवर्चनीय’ और ‘गूंगे केरी शर्करा’ के स्वाद समान मानते हैं।

कविता करना कवि का लक्ष्य नहीं था, न ही कवि कर्म का विधिवत् अध्ययन उन्होंने कभी किया था तथापि काव्य की समृद्ध परंपराओं का दाय

---

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिंदी) शासकीय म. व. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महासमुन्द (छ.ग.) भारत

उन्हें अवश्य प्राप्त था तभी तो उनके काव्य का रस गगरी से छलका करती है। चूल्हे पर भूनी हुई कसार की तरह उनके काव्य की सुगंधि महका करती है। सचमुच इनमें कृत्रिमता नहीं सहजता है, शुष्कता नहीं सरसता है, भावों का खिलवाड़ नहीं भावों का उच्छ्वास है। जिसने समझा वो ही निहाल हो गया –

'जिन खोजा तिन पाइयॉ गहरे पानी पैठि।
मैं बपूरा बूड़न डरा, रहा किनारे बैठि।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल – हजारी प्रसाद द्विवेदी।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र।
3. प्रमुख प्राचीन कवि – डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना।
4. कबीर साहित्य की परख – परशुराम चतुर्वेदी।

****

स्त्री मुक्ति की आकांक्षा

डॉ. मीनाक्षी पुरोहित *

प्रस्तावना – मुक्ति कौन नहीं चाहता? स्त्री हो या पुरूष मनुष्य स्वभाव से ही मुक्ति का आकांक्षी रहा है। व्यक्ति स्वातंत्र्य सांस्कृतिक जीवन की पहली शर्त है। परिस्थितियों के परिवर्तनशील होने के कारण मुक्ति की अवधारणा भी युगानुकूल नवीन अर्थ व स्वरूप ग्रहण करती हुई विकासमान रही है।

स्त्री मुक्ति आन्दोलन की शुरूआत सन् 1920 में समान अधिकार के मुद्दे को लेकर हुई, जो बाद में नौकरी के क्षेत्र में,घरेलू कार्यकलापों में, कानूनी संबंधो में और सांस्कृतिक प्रथाओं के साथ साथ मूलभूत लैंगिक समानताओं के एक आमूल परिवर्तनवादी आन्दोलन के रूप में उभरकर आया।

आन्दोलन का दूसरा वर्ष 1960 के तीखे तेवर के साथ उभरकर आया ,उस समय स्त्री-मुक्ति समस्या को आर्थिक राजनीतिक,मनोवैज्ञानिक तथा संस्कृति के स्तर पर उठाया गया एक कदम था।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में 19वीं शताब्दी में स्त्री आन्दोलन शुरू हो चुका था। इस आन्दोलन ने कानूनी सुधारों द्धारा स्त्रियों की स्थिति में भारी परिवर्तन ला दिया। 20वीं सदी में हुए स्त्री मुक्ति आंदोलन का प्रभाव हिन्दी साहित्य और समाज पर भी पढ़ने लगा। लेखक तथा विशेषतौर पर लेखिकाओं का ध्यान इस तरफ गया।

वर्तमान समय में स्त्री-मुक्ति सारी दुनियाँ में रह रही स्त्री का नारा है। आज की स्त्री पराधीनता से स्वतंत्रता को प्राप्त करना चाहती है, अपने सारे बन्धनों से मुक्त होने की आकांक्षी है। स्त्री मुक्ति का अर्थ स्त्री की पुरूष से मुक्ति नहीं बल्कि उन सड़ी गली मान्यताओं से मुक्ति है, जो समाज द्धारा स्त्री के लिए बनाई गई है।

स्त्री मुक्ति का अर्थ नारीत्व को त्यागकर पुरूष के समान बनना या पुरूष के स्थान पर स्वयं को आरूढ़ करना भी नहीं है। वह स्त्री है, स्त्री की तरह रहे अपनी पहचान बनाए वह जो चाहती है, स्वयं कर सकती है तो किसी की तरह बनना क्यों?

वास्तव में स्त्री मुक्ति का संबंध स्वतंत्रता से है। मात्र दफ्तरों दुकानों में काम करती स्त्री स्वतंत्र स्त्री नहीं हैं, क्योंकि स्वतंत्रता का अहसास आन्तरिक होता है। स्त्री मुक्ति का सवाल जब उठता है तो यह स्वत: स्पष्ट हो जाता हैं कि स्त्री पराधीन है, गुलाम है। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था का रेशा रेशा पुरूषों द्धारा पुरूषों के लिए निर्मित है। पुरूषों द्धारा स्त्री पर थोपी हुई गुलामी का ठोस रूप है, घर की चार दिवारी में स्त्री को कैद रखना। सीमोन द बोउवार ने स्त्री की स्वतंत्रता को उसकी क्षमता से जोड़कर देखा है- 'स्त्री के आचरण को स्वतंत्रता का नया और सही आयाम दिया जाए औरत अपने अनुभवातीत सर्वोपरिता की और संक्रमिक हो जाने की क्षमता रखती है,वह अपनी क्षमता का उपयोग करे।'[1]

वर्तमान समय में बड़े पैमाने पर स्त्रियाँ घर की चार दीवारी से बाहर निकली है। स्त्री मुक्ति संघर्ष में भी स्त्री ने काफी सफलताएँ अर्जित की है। हमारे देश में भी बहुत से कानून बने है,सुधार हुए है, जिन्होंने स्त्री मुक्ति संघर्ष को नई गति प्रदान की है। भारतीय संविधान में भी स्त्री को पुरूष के समकक्ष स्वतंत्रता प्राप्त है। यहाँ स्त्री स्वतंत्रता का मूल अर्थ स्त्री की सहभागिता का है, जहाँ स्त्री-पुरूष केवल पति पत्नी न होकर एक दुसरे के मित्र भी हो, एक दुसरे की इच्छाओं को मान्यता देते हो। स्त्री परिवार में रहकर अपने स्वाभिमान को बनाए रखने की कोशिश में लगी रहती है, यही उसकी स्वतंत्र चेतना तथा पहचान को पा लेने का घोतक है।

चूल्हे को स्त्री बंधन की मजबूत बेड़ी समझा जाता रहा है, स्त्रियाँ इस बंधन से मुक्त होकर मानो शोषण से मुक्ति का अहसास करती है। आर्थिक स्वतंत्रता के अभाव में स्त्री की स्वतंत्रता सम्भव नहीं है। भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् मध्यम एवं उच्च वर्ग की स्त्रियों ने जीविकोपार्जन के लिए ऐसे व्यवसायों में प्रवेश किया जिन पर अब तक पुरूषों का एकाधिकार माना जाता था। इस कारण स्त्रियों की सामाजिक प्रतिष्ठा और दृष्टिकोण में परिवर्तन आया। मीडिया क्रान्ति के कारण आए इन परिवर्तनों ने स्त्रियों की दशा-दिशा सुधार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अब स्त्रियाँ घर के साथ साथ घर के बाहर भी महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभा रही है। आज वे घर बाजार,बैंक,विद्यालय,महाविद्यालय, विश्वविद्यालय से होते हुए सेना, पुलिस, हवाई जहाज यहाँ तक की अंतरिक्ष तक अपनी पहुँच बनाने में कामयाब रही है।

आज स्त्रियों की स्थिति में गुणात्मक सुधार हुआ है, इस सुधार के चलते स्त्रियों की आर्थिक दशा-दिशा पहले से ज्यादा मजबूत हुई है।

स्त्री की स्वतंत्रता उसके निजी जीवन को लेकर है, किन्तु उसकी यह निजता समाज के लिए अराजकता निर्माण न कर दे, इस प्रकार के भय को भी प्रकट किया जा रहा है-

अनिता गोपेश लिखती है- 'स्त्री स्वातंत्र्य के विरोध में खड़े लोगों का भय रहा है, कि स्त्री मुक्ति का अर्थ होगा विवाह,परिवार और नैतिकता के स्वरूप में तोड़-फोड़।'[2]

परन्तु यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है, कि स्त्री को मुक्त होने के लिए परिवार छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। परिवार में रहकर भी वह मुक्त हो सकती है।

बीसवीं सदी के मुक्ति संघर्ष में स्त्री का मुक्ति संघर्ष अधिक मूलगामी बाहरी और सार्वभौमिक रहा है। यह जितना अधिक बाहरी स्तर पर संघटित हुआ है, उतना ही अधिक आन्तरिक स्तर पर भी हुआ है।

स्त्री के लिए स्वतंत्रता की इच्छा व्यक्त करना पहले उसके अधिकार में नहीं था। परिवार में हो रहे अत्याचार तथा दमन को चुपचाप सहन कर लेना स्त्री अपनी नियति मान लेती थी किन्तु आज वह अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए मुक्ति चाहती है।

---

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अरिहन्त कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल एज्यूकेशन, रतलाम (म.प्र.) भारत

राजी सेठ लिखती है– 'मुक्ति का मुद्दा अपने आप में बड़ा पेंचीदा है। मुक्ति चाहिए तो पर किससे? स्थिति से? पुरूष से? परम्परा से? रूढ़ियों से? यह सच है, कि मुक्ति की नाभिक सक्रियता अपने भीतर अपने बलबूते अपने आत्मबोध को विस्तार की नब्ज पकड़ना है। अपने आत्मसपन्न होने को संभव बनता है।'[3]

कहना सही लगता है, कि स्त्री आज समस्त मान्यताओं तथा रूढिवादी परम्पराओं से मुक्ति की माँग करती है, पर सही मुक्ति उसके अपने अंदर निहित है, उसे पहले अपनी विचार पद्धति से मुक्त होना होगा। एक स्वतंत्र सोच विकसित करना होगा। परिवार में रहकर ही सामाजिक व्यवस्था में आमूल बदलाव करना, पुरूष की सोच में परिवर्तन करना तथा स्त्री का अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए एक स्वतंत्र सोच एवं चिंतन को विकसित करना ही स्त्री की मुक्ति है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सीमोन द बोउवार, द सेकड सेक्स पृ.42
2. शोभा निंबालकर, हिन्दी कहानी और नारी विमर्श, पृ.113
3. वही पृष्ठ,114

****

काव्यलक्षण की भिन्नता में 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' की समीक्षा

प्रो. के.आर. सूर्यवंशी *

शोध सारांश – 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' । इसमें काव्य का लक्षण नहीं अपितु काव्य की प्रशस्ति है । जब कभी हम पढ़ते हैं– 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' तो ऐसा ही अनुभव करते हैं मानो हम किसी विशिष्ट काव्य–कृति की अनुभूतियों के आनंद का प्रकाशन कर रहे हों । जैसे किसी सुंदर दृष्य के देखने अथवा मधुर ध्वनि के सुनने से 'ओह' अथवा 'अहोय' का विस्मयाभिव्यंजक शब्द निकल पड़ता है, वैसे ही रामायण और रघुवंश, महाभारत और किरातार्जुनीय आदि सुंदर और सुमधुर कृतियों के अनुभव से 'वाक्यं रसात्मक काव्यम्' का 'अहोयकार 'हो उठता है । इसमें संदेह नहीं कि जिसे वस्तुत: 'काव्य' अथवा 'कविता' कहते हैं, उसकी आनंदात्मक अनुभूति के देखते 'वाक्यं रसात्मक काव्यम्' की परिभाषा उपनिषद् वाक्य सी लगती है । इसमें काव्य की रहस्यमयी भावनाएं छिपी हैं, कवियों की कला के रहस्य का संकेत छिपा है, सहृदयों की सहृदयता की कसौटी छिपी हैं और अंतमें विश्वनाथ कविराज की वह रसमयी काव्य–संवेदना छिपी हैं जो बताना तो चाहती है कि 'काव्य क्या है?' किंतु यह न बताकर कविता पर 'कविता' करने लगती है। यदि हम विश्वनाथ कविराज के काव्य लक्षण को 'काव्य' विषय का 'ध्वनि' काव्य कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं ।

अत: जो रमणीय अर्थ के प्रतिपादक शब्दों का उच्चारण करता है, वह कवि कहा जाता है, यह सिद्ध होता है । 'कवेर्भाव: कर्म वा काव्यम्' ऐसी व्युत्पत्ति कर कवि शब्द से 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्य: कर्म च' इस सूत्र से व्यञ् प्रत्यय होकर काव्यशब्द निष्पन्न होता है, अर्थात् कवि के भाव या कर्म को काव्य कहते हैं । यह हुआ व्युत्पत्तिलभ्य काव्य शब्द का अर्थ।

साहित्यदर्पण में विश्वनाथ कविराज लिखते हैं–

**'चतुर्वर्गफलप्राप्ति: सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव'**

अर्थात् अल्पबुद्धि वालों की भी काव्य से ही सुखपूर्वक चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) फल की प्राप्ति होती है ।

इसी प्रकार बहुत से विद्धानों ने लक्षण करने के अवसर में काव्य को निरतिशय आनंद, यश और अर्थ आदि की प्राप्ति का कारण बतलाया है ।

शब्द कुंजी – रसात्मकं, आनंदात्मकं, रसमयी, महाकाव्यप्रबंध, काव्यस्वरूप, निरूपण, कवेर्भाव:, चतुर्वग ।

प्रस्तावना – 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' । इसमें काव्य का लक्षण नहीं अपितु काव्य की प्रशस्ति है । जब कभी हम पढ़ते हैं– 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' तो ऐसा ही अनुभव करते हैं, मानो हम किसी विशिष्ट काव्य–कृति की अनुभूतियों के आनंद का प्रकाशन कर रहे हों । जैसे किसी सुंदर दृश्य के देखने अथवा मधुर ध्वनि के सुनने से 'ओह' अथवा 'अहोय' का विस्मयाभिव्यंजक शब्द निकल पड़ता है, वैसे ही रामायण और रघुवंश, महाभारत और किरातार्जुनीय आदि सुंदर और सुमधुर कृतियों के अनुभव से 'वाक्यं रसात्मक काव्यम्' का 'अहोयकार 'हो उठता है । इसमें संदेह नहीं कि जिसे वस्तुत: 'काव्य' अथवा 'कविता' कहते हैं, उसकी आनंदात्मक अनुभूति के देखते 'वाक्यं रसात्मक काव्यम्' की परिभाषा उपनिषद् वाक्य सी लगती है । इसमें काव्य की रहस्यमयी भावनाएं छिपी हैं, कवियों की कला के रहस्य का संकेत छिपा है, सहृदयों की सहृदयता की कसौटी छिपी हैं और अंत में विश्वनाथ कविराज की वह रसमयी काव्य–संवेदना छिपी हैं जो बताना तो चाहती है कि 'काव्य क्या है?' किंतु यह न बताकर कविता पर 'कविता' करने लगती है । यदि हम विश्वनाथ कविराज के काव्य लक्षण को 'काव्य' विषय का 'ध्वनि' काव्य कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं ।

रस की इन विचारधाओं में जिसका हृदय डूबता–उतराता हो, उसके लिए वाक्यं रसात्मकं काव्यम् के अतिरिक्त और काव्यलक्षण क्यों कर अभिप्रेत हो ? इस काव्यलक्षण में वही काव्य विषयक रहस्य निर्मित्र अथवा अभिमित्र पड़ा है, जिसे रसविषयक विचार–विमर्श में देखा जा सकता है ।

विश्वनाथ कविराज की काव्य परिभाषा के महत्व के तीसरे कारण के रूप में जो बात दिखायी देती है, वह यह है कि इसी परिभाषा के द्वारा रसात्मक वाक्य और रसात्मक महावाक्य अथवा महाकाव्य की रसात्मक एकवाक्यता का सिद्धांत सबसे पहले प्रवर्तित हुआ । विश्वनाथ कविराज के पहले के सभी आलंकारि महाकाव्यप्रबंध की दृष्टि से काव्य लक्षण न कर काव्यवाक्य की दृष्टि से ही काव्यलक्षण किया करते थे । वैसे तददोषौ शब्दार्थौं सगुणावनलंकृती पुन:क्वापि का काव्य लक्षण भी महाकाव्य प्रबंध की दृष्टि से काव्यलक्षण माना जा सकता है क्योंकि अदोष, सगुण और औचित्य के साथ अलंकृत शब्दार्थयुगल समस्त महाकाव्य प्रबंधरूप शब्दार्थयुगल सिद्ध हो सकता है किंतु महाकाव्य प्रबंध को केवल अदोष, सगुण और उचित रूप से अलंकृत शब्दार्थसमुच्चय कहना महाकाव्य प्रबंधविषयक अनभिज्ञता के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ? **वाक्यं रसात्मकं काव्यम्** के काव्यलक्षण से ही विश्वनाथ कविराज की वह समीक्षादृष्टि परिष्कृत हुई, जिसे हम उनकी निम्न महाकाव्य प्रबंध भावना में स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित देख सकते हैं–

ननु तर्हि प्रबंधांतर्वर्तिनां केशान्जिलीरसानां पद्यानां काव्यत्वं न स्यादिति चेन्न ।

रसवत्पद्यांतर्गतनीरसपदानामिव पद्यरसेनैव तेषां रसवत्तांगकाररात् ।

(साहित्यदर्पण : प्रथम परिच्छेद)

ऐसा लगता है कि जैसे अन्य आलंकारिकों ने मुक्तक की दृष्टि से काव्य की परिभाषा की, और विश्वनाथ कविराज ही ऐसे सर्वप्रथम एक आलंकारिक हैं

---

* विभागाध्यक्ष (संस्कृत)शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

जिनकी दृष्टि महाकाव्यप्रबंध के आधार पर काव्यस्वरूप के निरूपण में प्रवृत्त हुई।

अत: जो रमणीय अर्थ के प्रतिपादक शब्दों का उच्चारण करता है, वह कवि कहा जाता है, यह सिद्ध होता है। 'कवेर्भाव: कर्म वा काव्यम्' ऐसी व्युत्पत्ति कर कवि शब्द से 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्य: कर्म च' इस सूत्र से व्यञ् प्रत्यय होकर काव्यशब्द निष्पन्न होता है, अर्थात् कवि के भाव या कर्म को काव्य कहते हैं। यह हुआ व्युत्पत्तिलभ्य काव्य शब्द का अर्थ।

काव्य के लक्षण के विषय में विद्वानों का बहुत मतभेद देखा जाता है।

(1) व्यासमुनि ने अग्निपुराण में काव्य का लक्षण किया है –

'काव्यं स्फुटदलंकारं गुणवद्दोषवर्जितम्' (337 अ.1)

अर्थात् स्फुट अलंकार और गुण से युक्त दोषरहित अभीष्ट अर्थ से युक्त पदावलो को काव्य कहते हैं।

(2) काव्याऽलङ्कारकार भामह के मत में –

'शब्दाऽर्थौ सहितौ काव्यम्'

अर्थात् सम्मिलित शब्द और अर्थ काव्य है।

(3) काव्यादर्शकर्ता दण्डी का मत –

'शरीरं तावदिष्टाऽर्थव्यवच्छिन्ना पदावलो। काव्यम्'

पूर्वोक्त अग्निपुराण के लक्षण के समान है।

(4) काव्याऽलङ्कार सूत्र के रचयिता वामन के मत में –

'काव्यं ग्राह्यमलंकारात्' (1-1-1)

इस सूत्र के अनुसार गुण और अलङ्कार से संस्कृत शब्द और अर्थ ही काव्य है।

(5) काव्याऽलङ्कार के उद्भट लेखक रूद्रट के मत में –

'शब्दाऽर्थौ काव्यम्'

यह भामह के लक्षण के ही समान है।

(6) ध्वनिकार आनंदवर्द्धन के मत में –

'काव्यस्यात्मा ध्वनि:' (1-1)

अर्थात् काव्य की आत्मा ध्वनि है। वे ही अन्यत्र काव्य के सामांय लक्षण के रूप में लिखते हैं।

'सहृदयहृदयाह्लादिशब्दाऽर्थमयत्मेव काव्यलक्षणम्'

अर्थात् सहृदय के हृदय को आह्लादित करने वाले शब्द और अर्थ ही काव्यस्वरूप हैं।

(7) वक्रोक्तिजीवितकार कुंतक के मत में –

शब्दाऽर्थौ सहितौ वक्रकविव्यापारशालिनि।
बंधे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लादकारिणि॥ (1-7)

अर्थात् कवि के वक्र व्यापार से शोभित, काव्य के जानने वालों को आह्लाद करने वाले वंध (गुम्फ) में व्यवस्थित सम्मिलित शब्द और अर्थ काव्य है।

(8) व्यक्तिविवेककार राजानक महिमभट्ट के मत में –

'विभावादिसंयोजनात्मा रसाऽभिव्यक्त्यव्यभिचारी कविव्यापार: काव्यम्'

अर्थात् विभाव आदि के संयोजनस्वरूप, रस की अभिव्यक्ति में अव्यभिचारी कविव्यापार काव्य है।

(9) सरस्वतीकण्ठाभरण में भोजदेव के मत में –

निदोषं गुणवत्काव्यमलंकारैरलङ्कृतम्।
रसाऽविंतं कवि: कुर्वंकीर्तिं प्रीर्तिं च विदंति॥

अर्थात् दोषरहित, गुणसहित, अलंकारों से अलंकृत और रस से युक्त काव्य को बनाने वाला कवि कीर्ति और प्रीति को प्राप्त करता है।

श्रृंगारप्रकाश में वे ही **'शब्दाऽर्थौ सहितौ काव्यम्'** ऐसा लक्षण देते हैं।

(10) औचित्यविचारचर्चाकार क्षेमेंद्र के मत में –

'औचित्यं काव्यजीवितम्'

इस उक्ति के अनुसार औचित्य ही काव्य का जीवन है।

वे ही अपने कविकण्ठाभरण में लिखते हैं –

'काव्यं विशिष्टशब्दाऽर्थसाहित्यसदलङ्कृति'

अर्थात् उत्तम अलंकार से युक्त विशिष्ट शब्द और अर्थ 'काव्य' है।

(11) काव्यप्रकाशकार मम्मट भट्ट के मत में –

'तददोषौ शब्दाऽर्थौ सगुणावनलङ्कृती पुन: काऽपिय'

अर्थात् दोषरहित, गुणसहित और अलंकार से अलङ्कृत शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं, हां, वह शब्दाऽर्थयुगल कहीं स्फुट अलंकार से रहित हो तो भी कुछ हर्ज नहीं।

(12) प्रतापरुद्रीयकार विद्यानाथ के मत में –

गुणाऽलंकारसहितौ शब्दाऽर्थौ दोषवर्जितौ।
.... काव्यं काव्यविदो विदु:॥

अर्थात् गुण और अलंकार से सहित, दोष से वर्जित, शब्द और अर्थ को काव्य के जानकार काव्य जानते है।

(13) काव्याऽनुशासनकार वाग्भट के मत में –

शब्दाऽर्थौ निर्दोषौ सगुणौ प्राय: साऽलंकारों काव्यम्॥

अर्थात् दोषरहित, गुणसहित और प्राय: (अकसर) अलंकार से अलङ्कृत शब्द और अर्थ काव्य माना गया है।

(14) कविकुलशेखर राजशेखर अपनी काव्यमीमांसा में लिखते हैं –

'गुणवदलङ्कृतं वाक्यमेव काव्यम्'

अर्थात् गुणविशिष्ट और अलंकार से अलङ्कृत वाक्य (पदसमूह) ही काव्य है।

(15) वाग्भटाऽलंकार कारक वाग्भट के मत में –

सधुशब्दाऽर्थसंदर्भ गुणाऽलंकारभूषितम्।
स्फुटरीतिसोपेतं काव्यं कुर्वीत कीर्तये॥ (1-2)

अर्थात् गुण और अलंकार से भूषित, स्फुट रीति और रस से युक्त साधु शब्दाऽर्यगुम्फको काव्य कहते हैं, कवि अपनी कीर्ति के लिए उसकी रचना करे।

(16) काव्याऽनुशासन के कर्ता हेमचंद्र के मत में –

'अदोषौ सगुणौ साऽलंकारौ च शब्दार्थौ काव्यम्'

अर्थात् दोष से रहित गुण और अलंकार से सहित शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं।

(17) चन्द्रालोक के निर्माता जयदेव के मत में –

निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुणभूषणा।
साऽलंकाररसाऽनेकवृत्तिार्वाक् काव्यनामभाक्॥(1-7)

अर्थात् श्रुतिकटु आदि दोष से रहित, अक्षरसंहति आदि लक्षण से सहित, पांचाली आदि रीति से युक्त, श्लेष, प्रसाद आदि गुण से भूषित, अनुप्रास और उपमा आदि अलंकार से सहित एवं श्रृंगार आदि रस तथा मधुरा आदि और उसी तरह अभिधा आदि वृत्तियों से युक्त शब्द को काव्य कहते हैं।

(18) शौद्धोदनिके मत में –

'काव्यं रसादिमद्वाक्यं श्रुतं सुखविशेषकृत्'

अर्थात् रस आदि से विशिष्ट, सुखविशेष उत्पन्न करने वाला वाक्य काव्य सुना गया है।

(19) प्रकृत आलंकारिक विश्वनाथ कविराज के मत में भी–

'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'

अर्थात् रस रूप आत्मा (जीवनाधायक) वाला वाक्य काव्य है।

(20) अलंकारशेखर के कर्ता केशव मिश्र के मत में –

'रसाऽलकांरयुक्तं सुखविशेषसाधनं काव्यम्'

अर्थात् रस और अलंकार से युक्त सुखविशेष (अनिर्वचनीय आनंद) का साधन कावय है।

(21) रसगङ्गाधर में पण्डितराज जगन्नाथ के शब्दों में –

'रमणीयाऽर्थप्रतिपाक: शब्द: काव्यम्'

अर्थात् रमणीय अर्थ का प्रतिपादक शब्द काव्य है।

याद रखना चाहिए पण्डिराज शब्द को काव्य मानते हैं, मम्मट भट्ट शब्द और अर्थ दोनों को काव्य मानते हैं।

म.म. गङ्गाधर शास्त्री ने शब्द मात्र काव्य होता तो शब्द भाव में विद्यमान दोष, गुण, अलंकार और ध्वनि का निरूपण होता अर्थात् दोष गुणादिकों का निरूपण नहीं होता है। अत: काव्यत्व उभनिष्ठ है, ऐसा लिखकर मम्मट भट्ट के मत का समर्थन किया है। म.म. नागेशभट्ट भी काव्य पठितं, श्रुतं काव्यं, बुद्धकाव्यम् इन प्रयोगों शब्द और अर्थ दोनों में काव्य पद का व्यवहार देखने से काव्य पद का प्रवृत्ति निर्मित्त व्यासज्यवृत्ति है ऐसा लिखकर प्राचीन आचार्य के मत का समर्थन किया है।

(22) एकावली में विद्याधर कहते हैं –

'शब्दाऽर्थवपुस्तावत् काव्यम्'

अर्थात् काव्य, शब्द और अर्थ रूप शरीरवाला है।

(23) प्रतापरुद्रीय में विद्यानाथ ने लिखा है –

'गुणाऽलंकारसहितौ शब्दाऽर्थौ दोषवर्जितौ ।'

गद्यपद्योभयमयं काव्यं काव्यविदो बिदु: ॥

अर्थात् गुण और अलंकार से सहि, दोष से वर्जित शब्द और अर्थ, गद्य और पद्य दोनों को काव्य कहते हैं।

(24)साहित्यसार में अच्युतराज कहते हैं –

'तत्र निर्दोषशब्दाऽर्थगुणवत्तवे सति स्फुटम् ।
गद्यादिबंधरूपत्वं काव्यसामान्यलक्षणम्॥'

अर्थात् दोषरहित शब्द और अर्थ गुण से युक्त होकर गद्य और पद्य से निबद्ध जो सदंर्भ है वह काव्य का सामान्य लक्षण है।

(25) साहित्यरत्नाकर में धर्मसूरि लिखते हैं –

'सगुणाऽलङ्कृती काव्यं पदाऽर्थो दोषवर्जितौ ।'

अर्थात् गुण और अलंकार से सहित, दोष से रहित शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं।

(26) अलंकारचंद्रिका में न्यायवागीश के मत में –

गुणाऽलंङ्कारसंयुक्तो शब्दाऽर्थौ रसभावगौ ।
नित्यदोषविनिर्मुक्तौ काव्यमित्यभिधीयते ॥

अर्थात् गुण और अलंकार से संयुक्त, रस और भाव के प्रतिपादक और नित्य दोष से रहित शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं।

(27) काव्यप्रकाश की प्रदीपिका टीका के रचयिता चण्डीदास आस्वादजीवातु: पदसंदर्भ: काव्यम् रस का जीवनौषध पदसंदर्भ काव्य है, ऐसा उल्लेख करते हैं।

इस प्रकार यहां 27 आचार्यों के मतानुसार काव्य का लक्षण लिखा गया है, इनमें मम्मटभट्ट, विश्वनाथ कविराज और पण्डिराज जगन्नाथ के मत अधिक प्रसिद्ध और विद्वज्जनों से समादृत है। अब काव्य के प्रयोजन के विषय में कुछ लिखते हैं।

काव्यप्रकाश में मम्मटभट्ट का वक्तव्य है –

काव्यं यशसेऽर्थकृते, व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये ।
सद्य: परनिर्वृतये कांतासम्मिततयोपदेशयुे ॥

अर्थात् काव्य यश, अर्थ (धन) और व्यवहार का परिज्ञान अकल्याणके परिहार के और तत्क्षण (सुनने व देखने के अंतर) ही कांता के समान उपदेश देने के लिए होता है।

वाक्य के तीन भेद होते हैं– प्रभुसम्मित, सुहृत्सम्मित और कांतासम्मित इनमें पहला वेदवाक्य 'अहरह: संध्यामुपासीत' प्रतिदिन संध्या की उपासना करे ऐसा आदेशवाला वाक्य प्रभुसम्मित है। लोक में भी प्रभु भृत्य को इष्ट और अनिष्ट समस्त कार्य में प्रवृत्ता करता है, अत: प्रभुसम्मित वाक्य में इष्ट प्राप्ति का उपाय और मनोहरता नहीं है। दूसरा वाक्य सुहृत्सम्मित है, जैसे मित्र अपने मित्र को इष्ट प्राप्ति में प्रवर्तक वाक्य कहता है, इस कोटि में इतिहास, पुराण और धर्मशास्त्र के वाक्य आते हैं, परंतु इसमें भी मनोहरता नहीं है। तीसरा वाक्य कांतासम्मित है। जैसे कांता (स्त्री) अपने पति को मनोहर पदावली हितकार्य में उपदेश देकर प्रवृत्ता करती है, वह वाक्य कांतासम्मित है, काव्य भी कांतासम्मित वाक्य है, वह मनोहरता हित का आधान करने वाला है।

साहित्यदर्पण में विश्वनाथ कविराज लिखते हैं–

'चतुर्वर्गफलप्राप्ति: सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव'

अर्थात् अल्पबुद्धि वालों की भी काव्य से ही सुखपूर्वक चतुर्वग (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) फल की प्राप्ति होती है।

इसी प्रकार बहुत से विद्वानों ने लक्षण करने के अवसर में काव्य को निरतिशय आनंद, यश और अर्थ आदि की प्राप्ति का कारण बतलाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्निपुराण – गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत् 2059
2. काव्यप्रकाश मम्मट –व्या.–आचार्य विश्वेश्वर, ज्ञानमंडल लिमि. वाराणसी, वि.सं. 2016
3. काव्यादर्श (दण्डी), व्या.–जमुना पाठक, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2004
4. काव्यालङ्कार (भामह), व्या. रामानंद शर्मा, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 2002
5. रसगङ्गाधर (पण्डितराज जगन्नाथ), व्या.– बदरीनाथ झा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2001
6. साहित्यदर्पण (विश्वनाथ), व्या.–डॉ.सत्यव्रत सिंह, चौखम्बा, विद्याभवन, वाराणसी, 1963
7. साहित्यदर्पण कोश– रमणकुमार शर्मा, प्रतिभा प्रकाशन, नई दिल्ली

****

वैदिक वाङ्मय में पर्यावरण संरक्षंण

डॉ. बाल कृष्ण प्रजापति *

प्रस्तावना – पर्यावरण का सरल भाष्य है– 'वह जो परिवेषित करता है।' पर्यावरण प्रकृति का वह भाग है जो किसी जीव या जीव समुदाय को परिवृत्त करता है। पर्यावरण शब्द अपने आप में व्यापक है। पर्यावरण की निष्पत्ति 'वृ' धातु से परि तथा 'आ' उपसर्ग पूर्वक 'ल्युट' प्रत्यय करने पर होता है जिसका आशय है चारों ओर फेंकना, प्रसार करना, फैला देना, घेरना आदि। 1 आवरण का आशय है ढकना, छिपना, मूंदना, घेरना, बंद करना, चहार दिवारी आदि।[2]

पर्यावरण का शब्दकोषीय आषय है– आस–पास या पड़ोस (Surrounding) पर्यावरण के जिसकी व्युत्पत्ति Ecology शब्द से हुई है।वास्तव में Ecology शब्द ग्रीक शब्द Oikos से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है–'घर'। logy अर्थात logos का अर्थ है–'अध्ययन'। इस प्रकार Ecolog का अर्थ है– किसी जीव के प्राकृतिक घर अर्थात् निवास का इस दृष्टि से अध्ययन करना कि किस प्रकार कोई जीव अपने चारों और फैले वातावरण के तत्वों तथा अन्य जीवों एवं अजैव तत्वों से है। मानव की समस्त क्रियाकलाप व भौतिक वस्तुऐं एवं सभी विचार धारायें मनोवृत्तियां आदि जिनके द्धारा अच्छादित है। उन परिस्थितियों तथा वातावरण को पर्यावरण कहते है।[3]

पर्यावरण संरक्षण – भारतवर्ष वेद भूमि है, इस भूमि के शान्त और शुद्ध वातावरण में प्राचीन ऋषियों ने मंत्रों के दर्शन किये हैं। सुन्दर वातावरण, सुन्दर परिवेश मन को स्वस्थ्य एवं शान्त रखता है। मानव जीव पर्यावरण एक समष्टि है तथा मानव इस समष्टि का एक अंग है। डॉ. एच. डेविस के अनुसार मानव का पर्यावरण से घनिष्ठ संबंध है। समस्त पर्यावरण मानव को प्रभावित करता है। पर्यावरण एवं मानव शरीर के समन्वय को स्पष्ट करते हुए तुलसीदास जी ने कहा है–

'क्षिति जल पावक गगन समीरा,
पंचतत्व मिलि बना शरीरा।'

'इमास्तते इन्द्र पृश्नयो घूतं दुहतं आशिरम्। एनामृतस्य पिप्युषो:।।'

ऋग्वेद – सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद सैकड़ों ऋषियों की ऋचाओं का आदिम बड़ा संग्रह ग्रंथ है। वेदों में कलेवर की दृष्टि से इनके मंत्रों को ऋचा कहते है। वैदिक सभ्यता का विकास सप्तसिन्धु के तटों पर फलीभूत हुआ है। स्वच्छ आकाश के नीचे और सम्पन्न वसुन्धरा पर कल कल करती नदियों के संगीत पर विहंगों का कूजन तथा वन्य पशुओं की मित्रता का आनंद उठाने वाले ऋषियों का मन सदैव ही इन विषमताओं को बनाये रखने में लगा रहता है। क्योंकि यही तो उनका पर्यावरण था, इसी पर्यावरण की स्तुति, रक्षा, वृद्धि में ऋषियों की पावन वाणी वैदिक साहित्य के रूप में मुखरित हो उठी थी। ऋग्वेद में समस्त सृष्टि का निर्माण करते हुए ऋषि शंभु बार्हस्पति कहते हैं कि –

सकृद्ध द्यौरजायत सकृदभूमिजायत।
पृषन्या दग्धं सकृत्पयस्तदन्यो नानु जायते।।

ऋग्वेद के 10वें मंडल के मंत्र के अनुसार – उस अदिति के आठ पुत्र हैं। जो विस्तृत प्रकृति से उत्पन्न हुए हैं। सात से परे सूर्य को दूर स्थापित किया गया है। ऋग्वेद में वर्णन है कि **सूर्य: आत्मा जगतस्थषुश्च।** सूर्य इस संसार की आत्मा है। यह सूर्य सभी ग्रहों का नियंत्रक भी है। वेदों में अन्त:करण व बाह्य पर्यावरण पर समूचित ध्यान दिया गया है। संपूर्ण संसार के सुखशांति की कामना की है और उसको पवित्र बनाए रखने के लिए निर्देष दिया गया है। इसलिए प्राकृतिक, सामाजिक, आदि पर्यावरण को समझने के लिए वेदों का अध्ययन करना आवश्यक है।

वेदों में प्राकृतिक वृक्ष वनस्पति संरक्षण – वैदिककाल से ही पर्यावरण पृथ्वी, जल, वृक्ष, वन्य एवं वन्यजीवों के संरक्षण के प्रति जागरूकता दृष्टव्य है। वेदों और ब्राम्हण ग्रंथों में वृक्ष वनस्पतियों का वर्णन किया गया है। अथर्ववेद में कहा गया है कि मनुष्य को जीवन शक्ति प्रदान कर उसकी रक्षा करती है। वृक्ष संसार की रक्षा करते हैं और उसे ऑक्सीजन रूपी दूध पिलाते हैं। वृक्ष मनुष्य को जीवित रखते हैं। अत: उन्हें मानव मात्र का रक्षके प्रदूषण का नाषक बताया गया है। वृक्ष, वायु मण्डल के दोषों को समाप्त करते हैं। (क) ओषधीरिति मातर:। [4] (ख) वीरूध: पारयिष्णव:। [5] (ग) वनस्पति: शमिता। [6]

मत्स्यपुराण के अनुसार **'दशपुत्रसमोद्रुम:'** अर्थात एक वृक्ष जनहित की दृष्टि से दस पुत्रों के बराबर है। इसका अभिप्राय यह है कि दस पुत्र अपने जीवन काल में जितना उपकार करते हैं, उतना उपकार एक वृक्ष करता है।

ब्राम्हण ग्रंथों में वनस्पति – ऐतरेय एवं कौषीतकि ब्राम्हण में वृक्ष, वनस्पति को प्राण कहा गया है, क्योंकि ये मानव मात्र को प्राणवायु देते हैं। **प्राणौ वै वृक्ष वनस्पति:**[7] औषधियां दोषों एवं प्रदूषण को समाप्त करती है। अत: इन्हें औषधि कहा जाता है। **ओषं धयेति तत् ओषधय: समभवन्** [8] परमात्मा का जो उग्र रूप है उससे इन वनस्पतियों की उत्पत्ति हुई इस उग्र रूप के कारण ही ये वनस्पतियां दोषों एवं प्रदूषण को नष्ट करती हैं। **यद् उग्र देव ओषधयो वनस्पतयस्तेन।**[9] वनस्पतियां संसार को आनन्द देती हैं। अत: इनका नाम **'मुद:'** है। **ओषधयो मुद:।** [10] शुक्लयजुर्वेद के अध्याय 16 में षिव को वृक्ष वनस्पति, वन, औषधि, लता गुल्म, कृषि क्षेत्र का स्वामी बताया गया है। भगवान षिव का शिवत्य यही है कि वे विष को पीते है और अमृत प्रदान करते हैं। वृक्ष वनस्पति शिव के रूप हैं। ये कार्बन–डाई–आक्साइड रूपी विष को पीते हैं और ऑक्सीजन रूपी प्राण वायु को छोड़ते हैं। यह इनका शिव रूप है।

प्रस्तुत वेद में ही औषधियों के लिए सम्मानसूचक सम्बोधन **'ओषधीरिति मातर:'** प्रयुक्त हुआ है। अथर्ववेद में वनस्पतियों को सखा कहा गया है। वैदिक ऋषियों की मान्यता है कि अग्निहोत्र कर्म से वृक्षों एवं

---

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय एस.जी.एस., पी.जी. महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

वनस्पतियों की जड़ों, शाखाओं, फलों पर श्रेष्ठ प्रभाव पड़ता है। यजुवेद का मंत्र से सुस्पष्ट है–

मूलेभ्य: स्वाहा। शाखाभ्य: स्वाहा। वनस्पतिभ्य: स्वाहा।
पुष्पेभ्य: स्वाहा। फलेभ्य: स्वाहौषधीभ्य: स्वाहा। [11]

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में वनों के सुखकारी होने की प्रार्थना की गयी है। इन गुणकारी वृक्षों को स्वार्थवश अन्धाधुन्ध काट रहा है **वेदों में** वृक्षों, वनस्पतियों को नष्ट नहीं करने के लिए निर्देश वेद हमें देते हैं–

'**पृथिवि देवयजन्य ओषध्यास्ते मूलं मां हिंसिषम्।**'

इस प्रकार वैदिक ऋषि संपूर्ण जड़ों को औषधीय गुण मानते हैं। वृक्ष विविध पक्षियों का आश्रयशील होते हैं। अत: ऋग्वेद में इन्हें नहीं काटने का उपदेश दिया गया है। अत: वैदिक साहित्य में प्रतिपादित वृक्षों, वनस्पतियों को लगाने की प्रेरणा हमें वैदिक मंत्रों से मिलती है– **वनस्पतिं वन आस्थापयध्वम्।**[12] इन वृक्षों के गुणों से सभी परिचित रहें जिससे पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण हो सके।

वेदों में औषधि को देव मानकर उनसे मानव कल्याण की एवं असाध्य रोगों को ठीक करने के लिए कामना की गयी है। अथर्ववेद की ऋचाओं में औषधि को कितना सम्मान दिया गया है। इसका चित्रण अधोलिखित है। हे औषधे! आपकी जन्मदात्री माता जीवला (प्राणयुक्त) और पिता जीवन्त (पोषण देने वाली) नाम से प्रख्यात है। जिस पुरूष हम प्रात: सायं और दिन में बताये कि वेदों में निहित औषधि रोगों को मिटाने में सामर्थ है।

पर्यावरण संरक्षण करने के लिए वेदों में पेड़–पौधों पर समुचित ध्यान देते हुये सुन्दर–सुन्दर उपमाऐं दी गयी हैं। मानव की सुख समृद्धि व स्वास्थ्य की दृष्टि से हरे भरे वृक्षों का होना आवश्यक है राष्ट्र की प्रजा के लिए पर्यावरण की सुरक्षा को ध्यान में रखकर वेदों में वृक्षों के महत्तव भी प्रतिपादित है। जैसे –

'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समान वृक्षं परिषस्व जाते।
तयोरन्य: पिप्पलं स्वद्वत्तयनष्न्नन्यो अभिचाकषीति।।'[13]

साथ रहने वाले मित्रों की तरह दो पक्षी गतिशील जीवात्मा एवं परमात्मा एक ही वृक्ष (प्रकृति अथवा शरीर) पर स्थित है। उनमें से एक जीवात्मा को स्वादिष्ट पीपल माया के फल को खाता है, तो दूसरा परमात्मा उन्हें न खाता हुआ केवल देखता रहता है।

'समाने वृक्षो पुरूषो निमग्रोऽनीशया शोचति मुह्यमान:।
जुष्टं यदा पष्यत्यन्यमीशमस्य महिमा नमिति बीत शोक:।।'

सुन्दर–सुन्दर पुष्प, फल, इमारती लकड़ी, ईधन आदि ये सभी वृक्ष से प्राप्त होती हैं। सबसे महत्तवपूर्ण शुद्ध प्राणवायु जो कि हमें हरे–भरे वृक्षों से प्राप्त होती है। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 5 जून 1972 को स्वीडन में 26 सूत्री महाधिकार पत्र मेग्नाकार्टा की घोषणा की तभी से 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाने लगा है।

वेदों में जल संरक्षण – गंगा नदी को 4 नवम्बर 2008 को राष्ट्रीय नदी के रूप में घोषित किया गया है। कोच नामक विद्वान के अनुसार प्रत्येक वस्तु जल से ही उत्पन्न हुई है और प्रत्येक वस्तु जल के द्वारा ही जीवित है। जलेव जीवनं अर्थात् जल ही जीवन है अमृत है, भेषज है, रोगनाशक है और आयुवर्धक है। जल अमृत है। राजकीय पर्यावरण संरक्षण के अन्तर्गत जल का संरक्षण एवं पवित्र, शुद्ध व प्रदूषण रहित बनाये रखने का कार्य समस्त प्रजा का है, और प्रजापालक को जल के संरक्षण करने के लिए नदियां, तलाब, झील आदि की देखभाल करना एवं संरक्षण करना अत्यावश्यक है।

पर्यावरण का प्रमुख घटक जलमण्डल है। पृथ्वी का 71 प्रतिशत भू–भाग जल से घिरा है। वर्तमान में जल को प्रदूषित होने से बचाने के लिए जल प्रदूषण निवारण अधिनियम 1974 उपकर नियम 1977, 1978 बनाये गये। जल समस्या समाधान हेतु राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास चल रहे हैं।

सं मा सृजामि – अद्भिरोषधीभि:। यजु. 12/35
आपश्च मे वीरूधश्च मे। यजु. 18/14
वातो गन्धर्व: तस्यापो अप्सरस ऊर्जो नाम। यजु. 18/14
सुमित्रिया न आप: ओषधय: सन्तु। यजु. 36/23
यजुर्वेद में कहा गया है कि जल को दूषित न करो और वनस्पतियों को हानि मत पहुंचाओ।
मा आपो द्विसी:, मा ओषधीरि शी। यजु. 6/22
अप: पिन्व, ओषधीर्जिन्व । यजु. 14/8

आजकल सबसे अधिक प्रकोप पेय जल में फ्लोराईड की अधिक मात्रा में पाया जाता है। ऋग्वेद में वर्णन है कि शुद्ध जल में अमृत एवं औषधि का निवास रहता है –

'अप्स्वन्तरममृत अप्सु भेषजम्।' ऋग्वेद 1/30/19

अथर्ववेद में कामना की गयी है कि हमारे लिए शुद्ध जल प्रवाहित हो –

'शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु।' अथर्ववेद 12/1/30

वैदिक मंत्रों में सर्वकल्याण की कामना की गयी है कि आठों प्रकार के जल सुखदायक हो – **हैमवती** – हिमालय बर्फ के रूप में, **उत्स्या:–** स्रोत के रूप में, **सनिष्यदा –** सदा बहने वाली, **वर्ष्या–** बरसने वाला, **धन्वन्या–** मरूस्थल, **अनूप्या–** जलाषय में रहने वाले, **खनिमित्रा–** भूमि खोदकर प्राप्त, **कुम्भेभि आभृता –** घड़े में भरकर रखे गये जल, आदि मानव के लिए सुखदायी हो। जल ही जगत की प्रतिष्ठत है। अत: जल संरक्षण जीवन, राष्ट्र व विश्व संरक्षण है।

उपरोक्त ऋचा में सिन्धु नदी को ही ओजपूर्ण बताया है। एक अन्य ऋचा में माता और शिशु की उपमा देकर विभिन्न नदियों और सिन्धु नदी का महत्तव बताकर राजा की उपमा दी गयी है।

अभि त्वा सिन्धों शिशुमित्र मातरो वाश्रा अर्षन्तिपयसेवधेनव:।
राजेव युध्वा नयसि त्वमित्सिचौ यदासामग्रं प्रवतामिनक्षसि।।[15]

जल हम सभी की आवश्यकता है और सर्वविदित है कि वेदों में केवल सिन्धु नदी के प्रति ही आस्था व्यक्त की गई है अपितु गगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों पर व्यापक प्रकाश डाला गया है, जो निम्न ऋचा में बतलाया गया है–

असिक्न्या मरूदवृेध वितस्तयार्जीकीये श्रृणहया सुषोमया।

वेदों में वायु संरक्षण – वायु सृष्टि का प्राणाधार है। मनुष्य पशु, पक्षी, वृक्ष आदि जड़ चेतन जीवन स्त्रोत है। यह पृथिवी जल आदि की अपेक्षा सूक्ष्म होने से अतिशक्तिशाली है। इसी के द्वारा प्रतिष्ठा है। सभी रक्षित हैं। वायु यदि षुद्ध हो तो प्राणशक्ति से ही रोग आदि दोष नष्ट हो जाते हैं। तुम अच्छे स्वास्थ्य और देवत्य के दूत हो, तुम स्वच्छ और पवित्र रहकर हमें रोग रहित जीवन प्रदान करो। पृथिवीं परित: वायो: सप्तावरणा: विद्यन्ते। मण्डलेऽस्मिन् वायो: प्राधाप्यात् वायुमण्डलमिति कथ्यते। यथा– भूमि: परिभ्रमतिस्वाक्षे तथैव पृथिव्या: आकर्षणशक्त्याऽकृष्टो भूत्वापृथिव्या सहैवपरिभ्रमति वायुमण्डलमपि। ज्योतिषशास्त्रेसप्त वायुनां स्थिति: भूमेरूपरि वर्तते। भास्कराचार्येणसप्तवायव: कथ्यन्ते – **भूवायुरावह इह प्रवहस्तदूधर्व:, स्याद्गुद्वहस्तदनु संवहसंज्ञकष्च।**

अन्यस्ततोऽपि सुवह: परिपूर्वकोऽस्माद्, बाह्य: परावह इमे पवना: प्रसिद्धा।।

सि.शि.गो. सप्तवायवः क्रमशः आवहः, प्रवहः, उद्धहः, संवहः, सुवहः, परिवहः, परावहष्च सन्ति। मनुस्मृतौ, वायुपुराणे, महाभारतेऽपि सप्तवायुनामुल्लेखः प्रप्यते।[16]

वातावरणशुद्ध तथा प्रदूषण रहित वायु से युक्त हो इसके लिए वैदिककाल में यज्ञ–याग धार्मिक कर्मकाण्ड इत्यादि से उपाय किये जाते थे। आक्सीजन की हम सभी को आवश्यकता है और वेदों में वायुदेवः कहकर सम्बोधित कर उसका महत्त्व प्रतिपादित किया है। वैदिक कालीन समाज द्धारा प्राकृतिक पर्यावरण के उपादानों को सहेज कर रखने के प्रति समाज में चेतना विद्यमान थी अन्यथा प्राकृतिक रूप में वैदिक काल इतना सम्पन्न नही हो सकता था।

वेदों में वानिकी संरक्षण – मानव संस्कृति, द्युलोक और पृथ्वी लोक के निर्माण और उसके विकास में वन और कृष का महत्वपूर्ण योगदान है–

'किं स्विद्धनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।'[17]

वैदिक संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है – **'सा प्रथमा संस्कृतिर्विष्वारा।'**[18]

वैदिक संस्कृति के आध्यात्मिक, सामाजिक आर्थिक व सौन्दर्यमूलक जीवनधारा में वनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसलिए वन सदैव पूजनीय सेवनीय रहे हैं। वन – अटवी, अरण्य, विपिन, गहन, कानन, और वन ऋषियों मुनियों को अरण्य के सुखद, सुरम्य एवं शान्त वातावरण में मंत्रों के दर्शन हुए। पर्यावरण के संरक्षण के लिए वानिकी आवष्यक है। वानिकी में वनों के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान के सभी पक्षों वनों के उपयोग, उत्पादन प्रबन्धन और संरक्षण का समावेश होता है। ऋग्वेद संहिता का अरण्यानी सूक्त 10.146 में वानिकी का सुन्दर निदर्शन है। ऋग्वेद में वन उत्पादों के उपयोग और प्रबंधन का उल्लेख मिलता है। वन उत्पाद से मानव को धन की प्राप्ति होती है। अरण्य में मानव को बिना यत्न किए हुए प्रकृतिक रूप से विपुल मात्रा में फलमूलादि भव्य अन्यों की प्राप्ति होती है। वन्य पशुओं को भी भोजन वन से प्राप्त होता है।[19] अरण्य वन्य जीवों का आश्रयस्थल होता है, अतः इसे 'मृगाणां मातरम्' कहा गया है।

वैदिक संहिताओं में सर्वप्रथम हमें वन–विनाष के संकेत प्राप्त होते हैं। यह विनाश मानव कृत तथा प्रकृतिकृत दो रूपों में दृष्टिगत होता है। मानव द्धारा फरसे से लङकी काटने का अनेक बार उल्लेख मिलता हैं। प्रकृतिकृत वनविनाष का उल्लेख बहुषः प्राप्त होता है।

'वनानि न प्रजहितान्यद्रवो दुरोषासो अभन्महि।'

वन की रक्षा के लिये 'वनप' और अरण्य की रक्षा के लिये 'दावप' की नियुक्ति के संकेत प्राप्त होते हैं।

'वनाय वनपमन्यतोऽरण्याय दावपम्।'

वेदों का निर्देश है कि वृक्षों को शुभ और महत्वपूर्ण कार्यो के लिये काटा जाना चाहिए। जिससे द्युलोक और अन्तरिक्ष लोक हिंसित न हो तथा वह सौ प्रकार से अंकुरित हो और हम भी हजारों प्रकार से लाभान्वित हों। वन के पर्यावरण को स्वच्छ व स्वस्थ्य रखने के प्रयास भी वेदों में दृष्टिगोचर होते है।

निष्कर्ष के रूप में कह सकते है कि वर्तमान में पर्यावरण संकट विकरालरूप ले चुका है एवं पारिस्थितिक क्षय हो रहा है।, ऐसी स्थिति में पर्यावरण संरक्षण के लिए हमे वन, वृक्ष, पंचतत्तवों वैदिक ऋषियों मुनियों के निर्देशों महत्त्व को समझना होगा तथा वैदिक वाङ्मय का पर्यालोचन करना होगा।

सर्वे भवन्तु सुखनिः सर्वे सन्तु निरामया। सर्वे भद्राणि पष्यन्तु, मा कष्चित् दुःख्सभाग्भावेत्।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 संस्कृत – हिंदीशब्दकोष – वामन शिवराम आप्टे
2 संस्कृत – हिंदीशब्दकोष – वामन शिवराम आप्टे पृ0–580, 162।
3 वंदना वोहरा, पर्यावरणीय समाजशास्त्र– संक्षिप्तअध्ययन, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, वर्ष–2008, पृ.12.)
4 यजु. 12/78
5 यजु. 12/27
6 यजु. 29/35
7 एतरेय 2/4 कौषीतकि 12/7
8 षत.ब्रा. 2/2/4/5
9 कौषी. ब्रा. 6/5
10 शत.ब्रा. 4.9.1.7
11 यजु. 22/28
12 ऋग्वेद 10/101/11
13 ऋग्वेद 1/164/20
14 ऋग्वेद 10/75/4
15 वेद पर्यावरण नवनीतम् पृ. 45
16 ऋग्वेदसंहिता 10.31.7
17 यजुर्वेदसंहिता 7.14
18 ऋग्वेदसंहिता 1.64.7

****

अवन्तिका की सांगीतिक परम्परा

डॉ. कमलेश राठौर *

प्रस्तावना - प्राचीनकाल -

सान्दीपनि आश्रम में संगीत साधना - उज्जैन में सान्दीपनि आश्रम भगवान कृष्ण की शिक्षास्थली क्षिप्रा नदी के किनारे अंकपात के नाम से प्रसिद्ध है। यह स्थान गंगा घाट के निकट व मंगलनाथ रोड़ पर स्थित है। सान्दीपनि मूलत: काशी के निवासी थे। इनके पिता का नाम सान्दीपन था, द्वापर में तीर्थ यात्रा एवं पर्व स्नान के प्रसंगवश आप अवन्तिका पधारे। देवयोग से वह सिंहस्थ पर्व का समय था उन दिनों दुर्देववश ग्रीष्म की अधिकता एवं अनावृष्टि के कारण अकाल पड़ा हुआ था। अनेक मुनियों, संतो और साधु-महात्माओं के समूह भी आए हुए थे, किन्तु महर्षि सान्दीपन की प्रखर तेजस्विता एवं तपोनिष्ठा से यहां का जन समुदाय उनसे इतना प्रभावित हुआ कि उसे अपनी अपेक्षाओं की पूर्ति का उनमें विश्वास जागा। इस प्रदेश के निवासियों का कष्ट पता चलने पर महर्षि ने लोक कल्याण की दृष्टि से घोर तपस्या की और भगवान महाकाल से वरदान पाया। भगवान शिव ने आदेश दिया कि 'आप यही निवास करें और विद्यादान द्वारा भावी पीढ़ी को ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देकर विश्व कल्याण के लिये अग्रसर बनायें।' इसी कारण तब महर्षि सान्दीपनि ने शिक्षार्थियों को प्रशिक्षित करने के लिये आश्रम बनया तथा उसमें दूर-दूर से आकर शिष्यों ने ज्ञान प्राप्त किया। विद्धानों का मत है कि इसी परिप्रेक्ष्य में श्रीकृष्ण भी मथुरा से चलकर अवन्तिका नगरी में शिक्षा प्राप्त करने के लिये सान्दीपनि आश्रम में आए और समस्त कलाएँ व शिक्षा-दिक्षा प्राप्त की। इसी क्रम में **श्रीकृष्ण ने संगीत** की शिक्षा प्राप्त की तथा बाँसुरी वादन में प्रवीणता हॉसिल की। इससे यह भी सिद्ध होता है कि महर्षि सान्दीपनि **संगीत** के भी ज्ञाता थे।

महर्षि सान्दीपनि के निकट रहते हुए श्रीकृष्ण, बलराम और सुदामा आदि शिष्यों ने ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद, शिक्षा कल्प व्याकरण, छन्द और ज्योतिष-वेदांग, मंत्र और दैवत-ज्ञान, धर्मशास्त्र, न्यायशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, संधि-विग्रह, यान, आसन, द्वेध तथा आश्रम आदि छ: भेद-संहिता, हस्तशिक्षा, अश्व शिक्षा एवं समस्त कलाओं के साथ लेखा गणित, गांधर्ववेद और वैद्यकशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की थी। शास्त्र विद्या, अस्त्रविद्या तथा रहस्य सहित धनुर्वेद विद्या का ज्ञान भी श्रीकृष्ण ने महर्षि सान्दीपनि से ही प्राप्त कर लिया था।

इस प्रकार अध्ययन समाप्त होने पर श्रीकृष्ण ने सान्दीपनि मुनि से प्रार्थना की कि आपकी जो इच्छा हो गुरूदक्षिणा में मांग लें। सान्दीपनि मुनि ने उनकी अद्भुत महिमा और आलौकिक बुद्धि का अनुभव कर लिया था। इसलिये उन्होंने अपनी पत्नि से सलाह करके यह गुरू दक्षिणा मांगी की प्रभास क्षेत्र में हमारा बालक समुद्र में डुबकर मर गया था, उसे तुम ला दो। श्रीकृष्ण का पराक्रम अनन्त था, वे महारथी थे। उन्होनें 'बहुत अच्छा' कहकर गुरूजी की आज्ञा स्वीकार की और रथ पर सवार होकर प्रभाव क्षेत्र में गए। समुद्र के अन्दर जाकर शंखासुर (पांचजन्य) नामी असुर को मारा और पांचजन्य शंख को लेकर यमराज के यहां गए और गुरू पुत्र को लाकर सान्दीपनिजी को गुरू दक्षिणा में दिया। तद्वन्तर गुरूजी से आज्ञा और आर्शीवाद लेकर वायु के समान वेग और मेघ के समान रथ पर सवार होकर श्रीकृष्ण मथुरा लौट गए।

मध्यकाल

उद्यन वासवदत्ता - महाकवि कालिदास ने अपने नाटक 'मालविकाग्नि मित्रम' में भास का बड़े आदर से स्मरण किया है। इससे यह स्पष्ट है कि भास कालिदास से प्राचीन थे।

श्री टी. गणपाते शास्त्री ने भास के 13 नाटक खोज निकाले हैं तथा उन्हें तिरूवन्तपुरीय संस्कृत ग्रन्थ माला में प्रकाशित कराया है। उन नाटकों में प्रतिज्ञा योगन्धरायण व स्वप्नवासव दत्तम भी है इसी परिप्रेक्ष्य में हम यहां उन नाटकों के पात्र उदयन एवं वासवदत्ता का चरित्र चित्रण कर रहे हैं।

वत्सराज उदयन अपने समय का बड़ा गौरवशाली राजा था। राजर्षि भरत के वंश में उनका जन्म हुआ था। उदयन गान विद्या का जानने वाला था। सप्ततंत्री वीणा का ऐसा अद्‌भुत बजाने वाला दूसरा न था। उसकी घोषवती वीणा को सुनकर मदोन्मत्त हाथी भी वर्ष में हो जाते थे। उदयन अपनी सप्ततंत्री घोषवती वीणा बजाकर हाथियों की उद्धण्डता दूर कर उन्हें आसानी से पकड़ लेते थे।

इतिहास प्रमाणित करता है कि वत्सराज उदयन ने बन्दी होते हुए भी वीणा वादन की शिक्षा देने के लिये वासवदत्ता को शिष्या के रूप में ग्रहण किया। दोनों के बीच परस्पर आकर्षण बड़ा, इस प्रकार कुछ समय **उज्जयिनी** में बिताने पर एक दिन उदयन, वासवदत्ता का हरण कर वत्सदेश चले गए और वहां उससे विवाह कर लिया। विवाह के पश्चात से उदयन ने वासवदत्ता को वीणा वादन की शिक्षा दी।

गुणशर्मा-गुणशर्मा संगीत-नाट्यकला में दक्ष तथा चतुर ब्राहम्ण थे। इनके पिता का नाम आदित्य सेन बतलाया गया है। सुलोचना के गर्भ से गुणशर्मा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जो आदित्य सेन के मामा के घर उज्जैन में ही पाला गया। गुणशर्मा नृत्यकला में इतने दक्ष थे कि उनकी कला, हावभाव, कटाक्ष की उत्तमता देखकर दर्शक आनन्द विभोर हो जाते थे। जब वीणा बजाते थे तब उनकी संगीत की स्वर लहरी अत्यन्त मनोहर लगती थी। उनका गाना सुनकर श्रोता चित्र लिखित से रह जाते थे।

महाश्वेता-उज्जयिनी में तारापीड नाम के एक राजा थे जिनके पुत्र का नाम था चन्द्रापीड। राजा के मंत्री थे शुकनास जिनके पुत्र का नाम वैशम्पायन था। चन्द्रापीड एक बार अच्छोद नामक सरोवर के किनारें पहुंचे तो वहां एक महिला को तपस्या में लीन देखा। पुछने पर उसने अपना नाम महाश्वेता बताया और कहा कि वह पुण्डरीक नामक एक मुनि पुत्र से प्रेम करती थी किन्तु उसकी अकाल मृत्यु हो गई। देवयोग से एक दिव्य पुरूष ने उसको

---

* अतिथि विद्वान (संगीत) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

पुनर्जीवित करने का वचन दिया है। तब महाश्वेता ने कादम्बरी की चर्चा की और उससे राजकुमार चन्द्रापीड को मिलवाया। कादम्बरी और चन्द्रापीड में प्रेम हो गया। पुण्डरीक के जीवित होने पर उसका महाश्वेता के साथ तथा चन्द्रापीड का कादम्बरी के साथ विवाह हो गया। महाश्वेता कुशल वीणा वादक थी।

वसन्त सेना – वसन्त सेना उज्जयिनी की एक धनाड्य गणिका होते हुए भी सुशिक्षित, धार्मिक प्रवृत्ति की तथा कलाप्रेमी महिला थी। वह प्राकृत भाषा में बोलती थी और संगीत की मर्मज्ञ थी। गाने में निष्णात थी और कविता बनाना भी जानती थी साथ ही वह चित्रकार भी थी।

सम्राट समुद्र गुप्त – सम्राट समुद्र गुप्त का समय ईस्वी सन् 335 से 375 माना जाता है। वे भारतीय इतिहास के एक महान सेनानायक, कुशल राजनीतिज्ञ एवं अजये योद्धा माने जाते है। समुद्र गुप्त के काल को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग कहा जाता है। वे स्वयं सिद्धहस्त वीणा वादक थे। इस काल में कला विज्ञान और साहित्य की पर्याप्त उन्नति हुई। संगीतज्ञों को राजकीय सम्मान प्राप्त था। संगीत विद्यालय नियमित रूप से चलाए जाते थे। संगीत विद्या प्रारम्भ करने से पूर्व सरस्वती माता के पूजन की परम्परा थी एवं स्वर, मूर्छना, तान राग, वर्ण गीति वास्तु तथा अभिनय की शिक्षा दी जाती थी। समुद्रगुप्त की रूचि ललित कलाओं में बहुत थी। संगीत में विशेष रूचि थी।

विक्रमादित्य – सम्राट समुद्रगुप्त के बाद उनके पुत्र चन्द्रगुप्त द्वितीय (375–413 ईस्वी) उज्जयिनी के राजा बने। यह महाराजा विक्रमादित्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। ऐसा कहा जाता है कि विक्रमादित्य भर्तृहरि के भाई थे तथा संगीत के प्रेमी थे वे स्वयं दीपक राग गाते थे। एक समय इन्द्रलोक में रम्भा और उर्वशी नामक दो अप्सराओं में नृत्य प्रतियोगिता हुई। वहां प्रतियोगिता का निर्णय करने वाला और कोई नहीं था। अत: निर्णायक के रूप में महाराजा विक्रमादित्य को देवराज इन्द्र ने स्वर्ग लोक में बुलाया। इस जनश्रुति से विक्रमादित्य के संगीतज्ञ होने का पता चलता है।

भर्तृहरि – उज्जैन में भर्तृहरि की गुफा एक प्रसिद्ध दर्शनीय स्थान है। भर्तृहरि विक्रमादित्य के भाई थे। भर्तृहरि के रचे श्रृंगार शतक, वैराग्य शतक और नीति शतक, प्रसिद्ध ग्रन्थ है। संस्कृत ग्रन्थ के छन्दों में ऐसी मधुर रचना अन्यत्र कम पाई जाती है। जो संगीतमय है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भर्तृहरि एक बहुत अच्छे कवि संगीतज्ञ तथा अनुभवी विद्धान थे। उन्होनें कहा भी है – संगीत साहित्य कला विहीन: साक्षात् पशुपुच्छ विषाण हीन: अर्थात संगीत, साहित्य और कला से रहित व्यक्ति बिना सींग और पूंछ के पशु के समान है।

****

शासकीय एवं अशासकीय हाईस्कूल के विद्यार्थियों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन (ग्वालियर शहर के सन्दर्भ में)

विभा तिवारी * डॉ. रमा त्यागी **

प्रस्तावना – समाज के विकसित होने के साथ ही सभ्यता व संस्कृति का विकास हुआ और मनुष्य ने अपने जीवन को सिर्फ जीवित रखकर समय गुजारने का माध्यम न मानकर अपने बौद्धिक व आत्मिक विकास से सम्बन्धित कुछ लक्ष्यों को प्राप्त करने का माध्यम बनाया, और उन माध्यमों की प्राप्ति के लिए उसने कुछ मानक निर्धारित किए जो उसके व्यवहार व भावनाओं को नियंत्रित व निर्देशित करते हैं। जिन्हें मूल्य कहा जाता है।

मनुष्य किसी वस्तु, क्रिया विचार के पूर्व यह निर्णय करता है कि वह उसे अपनाए या त्याग दे। जब ऐसा विचारभाव व्यक्ति के मन में आता है, तो वह मूल्य कहलाता है।

मूल्य परक शिक्षा में सभी व्यक्तियों में मनोवैज्ञानिक ढंग से समाहित करके मूल्यों के विकास पर बल देते हैं। आज का मानव जातिवादी बन गया है, वह मूल्यवादी बन गया है, वह मूल्यवादी होने का दिखावा करता हैं, वह छल प्रपंची बन गया है, दूसरों को नीचा दिखाना उसे उपयुक्त लगता है। मानव मन दिग्भ्रमित हो रहा है। वर्तमान प्रतिकूल परिस्थितियों 21वीं सदी में हमारे अस्तित्व को शर्मनाक बना सकती है।

मूल्य परिवर्तनशील समाज की धुरी है, जिसके कारण समाज का अस्तित्व सामाजिक आस्था का आधार होने के साथ व्यक्तिपूर्णता भी मूल्यों पर निर्भर है। मूल्यों के कारण ही व्यक्ति में स्वस्थ मस्तिष्क आस्था आध्यात्मिक अभिरुचि, मानव एकता एवं विश्व बंधुत्व की भावना का समावेश होता है। मूल्यों से ही संयम, त्याग, भ्रातृत्व, सदाचार, पारस्परिक सहयोग जैसे सद्‌गुण उत्पन्न होते हैं। अत: मूल्यों का सम्यक विकास समाज के लिए आवश्यक है।

समस्या की सीमाएँ –

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन को ग्वालियर शहर तक परिसीमित किया गया।
2. प्रस्तुत शोध में 14 से 16 वर्ष तक की आयु समूह के विद्यार्थियों तक परिसीमन किया गया।
3. प्रस्तुत शोध अध्ययन को केवल हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों तक परिसीमित किया गया।
4. ग्वालियर क्षेत्र में सी.बी.एस.ई. ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों की संख्या अधिक है और इससे छात्र-छात्राओं की संख्या अधिक थी इसलिए इन विद्यालयों में से कुछ सरकारी और गैर सरकारी विद्यालयों को चुना गया ताकि अच्छा न्यादर्श मिल सके। कुल छात्र-छात्राओं की संख्या काफी है, उसमें से 500 न्यादर्श लिया गया।

उद्देश्य –

1. हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालयों के बालक एवं बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालयों के बालक-बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालको का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ –

1. हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालयों के बालक एवं बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।
2. हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालयों के बालक-बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्किोण के कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।
3. हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।
4. हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर पाया जायेगा।

समस्या कथन – शासकीय एवं अशासकीय हाईस्कूल के विद्यार्थियों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन (ग्वालियर शहर के सन्दर्भ में)

शोध विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में हाईस्कूल स्तर अध्ययनरत विद्यार्थियों में से यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा 500 विद्यार्थियों का चयन किया गया। जिनमें 250 शासकीय विद्यार्थी (125 छात्र+ 125 छात्रायें) एवं 250 अशासकीय विद्यार्थी (125 छात्र+ 125 छात्रायें) सम्मिलित किये गये हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में निम्न उपकरण का प्रयोग किया गया –

(i) Dr. G.P. Sherry and R.P. Verma का (Personal Value Questionnaire) (PVQ) प्रमाणीकृत का प्रयोग किया गया है।

PVQ में कुल 40 प्रश्न है। जो तीन उत्तरीय बहुविकल्पीय प्रश्न हैं। जिनमें से अधिक पसंदीदा उत्तर के सामने (O) का चिन्ह लगाना होता है। सबसे कम पसन्द के उत्तर के सामने (X) का चिन्ह लगाना होता हैं, तीसरा उत्तर खाली छोड़ दिया जाता हैं। (O) चिन्ह पर दो अंक व (X) चिन्ह पर शून्य तथा रिक्त पर एक अंक दिया जाता हैं इस प्रकार प्राप्त Raw Scores को मैनुअल के

---

* सहायक प्राध्यापक, आई.पी.एस. कॉलेज ऑफ एजूकेशन, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, आई.पी.एस. कॉलेज ऑफ एजूकेशन, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

आधार पर विश्लेषित किया जाता है।

इस उपकरण में मानवीय मूल्यों को निश्चित संकेत निर्धारित कर प्रदत्त संकलित किये गये हैं। मानवीय मूल्य बार–बार न लिखना पड़े, इसलिए उनका संकेतीकरण निम्नानुसार किया गया है–

क – धार्मिक मूल्य
ख – सामाजिक मूल्य
ग – लोकतांत्रिक मूल्य
घ – सौंदर्यात्मक मूल्य
च – आर्थिक मूल्य
छ – ज्ञानात्मक मूल्य
ज – सुखवादी मूल्यमूल्य
झ – शक्ति सामर्थ्य मूल्य
ट – पारिवारिक सम्मान मूल्य
ढ – स्वास्थ्य मूल्य

इस प्रश्नावली को तैयार करते समय मानवीय मूल्यों को दृष्टिगत रखा गया है एवं बहुत से मूल्यों का सर्वेक्षण कर इस उपकरण में 10 मूल्यों को सम्मिलित किया गया है।

प्रदत्तों का संकलन – प्रदत्तों के संकलन के लिए अलग–अलग स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है एवं इसके आधार पर शोधकर्ता द्वारा मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया है और प्रदत्तों का संकलन किया गया है।

परिकल्पना क्रमांक 01 – हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालयों के बालक एवं बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्र. 01 से स्पष्ट है कि 248 df पर t का प्रामाणिक मान 0.01 सार्थकता स्तर पर 2.60 पाया गया तथा 0.05 सार्थकता स्तर 1.97 पाया गया। गणना से प्राप्त का मान 5.80 इन दोनों से अधिक है, अतः सार्थक है। अर्थात् हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालयों के बालक एवं बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर होता है। परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है। (तालिका अंत में देखें)

परिकल्पना – क्रमांक 02 – हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालयों के बालक–बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्किोण के कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्र. 02 से स्पष्ट होता है कि 248 df पर t का प्रामाणिक मान 0.01 सार्थकता स्तर पर 2.60 पाया गया तथा 0.05 सार्थकता स्तर 1.97 पाया गया। गणना से प्राप्त का मान 0.46 इन दोनों से कम है, अतः नगण्य है। अर्थात् हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालयों के बालक–बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्किोण के कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है। (तालिका अंत में देखें)

परिकल्पना – क्रमांक 03 – हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्र. 03 से स्पष्ट होता है कि 248 df पर t का प्रामाणिक मान 0.01 सार्थकता स्तर पर 2.60 पाया गया तथा 0.05 सार्थकता स्तर 1.97 पाया गया। गणना से प्राप्त का मान 5.90 इन दोनों मानों से अधिक है, अतः सार्थक है। अर्थात हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर पाया गया। परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है। (तालिका अंत में देखें)

परिकल्पना – क्रमांक 04 – हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्र. 04 से स्पष्ट होता है कि 248 वष परीं का प्रामाणिक मान 0.01 सार्थकता स्तर पर 2.60 पाया गया तथा 0.05 सार्थकता स्तर 1.97 पाया गया। गणना से प्राप्त का मान 0.372 इन दोनों मानों से कम है, अतः सार्थक नहीं है। अर्थात हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है। (तालिका अंत में देखें)

शोध के निष्कर्ष –

परिकल्पना : क्रमांक 01

हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालयों के बालक एवं बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा। गणना से प्राप्त t का मान अधिक है, अतः सार्थक है। अर्थात् हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालयों के बालक एवं बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर होता है। परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है।

व्याख्या – कुछ बालकों में मूल्यों के प्रति चेतना, जागरूकता एवं नैतिकता पाई जाती है, जो बालिकाओं में नहीं पाई जाती है। शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण दोनों का अलग होता है क्योंकि बालिकाएं भावनात्मक एवं सामाजिक दिशाओं में सीखने के लिए मूल्य परक शिक्षा को सर्वोत्कृष्ट मानती हैं। जबकि बालकों की सोच ऐसी नहीं है, वे लोकतंत्रिक एवं सौन्दर्यात्मक मूल्यों का समर्थन करते हैं।

परिकल्पना – क्रमांक 02 – हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालयों के बालक–बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्किोण के कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

गणना से प्राप्त t का मान नगण्य है। अर्थात् हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालयों के बालक–बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्किोण के कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

व्याख्या – अशासकीय विद्यालयों में मूल्य परक शिक्षा, संगठनात्मक स्वास्थ्य सभी दृष्टिकोणों में उत्तम पाया जाता है। बालक एवं बालिका विद्यालय संगठनात्मक स्वास्थ्य के सभी दृष्टिकोणों में सार्थक रूप समानता रखते हैं। सामाजिक अन्तःक्रिया से मूल्य सीखे जाते हैं तथा उनके विकास में परिवार, मित्रमण्डली, विद्यालय तथा समाज की भूमिका होती है। विद्यालय में सम्पादित होने वाली प्रत्येक क्रिया में मूल्यों की झलक दिखाई देती है। अशासकीय विद्यालय में इस बात पर अधिक जोर दिया जाता है। इसलिए इन विद्यालयों में बालक–बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण के कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

परिकल्पना – क्रमांक 03 – हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

गणना से प्राप्त t का मान अधिक है अतः सार्थक है। अर्थात हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर पाया गया। परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है।

व्याख्या – शासकीय एवं अशासकीय बालकों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर पाया कि सर्वाधिक मूल्य परक क्रियाओं का आयोजन अशासकीय

विद्यालयों में होता है तथा शासकीय विद्यालय भी मूल्यपरक क्रियाओं का आयोजन करते हैं परन्तु अशासकीय से कम करते हैं। शासकीय विद्यालयों में पढ़ने वाले बालक मूल्यों के प्रति अधिक जागरूक नहीं होते हैं। दोनों के मध्यमान में अन्तर यह दर्शाता है कि शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर होता है।

परिकल्पना - क्रमांक 04 - हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

गणना से प्राप्त t का मान कम है, अत: सार्थक नहीं है। अर्थात हाईस्कूल स्तर पर शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

व्याख्या - दोनों विद्यालयों की बालिकाओं के मध्यमानों में अन्तर प्रतीत नहीं होता है क्योंकि बालिकाएं चाहें शासकीय विद्यालय की हों या अशासकीय विद्यालयों की उनके दृष्टिकोण में नैतिकता, परोपकार, धार्मिक, सामाजिक आदि मूल्यों के प्रति लगभग एक सा दृष्टिकोण रहता है। इसलिए शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर होता नहीं पाया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. बत्रा, दीनानाथ (1995) 'जीवन मूल्यों की शिक्षा तथा चरित्र निर्माण' आलोक वार्षिक पत्रिका, शिशु शिक्षा समिति, अवध प्रांत, लखनऊ, पृष्ठ 54-59
2. माथुर, तेजबहादुर (1991), 'मूल्यों का सीखना-सिखाना' नई दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (क्षेत्रीय महाविद्यालय, अजमेर), पृष्ठ-3
3. मिश्र, आत्मानन्द (1977), 'शिक्षा कोष' कानपुर: ग्रन्थम्, पृष्ठ-447
4. मिश्रा, कु. शालिनी (2006), 'मूल्यपरक शिक्षा' - आलोक वार्षिक पत्रिका, शिशु शिक्षा समिति, अवध प्रान्त, लखनऊ पृष्ठ-24, 25
5. मिश्रा, अन्जू : (2007), अधिगम कक्षा का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, पृष्ठ-515

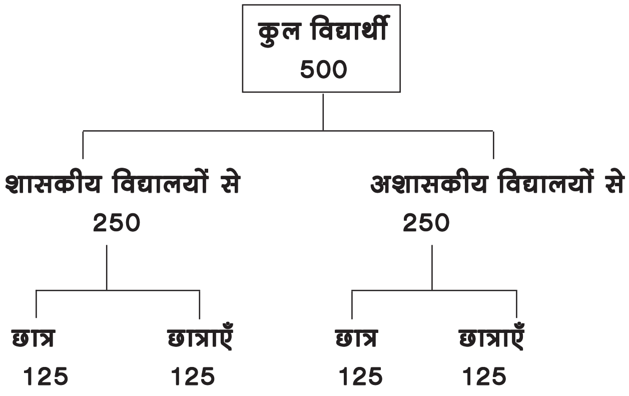

तालिका क्र. 01

हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालय के बालक-बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन एवं टी-मान

	मध्यमान (M)	प्रामाणिक विचलन(SD)	स्वतंत्रता अंश (df)	प्रामाणिकता स्तर		टी मान
शासकीय विद्यालय के बालक	34.26(M_1)	4.15(σ_1)	248	0.01	2.60	5.80
शासकीय विद्यालय की बालिकायें	37.62(M_2)	4.97(σ_2)		0.05	1.97	

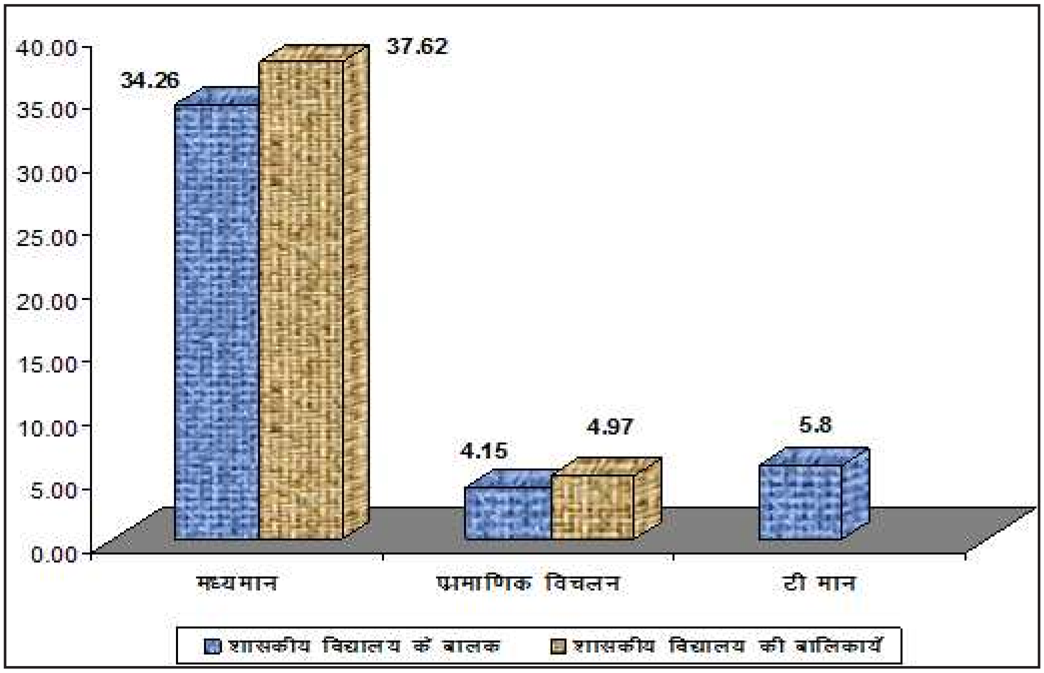

तालिका क्र. 02

हाईस्कूल स्तर पर अशासकीय विद्यालय के बालक–बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन एवं टी–मान

	मध्यमान (M)	प्रामाणिक विचलन(SD)	स्वतंत्रता अंश (df)	प्रामाणिकता स्तर		टी मान
अशासकीय विद्यालय के बालक	37.58(M_1)	4.73(σ_1)	248	0.01	2.60	0.46
अशासकीय विद्यालय की बालिकायें	37.82(M_2)	3.37(σ_2)		0.05	1.97	

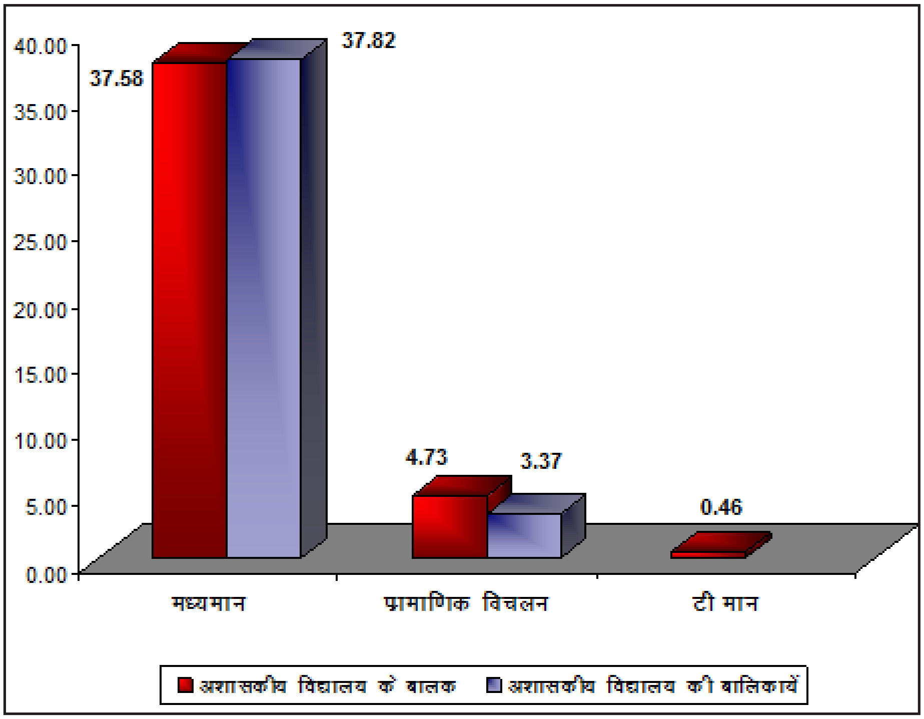

तालिका क्र. 03

हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालय के बालक एवं अशासकीय विद्यालय के बालकों का मूल्यपरक शिक्षा का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन एवं टी–मान

	मध्यमान (M)	प्रामाणिक विचलन(SD)	स्वतंत्रता अंश (df)	प्रामाणिकता स्तर		टी मान
शासकीय विद्यालय के बालक	34.26(M_1)	4.15(σ_1)	248	0.01	2.60	5.90
अशासकीय विद्यालय के बालक	37.58(M_2)	4.73(σ_2)		0.05	1.97	

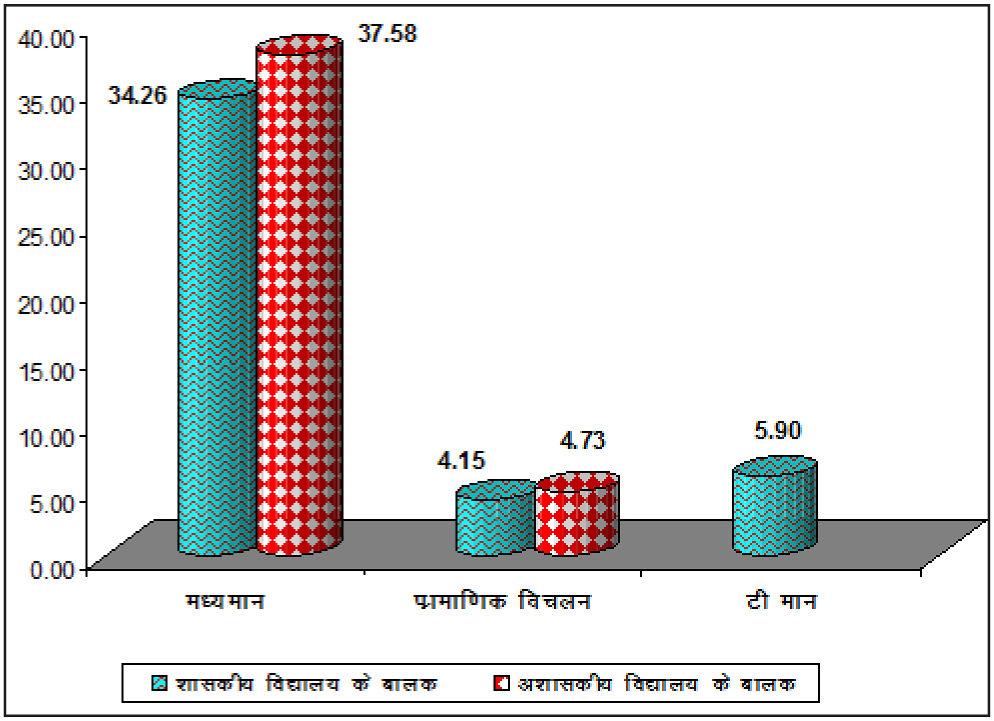

तालिका क्र. 04

हाईस्कूल स्तर पर शासकीय विद्यालय की बालिकाएं एवं अशासकीय विद्यालय की बालिकाओं का मूल्यपरक शिक्षा का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन एवं टी–मान

	मध्यमान (M)	प्रामाणिक विचलन(SD)	स्वतंत्रता अंश (df)	प्रामाणिकता स्तर		टी मान
शासकीय विद्यालय की बालिकाएँ	37.62(M_1)	4.97(σ_1)	248	0.01	2.60	0.372
अशासकीय विद्यालय की बालिकाएँ	37.82(M_2)	3.37(σ_2)		0.05	1.97	

****

कक्षा दसवीं के विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान पाठ्यचर्या के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन(मन्दसौर जिले के संदर्भ में)

दिलीप सिंह राठौर * डॉ. जयदीप महार **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में शिक्षकों से जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रश्नावली का प्रयोग किया गया प्रश्नावली में कुल 25 प्रश्नों का समावेश किया गया। जिसमें कक्षा दसवीं के विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान पाठ्यचर्या के प्रति अभिवृत्ति को जानने का प्रयास किया गया है।

प्रश्नों में समाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम व्यावहारिक जगत से जुडना, हमारे दैनिक जीवन में महत्व, पढ़ने से हममें ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा , पढ़ने से हममें सोचने समझने की व्यापक सूझबूझ , हममें सहयोग की भावना, आदि प्रकार के प्रश्नों का समावेश किया गया है।

शब्द कुंजी – कक्षा दसवीं के विद्यार्थी ।

प्रस्तावना –शिक्षा जगत में दिन प्रतिदिन परिवर्तन हो रहे हैं, जो शिक्षा प्रक्रिया के घटकों को प्रभावित करते हैं। मानव के दृष्टिकोण में परिवर्तन आने के कारण शिक्षा के उद्देश्य तथा पाठ्यक्रम में भी परिवर्तन आता रहा है।

मनोविज्ञान के अनुसार व्यक्ति के किसी भी कार्यकलाप के प्रति सफलता पर अभिवृत्तियों का प्रभाव पडता है।

उद्देश्य

1. कक्षा दसवीं के विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान पाठ्यचर्या के प्रति अभिवृत्ति अध्ययन।
2. मध्यप्रदेश माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति के संबंध में अध्ययन।
3. सामाजिक विज्ञान पाठ्यक्रम के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति के आधार पर सुझाव देना।
4. सामाजिक विज्ञान विषय के शिक्षकों का विद्यार्थी के साथ व्यवहार का अध्ययन।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया । जिसके अंतर्गत मन्दसौर जिले के दो विकासखण्डों की 30 ग्रामीण शालाओं का सर्वेक्षण किया गया।

अध्ययन मे प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रतिशत द्धारा दर्शाया गया है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कार्य के अन्तर्गत मन्दसौर जिले के 02 शासकीय हाई स्कूल 25-25 विद्यार्थियों का सर्वेक्षण कर न्यादर्श के रूप में प्रतिचयन किया गया है।

न्यादर्श – न्यादर्श की संख्या –

क्र.		प्रत्येक विद्यालय से न्यादर्श	कुल विद्यालयों से न्यादर्श	कुल विद्यार्थियों की संख्या
1	विद्यार्थी	25	25 x 02	50

उपकरण – प्रस्तुत शोध कार्य सर्वेक्षणात्मक प्रकृति का है। शोधार्थी द्धारा स्वनिर्मित प्रश्नावली के माध्यम से आकडों को एकत्रित किया गया है।

शोध उपकरण स्वनिर्मित प्रश्नावली – शासकीय कक्षा दसवीं के विद्यार्थियों के लिए।

प्रदत्तों का संकलन – प्रदत्तों का संकलन शोध कार्य को सफल बनाने हेतु ऑकडों व जानकारी का संकलन आवश्यक है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रदत्तों के संकलन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। शोधकर्ता ने शोध उपकरण का निर्माण कर प्रदत्तों का संकलन किया हैं, प्रदत्तों के संकलन की प्रक्रिया को नीचे वर्णित किया गया है।

सारणी संख्या 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

1. 100 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमति के अनुसार सामाजिक विज्ञान विषय का पाठ्यक्रम व्यावहारिक जगत से जुड़ा हुआहै।
2. 100 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार सामाजिक विज्ञान विषय का हमारे दैनिक जीवन में महत्व है।
3. 60 प्रतिशत विद्यार्थी सहमत है कि सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने से हममें ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा उत्पन्न होती हैं, लेकिन 30 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नही है।
4. 50 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने से हममें सोचने समझने की व्यापक सूझबूझ उत्पन्न होती हैं। लेकिन 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 30 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
5. 70 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हममें सहयोग की भावना उत्पन्न होती हैं। लेकिन 25 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 05 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे मे कोई जानकारी नही है।
6. 65 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हमारा दृष्टिकोण व्यावहारिक बनता है। लेकिन 15 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
7. 65 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें पढ़ने की रूचि उत्पन्न होती हैं। लेकिन 15 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।

---

* शोधार्थी, पेसीफिक ऐकेडमी ऑफ हायर एजूकेशन एंड रिसर्च, पेसीफिक हिल्स, उदयपुर (राज.) भारत
** विभागाध्यक्ष, ज्ञानोदय शिक्षा महाविद्यालय मनासा, जिला- नीमच (म.प्र.) भारत

8. 65 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हममें निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है। लेकिन 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 15 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।

सारणी संख्या 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

9. 80 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय पढ़ते समय अन्य विषयों से संबंध स्थापित करके विषय को सरल बनाया जा सकता है। लेकिन 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
10. 90 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान के पाठ ब्लेक बोर्ड पर चित्र द्धारा समझाया जाता है। लेकिन 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
11. 75 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय के अध्यापक आपको सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने के लिये प्रेरित करते हैं। लेकिन 25 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है।
12. 65 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान के पाठ के विकास में आपका सहयोग लिया जाता है लेकिन 35 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
13. 60 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय के अध्यापक आपको वर्तमान एव पूर्व घटनाओं से परिचित कराते हैं लेकिन 30 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नही है।
14. 40 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार अध्यापक ऐतिहासिक स्थल पर भ्रमण हेतु ले जाते हैं। लेकिन 60 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है ।

सारणी संख्या 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

15. 90 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय की पुस्तके नीरस व रूचिकर लगती है। लेकिन 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे मे कोई जानकारी नहीं है।
16. 70 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकों के अध्ययन से हममें अधिक ज्ञान प्राप्ति की जिज्ञासा उत्पन्न होती है लेकिन 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे मे कोई जानकारी नही है।
17. 55 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकों को समझने के लिये कठोर परिश्रम करना पढ़ता है लेकिन 30 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 15 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
18. 60 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय की उपलब्ध पुस्तकें नवीनतम है। लेकिन 30 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
19. 80 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमति के अनुसार समाजिक विज्ञान विषय की पुस्तके हमारे दैनिक जीवन में उपयोगी हैं लेकिन 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है।

सारणी संख्या 04 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

20. 70 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी के साथ समान व्यवहार करते है। लेकिन 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।
21. 60 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार शिक्षक विद्यार्थियों के साथ पूरे पीरियड में कार्य में व्यस्त रहते हैं। लेकिन 40 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है।
22. 75 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार शिक्षक पढ़ाते समय बीच-बीच में उदाहरण द्धारा पाठ को रूचिकर बनाते हैं। लेकिन 25 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है।
23. 80 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार शिक्षक पाठ को पूरी तैयारी के साथ पढ़ाते हैं। लेकिन 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत हैं।
24. 70 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार शिक्षक द्धारा पढ़ाया गया पाठ समझ में भली प्रकार से आता है। लेकिन 30 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है।
25. 70 प्रतिशत विद्यार्थियों के सहमती के अनुसार शिक्षक विद्यार्थियों की कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास करते हैं। लेकिन 20 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन से असहमत है, और 10 प्रतिशत विद्यार्थी इस कथन के बारे में कोई जानकारी नहीं है।

परिशिष्ट

विद्यार्थी का नाम —————— कक्षा ——————
विद्यालय ——————————

क्र.सं.	पाठ्यक्रम	सहमत	असहमत
1.	सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम व्यावहारिक जगत से जुड़ा हुआहै।		
2	इसका हमारे दैनिक जीवन में महत्व है।		
3	सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने से हममें ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा उत्पन्न होती हैं।		
4	समाजिक विज्ञान विषय पढ़ने से हममें सोचने समझने की व्यापक सूझबूझ उत्पन्न होती हैं।		
5	समाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हममें सहयोग की भावना उत्पन्न होती हैं।		
6	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हमारा दृष्टिकोण व्यावहारिक बनता है।		
7	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें पढ़ने की रूचि उत्पन्न होती हैं।		
8.	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हममें निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है।		

	शिक्षण विधि		
9	सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ते समय अन्य विषयों से संबंध स्थापित करके विषय को सरल बनाया जा सकता है।		
10	सामाजिक विज्ञान के पाठ ब्लेक बोर्ड पर चित्र द्वारा समझाया जाता है।		
11	सामाजिक विज्ञान विषय के अध्यापक आपकों समाजिक विज्ञान विषय पढ़ने के लिये प्रेरित करते हैं।		
12	समाजिक विज्ञान के पाठ के विकास में आपका सहयोग लिया जाता हे।		
13	सामाजिक विज्ञान विषय के अध्यापक आपकों वर्तमान एव पूर्व घटनाओं से परिचित कराते हैं		
14	आपके अध्यापक आपको ऐतिहासिक स्थल पर भ्रमण हेतु ले जाते हैं।		
	पाठ्यपुस्तक		
15	आपकों सामाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकें नीरस व रूचिकर लगती है।		
16	सामाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकों के अध्ययन से हममें अधिक ज्ञान प्राप्ति की जिज्ञासा उत्पन्न होती है।		
17	सामाजिक विज्ञान शिक्षण में सहायक सामग्री का प्रयोग करने		
18	आपकों सामाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकों को समझने के लिये कठोर परिश्रम करना पढ़ता हे।		
19	सामाजिक विज्ञान विषय की उपलब्ध पुस्तकें नवीनतम है।		
20	सामाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकें हमारे दैनिक जीवन में उपयोगी हैं		
	शिक्षक		
21	शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी के साथ समान व्यवहार करते है।		
22	शिक्षक विद्यार्थियों के साथ पूरे पीरियड में कार्य में व्यस्त रहते हैं।		
23	शिक्षक पढ़ाते समय बीच-बीच में उदाहरण द्वारा पाठ को रूचिकर बनाते हैं।		
24	शिक्षक पाठ को पूरी तैयारी के साथ पढाते हैं।		
25	शिक्षक द्वारा पढाया गया पाठ समझ में भली प्रकार से आता है।		

सारणी संख्या 01 से प्राप्त विश्लेषण एव निष्कर्ष

क्र.सं.	(कथन) पाठ्यक्रम	सहमत	असहमत	पता नहीं
1.	सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम व्यावहारिक जगत से जुड़ा हुआहै।	100 %	00 %	00%
2	इसका हमारे दैनिक जीवन में महत्व है।	100 %	00 %	00%
3	सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने से हममें ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा उत्पन्न होती हैं।	60 %	30 %	10%
4	सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने से हममें सोचने समझने की व्यापक सूझबूझ उत्पन्न होती हैं।	50%	20 %	30%
5	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हममें सहयोग की भावना उत्पन्न होती हैं।	70 %	25 %	05%
6	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हमारा दृष्टिकोण व्यावहारिक बनता है।	45 %	40 %	15%
7	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें पढ़ने की रूचि उत्पन्न होती हैं।	65 %	15%	20%
8	सामाजिक विज्ञान विषय अध्ययन से हममें निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है।	65%	20 %	15%

सारणी संख्या 02 से प्राप्त विश्लेषण एव निष्कर्ष

(कथन) शिक्षण विधि

9	सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ते समय अन्य विषयों से संबंध स्थापित करके विषय को सरल बनाया जा सकता है।	80 %	10 %	10%
10	सामाजिक विज्ञान के पाठ ब्लैक बोर्ड पर चित्र द्धारा समझाया जाता है।	90%	00%	10%
11	सामाजिक विज्ञान विषय के अध्यापक आपको सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ने के लिये प्रेरित करते हैं।	75%	25%	00%
12	सामाजिक विज्ञान के पाठ के विकास में आपका सहयोग लिया जाता हे।	65 %	00 %	35%
13	सामाजिक विज्ञान विषय के अध्यापक आपको वर्तमान एव पूर्व घटनाओं से परिचित कराते हैं	60 %	30 %	10%
14	आपके अध्यापक आपको ऐतिहासिक स्थल पर भ्रमण हेतु ले जाते हैं।	40 %	60 %	00%

सारणी संख्या 03 से प्राप्त विश्लेषण एव निष्कर्ष

(कथन) पाठ्यपुस्तक

15	आपको समाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकें नीरस व रूचिकर लगती है।	90%	00%	10%
16	सामाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकों के अध्ययन से हममें अधिक ज्ञान प्राप्ति की जिज्ञासा उत्पन्न होती है।	70%	20%	10%
17	आपकों समाजिक विज्ञान विषय की पुस्तकों को समझने के लिये कठोर परिश्रम करना पढ़ता है।	55%	30%	15%
18	सामाजिक विज्ञान विषय की उपलब्ध पुस्तकें नवीनतम है।	60%	30%	10%
19	सामाजिक विज्ञान विषय की पुस्तके हमारे दैनिक जीवन में उपयोगी हैं	80%	20%	00%

सारणी संख्या 04 से प्राप्त विश्लेषण एव निष्कर्ष

(कथन) शिक्षक

20.	शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी के साथ समान व्यवहार करते है।	70 %	10%	20%
21.	शिक्षक विद्यार्थियों के साथ पूरे पीरियड में कार्य में व्यस्त रहते हैं।	60 %	40%	00%
22.	शिक्षक पढ़ाते समय बीच-बीच में उदाहरण द्धारा पाठ को रूचिकर बनाते हैं।	75 %	25%	00%
23.	शिक्षक पाठ को पूरी तैयारी के साथ पढ़ाते हैं।	80%	20%	00%
24.	शिक्षक द्धारा पढाया गया पाठ समझ में भली प्रकार से आता है।	70%	30%	00%
25.	शिक्षक विद्यार्थियों की कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास करते हैं।	70%	20%	10%

****

दिव्यांगों के प्रति परिवार तथा समाज का दृष्टिकोण एवं सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन

मनीषा सक्सेना * अमृता ब्राह्मणे **

प्रस्तावना – दिव्यांगों के प्रति समाज की अपेक्षा चिंता का विषय है लेकिन यह एक कड़वा सच है कि आमतौर पर सांस्कृतिक कारणों से कलंक भेदभाव और उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। दिव्यांगों को सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और पूर्वाहग्रह के चलते दिव्यांगों के प्रति होने वाले भेदभाव का मूल्यांकन कम करके आँका जाता है। इसका कारण आम लोगों में प्रचलित पूर्वाग्रह हैं, जिनके कारण विफलताओं का दुष्चक्र पैदा हो जाता है, समाज में दिव्यांगों के प्रति परम्परागत अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों से घिरा चला आ रहा है। समाज में दिव्यांग व्यक्तियों के परिवार तथा दिव्यांगों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं, उनका समाज से बहिष्कार कर देते हैं, प्राय: उनको समाज से अलग-थलग कर रहना पड़ता है। दिव्यांगता होने का कारण पूर्व जन्म के कर्मो, भूतपलित या हवा का लगना एवं गंभीर बड़ी बीमारी माना जाता था, जो कि संक्रमण रोगों की तरह अन्य को प्रभावित करेगा। जनवरी (2016) मध्यप्रदेश के इन्दौर शहर में एक दम्पति ने नवजात को जन्म दिया, जब उन्होंने देखा कि नवजात के पैरों में टेढ़ापन है। दम्पति ने उसे छुटकारा पाने के लिये पूरा परिवार मासूम को अनाथाश्रम छोड़ने पहुँच गया है। इन दशाओं के रहते दिव्यांगों के विकास के लक्ष्य की सम्प्राप्ति असंभव है।

जनगणना 2011 के अनुसार देश भर में कुल दिव्यांग जनसंख्या 2,68,10,357 है जिसमें पुरुष जनसंख्या 1,49,86,202 तथा महिला जनसंख्या 1,18,24,355 है। जबकि मध्यप्रदेश में कुल दिव्यांग जनसंख्या 15.5 लाख है, उनमें अस्थिबाधित, दृष्टिबाधित, श्रवणहीनता, मूकबधिर, मंदबुद्धि, मानसिक रोग एवं कुष्ठरोग मुक्त विकलांग आदि विकलांगता शामिल है। मध्यप्रदेश में जिलेवार दिव्यांग जनसंख्या निम्नानुसार है-भोपाल में 84,502 इन्दौर - 78761, जबलपुर - 59074, रीवा - 57889, सागर - 52,576, अलीराजपुर - 10,869, दतिया - 12379, हरदा - 12568, बुरहानपुर - 13032, श्योपुर - 13,435। जिनमें सर्वाधिक दिव्यांग जनसंख्या भोपाल तथा दूसरे नम्बर पर इन्दौर जिला है। इस प्रकार दिव्यांगों की बड़ी संख्या के बावजूद इन पर सरकार द्वारा किया जाने वाला व्यय प्रति दिव्यांग व्यक्ति 4 रुपये के लगभग समझा जा सकता है कि उस उपेक्षा से दिव्यांगजनों का कल्याण कैसे हो सकता है।

दिव्यांगों की विकासात्मक योजनाएँ/कार्यक्रम/नीतियों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, जिससे समस्त योजनाओं का लाभ दिव्यांगों को शत-प्रतिशत प्राप्त हो तथा उन्हें भी समाज की मुख्य धारा में जोड़ने के कार्य में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका परिवार एवं समाज की उपेक्षा उनके आत्मबल को कमजोर बनाती है। परिवार का कोई सदस्य यदि दिव्यांग है, तो उसकी सुरक्षा सम्मान को बनाये रखने में परिवार व समाज का महत्वपूर्ण योगदान है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य –

1. दिव्यांगजनों के सामाजिक व आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. दिव्यांगजनों के प्रति परिवार के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
3. दिव्यांगों के प्रति समुदाय का दृष्टिकोण ज्ञात करना।

शोध प्रविधि – उक्त अध्ययन वृहद् शोध अध्ययन का एक भाग है जो दिव्यांगों की समस्याओं एवं दिव्यांगों की समस्याओं तथा शासकीय योजनाओं की भूमिका पर आधारित है, संपूर्ण अध्ययन **गुणात्मक** विधि अनुसार किया गया है।

1. **अध्ययन क्षेत्र –** शोध अध्ययन के लिये म.प्र. के इन्दौर जिले का चयन किया गया है।
2. **अध्ययन का समग्र –** शोध अध्ययन सभी प्रकार के दिव्यांग जिनकी उम्र 18-45 वर्ष होगी, को समग्र के रुप में लिया गया है।
3. **अध्ययन की इकाई –** शोध अध्ययन के लिये इन्दौर जिले में निवासरत् दिव्यांग अध्ययन की इकाई है।
4. **निदर्शन विधि –** शोध अध्ययन के अंतर्गत इन्दौर जिले की पाँच तहसीलों की साँवेर, इन्दौर, महू, देपालपुर, हातोद को दिव्यांगों की सूची के आधार पर सभी प्रकार के दिव्यांगों का चयन उद्देश्यपूर्ण विधि के द्वारा किया गया, जिसमें इन्दौर जिले के कुल 330 दिव्यांगों का चयन किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन एवं समूह चर्चा के द्वारा तथ्यों का संकलन किया गया।

परिणाम – शोध अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विकलांग प्राप्त प्राथमिक आकड़ों से जानकारी प्राप्त करने के पश्चात सामाजिक व आर्थिक स्थिति तथा समाज एवं परिवार का दृष्टिकोण सामाजिक मान्यताएँ दुर्व्यवहार इत्यादि से संबंधित जानकारियाँ ली गई।

प्रस्तुत शोध में आधार पर निम्नलिखित परिणाम इस प्रकार हैं –

1. कुल 330 विकलांगों में से 53.3 प्रतिशत पुरूष एवं 46.66 प्रतिशत महिला विकलांग पाए गए हैं। जिसमें एकांकी परिवार में रह रहे विकलांग 48.2 प्रतिशत है, जबकि संयुक्त परिवार में विकलांगता 51.8 प्रतिशत है।
2. अध्ययन में पाया गया है कि विकलांगों में अस्थिबाधित 54.2 प्रतिशत है, जबकि दृष्टिबाधित 25.5 प्रतिशत, मूकबधिर 6.4 प्रतिशत, मंदबुद्धि 5.8 प्रतिशत, मानसिक रोग 3.04 प्रतिशत तथा कुष्ठ रोग एवं श्रवणबाधित 5.1 प्रतिशत हैं।
3. अध्ययन में पाया गया है कि परिवार के निर्णयों में भागीदारी विकलांग

---

* एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा एवं कौशल विकास विभागाध्यक्ष, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

पुरूष 81.82 प्रतिशत हैं, जबकि विकलांग महिलाओं का 18.18 प्रतिशत पाया गया है।

4. परिवार का व्यवहार विकलांगों के साथ 68.18 प्रतिशत विकलांगों के साथ सामान्य है, वहीं विकलांगों के साथ परिवार द्वारा असामान्य व्यवहार 31.82 प्रतिशत पाया गया है।
5. अध्ययन में पाया गया है कि विकलांगों के 63.63 प्रतिशत असामान्य व्यवहार होने पर नकारात्मक प्रभाव है, वहीं विकलांगों के साथ सामान्य व्यवहार होने पर सकारात्मक प्रभाव 18.20 प्रतिशत पाया गया।
6. समाज का विकलांगों के साथ 43.42 प्रतिशत झगड़ा होता है, जबकि समाज का विकलांगों के प्रति 18.22 प्रतिशत प्रेमपूर्वक व सामान्य ही पाया गया है।
7. अध्ययन में पाया गया है कि विकलांगता को लेकर 38.33 प्रतिशत परिवार में विवाद की स्थिति पाई गई। जबकि 28.26 प्रतिशत विकलांगों को बेरोजगारी के कारण परिवार में विवाद की स्थिति निर्मित होती है। वहीं 18.19 प्रतिशत पारिवारिक कार्य को लेकर परिवार में विवाद की स्थिति होती है तथा 20.21 प्रतिशत अन्य कारणों से परिवार में विवाद की स्थिति पाई गई।

तालिका क्रमांक 01(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उत्तरदाताओं की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि संबंधी तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट होता है कि दिव्यांगों में सर्वाधिक 40.90 प्रतिशत दिव्यांग की आयु 21-30 वर्ष की आयु वर्ग के तथा 31.21 प्रतिशत दिव्यांगों की आयु 18-20 वर्ष। जबकि 8.48 प्रतिशत दिव्यांगों की आयु 31-40 वर्ष है, 19.4 प्रतिशत दिव्यांगों की आयु 41-45 वर्ष पाई गई। उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 7.27 प्रतिशत दिव्यांग अनपढ़ है, जबकि 6.1 प्रतिशत दिव्यांग प्राथमिक स्तर के तथा 10.90 प्रतिशत माध्यमिक स्तर दिव्यांग पाये गये। वहीं 11.5 प्रतिशत हाईस्कूल स्तर पर दिव्यांग, 18.8 प्रतिशत हायर सेकण्डरी में दिव्यांग एवं स्नातक में दिव्यांग 24.8 प्रतिशत रहा है, स्नातकोत्तर में दिव्यांग 12.1 प्रतिशत है। इसी प्रकार दिव्यांगों में 8.5 प्रतिशत अन्य प्रकार की डिग्री पाई गई। उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 53.34 प्रतिशत दिव्यांग पुरुष तथा 46.66 प्रतिशत दिव्यांग महिला पाये गये, जिसमें अनुसूचित जाति के दिव्यांग 23.03 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति के दिव्यांग 26.35 प्रतिशत तथा पिछड़ा वर्ग के दिव्यांग 30.90 प्रतिशत रहा है। सिर्फ 19.72 प्रतिशत सामान्य जाति के पाये गये। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है विवाहित दिव्यांग 53.03 प्रतिशत है, जबकि अविवाहित दिव्यांग 38.79 प्रतिशत तथा दूसरा विवाह करने वाले दिव्यांग 5.12 प्रतिशत है। इसी प्रकार परित्यागता तलाकशुदा वाले दिव्यांगों का 3.03 प्रतिशत रहा है।

उपर्युक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 13.94 प्रतिशत दिव्यांग सरकारी नौकरी में, दुकान/व्यापार में दिव्यांगों का 16.06 प्रतिशत तथा 14.25 प्रतिशत दिव्यांग प्राइवेट नौकरी में एवं 7.87 प्रतिशत दिव्यांग कृषि/मजदूरी में है। 47.88 प्रतिशत दिव्यांग अन्य प्रकार के कार्य करने वाले पाये गये। इस प्रकार उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 13.94 प्रतिशत दिव्यांग की मासिक आय 1000-2000 रुपये मासिक आय के है, जबकि 2001-3000 दिव्यांग की मासिक आय प्राप्त करने वाले दिव्यांग 11.81 प्रतिशत तथा 3001-4000 मासिक आय वाले दिव्यांग 16.07 प्रतिशत एवं 4001-5000 मासिक आय वाले दिव्यांग 26.06 प्रतिशत है। इसी प्रकार 5000 से अधिक मासिक आय वाले दिव्यांगों का 32.12 प्रतिशत पाया गया।

निष्कर्ष एवं सुझाव - दिव्यांगों के प्रति समाज तथा परिवार का दृष्टिकोण नकारात्मक विद्यमान है। हमारा उद्देश्य समाज व दिव्यांगों के बीच ऐसा पारिवारिक स्थापित करना है, जिससे दोनों एक-दूसरे के सार्थक सहयोग एवं योगदान इस ढंग से दे कि दिव्यांगजन स्वावलंबी होकर सामान्य जीवन व्यतीत कर सकें। समाज का एक उपयोग अंग बन सके। इस व्यवहार से दिव्यांग के सामाजिक एकीकरण में मदद मिलेगी व दिव्यांगजन एक दूसरे के पूरक बन सकेंगे तथा उन्हें उनका अधिकार व सामाजिक न्याय दिलाकर समाज में सम्मानपूर्वक जीवनयापन हेतु अवसर प्रदान करना। एक सच्चे नागरिक ही तरह हम सबकी नि:स्वार्थ रुप से जिम्मेदारी व दायित्व है।

अत: महती आवश्यकता आज इस बात की आवश्यकता है कि समाज नैतिक व सामाजिक रुप से जाग्रत व संवेदनशील हो तभी कानूनों व योजनाओं को दृढ़ता से लागू कर दिव्यांगजनों के अधिकारों का संरक्षण कर मानवीय सेवाओं में सराहनीय योगदान दे सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, इरा, कैसे सम्भव हो विकलांगों के लिये बेहतर जीवन, दिसम्बर (1999), कुरुक्षेत्र, प्रकाशन, सूचना केन्द्र, नई दिल्ली, पेज-6.
2. सिंगल, निधि, विकलांग बच्चों की शिक्षा, अप्रैल (2013) योजना प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड़, नई दिल्ली, पेज-21.
3. यादव, आलोक कुमार, विकलांगों के बारे में मानसिकता बदलनी जरूरी, जनवरी (2009), कुरूक्षेत्र, प्रकाशन सूचना भवन, दिल्ली, पेज-29.
4. भौमिक, अभिजीत एवं भौमिक, सुमिता (2009) विकलांग बालकों की समस्याओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रकाशन, शोध समीक्षा और मूल्यांकन, Vol. II.
5. टेगोर, रवीन्द्रनाथ (2013), विकलांगता को समझिए, प्रकाशन, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, नई दिल्ली.
6. नारायण नाटाणी, प्रकाश (2007), भारत में विकलांगता, पब्लिकेशन, 12 परमहंस कॉलोनी, बन्धुनगर, जयपुर-23. पेज 1
7. भारत की जनगणना, 2011.

तालिका क्रमांक 01

उत्तरदाताओं की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि

क्र.सं.	आयु	शिक्षा	जाति	वैवाहिक स्थिति	व्यवसाय	मासिक आय
1.	18-20 वर्ष 103 (31.21)	अनपढ़ 24 (7.27)	अनुसूचित जाति 76 (23.03)	विवाहित 175(53.03)	सरकारी नौकरी 46 (13.94)	1000-2000 46(13.94)
2.	21-30 वर्ष 135 (40.90)	प्राथमिक 20 (6.1)	अनुसूचित जनजाति 87(26.36)	अविवाहित 128 (38.79)	दुकान/व्यापार 53 (16.06)	2001-3000 39 (11.81)
3.	31-40 वर्ष 28 (8.48)	माध्यमिक 36 (10.90)	पिछड़ा वर्ग 102 (30.06)	दूसरा विवाह 17 (5.15)	प्राइवेट नौकरी 47 (14.25)	3001-4000 53 (16.07)
4.	41-45 वर्ष 64 (19.4)	हाईस्कूल 38 (11.5)	सामान्य जाति 65 (19.72)	परित्यागता/तलाकशुदा 10 (3.03)	कृषि/मजदूरी 26 (7.87)	4001-5000 86 (26.06)
5.		हायर सेकण्डरी 62 (18.8)			अन्य 158 (47.88)	5000 से अधिक 106(32.12)
6.		स्नातक 82 (24.8)				
7.		स्नातकोत्तर 40 (12.1)				
8.		अन्य 28 (8.5)				
	330	**330**	**330**	**330**	**330**	**330 (100 प्रतिशत)**

****

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर महिला एवं पुरूष शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन

विजय पराशर * डॉ. सपना शर्मा **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उच्चतर माध्यमिक स्तर पर महिला एवं पुरूष, शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। इस अध्ययन के उद्देश्य उच्चतर माध्यमिक स्तर महिला एवं पुरूष शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य के आयामों के संदर्भ में अध्ययन करना था। जिसके अन्तर्गत शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को जांचने हेतु डॉ. जगदीश एवं डॉ. एन. के श्रीवास्तव द्वारा निर्मित मानसिक स्वास्थ्य उपकरण का प्रयोग किया गया। जिसमें निष्कर्षत: पाया गया कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्त, आयाम में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है लेकिन सकारात्मक आत्ममूल्याकंन, में सार्थक अंतर पाया गया है।

प्रस्तावना – शिक्षक द्वारा दी जाने वाली ज्ञान की जो रफ्तार है, उसमें एक दिन ऐसा आ जाएगा। जब समूचा ब्रह्यांड ज्ञान के समक्ष छोटा लगेगा। आज बढ़ती प्रतियोगिता और बच्चों के बढ़ते ज्ञान ने जिस प्रकार कर्म के साथ समझौता किया, उससे लगता है कि ज्ञान और कर्म की शिक्षा आज के समय में जिंदा रहने की अनिवार्यता बन गई है। शिक्षक वह जीवन की मूर्ति है, जो दूसरों को ज्ञान का उजाला बांटकर उनके जीवन को गतिशील, भावना और उच्च विचारों से जुड़े कर्मकर जीवन की ऊँचाइयों पर ले जाते है।

लेकिन प्राचीन काल में शिक्षक का जीवन सरल होता था। उसकी आवश्यकताएँ भी सीमित होती थी। वही आज आवश्यकताएँ और इच्छाएँ असीमित हो चुकी है जिसके कारण शिक्षकों को अपने कार्य के अनुरूप वेतन नहीं मिलता है। और न ही उन्हें संतुष्टि प्राप्त होती हो जिसका सीधा सम्बध उनके मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। इसी कारण उनके मन में अंसतोष, घृणा, तथा अनेक कुप्रवृत्तियों जागृत हो जाती है और वह अपने जीवन को तनावपूर्ण और कुंठाग्रस्त मानते है, ऐसी स्थिति में शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।

अत: कहा जा सकता है कि मानसिक स्वास्थ्य के अनुरूप ही वह अपने व्यवहार को सही तरीके से दर्शाता है क्योंकि मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए एक शिक्षक में चिन्ता तथा संघर्ष से रहित, पूर्णत: समायोजित , आत्मविश्वासी श्रेष्ठ एवं संतुलित आत्म–मूल्यांकन,सहनशीलता, संवेगात्मक परिपक्वता, निर्णय लेने की क्षमता निम्न गुणों का होना अति आवश्यक है। इन गुणों से युक्त शिक्षक प्रत्येक परिस्थितियों में भी निर्णय लेने की क्षमता रखता है। विद्यालय में बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखने में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान है। बालकों के मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति के लिए विद्यालय जो कार्य करता है। उसमें शिक्षक ही विशेष रूप से सहायक होता है। अत: शिक्षक के मानसिक स्वास्थ्य का भी ठीक रहना अति आवश्यक है, जब तक शिक्षक मानसिक रूप से स्वस्थ न होगा। तब तक बालकों के मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति करने में आशा नहीं की जा सकती। जब शिक्षक वर्ग बालकों के प्रति अच्छा दृष्टिकोण रखते हुए अपने शैक्षिक कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों का ठीक से पालन करें। इसके लिए सर्वप्रथम शिक्षक को अपने कार्य एवं व्यवसाय में रूचि लेना अति आवश्यक है। **फराहबक्श, एस. (2004)** ने विविध व्यावसायिक चरों के सम्बंध में माध्यमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि प्रधानाध्यापकों में विद्यार्थियों की तुलना में तनाव एवं दु:ष्चिता के लक्षण पाये गये। **गुप्ता, एस.पी. एवं कुमार सुजीत (2008)** ने माध्यमिक विद्यालय के प्रशासकों पर व्यावसायिक दबाव और उनका मानसिक स्वास्थ्य विषय पर अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि महिला एवं पुरूष प्रशासकों के मानसिक स्वास्थ्य समान है। **कुमार फाजिया, अहमद जरार (2015)** ने प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों की कार्य संतुष्टि पर उनके मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया कि प्राथमिक विद्यालय के उच्च व निम्न महिला एवं पुरूष शिक्षकों की कार्य संतुष्टि पर उनके मानसिक स्वास्थ्य का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। **ग्रोसी चन्द्रकांता, पंवार नीरज (2015)** ने सरकारी विद्यालय के शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन में देखा गया कि सरकारी विद्यालय के पुरूष शिक्षक महिला शिक्षकों तुलना में मानसिक स्वास्थ्य बेहतर पाया गया। **कुमार विजय, पवन एवं कुमारी रीना (2013)** ने छात्र शिक्षकों के लिंग व स्थान के संबध में मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण व शहरी शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया है।

उपरोक्त शोध अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न संदर्भ में अध्ययन किये गये है परन्तु उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य के आयामों के संदर्भ में अध्ययन प्राप्त नहीं हुए है। इसलिए शोधकर्त्ता ने शोध का विषय उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य के आयामों के संदर्भ में अध्ययन किया।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – शोध अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य अग्राकित है :

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के संदर्भ में अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पना – प्रस्तुत शोध अध्ययन में निर्मित परिकल्पना इस प्रकार है।

---

* शोधार्थी (शिक्षा संकाय) वनस्थली विद्यापीठ, निवाई (राजस्थान) भारत
** एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा संकाय) वनस्थली विद्यापीठ, निवाई (राजस्थान) भारत

मुख्य शोध परिकल्पना – उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया जाता है।

गौण शोध परिकल्पना :

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं शिक्षकों के सकारात्मक आत्म मूल्यांकन में सार्थक अंतर पाया जाता है।
2. उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्त में सार्थक अंतर पाया जाता है।

शोध विधि – इस शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यप्रदेश के इंदौर एवं उज्जैन संभाग के समस्त उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत् महिला एवं पुरूष शिक्षकों को लिया गया है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यप्रदेश के इंदौर एवं उज्जैन संभाग के 300 शिक्षकों को न्यादर्श यादृच्छिक न्यादर्शन विधि द्वारा न्यादर्श के रूप में चयन किया गया है।

शोध उपकरण – शोध उद्देश्य की प्राप्ति हेतु शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य को जानने के लिए डॉ. जगदीश एवं डॉ. जगदीश एवं डॉ. ए. के श्रीवास्तव द्वारा निर्मित मानसिक स्वास्थ्य मापनी का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों की प्रकृति – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रदत्त मात्रात्मक (आंकिक) प्रकार के है।

प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण – प्रस्तुत शोध में निम्न सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है :

1. मध्यमान
2. प्रमाणिक विचलन
3. टी– परीक्षण

गौण शोध परिकल्पना

परिकल्पना (i) उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्ममूल्यांकन में सार्थक अंतर पाया जाता है के परीक्षण हेतु उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्ममूल्यांकन में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। रूपी शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया है।

तालिका संख्या 1.1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका संख्या 11 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्ममूल्याकंन के मध्यमान का मान क्रमशः 24.73 तथा 26.34 है, मानक विचलन का मान 6.17 तथा 7.49 है एवं ही परीक्षण का अवकलित 2.037 है जो कि 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक तालिका मान से अधिक है। इसलिए शून्य परिकल्पना उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्ममूल्यांकन में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है, अस्वीकृत होती है तथा गौण शोध परिकल्पना उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरुष शिक्षकों के सकारात्मक आत्ममूल्यांकन में सार्थक अंतर पाया जाता है। स्वीकृति होती है। परिणामस्वरूप सामान्यीकरण स्थापित होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्म–मूल्यांकन में सार्थक अंतर पाया जाता है।

परिकल्पना (ii) गौण शोध परिकल्पना – उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्ता में सार्थक अंतर पाया जाता है, के परीक्षण हेतु उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्त में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है, रूपी शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया है।

तालिका संख्या 1.2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका संख्या 1.2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्त के मध्यमान का मान क्रमशः 18.99 तथा 19.70 है। मानक विचलन का मान क्रमशः 3.68 तथा 3.67 है एव टी. परीक्षण का अवकलित मान 1.664 है जो कि 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक तालिका मान से कम है, इसलिए शून्य परिकल्पना उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्ता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। स्वीकृत होती है, तथा गौण शोध परिकल्पना उच्चतर माध्यमिक के स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्ता में सार्थक अंतर पाया जाता है अस्वीकृत होती है परिणाम स्वरूप सामान्यीकरण स्थापित होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर के महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्ता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन के परिणामों से अधोलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए :

1. महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्म–मूल्यांकन में सार्थक अंतर पाया जाता है।
2. महिला एवं पुरूष शिक्षकों की स्वायत्त में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

शैक्षिण निर्हितार्थ :

1. सरकार द्वारा महिलाओं को सामाजिक स्वतंत्रता से संबन्धित अपने अधिकारों के बारे उन्मुख कराये।
2. महिला एवं पुरूष शिक्षकों की समाज, परिवार तथा विद्यालय में शिक्षकों के प्रति सकारात्मक विचार रखे जाये।
3. महिलाओं शिक्षकों को नैतिक बंधनों से मुक्ति दिलाई जाये ताकि वे समाज के विकास में पूर्ण सहयोग दे सके।

परिसीमन – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यप्रदेश के इंदौर व उज्जैन संभाग के उच्चतर माध्यमिक स्तर पर कार्यरत महिला एवं पुरूष शिक्षकों को लिया गया है।

भावी शोध अध्ययन हेतु सुझाव – प्रस्तुत शोध का भविष्य में निम्न प्रकार से विस्तार कर सकते है :

1. महिला एवं पुरूष शिक्षकों को उनकी योग्यता के अनुसार कार्यभार दिया जाए।
2. महिला एवं पुरूष शिक्षकों को समुचित प्रकाश, वायु संचार, बैठक व्यवस्था, शान्त एवं सुरूचि पूर्ण वातावरण प्रदान किया जाये।
3. इनको सेवारत् प्रशिक्षण, कार्यशाला, संगोष्ठी आदि में सम्मिलित होने के उपर्युक्त अवसर प्रदान किया जाये।
4. इन्हें विषयवस्तु को तकनीकी द्वारा हेतु अभिप्रेरित किया जाये।
5. प्रस्तुत शोध अध्ययन में जनसंख्या का आकार बढ़ा सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ओझा राजकुमार, औद्योगिक मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, पंचम संस्करण, पेज नं. 234 – 244
2. मंगल एस. के (2002) स्टेटिक्स इन सोइकोलोजी एण्ड एजुकेशन, 2^{nd} इण्डिन प्रेन्टाइजहाल आफ इंडिया, Pvt ltd , नई दिल्ली,
3. कुमार प्रमोद (2008), भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याए, संजय पब्लिकेशन्स, आगर, पृष्ठ 272

4. पाण्डेय, कल्पता (2007) शिक्षा मनोविज्ञान, टाटा मैक्ग्रा हिल
पब्किेशन नई दिल्ली , पृष्ठ स. 10

तालिका संख्या 1.1 – महिला एवं पुरूष शिक्षकों के सकारात्मक आत्ममूल्यांकन का मध्यमान, मानक विचल्स एवं टी.का मान

क्रम संख्या	मानसिक स्वास्थ्य के आयाम	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	df	टी. मान
01	सकारात्मक आत्ममूल्यांकन	महिला	172	24.13	6.17	298	2.037
02		पुरूष	128	26.34	7.49		

स्वतंत्रता के अंश 298 एवं 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक मान 1.96 है।

तालिका संख्या 1.2 – महिला एवं पुरूष शिक्षकों के स्वायत्ता का मध्यमान, मानकविचलन एवं टी. का मान

क्रम संख्या	मानसिक स्वास्थ्य के आयाम	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	df	टी. मान
01	स्वायत्त	महिला	172	18.99	3.68	298	1.664
02		पुरूष	128	19.70	3.67		

स्वतंत्रता के अंश 298 एवं 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक मान 1.96 है।

****

लहर कार्यक्रम की वस्तुस्थिति का अध्ययन

डॉ. दीपा त्रिवेदी *

प्रस्तावना – NCF 2005 का एक मूल विचार यह है कि 'प्रत्येक बच्चा हमारे लिए महत्वपूर्ण है और प्रत्येक बच्चे को महत्वपूर्ण मानते हुए उसके साथ शिक्षण कार्य किया जाए तो निश्चित रूप से उसका सीखना सुनिश्चित होगा। लहर कार्यक्रम ऐसी ही प्रक्रिया है, जिसमें गतिविधियों के माध्यम से बच्चो का सीखना सुनिश्चित किया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक बच्चे को अपनी सीखने की गति तेज कर सकने की स्वतंत्रता व पूर्ण अवसर उपलब्ध है। बच्चे छोटे- छोटे समूह में कार्य करते हुए शिक्षक व सहपाठियों की मदद से सीखते-सीखते हुए आगे बढ़ते है। बच्चो की ऊर्जा को बढ़ाने वाला एक पहलू यह भी है कि विद्यालय मे पूरे समय प्रत्येक बच्चा विभिन्न प्रकार की गतिविधियो में सक्रिय रहता है। राज्य मे शैक्षिक दृष्टी से पिछड़े विकास खण्डों के 470 NPEGEI के माडल कलस्टर विद्यालयों सहित सत्र 2009-10 में यह कार्यक्रम को 647 लहर कक्षो में संचालित किया गया था परंतु 2010-11 से 6000 विद्यालयों को और शामिल कर लिया जा चुका है। विद्यालय में लहर कार्य संचालन से पूर्व लहर कक्ष का निर्माण, शेल्फ निर्माण, चौकी, शिक्षक किट की खरीद आदि कार्य क्रमश: SMC एवं रा. प्रा. वि. .शि. प. जयपुर द्वारा संपन्न कराए जाते है।

लहर कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य-

1. गुणवत्ता युक्त शिक्षा को सुनिश्चित करना।
2. कक्षा-कक्ष में बच्चों का ठहराव सुनिश्चित करना।
3. लिंग एवं जातिगत भेदभाव कम करना।
4. प्रारंभिक शिक्षा की नींव (कक्षा 1 एवं 2) को मजबूत करना।

लहर कार्यक्रम की आवश्यकता-

1. कक्षा 1 व 2 के बच्चों पर विशेष ध्यान देकर प्रारंभिक शिक्षा की नींव को मजबूत करने की आवश्यकता है।
2. सीखने की प्रक्रिया बाल केंद्रित एवं आनंददायी बनाने की आवश्यकता है।
3. बच्चों के साथ उनकी गति एवं स्तरानुसार योग्यता के अनुसार कार्य करने की आवश्यकता है।
4. बच्चों मे शिक्षा के प्रति व्याप्त भय को दूर करने की आवश्यकता है।
5. बच्चें शिक्षाकर्म के अनुसार क्षमताऐं अर्जित कर पाए।
6. विद्यालय में बच्चों का जुड़ाव बढ़े एवं उनका नामांकन व ठहराव सुनिश्चित हो सके।

लहर कार्यक्रम की आवश्यकता- **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

कोठारी कमीशन की रिपोर्ट में कहा गया है कि 'हमारे देश का भविष्य कक्षाओं मे तैयार हो रहा है यह सही है कि आज का बच्चा देश का भविष्य है। अगर नींव कमजोर होगी तो भविष्य में मजबूत इमारत का निर्माण असंभव है। जब ब्लॉक शिक्षण के दौरान ग्रामीण क्षेत्र में अध्यापन करवाने का अवसर प्राप्त हुआ तो विद्यालय में लहर कक्ष आकर्षण का केंद्र रहा। लहर कक्ष इतना सुंदर, सुस्थित व सुविधायुक्त था कि जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि यह क्या कार्यक्रम है व इसका बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसी जिज्ञासावश लहर कार्यक्रम पर अध्ययन किया गया।

समस्या –

शिक्षिकाओ से प्राप्त अभिमतानुसार निम्न समस्याऐं ज्ञात हुई-

1. शिक्षिकाओ का अल्प अवधि मे स्थानांतरण।
2. अभिभावकों द्वारा लहर कार्यक्रम से अनभीज्ञयता के कारण अलगाव।
3. गावों मे किसी भी प्रकार के कार्यक्रम (शादी, मौत जैसे विभिन्न कार्यक्रम व भोजन) के दौरान अभिभावकों द्वारा बच्चों को विद्यालय न भेजा जाना।
4. लहर कक्ष का समय-समय पर पुन: पेंट तथा मरम्मत की जाए।
5. प्राथमिक शिक्षक का कार्य व दायित्व के महत्व को समझाते हुए वेतनमान में वृद्धि की जाए जिससे शिक्षक दीन भावना से ग्रस्त न हो।

अध्ययन के उद्देश्य – उद्देश्य एवं लक्ष्य बिना कोई कार्य संभव नहीं। नीती शतक में कहा गया है कि **'मन्दोपि कार्य प्रजुयते'** लहर कक्ष के अध्ययन के सन्दर्भ मे शोधार्थी द्वारा निम्न उद्देश्यों का चयन किया गया-

1. लहर कक्षा कक्ष की वस्तुस्थिति का अध्ययन।
2. लहर कार्यक्रम का विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन।

शोध परिकल्पनाऐं –

1. लहर कार्यक्रम के प्रयोग से विद्यार्थियों मे अधिगम सरल एवम् स्थाई बनाया जा सकता है।
2. लहर कार्यक्रम के माध्यम से विद्यालय में नामांकन व ठहराव को बढ़ाया जा सकता है।

समस्या परिसीमन-

1. प्रस्तुत शोध बांसवाड़ा जिले के 10 विद्यालयों तक ही सीमित है।
2. प्रस्तुत शोध में कक्षा 1 व 2 को ही शामिल किया गया है।

न्यायदर्श-

1. बांसवाड़ा जिले के माडल कल्स्टर विद्यालयों की सूची बनाकर याद्रच्छिक विधि द्वारा 10 माध्यमिक विद्यालयो का चयन किया गया।
2. 10 विद्यालयों में से 20 अध्यापक तथा 50 विद्यार्थियों का याद्रच्छिक विधि द्वारा चयन किया गया।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध में ' **सर्वेक्षण विधि** ' का प्रयोग किया गया है।

उपकरण– वस्तु स्थिति जानने हेतु चेकलिस्ट, संचित अभिलेख तथा साक्षात्कार (प्रश्नावली)।

समस्या, ज्ञात करने हेतु – प्रश्नावली व साक्षात्कार

प्रयुक्त तकनीकी (सांख्यकी) – प्रस्तुत शोध अध्ययन मे खुले प्रश्न की संख्या अधिक होने की वजह से सिर्फ कुछ ही प्रश्नों पर प्रतिशत सांख्यिकी का उपयोग हो पाया है बाकि प्रश्नो का गुणात्मक अध्ययन किया गया है।

---

* प्राचार्य, श्री गुरू हरी किशन कॉलेज ऑफ एज्यूकेशन, रतलाम (म.प्र.) भारत

परिणाम– उद्देश्य क्रमांक 1 के अनुसार–

'लहर कक्षा–कक्ष की वस्तु स्थिति का अध्ययन '

1. वस्तु स्थिति का अध्ययन करने पर वही निम्नानुसार सुविधाएं व समस्याएं प्राप्त हुई–

विद्यालयों में प्राप्त सुविधाएं–कक्षा कक्ष विद्यालय का सबसे बड़ा कक्ष है। इसका आकार लगभग 1620 के नाम के एक कक्षा–कक्ष में तीन दीवारों पर तीन फीट तक सीमेंट प्लास्टर का श्यामपट्ट तैयार किया गया है।

शेल्फ एवं रेक– जिस दीवार पर श्यामपट्ट नहीं बनाया गया उस पर रेक बनाई गई है। शेल्फ में एक ट्रे रखी गई है, जिसमे गतिविधि कार्ड रखे गये है। सभी ट्रे पर रखे जाने वाले गतिविधि कार्ड का लोगों लगाया गया है।

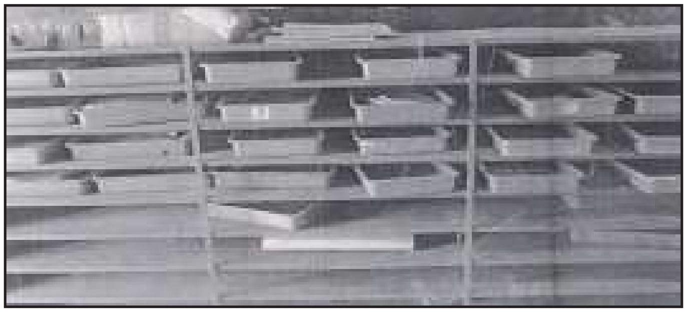

शेल्फ की उँचाई 3 से 4 फीट तक है, जिससे बच्चों को ट्रे तक पहुंचने में सुविधा हो सके। रेक टिकाऊ व मजबूत बनाई गई है ।

अंग्रेजी वर्णमाला के वर्ण, अक्षर तथा उनसे शुरू होने वाले शब्दों व चित्रों को भी बनाया गया है। वर्णमाला लिखने हेतु भी सुविधा दी गई है ।

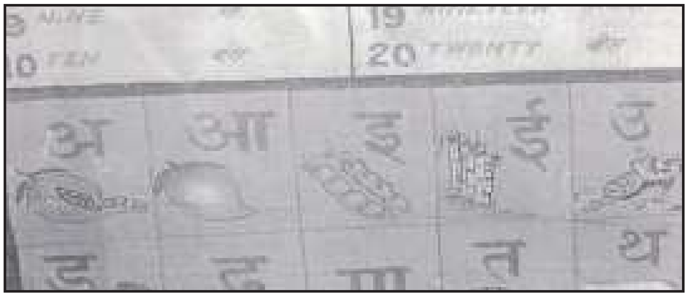

बिंदुपट्ट– श्यामपट्ट में तीन–तीन इंच की दूरी पर निशान बनाए गये है, जिससे बच्चे विभिन्न बिन्दुओं को जोड़कर आकृति बना सके ।

गिनती, पहाड़े, फल–सब्जियाँ आदि संबंधित चार्ट, कक्षा–कक्ष की दीवार पर संबंधित चार्ट बनाए गये है। चित्र के साथ गिनती की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है। साथ ही फल–सब्जी, उपयोगी वस्तुएँ, शरीर के अंगों आदि को भी चित्रित किया गया है।

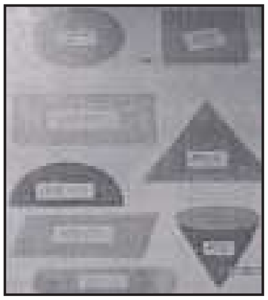

हरा
नीला
of Year
MARCH
MAY
SEPTEMBER
SEASONS IN YEAR

उक्त चित्रों के अतिरिक्त छत पर बच्चों द्वारा किए गये कार्यो का प्रदर्शन करने हेतु तारों का जाल, आकृति के नाम व चित्र, कार्ड में महीने व सप्ताह तथा दिनों के नाम, 'मिड डे मिल' के खाने के प्रकार के साथ अंकित किया गया है ।

शिक्षक किट– इस किट में वह सामग्री है, जो शिक्षण कार्य के दौरान शिक्षक व अन्य बच्चों द्वारा काम मे ली जाती है, जिसका विवरण निम्नानुसार है–

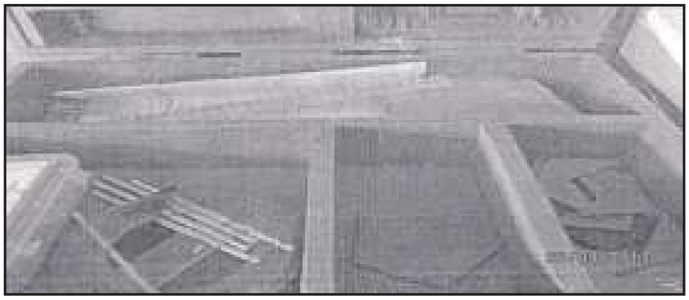

1. आइवरी शीट	–	20 पॅकेट
2. स्केच पेन	–	3 नग
3. रंगीन पेन्सिल	–	5 पॅकेट
4. मार्कर पेन	–	4 नग (विभिन्न रंगों के)
5. रंगीन चाक बॉक्स	–	6 पॅकेट
6. बाइंडर क्लिप 25 मी. मी.	–	8 पॅकेट
7. प्लास्टिक क्रेयान कलर	–	20 पॅकेट
8. रबर बॅंड	–	200 ग्राम
9. शार्पनर	–	2 पॅकेट
10. एच. बी. पेंसिल	–	8 पॅकेट
11. रबर	–	2पॅकेट
12. प्लास्टिक स्केल	–	1 नग
13. जूट स्ट्रिंग	–	1 नग
14. फेविकोल 15 ग्राम	–	2 नग

अन्य– बच्चों के बैठने हेतु दरि पट्टी, बच्चों को बदलते समूह में बैठाना बाल मित्र कक्ष सजा–सुंदर एवम् साफ है। सभी बच्चे मन लगाकर दिए गए कार्य को करते हुए मिले बच्चो का अंकन सीखने की प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। बच्चों के द्वारा किए गए कार्य का प्रदर्शन प्रतिदिन किया जाता है, साथ ही बच्चों के स्तर व प्रगति का कक्षा मे प्रदर्शन भी किया जाता है। खेल खेलना, गीत, कविता व कहानी सुनना व सुनाना प्रत्येक लहर कक्ष हेतु दो शिक्षिकाओं की नियुक्ति की गई है ।

समस्या उद्देश्य क्रमांक 2 के अनुसार–

'लहर– कार्यक्रम द्वारा विद्यार्थियों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन'

शोध मे प्रयुक्त साक्षात्कार के प्रश्न खुले प्रश्न होने की वजह से गुणात्मक रूप से निष्कर्ष निकाले गए है, जो निम्नानुसार है–

1. सभी विद्यार्थियों को लहर कक्ष का नाम मालूम है, विद्यार्थी लहर कक्ष में अध्ययन करना पसंद करते है, विद्यार्थी का मत है कि उन्हें खेल के माध्यम से अध्ययन करना पसंद है ।
2. 80 प्रतिशत विद्यार्थी पहले पोषाहार के बाद विद्यालयों में बैठना पसंद नही करते थे परंतु अब शत–प्रतिशत विद्यार्थी पोषाहार के बाद छुट्टी होने तक विद्यायलय मे उपस्थित रहते है ।
3. शत–प्रतिशत शिक्षकों का मत है कि लहर कार्यक्रम के माध्यम से ही वे नामांकन व ठहराव को बढ़ाने में सफल हो सके ।

निष्कर्ष सार– लहर कार्यक्रम 'सर्व शिक्षा अभियान ' द्धारा संचालित है, जिसका पूरा नाम LEARNING ENHANCEMENT ACTIVITY IN RAJASTHAN है इसमें विभिन्न गतिविधियों द्धारा अध्यापन कराया जाता है, जिसका मुख्य उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा की नींव (कक्षा 1 व 2) को मजबूत करना है, लहर कार्यक्रम में देखा गया है कि विद्यालयों में सुंदर व योग्य कक्षा–कक्ष का निर्माण कराया जाता है, जो विभिन्न अनिवार्य सुविधाओं से युक्त होता है, जिसके लिए 14,800 रुपये प्रति विद्यालय अनुदान प्राप्त होता है, यहाँ नामांकन व ठहराव बढ़ा है। बालिकाओं का रुझान भी विद्यालय में अध्ययन करने हेतु बढा है तथा गुणवत्ता युक्त शिक्षा दी जा रही है

भावी शोध हेतु सुझाव–

1. प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता में अधिक सुधार हेतु नवीनतम प्रयोगों पर अध्ययन किया जाना चाहिए।
2. गैर सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों को कम से कम एक वर्ष तक सरकारी वेतन पर सरकारी विद्यालयों में सेवा अनिवार्य करने के संबंध में शोध होना चाहिए।

उपसंहार–शोधार्थी द्धारा अनुभव किया गया है कि लहर कार्यक्रम वास्तव में एक विशिष्ट एवम् प्रशंसनीय कार्यक्रम है, उक्त कार्यक्रम वर्तमान में बंद कर दिया गया है चूँकि इस कार्यक्रम के द्धारा विद्यायलय में नामांकन व ठहराओं में वृद्धि, लिंग एवम् जातिगत भेदभाव को दूर करने में लहर कार्यक्रम पूर्णत: सफल रहा है। अत: सरकार को चाहिए कि लहर कार्यक्रम को पुन: आरंभ कर इसे विस्तृत पैमाने पर संचालित करें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. बाघेला, गिजु भाई (2006)– प्राथमिक शिक्षा की शिक्षण पद्धतियाँ, जयपुर, आस्था प्रकाशन
2. बालिया, शिरीष, अरोड़ा, रीता शर्मा, ओ.पी.(1996)– शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, जयपुर, राजस्थान वि.वि. ग्रंथ अकादमी
3. भटनागर, आर.पी.(1995)– शिक्षा अनुसंधान, मेरठ, आर.लाला बुक डीपो

क्रसं.	बजट मद	राशि	संख्या	प्रति विद्यालय राशि	स्तर
1	लहर कक्ष निर्माण एवं शेल्फ निर्माण	10,000	1	10,000	एम.एम.सी
2	चौकी	600	6	3600	एम.एम.सी
3	ट्रे	55	20	700	एम.एम.सी
4	शिक्षक किट	500	1	500	एम.एम.सी
	योग			14800	एम.एम.सी

****

उच्च–शिक्षा की चुनौतियाँ
(विशेष संदर्भ – उच्च शिक्षा में चुनौतियाँ और सुधार के उपाय)

सुनील कुमार सिकरवार *

प्रस्तावना –पाठ्यक्रम में शैक्षणिक एवं शैक्षणेत्तर विधाओं का समुचित समावेष ही विद्यार्थियों के विकास के लिए वर्तमान में अपेक्षित है। मानव संसाधनों की कुशलता, योग्यता एवं गुणवत्ता में वांछित सामजस्य स्थापित कर उच्चशिक्षा के पाठ्यक्रमों को अधिक उपयोगी बनाना समय की महत्ती आवश्यकता है। जिससे विद्यार्थी प्रतियोगिता परीक्षाओं में अधिक से अधिक सफल हो और अपने ज्ञान व सुसंस्कारित व्यक्तित्व से प्रदेश एवं देश के विकास में सहभागी बन सकें।उच्च शिक्षा का प्रयोजन व्यक्ति के जीवन में उच्च मूल्यों की स्थापना करना है । इसके लिए अध्ययन व प्रबंधन करने वाले सभी हितग्राहियों ने समेकित प्रयास की जरूरत है । उच्च शिक्षा में परिवर्तन की लहर है, जिसका श्रेय विद्यार्थी, प्राध्यापक एवं प्रबंधन की श्रेणी को दिया जा सकता है । आज विश्व परिदृश्य में चुनौतियों से निपटने के लिये संधारणीय विजय के साथ–साथ गुणात्मक विकास भी आवश्यक है। परम्परा एवं प्रगति के बीच आज उच्च शिक्षा द्वंदग्रस्त है ।

केवल डिग्री मात्र से युवा अपनी जीविका की ग्यारंटी नहीं पा सकता। अत: उच्च शिक्षा में प्रौद्योगिकी परिवर्तन के साथ ही जीवन मूल्यों एवं विशाल कौशल की जानकारी दी जाना आवश्यक हैं। अत:हमारे विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में उन बातों का समावेश होना आवश्यक है, जो कि विद्यार्थियों में इन गुणों एवं नैतिक मूल्यों को विकसित कर सकें।

उच्च–शिक्षा की चुनौतियॉ के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि वह विकल्पों की खोज के लिए विवश करती हैं तथा क्षमता में सुधार और लागत मूल्य में कमी का सुअवसर भी प्रदान करती हैं, इन अवसरों में भरपूर और समुचित लाभ उठाने के लिए विवेकपूर्ण नियोजन एवं श्रमसाध्य कार्यान्वयन की आवश्यकता है। हमें लकीर के फकीर के सहज मार्ग से बचकर विकल्पों की खोज और संदोहन के लिए पसीना बहाना होगा शिक्षा के क्षेत्र में उच्च शिक्षा का विशिष्ट स्थान है। उच्च शिक्षा समाज की महत्वपूर्ण गतिविधियों प्रशासन, व्यापार, रक्षा, स्वास्थ्य, संचार, कला, साहित्य के लिए मानव संसाधन सुलभ कराती है। उच्च कोटि के वैज्ञानिक साहित्यकार नेता तथा दार्शनिक विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों के प्रांगण से ही उत्पन्न होते है। प्राचीनकाल में गुरुकुलों तथा आश्रमों में उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। बौद्धकाल में हमारे देश में उच्च शिक्षा के लिए बड़े–बड़े विश्वविद्यालयों की स्थापना हो चुकी थी।

मुगलकाल में मदरसों में शिक्षा की व्यवस्था थी। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में उच्च शिक्षा निरंन्तर विकास की ओर अग्रसर है। इक्कीसवीं शताब्दी के लिए गठित अंतर्राष्ट्रीय आयोग के प्रतिवेदन के अनुसार उच्च शिक्षा आर्थिक विकास की प्रेरक शक्ति है। वह ज्ञान का भण्डार भी है और ज्ञान का अर्जन भी। अत: कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा का महत्व निर्विवाद है स्वयं विश्व बैंक ने भी सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए उच्च शिक्षा को महत्वपूर्ण माना है। उच्च शिक्षा संस्थान ही ऐसे व्यक्तियों को नवीनतम ज्ञान और तकनीकी से प्रशिक्षित करते है, जो शासकीय सेवा उद्योग एवं अन्य व्यवसायों में जिम्मेदारी निभाते है। शिक्षा का उद्देश्य मूल रुप से चरित्र का निर्माण करना है।

उच्च शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक विकास की रीढ़ है। शिक्षा मनुष्य को संस्कारवान और मानवीय चरित्र को उदातीकृत करने का सबसे कारगर हथियार है। डॉ0 जे.बी. विलनिलम का मानना है कि शिक्षा को मानव संसाधन विकास में राष्ट्रीय निवेश के रुप में लिया जाना चाहिए। जवाब देही के प्रश्न पर नीति–निर्धारण एवं वितीय संस्थाओं को गहन विचार करना होगा क्योंकि इस क्षेत्र में लागत अधिक और वसूली निम्न है। शिक्षा का विकास राष्ट्रीय प्राथमिकताओं राष्ट्रीय परिवेश एवं अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण के अनुरुप होना चाहिए। केन्द्र एवं राज्यों की सरकारी एजेंसी, आयोजना संघ निजी एवं सार्वजनिक प्रबंध, लोकोपकारी संस्था, विद्यार्थी, शिक्षक, प्रशासनिक अधिकारी और सामान्य जनता सभी को इस बात पर ध्यान देना होगा कि न केवल वित्तीय दृष्टि से अपितु मानव संसाधन विकास की दृष्टि से भी यह निवेश सार्थक सिद्ध हो। अगर ऐसा न हुआ तो न केवल निवेश व्यर्थ होगा अपतु उत्तम के स्थान पर साधारण बौद्धिकता का निर्माण देश के लिए अहितकर ही सिद्ध होगा। ब्रिटिश काल में उच्च शिक्षा का उद्देश्य सीमित था और वह था मैकालियन सिद्धांत के अनुरुप भारतीयों का 'एक ऐसा वर्ग तैयार करना जिसका केवल खून एवं रंग भारतीय हो परन्तु शौक मिजाज एवं सोच पूरी तरह अंग्रेजी'। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में उच्च शिक्षा के विकास पर केन्द्र सरकार ने काफी बल दिया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय जहाँ देश में कुल 19 विश्वविद्यालय और 735 महाविद्यालय थे। अब उनकी संख्या में कई गुना वृद्धि हो चुकी है, लेकिन हम अभी भी उच्च शिक्षा के वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल है। आज देश में उच्च शिक्षा प्राप्त बेरोजगारों की संख्या में दिन दूनी रात चौगनी वृद्धि परिलक्षित हो रही है। विद्यार्थियों में ज्ञानार्जन की ललक और शिक्षकों में शिक्षा प्रदान करने की प्रवृति का घोर अभाव है। विश्वविद्यालय परिसर में निरुद्देश्य छात्र हड़ताल कक्षाओं का बहिष्कार, शिक्षकों के प्रति दुर्व्यवहार और छात्राओं के साथ छेड़खानी की घटनाओं में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। यह सब विद्यार्थियों में बढ़ती हुई अनुशासनहीनता का परिणाम है। आज देश के ज्यादातर विश्वविद्यालयों में शैक्षणिक वातावरण दूषित होता चला जा रहा है। कुल मिलाकर देखा जाय तो उच्च शिक्षण संस्थाओं में प्रशासनिक कार्यकुशलता की कमी है, वित्तीय संसाधन का अभाव है तथा छात्रों और शिक्षकों के निजी जीवन में उदारता नैतिक आदर्शो का घोर अभाव है। 21वीं सदी की शिक्षा उपभोक्तावाद को बढ़ावा देने वाली होती जा रही है।

---

* सहायक प्राध्यापक (रसायनशास्त्र) शहीद चंद्रशेखर आजाद, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

बाजारवाद शिक्षा परिसरों में भी पसरता जा रहा है। हम ऐसी शिक्षा के दल दल में धँस रहे है, जो हमें हृदयहीन लाचार और आत्महीन बना रही है। हमारे आदर्श हमसे छूटे जा रहे है।

हम लगातार आत्मनिर्भर बनने की कोशिश में परजीविता की ओर बढ़ते जा रहे है। भारतीय आम जनता परम्परागत शिक्षा को ही रोजगार का साधन बनाती है लेकिन इस दौर में स्थिति बिल्कुल बदल चुकी हैं। इस तरह की आशा रखने वाले युवाओं को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। अब वे दिन लद चुके जब परम्परागत शिक्षा प्राप्त कर रोजगार प्राप्त हो जाता था। उच्च शिक्षा का अनियोजित विस्तार हुआ है लेकिन नौकरी के अवसरों में उस अनुपात में वृद्धि नहीं हो पा रही है। इन सबके बावजूद उच्च शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। वर्तमान समय में भूमण्डलीकरण के युग में विश्व समुदाय के बीच उच्च शिक्षा का महत्व बढ़ता जा रहा है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक सदैव ही शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से एक सम्मान जनक स्थान दिया जाता रहा है।

उच्च शिक्षा के प्रति विश्व की सरकारें भी अपने आय का बहुत बड़ा हिस्सा निवेशित करती दिख रही है। जहाँ शिक्षा ही समाज एवं राष्ट्र के विकास की रीढ है वहॉ भारतीय सरकारों को भी इस पर अधिक ध्यान देने की जरुरत है। अपेक्षाकृत उच्च शिक्षा में भारतीय शासन ने सम्मानजनक धन निवेश किया है परन्तु कुछ वर्ष पूर्व अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इंटरनेशनल एजूकेशन की वार्षिक रिपोर्ट ओमेन डोर 2008 इस बात का इशारा करती है कि अभी उच्च शिक्षा में भारत को वैश्विक केन्द्र बनने में बहुत समय लगेगा। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्राध्यापक निरंजन कुमार ने ओपेन डोर 2008 की रिपोर्ट के अनुसार हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए लिखा है कि यदि भारतीय छात्रों द्वारा प्रति वर्ष विदेश में खर्च की जाने वाली धनराशि यदि देश में रह जाये तो उच्च शिक्षा की काया पलट होने में देर नहीं लगेगी। रिपोर्ट के अनुसार अकादमिक सत्र 2007-08 में अमेरिका में उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिये आने वाले छात्रों में रिकार्ड संख्या में 94563 भारतीय छात्र की संख्या 2001 में सबसे ज्यादा चल रही है। अमेरिका में इस वर्ष 6.23 लाख विदेशी छात्र आए जिनमें सबसे अधिक 15 प्रतिशत भारतीय छात्र हैं। विदेशी छात्रों की इस आवक से यहॉ की युनिवर्सिटी और सरकार दोनों खुश है, क्योंकि न केवल ये छात्र भारी-भरकम फीस चुकाते हैं, बल्कि शिक्षा के आलावा खाने-पीन, रहने और अन्य खर्चो की वजह से बड़ी मात्रा में रोजगार पैदा करते है।

उच्च शिक्षा को लेकर शीर्ष भारतीय उद्योग संगठन एसोचैम की भी एक रिपोर्ट आई है। इसके अनुसार अमेरिका, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया, कनाडा, जर्मनी, सिंगापुर आदि देशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये 4.50 लाख से भी अधिक भारतीय छात्र हर साल जाते है। इस रिपोर्ट के अनुसार इस पलायन की सबसे बडी वजह है पर्याप्त संख्या में उच्च गुणवत्ता वाले संस्थानों का अभाव होना इसके अनुसार आई.आई.टी और आई.आई.एम में प्रवेश न पाने वाले 90 प्रतिशत छात्रों में कम से कम 20-25 प्रतिशत छात्र बाहर चले जाते हैं। इस अध्ययन के अनुसार ये छात्र विदेशों में लगभग 48 हजार करोड़ रुपये प्रतिवर्ष खर्च करते हैं। इस धन में विश्व स्तर के कम से कम 20 इंजीनियरिंग और मैनजमेंट इंस्टीट्यूट खोले जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त भारत में रोजगार में लगभग 46 करोड़ लोगों में से केवल पाँच प्रतिशत के पास ही व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण है, जबकि दक्षिण कोरिया में 95 प्रतिशत जापान में 80 प्रतिशतय और जर्मनी में 75 प्रतिशत तक लोग व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण से लैस है। व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण का अभाव हमारी उत्पादकता को प्रभावित करता है। चीन में व्यावसायिक शिक्षा के लिये पांच लाख से ज्यादा संस्थान हैं जबकि भारत में ऐसे संस्थान मात्र तीस हजार ही है। भारतीय छात्रों द्वारा बाहर खर्च की जाने वाली इतनी बड़ी राशि हर वर्ष अगर देश मे रह जाए तो हमारी उच्च शिक्षा की कायापलट होने में देर नहीं लगेगी। इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि 11वीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा के लिये सरकार का कुल अनुमानित खर्च 84,943 करोड़ रुपये है। अगर भारत में विश्व स्तर के संस्थान होते तो न केवल हम इस राशि का उपयोग अपने लिये करते, बल्कि बड़ी संख्या में बाहर से भी विदेशी छात्रों को आकर्षित करने में सफल होते ।

अमेरिका के अलावा आस्ट्रेलिया, इंग्लैण्ड, कनाडा आदि जगहों से 4-5 लाख विदेशी छात्र आते है। वही भारत में विदेशी छात्रों की संख्या सिर्फ 27 हजार है। सिंगापुर जैसे अत्यंत छोटे से देश में डेढ लाख से अधिक छात्रों के प्रवेश की योजना है। उच्च शिक्षा संस्थानों की दुनिया में रेटिंग करने वाली प्रमुख संस्था क्वाक्वारेली साइमंड्स हर साल शीर्ष दो सौ शिक्षण संस्थानों की सूची निकलती है। इसमें भारत के केवल दो ही संस्थान 2008 में जगह बना पाए। वे भी 150 रैंक के बाद जबकि टाप 50 में एशिया के ही चीन जापान सिंगापुर दक्षिण कोरिया आदि के कई संस्थान हैं। एसोचैम के अनुसार अगर हम उच्च शिक्षा का समुचित विकास कर सकें तो भारत न केवल लगभग 24 लाख करोड रुपये की आय अर्जित कर सकेगा बल्कि इसके द्वारा तकरीबन 10 लाख अतिरिक्त रोजगार भी पैदा होंगे।

सरकार ने एक राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की स्थापना की थी। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने 2006 में अपनी अनुशंसाएं और उच्च शिक्षा के लिये भावी रुपरेखा सरकार को सौंप दी। इसमें अन्य चीजों के अलावा सरकार राजनेताओं और नौकरशाही के हस्तक्षेप से उच्च शिक्षा को मुक्त करने की बात कही गयी थी, ताकि विश्वविद्यालय की राजनीति और लालफीताशाही से दूर रखते हुए उन्हें अकादमिक स्वतंत्रता और स्वायत्ता मिल सके। इसके लिये एक स्वतंत्र उच्च शिक्षा नियामक प्राधिकरण की स्थापना करने की सिफारिश भी की गयी, जो सरकार के हस्तक्षेप से काफी हद तक बाहर होगा। उल्लेखनीय है कि विकसित देशों में उच्च शिक्षा संस्थान सरकार के नियंत्रण से बाहर है। यह रिपोर्ट भारत में उच्च शिक्षा के नये आयाम खोलने की दिशा में अत्यंत दूरगामी है।

सरकार ने इस दिशा में कुछ कदम उठाने शुरु किये है, जैसे 11वीं योजना में 30 केन्द्रीय विश्वविद्यालय तीन इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोनाजी और 20 इंडियन इंस्टीट्यूट आफ इनफार्मेशन टेक्नोलोजी खोलने का प्रस्ताव है। वर्तमान में भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली में 504 विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर की संस्थायें शामिल हैं। इनमें 243 राज्य विश्वविद्यालय 53 राज्यों के निजी विश्व विद्यालय 40 केन्द्रीय विश्वविद्यालय 130 मान्य (डीम्ड) विश्वविद्यालय 33 राष्ट्रीय महत्व की संस्थाएं (संसद के अधिनियमों के तहत स्थापित) और 5 विभिन्न राज्यों के कानूनों के तहत स्थापित संस्थाएं शामिल है। इनके अलावा 2,565 महिला महाविद्यालयों सहित 25,951 महाविद्यालय भी है। ग्यारवीं योजना के प्रारभ के समय 19 केंन्द्रीय विश्वविद्यालय, 7 भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, 20 राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान 2 भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान 6 भारतीय प्रबंधन संस्थान और 1 योजना और वास्तुकला विद्यालय के अलावा केन्द्र द्वारा वितपोषित कुछ अन्य शिक्षण संस्थाएं थीं। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तकनीकी और उच्च शिक्षा के अनेक संस्थान

खोले गये हैं। 13 नये केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना के अलावा 3 प्रांतीय विश्वविद्यालयों को केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में परिवर्तित किया गया है। 8 नये आई.आई.टी., 7 नये आई.आई.एम., 3 नये आई.आई.एसई.आर., 2 नये एसपीए और अनेक नयी पॉलिटेक्निक संस्थाएं भी स्थापित की गई है। इनके अतिरिक्त 10 नयी राष्ट्रीय औसत की तुलना में कम सकल नामांकन अनुपात वाले शैक्षिक रुप से पिछड़े हुए जिलों में 374 महाविद्यालयों की स्थापना पर विचार किया जा रहा है। विश्वस्तरीय 14 विश्वविद्यालयों अथवा नवोन्मेषी विश्वविद्यालय और 20 नये आई.आई.टी संस्थानों की स्थापना का विचार अभी प्रारंभिक अवस्था में हैं। ग्यारवीं पंचवर्षीय योजना में यद्यपि विस्तार समावेशन और उत्कृष्टता अथवा सुगमता समानता और गुणवत्ता पर जोर दिया जा रहा है, उच्च शिक्षा संस्थानों का विकास उतनी तेजी से नहीं हो पाया है जितनी वृद्धि भर्ती की दर में हुई है। प्रकट ओर अप्रकट मांग की तुलना में तो यह और भी कम है। शिक्षण वर्ष 2009-10 के प्रारंभ में विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की औपचारिक प्रणाली में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों की सख्या 136.42 लाख बताई जाती है। यह प्रतिशत सकल भर्ती अनुपात का करीब 12.9 प्रतिशत है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सकल भर्ती अनुपात को सम्मानजनक स्तर तक ले जाने के लिए और अधिक विश्वविद्यालय और महाविद्यालय खोलने होगे।

गुणवत्ता शिक्षा का एक महत्वपूर्ण पहलू है। संस्थाओं के कामकाज की नियमित समीक्षा से इसे सुनिश्चित किया जा सकता है। इसके लिए या तो स्वमूल्यांकन की पद्धति अपनाई जा सकती है या फिर बाहरी एजेंसियों से आकलन कराया जा सकता हैं। संस्थाओं को अधिमान्यता के जरिये भी गुणवत्ता में पारदर्षिता भी सुनिश्चित होती है। पिछले कुछ वर्षो के दौरान उच्च शिक्षा के विस्तार से शैक्षिक कदाचार को भी बढा मिला है। प्रवेश के समय निजी संस्थाओं में छात्रों से शिक्षा शुल्क और अन्य प्रभारों के अतिरिक्त प्रतिव्यक्ति शुल्क (कैपिटेशन फीस) भी लिया जाता है। बड़े पैमाने पर निजी संस्थाओं के प्रवेश से छात्रों शिक्षकों कर्मचारियों उच्च शिक्षा संस्थाओं के प्रबंधन और विश्वविद्यालयों तथा अन्य भागीदारों को लेकर होने वाले मुकदमों की सख्या में भी तेजी से वृद्धि हुई है। विवादों के निपटारे की कोई त्वरित न्यायिक व्यवस्था न होने के कारण विभिन्न सहभागियों के बीच असंतोष बढ़ रहा है, जिससे शिक्षा की गुणवत्ता और संस्थाओं के कुशल संचालन पर विपरीत प्रभाव पडता है। इसके अलावा 1990 के दषक के मध्य से देश में विदेशी शिक्षा संस्थाओं (एफईआई) की गतिविधियो में भी तेजी आई है।

इनमें से कुछ तो प्रतिष्ठित संस्थाएं है, तो ऐसी भी अनेक संस्थाएं हैं जो छात्रों को विशेष रुप से छोटे शहरों और कस्बों से आकर्षित करने के लिए गलत तरीके अपनाती है। इनमें से अनेक संस्थाऐं इसलिए खुली है क्योंकि देश में विदेशी शिक्षा संस्थाओके नियमन के लिए कोई नियामक व्यवस्था अथवा केंन्द्रीकृत नीति नहीं है। ले-देकर तकनीकी शिक्षा के संदर्भ में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद द्धारा बनाए गए कुछ नियम भर ही हैं, जो विदेशी संस्थाओं की कथित गड़बड़ियों को रोकने के लिए पर्याप्त नहीं है। 21वीं सदी के वर्तमान समय से सबसे बडी चुनौती है उच्चशिक्षा प्रत्येक देश की प्रगति वहॉ की उच्च शिक्षा को सार्थकता और सोद्देश्यता पर निर्भर है। उचित व मूर्त उद्देश्यों के निर्धारण में उदासीनता के कारणों का विश्लेषण करना आवश्यक है क्योंकि उच्च शिक्षा के स्वरुप का सामाजिक समस्याओ से कोई संबध नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र. शासन का दृष्टि पत्र गुणवत्ता वर्ष 2011-12 एवं गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012-13
2. रचना द्धिमासिकी अंक 97 अगस्त 2012 हिंदी ग्रथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
3. रचना द्धिमासिकी अंक 98 अक्टूबर 2012 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 36,40,48,60
4. रचना द्धिमासिकी अंक 67 अगस्त 2007 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 112,114
5. दैनिक जागरण समाचार पत्र इन्दौर 3 जून 2007 पृ0 10
6. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

शिक्षण में नाट्यकला की भूमिका – गिजुभाई बधेका की प्रांसगिकता

नरेन्द्र कुमार गुप्ता * प्रमोद कुमार सेठिया **

शोध सारांश – 'वैश्वीकरण एवं ज्ञान के विस्तारीकरण के साथ सीखने को यांत्रिक प्रक्रियाओं एवं रटन्त प्रणाली से मुक्त करना एवं शिक्षक केन्द्रित शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में बदलाव की आवश्यकता महसूस की जा रही है। बच्चों के ज्ञान को रटन्त प्रणाली से मुक्त करना, बच्चों के ज्ञान को पुस्तक के बाहरी ज्ञान से जोड़कर देखना तथा कक्षा के अन्दर व बाहर की गतिविधियों को अधिक स्थान देना अब महत्वपूर्ण हो गया है। नाट्यकता या ड्रामा शिक्षण पद्धति द्वारा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को बालकेन्द्रित रूचिपूर्ण गतिविधि आधारित, सहभागिता आधारित एवं आनन्ददायी बनाया जा सकता है। 'दक्षिणामूर्ति' भावनगर में गिजुभाई बधेका द्वारा 1916 से 1936 तक शिक्षण में किए गए प्रयोग व साहित्य वर्तमान में प्रांसगिक प्रतीत होता है। गिजुभाई की नाट्य प्रयोग पद्धति के अनुसार बालकों की रूचि व स्वभाव के अनुकूल नाट्य प्रयोगों की गतिविधियों द्वारा शिक्षा देने की व्यवस्था व्यवहारिक एवं उत्तम है। इस विधि द्वारा भाषा, गणित, इतिहास, भूगोल व अन्य विषयों का शिक्षण बेहतर किया जा सकता है। गिजुभाई की नाट्य प्रयोग शिक्षण पद्धति वर्तमान व्यवस्था में प्रासंगिक व महत्वपूर्ण प्रतीत होती है।'

प्रस्तावना – 'रंगमंच एक शक्तिशाली किन्तु शिक्षा में सबसे कम उपयोग में लाया गया कला का रूप है। पाठ का नाटकीकरण, रंगमंच का एक लघु भाग है। इससे अधिक सार्थक अनुभव, भूमिका निर्वाह, रंगमंच अभ्यास' शरीर एवं स्वयं की गति व नियंत्रण सामूहिक तथा सहज प्रदर्शन द्वारा संभव हो सकते है। ये अनुभव शिक्षकों के स्वयं के विकास के लिये तो महत्वपूर्ण है ही साथ ही बच्चों के लिये भी उतने ही महत्वपूर्ण है –

राष्ट्रीय पाठ्य चर्या की रूपरेखा 2005 – एन.सी.इ.आर.टी. ने अपने दस्तावेज राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में शिक्षण की प्रचलित प्रणालियों पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि शिक्षण का स्वरूप ऐसा विकसित किया जाए जिससे बच्चे भयभीत होने के बजाय उसका आनन्द उठाएँ। यांत्रिक प्रक्रियाओं से आगे निकलकर बच्चे संबंधित अवधारणा को सीखें। बच्चे किसी अवधारणा को ऐसा माने जिस पर वे आपस में संप्रेषण कर सकते हो और उस पर वे साथ–साथ काम कर सकते है। बच्चे सार्थक समस्याएँ उठाएँ और उसका हल निकालें।

बच्चे अमूर्त का प्रयोग सम्बन्धों को समझने, संरचनाओं को देख पाने, चीजों का विवेचना करने और कथनों की सत्यता को लेकर तर्क करने में करें। शिक्षक प्रत्येक बच्चे के साथ इस विश्वास के साथ काम करें कि प्रत्येक बच्चा सीख सकता है रटन्त प्रणाली से मुक्त प्रणाली को अपनाना, बच्चों के ज्ञान को पुस्तक के बाहरी ज्ञान से जोड़कर देखना तथा कक्षा के अन्दर व बाहर की गतिविधियों को अधिक स्थान देना अब महत्वपूर्ण हो गया है। आज भी विभिन्न प्रयासों के बावजूद शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया शिक्षक केन्द्रित होकर रह गयी है जिसमें बदलाव की आवश्यकता है।

शिक्षण की विभिन्न प्रचलित विधियों में ड्रामा (अभिनय द्वारा शिक्षण) या रोल प्ले एक ऐसी शिक्षण विधि है, जो बच्चों को स्वयं में विभिन्न प्रकार के नाटक, प्रहसन आदि के माध्यम से विषयवस्तु को सीखने का अवसर उपलब्ध कराती है। यह एक अनुदेशन शिक्षण प्रविधि है, जिसमें दी गई वास्तविक स्थिति में त्वरित किसी निर्धारित विषयवस्तु को प्रस्तुत करना होता है। शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया को बालकेन्द्रित, रोचक, गतिविधि आधारित, आनन्ददायी, सहभागिता आधारित एवं करके सीखने पर आधारित बनाने में नाट्यकला (ड्रामा) की महत्वपूर्ण भूमिका है। इस विधि के माध्यम से बच्चा विषयवस्तु को अपने वास्तविक जीवन व एवं परिवेश में पहुंचकर सीखता है। सीखते समय वह आनन्द की अनुभूति करता है तथा उसके द्वारा सीखा ज्ञान स्थायी होता है। इस विधि से बच्चों में संकोच करने की प्रवृत्ति कम होती है, आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। इस विधि के द्वारा बच्चों में सामाजिक कौशलों का विकास होता है तथा दृष्टिकोण विस्तृत होता है।

सैद्धांतिक पक्ष – भारतीय दृष्टि में नाटक की परिभाषा ' अवस्थानुकृतिर्नाट्यम' में ही अनुकृति का भाव छिपा हुआ है अर्थात अवस्था का अनुकरण ही नाटक कहलाता है।

नाटक में अभिनयकर्ता और उसकी अभिनय कला का बहुत महत्व है। नाटक का अभिप्रेत अभिनय होता है। अभिनेता इसे ही रंगमंच पर प्रस्तुत करना है इस प्रस्तुतीकरण को ही अभिनय कहते है। अभिनय चार प्रकार का माना गया है –

1. **आंगिक अभिनय –** आंगिक अभिनय में पात्र अपने अंगों के संचालन से दर्शक को रसानुभूति की ओर ले जाता है। आँख मटकाने, सिर डुलाने तथा अन्य अवसरोपयोगी शारीरिक चेष्टाओं को आंगिक अभिनय कहते हैं।
2. **वाचिक अभिनय –** वाचिक अभिनय में वाणी के प्रयोग, स्वर के आरोह–अवरोह का महत्व होता है।
3. **आहार्य अभिनय –** इसके अन्तर्गत वेशभूषा तथा अन्य प्रकार के श्रृंगार की गणना होती है।
4. **सात्विक अभिनय –** इसमें स्वेद, प्रकम्प, रोमांच आदि का समावेश होता है। अभिनय करने वाला जब किसी भाव दशा में लीन हो जाता है

---

* व्याख्याता, डाइट, पिपलौदा, रतलाम (म.प्र.) भारत
** वरिष्ठ व्याख्याता, डाइट, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

तब उसके शरीर पर सहज प्रतिक्रियाएं होती है, इन्हीं प्रतिक्रियाओं को सात्विक अभिनय कहा गया।

उपर्युक्त चारों प्रकार के अभिनय की सामूहिकता नाटक को प्रभावशाली बना सकती है। भारतीय विचारकों के मतानुसार नाटक के चार प्रमुख तत्व है विषय वस्तु पात्र, रस और अभिनय। नाटक के प्रमुख प्रकार इस प्रकार है – नाटक, एकांकी, गीत, नाट्य, रेडियो रूपक, एकल अभिनय व नुक्कड़ नाटक।

नाटक तथा अभिनय का शिक्षण से बहुत अटूट व गहरा सम्बन्ध है कक्षा शिक्षण में अभिनय या नाट्यकला का उपयोग शिक्षा के इतिहास में बहुत पुराना है। जब शिक्षक कुछ बातचीत करते हुए या कहानी, कविता सुनाते हुए हावभाव का प्रयोग करता है, तो वह भी अभिनय का ही एक रूप है जब बच्चे अपने संस्मरण सुनाते हुए विभिन्न भाव भंगिमाओं का उपयोग करते है तथा शारीरिक मुद्राओं और अंग संचालन द्वारा अपने शब्दों को अर्थ देते है तो वह भी अभिनय का ही एक रूप है। यदि इस महत्वपूर्ण संसाधन को अधिक महत्व देकर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में केन्द्रीय स्थान दे तो सीखने सीखाने को और अधिक रोचक तथा प्रभावी बना सकते है।

गिजुभाई बधेका की प्रासंगिकता – 'बाल देवो भव:' मंत्र के उद्घोषक बच्चों की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक, मूंछों वाली माँ के नाम से प्रसिद्ध गिजुभाई बधेका की कर्मभूमि 'दक्षिणामूर्ति' भावनगर रही। उन्होंने 1916 से 1936 तक बाल शिक्षण के विभिन्न पहलुओं पर चिंतन, मनन व प्रयोग किए। उन्होंने लगभग अपना सारा जीवन बच्चों को खेल द्वारा शिक्षा देने, संगीत, नाटक, रचनात्मक कार्यो, कथा कहानी द्वारा शिक्षा देने आदि प्रवृत्तियों के आयोजन में बिताया। वे बच्चों के साथ मित्रवत और स्नेहपूर्ण ढंग से व्यवहार करते थे। बच्चों की सामर्थ्य क्षमता और प्रयोगशीलता में उनका दृढ़ विश्वास था शिक्षण प्रक्रिया पर गिजुभाई ने कई पुस्तकें लिखी 'प्राथमिक शाला में शिक्षा पद्धतियाँ' उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक है। इस पुस्तक में गिजुभाई ने 22 शिक्षण विधियों का सूत्रपात किया है जिन्हें अपनाकर वर्तमान शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाया जा सकता है। गिजुभाई द्वारा दी गई शिक्षण पद्धतियों में **'नाट्य प्रयोग पद्धति'** महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक है।

गिजुभाई के अनुसार बच्चों में अनुकरण की प्रवृत्ति सहज होती है, जो एक प्रेरणा की तरह कार्य करती है, और यही से उनके नाट्य प्रयोगों का आरंभ होता है। बच्चों के अनुकरणीय स्वभाव में से उत्पन्न होने वाले खेल उनके छोटे–छोटे नाट्य प्रयोग होते है। आपके प्रयोगों के द्वारा बालक प्रत्यक्ष घटने वाली घटनाओं का अनुभव स्वयं करते है। इस तरह वे अपनी कल्पना शक्ति, सृजन शक्ति का पोषण करते है और प्राप्त ज्ञान की वास्तविक व स्थायी बनाते है।

गिजुभाई के अनुसार बाल रूचि व बाल स्वभाव के अनुकूल नाट्य प्रयोगों की गतिविधियों द्वारा शिक्षा देने की व्यवस्था व्यवहारिक है, बल्कि एक उत्तम पद्धति भी है। भाषा, गणित, इतिहास और भूगोल पढ़ाने में नाट्य प्रयोग द्वारा पढ़ाने की विधि का अच्छा उपयोग किया जा सकता है।

विद्यार्थी तो जन्म से ही नाटक प्रिय होते है और वे इस पद्धति से पढ़ने के लिये तैयार रहते है। शिक्षकों के लिये यह चुनौतीपूर्ण हो सकता है। अत: शिक्षक की स्वयं की तैयारी, पूर्ण रूप से जुड़ाव, समर्पण व प्रतिबद्धता आवश्यकता है। एक शिक्षक के रूप में यदि हम बच्चे के समक्ष केवल परिस्थितियों का निर्माण करें तो बच्चा उन परिस्थितियों के आधार पर स्वयं में ज्ञान का सृजन करेगा और विषयवस्तु सीखेगा।

NCF 2005 में उल्लेखित विचार 'शिक्षण का स्वरूप ऐसा बनाया जाऐ जिससे बच्चा भयरहित और आनन्दमयी वातावरण में अपनी सीखने की तत्परता को समृद्ध करता चलें' गिजुभाई बधेका के 80 वर्ष पूर्व दिए गए शिक्षा दर्शन से पूर्णत: मेल होता है एवं उसके आधार पर कक्षा शिक्षण की बाल केन्द्रित, आनन्ददायी, भयमुक्त एवं सक्रिय सहभागिता पर आधारित बनाने के लिये नाट्यकला (ड्रामा) शिक्षण विधि की प्रांसगिकता महत्वपूर्ण हो जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. देविका बी.आर. (पृष्ठ 61), लर्निंग कर्व,अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बैंगलौर अंक 6 (2013)
2. शारदा कुमारी (पृष्ठ 6), शैक्षिक पलाश, एस.सी.ई.आर.टी., भोपाल अंक 34 (2011)
3. बधेका गिजुभाई, प्राथमिक शाला में शिक्षा पद्धतियाँ (पृष्ठ 31), मांटेसरी बाल शिक्षण समिति राजलदेसर (2001)
4. जैन प्रदीप कुमार (पृष्ठ 231) शिक्षा और पाठ्य सहगामी क्रियाएँ, उत्तम प्रकाशन नई दिल्ली (2005)

****

Social circumstances\status\condition on Killing of Girl Foetus

Dr. Narendra Sharma *

Introduction - Some women feel emotionally unprepared to become parent and raise a child. They are too young or do not have a reliable partner with whom to raise a child. Young couples who are just starting their lives together and want children might prefer to become financially secure first to provide better care for their future children, so they easily decided to kill the foetus without any hesitation. Sometimes people enter into a casual sexual relationship that leads to pregnancy with no prospect of marriage. Even if the sexual relationship is more than casual, killing of foetus is one of the ways through which women socially safe and retain her status.

Most women in India kills the foetus or girl foetus for social and economic reasons rather than reasons that count such as physical or psychological abuse. The banning on killing of foetus would save the lives of thousands of unborn babies each year.

Termination of pregnancy or killing of foetus or girl foetus occurs for various reasons. When there are either maternal or foetus defect, which cause termination of pregnancy without human intervention, and it is referred to as "spontaneous abortion". It can also result from trauma to the mother as a result of an accident, or due to other reasons. However, sometimes termination of pregnancy is due to human intervention because of the woman's choice to abort or kills her girl foetus by request or consent.

In our discussion about the reasons of killing of foetus or girl foetus always put one thing in mind that the decision to have killing of girl foetus is very serious and has religious implications. This decision affects the life of a new infant, the foetus, regardless whether he is a few days (an embryo) or a few weeks. All religion believes that life begins at the moment of conception and the foetus is regarded as a living being who has the right to both life and dignity. As the medical science invented inventions for the good of human being to make the birth of an unborn easy and safe the killers of foetus or girl foetus used these inventions in destruction of girl foetus to fulfill their greed for boy.

The social cause comes out from religious beliefs, sanctions and practices. The majority of the people who follow different religious believe think that a son alone can perform all rituals, which ensure salvation of the soul after death. Many people believe that they are the "trustees" of their daughters, who belongs to 'another family'. Parents considered that their daughters are just only a 'guest' till she is married and go to her matrimonial home. The practice of dowry is an economic burden on the parental family and further reduces the status of women and the desire to have a daughter. Due to all these situations the peoples of society do heinous crime of killing of girl foetus.

Economic status is one of the reasons that may force a woman or a family to consider killing of girl foetus. Women have done openly or done secretly resorted to killing of girl foetus, but their access to services has been countered by the imposition of social and legal restrictions, many of which have origin in morality and religion.

The woman's marital status will affect the behavior of her reactions. The fact is true that when a single woman becomes pregnant, she becomes alone, helpless and separated from society. As such she may enter the killing of foetus seeking process with special unhappiness and desperation. This is particularly so because society has made rules to sanctioned, if any one encourages premarital relationship or premarital pregnancy due to premarital relations.

The majority of women with unplanned pregnancies does not live with their partners or have committed relationships. These women realise that in all likelihood they will be raising their child as a single mother. Many are unwilling to take this big step due to various reasons: interruption of education or career, insufficient financial resources, or inability to care for an infant due to care giving needs of other children or family members. For most unwillingly pregnant single women, killing of foetus is the preferred solution. The previously married woman who is unwillingly pregnancy also is in a very awkward situation. Society makes no special provision for the pregnant divorcee or Widow. They have only solution under social pressures that she kills her foetus.

Couples under the interpersonal relations down killing of foetus face so many unpleasant problems whatever their social or marital status. When the father of known and has been anything more than an incidental sex partner, the undesired pregnancy challenges the harmony of whatever relationship has existed. This is so when the man refuses

---

* Guest Faculty, Govt. Law College, Ujjain (M.P.) INDIA

to recognise responsibility. In other cases the man may insist that the woman bears the child even though she does not really want it. More often, the man convinces woman to kills the foetus, when her own feelings about the operation are at least mixed.

Admittedly it is true that family planning has become essential due to the economic and social hardships, yet killing of foetus as a means of birth control is rejected religiously. Increase in number of killing of foetus in India due to the economic hardships. A common problem in India's is declining fertility rate, due to modern families choosing to have less children. Many couples are thus planning for at least one son if they are to have an average of two children, in many instances killing of girl foetus is practiced, especially if the particular birth is planned as the last one and the family remains without a boy.

The social challenge is to convince policy makers who think killing of girl or boy foetus as new way of population control. We must point and understand the seriousness of this gravely wrong solution. Killing of foetus is an interruption of human life and therefore is considered a heinous offence. In a TV reality show of Actor Amir Khan a Doctor disclosed the fact that in 1970 government started family planning with the mentality that people only wants boys or male child so give them the male child and kill the girl foetus.[1]

Every family hopes for a child that will be fully healthy both physically and mentally. The birth of a child, which has a congenital disease or a physical or mental defect, is painful for life that the family will have to cope with. Nowadays, with all the medical advances, physicians can inform the mother if the foetus has congenital disease, a physical anomaly, or a mental defect. Still, medicine cannot discover all cases of birth defects, and the certainty of what is revealed varies from one case to another. Obviously, these medical advances create a dilemma for some families. If the family know that the expected child will certainly be born with some physical or mental defect and the defect is not cured it makes a difficult situation for the family. Should the family have no choice except killing the foetus in the name of mercy towards the foetus? No one is justified killing an innocent foetus because of a birth defect, even if mercy and sympathetic pity are the reasons behind it. But killing of foetus in the name of abnormal foetus is wrong and a criminal act.

According to a study by **Williams College Department of Economics and the World Bank Development Research Group**, "the average dowry with the expenses for the marriage celebration can amount to three to four times a family's total assets. Thus, if there are an excess of daughters to be married, parents could go into life-long debt. Under these circumstances, parents often are not able to pay the dowry necessary to find a suitable match. Social tradition also says that a father's responsibility to a daughter is over once she is married. Thus, if a bride enters her husband's home without an adequate dowry having been paid, she has to face the wrath of her husband and in-laws." Apart from all this, it is a well established norm among all communities that all expenditures for conducting the marriage have to be born by the girl's family... A village woman appropriately summarised the situation, whenever the price of gold goes up, the value of the girl goes down."[2]

Above lines show that parents of girl child's are how much worried about her future problems? This problem in the parents mind increases the threat to India's girl child is imagined future danger of in-laws continuing to harass the new wife's family for additional dowry once she has joined the household. If additional requests are not arranged, the wife is liable to suffer abuse, to being evicted from the household, or in some more serious situation, to being murdered which is commonly called a "dowry death."

The technological causes are the ones that gave birth to the problem of killing of girl foetus. Before diagnostic techniques for detection of the sex of the foetus were available, one could not carry out sex-selected killing of foetus at all. So with the new invention of technology, a new way is open to kill the unwanted girl foetus that they do not want. Previously, the birth of the girl child was often not declared openly, and the girl was even put to death. This process was extremely difficult to carry. Killing of girl foetus is a natural and direct result of infanticide, a result of the invention of technology. Compared to infanticide, killing of girl foetus was a more acceptable means of disposing of the unwanted girl child. Infanticide was a barbaric, inhuman and cruel practice. Killing of foetus on the other hand is carried out by skilled professionals. It is a 'medical' practice, shows justification. It uses scientific techniques, equipments and skills. It reduces the guilt factor associated with the entire exercise. After the killing of girl foetus the family members said that we just only remove tissue nothing else. All over India, since the 1980s when every corner of country is fulfill with cheap ultrasound machines, this mobile killing machine, hold and use by doctors with no ethics, has been doing its lethal work. In 1980s advertise with a slogan "spent 500/- know and save future 5 lakh" is famous in state of Punjab.

The rich and educated are more often performing sex selections. The rich and educated have opportunity to ultrasound because they are able to afford it. According to daily news paper 'Patrika' rich and educated peoples are exercise more killing of girl foetus because they easily afford the expenses.

In the last thirty year in between 42 lakh to 1.21 corer girl foetus is killed.[3]

The laws are present in India to prevent sex-determination tests and killing of girl foetus, but they are ineffective. Sex determination tests and killing of foetus on the basis of gender have been banned for years in India. But the law is helpless and unable to stop the trade which is continuing underground.

The statutory laws such as the Medical Termination of Pregnancy Act and The Pre-conception and Pre-natal Diagnostic Techniques (Prohibition of Sex Selection) Act, 1994 are not enforced strictly and the doctors who are convicted open their clinics again. We all know that no one wants to rigorously enforce the laws or to insist that they may be enforced. These reasons are started from corruption to political unwillingness to induce social change.

If a daughter born in some families they commonly called new born as a double loss. When a daughter will in family they think that expenses of family started and these expenses are started from her birth to wedding ceremony, it will additionally drain family finances. After marriage, the daughter will leave the parents household to serve her husband's family. Parents know that she will one day leave there house, so parents in fear they will have no security in their old age if they do not have a son.

Census Commissioner, **P. Padmanagha says**, "The social and family pressures on the woman or early pregnancy after marriage and for a son can be stifling, often leading to violence, neglect and personal criticism. The long-term psychological and health effect on a woman due to these pressures, and particularly if she does not have a son, could be disastrous. Therefore, when we consider this issue of an adverse sex ratio among children, we should also ask ourselves if women have much choice in the situation."[4]

The Indian culture is based on the man dominating society in which the family members think that the son can moves the clan and a son is one who completes the religious rituals. This tendency is common in all religions. The families think that the legacy is only continue by the son not with the daughter because the daughter is only a guest in the family and she have to go to her home after marriage. Some time the parents are under fear that if they have a girl child than they have more responsibilities. Due to the fear of the crimes against the women which are regularly committed against women parents wants to save them through committing another crime in the form of killing of girl foetus.

References :-

1. Female Foticide : Myth & reality - Anurag Agrawal
2. Child Right in India - Asha Bajpai
3. The Medical termination Of Pregnancy Act, 1971 (ACT No. 34 of 1971 - Government of India
4. The Pre-conception and Pre - Natal Diagnostic Techniques (Prohibition of Sex selection) Act 1994 - Government of India
5. Indian Constitution - J.N. Panday
6. Indian Penal Code - Ratanlal and Dhirajlal
7. Legal aspects of pregnancy, Delivery & abortion - J.V.N. Jaiswal
8. Sex-selective abortion in India - Tulsi Patel

Footnote :-

1. Satyamave jaite 1st Episode, dated- 6/5/12
2. International Institute for Population Sciences, Mumbai: "From Fertility Control to Gender Control," 2005
3. News paper Patrika 25 may 2011
4. "Unwanted Daughters: Gender Discrimination in Modern India," Edited by T.V. Sekher and Neelamber Hatti, Rawat Publications, 2010

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Human Rights Laws In India

Chirag Banthiya *

Abstract - Human rights are those rights that are fundamental for the human life. Human rights are rights to certain claims and freedoms for all human beings all over the world. These rights, besides being fundamental and universal in character, assumed international dimension. These rights ensure to make man free. Universalization of Rights without any distinction of any kind is a feature of human rights. These rights recognize the basic human needs and demands. Every country should ensure human rights to its citizens. The Human rights should find its place in the Constitution of every country.

Introduction - Human rights refer to the basic rights that are believed to be entitled to every human-being. Every human-being are entitled to certain rights and freedom irrespective of their origin, ethnicity, race, colour, nationality, citizenship, sex or religion. These rights are considered universal for humanity. In order to live with dignity certain basic rights and freedoms are necessary, which all Human beings are entitled to, these basic rights are called Human Rights. Human rights demand recognition and respect for the inherent dignity to ensure that everyone is protected against abuses which undermine their dignity, and give the opportunities they need to realize their full potential, free from discrimination.

Concept of Human rights: The term 'Human Rights' is a dynamic concept. These rights may be called the basic rights, the fundamental rights, the natural rights or the inherent rights. The principal objective of both Indian and international laws is to protect the human personality and its fundamental rights. Human Rights is aimed at preserving the dignity of the people. Although human rights are necessary for sustaining human life and promoting development of man yet the internal political structure, levels of social technological and economic development, the resource base and the religio-cultural background of the countries, do have a profound bearing on the policies and priorities of various countries towards human rights.

Human Rights are the rights, which every individual must have against the state of other public authority by virtue of being a member of the human family irrespective of any other consideration. These are rights which are inherent in all citizens, because of their being human. These are the rights which are inalienable because the enlightened conscience of the community would not permit the surrender of those rights by any citizen even of his own violation. These are the rights which are inviolable because they are not only vital for the development and efflorescence of human personality and for ensuring its dignity but also because without them men would be reduced to the level of animals. The United Nations Charter speaks of human rights in its preamble and in six other articles.

Human rights include civil and political rights, such as :

1. The right to freedom of expression
2. The right to freedom of religion or conscience
3. The right to property
4. The right to freedom of assembly
5. The right to privacy
6. The right to vote.

Human rights also cover economic and social rights, such as:

1. The right to an adequate standard of living
2. The right to adequate food, housing, water and sanitation
3. The rights you have at work
3. The right to education.

Historical Development Of Human Rights - uman rights are the rights a person has simply because he or she is a human being. Human rights are held by all persons equally, universally, and forever. All human beings are born free and equal in dignity and rights. They are endowed with reason and conscience and should act towards one another in a spirit of brotherhood. Kant said that human beings have an intrinsic value absent in inanimate objects. To violate a human right would therefore be a failure to recognize the worth of human life. Human right is a concept that has been constantly evolving throughout human history. They have been intricately tied to the laws, customs and religions throughout the ages. Most societies have had traditions similar to the "golden rule" of "Do unto others as you would have them do unto you." The Hindu Vedas, the Babylonian Code of Hammurabi, the Bible, the Quran (Koran), and the Analects of Confucius are five of the oldest written sources which address questions of people's duties and rights.

---

* Advocate, Ujjain (M.P.) INDIA

Human rights are fundamental to the stability and development of countries all around the world. Great emphasis has been placed on international conventions and their implementation in order to ensure adherence to a universal standard of acceptability. With the advent of globalization and the introduction of new technology, these principles gain importance not only in protecting human beings from the ill-effects of change but also in ensuring that all are allowed a share of the benefits. The impact of several changes in the world today on human rights has been both negative and positive. In particular, the risks posed by advancements in science and technology may severely hinder the implementation of human rights if not handled carefully. In the field of biotechnology and medicine especially there is strong need for human rights to be absorbed into ethical codes and for all professionals to ensure that basic human dignity is protected under all circumstances. For instance, with the possibility of transplanting organs from both the living and dead, a number of issues arise such as consent to donation, the definition of death to prevent premature harvesting, an equal chance at transplantation etc. Genetic engineering also brings with it the dangers of gene mutation and all the problems associated with cloning. In order to deal with these issues, the Convention for the Protection of Human Rights and Dignity of the Human Being with Regard to the Application and Medicine puts the welfare of the human being above society or science.

However the efficacy of the mechanisms in place today has been questioned in the light of blatant human rights violations and disregard for basic human dignity in nearly all countries in one or more forms. In many cases, those who are to blame cannot be brought to book because of political considerations, power equations etc. When such violations are allowed to go unchecked, they often increase in frequency and intensity usually because perpetrators feel that they enjoy immunity from punishment. - - Faisal Fasih

Human Rights in India - Human rights in India require the existence and protection of a well regulated society. Only the society and the state can guarantee these human rights to the individual. But to enjoy these rights perfectly the citizens of India too must observe the social norms properly. However, in India under “the Protection of Human Rights 1993 (No. 10 of 1994)”, the Human Rights have been defined in the following way:

2 (1) d) “*Human rights” means the rights relating to life, liberty, equality and dignity of the individual guaranteed by the constitution or embodied in the International Covenants and enforceable by courts in India.”*

India has also enacted the protection of **Human Rights Act in 1993** and also constituted the National Human Rights Commission, the State Human Rights Commission in different States and Human Right Courts. In spite of these apparently fixed positions, some shifts are also visible in each perspective of human rights. *Violation of human rights in India is now seen as violations of the democratic principles* enshrined in the Indian Constitution as well as violation of India’s international commitment of humanitarian international law and international covenants. The analysis of the human rights should be made from three perspectives:

1. The Socio-Economic dimension of Human Rights in India
2. The legal dimension of Human Rights in India
3. The role of international organizations and NGOs in promotion of human rights.

Steps taken to Protect Human Rights in India - In India, all citizens are entitled to enjoy the privilege of human rights. Several initiatives have been undertaken in India for the greater protection of the women, children and certain other groups of the society such as:

1. Sati Practice has been prohibited in India.
2. The minimum age for marriage has been fixed by law. A boy below the age of 21 and a girl below the age of 18 cannot marry.
3. The Protection of Human Rights Act, was enacted in 1993.
4. Right to Information act was passed in 2005.
5. Child Labor (below the age of 14) is prohibited in factories, and mines.
6. Right to education has been accepted as a fundamental right in India. The Right of Children to Free and Compulsory Education Act was passed in 2009.
7. Dowry System has been prohibited by law. The Dowry Prohibition Act was passed in 1961.
8. The Protection of Women from Domestic Violence Act was passed in 2005 to protect women from domestic atrocities.

Sociological perspective - From a sociological perspective and perfect realization of human rights the whole society should accept the basic norms of human rights. Human rights have three basic premises:

1. The individual remains the primary subject of international human rights law.
2. This international human rights law accepts the existence of the groups.
3. Individual human rights can be fully enjoyed if certain other human rights are fully or partially developed.

Human rights and humanitarian laws - There is a distinction between human rights and humanitarian laws. The Humanitarian laws are those rules of international law which aim to protect people suffering due to the armed international conflicts and directly serving military purposes.

Conclusion - There is always a hierarchy in the subjects of human rights law. No human rights can be detracted from the individual’s human rights, and human rights laws recognize certain rights of the groups. Moreover, the diversity of the cultures and civilization, beliefs and traditions, history and aspirations re flected in polico-legal system, give rise to ever changing meaning to ‘human rights’.

References :-

1. Essay on HUMAN RIGHTS – Important India
2. Human rights and Constitution – India juris publication
3. www.legalservicesindia.com – Human Rights Laws in India.

पर्यावरण संरक्षण के विधिक प्रावधानों के क्रियान्वयन का परिदृश्य एवं सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका—(प्रासंगिक अधिनियमों के व्यावहारिक क्रियान्वयन के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रश्मि शर्मा *

शोध सारांश – वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण एक जटिल समस्या है। आज का बढ़ता हुआ प्रदूषण सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए ही नहीं बल्कि वन एवं वन्यजीव के लिए भी अभिशाप बन गया है। इसी कारण संविधान में पर्यावरण संरक्षण पर विशेष बल दिया जा रहा है तथा इस समस्या से निपटने के लिए समय-समय पर कई कानून भी बनाए गए है। भारत में पर्यावरण कानून का इतिहास 125 वर्ष पुराना है, पर आश्यकता इस बात की है कि पूर्व की विधियों को व्यावहारिक बनाया जाये और पर्यावरण संरक्षण के वर्तमान विधिक प्रावधानों का क्रियान्वयन कठोरता से किया जावें।

शब्द कुंजी – पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण, संवैधानिक प्रावधान, प्रदूषण नियंत्रण कानून।

प्रस्तावना – पर्यावरण संरक्षण से तात्पर्य पर्यावरण की सुरक्षा करना है। पर्यावरण की रक्षा हमारे सांस्कृतिक मूल्यों व परम्पराओं का ही अंग है। **अथर्ववेद में कहा गया है कि** मनुष्य का स्वर्ग यहीं पृथ्वी पर है परन्तु आज मानव इसके इस महत्व और उपयोग को न समझते हुए इनकी उपेक्षा कर रहा है परिणामत: अनेकों समस्याएं मनुष्य के सामने उपस्थित हो रही है।

वर्तमान में देश में आर्थिक विकास के साथ पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हुई है। आज का बढ़ता हुआ प्रदूषण सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए ही नहीं बल्कि वन एवं वन्य जीव के लिए भी अभिशाप बन गया है। इसी कारण संविधान में पर्यावरण संरक्षण पर विशेष बल दिया जा रहा है तथा इस समस्या से निपटने के लिए समय-समय पर कई कानून भी बनाए गए हैं। न्यायपालिका ने अपनी 'न्यायिक सक्रियता' की प्रवृत्ति के माध्यम से अनेक ऐतिहासिक जनहित कार्य किए, जैसे-पर्यावरण संरक्षण की दिशा में प्रयत्न, मानव की गरिमा के साथ जीने का अवसर प्रदूषण मुक्त जल एवं वायु के उपयोग का अवसर आदि।

शोध का उद्देश्य – वर्तमान परिस्थितियों में पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व निर्मित विधियों को क्रियान्वित करने की और व्यावहारिक बनाने की आवश्यकता का पता लगाना ही शोध का उद्देश्य है।

अध्ययन की उपयोगिता – प्रस्तुत अध्ययन से पर्यावरण संरक्षण हेतु कठोर कानूनों का निर्माण एवं क्रियान्वयन करने तथा जनजागरूकता लाने में सहायता मिलेगी।

शोध का अपेक्षित परिणाम – पुष्टि की प्रत्याशा में प्राकल्पना की जाती है कि -पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व निर्मित विधियों का व्यावहारिक क्रियान्वयन आवश्यक है।

शोध प्रविधि–यहां शोध जानकारी हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको का उपयोग किया गया है। प्राथमिक सर्वेक्षण हेतु उद्देश्यीकृत न्यादर्श का आकार 170 उत्तरदाता तक सीमित रखा गया है तथा द्वितीयक सूचनाओं के लिए संदर्भित पुस्तक, समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं एवं इन्टरनेट माध्यम का उपयोग किया गया है।

विषय-विस्तार एवं पल्लवन – पर्यावरण को सुरक्षा प्रदान करने के लिए ब्रिटिशकाल में भी कुछ कानून बने थे, किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पर्यावरण संरक्षण संबंधी मुख्य संवैधानिक प्रावधान और प्रदूषण नियंत्रण कानून निम्नलिखित है-

अ. संवैधानिक प्रावधान – भारत ऐसा पहला देश है, जहां पर्यावरण के संरक्षण और सुधार को मूलभूत कर्त्तव्यों में शामिल किया गया है और इस प्रकार इसे सरकार और नागरिकों का संवैधानिक दायित्व बनाया गया है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 48-ए में कहा गया कि-'राज्य देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा सुधार और वनों तथा वन्य जीवन की रक्षा का प्रयास करेगा।' संविधान के अनुच्छेद 51-ए (जी) में कहा गया है – 'भारत के हर नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह वनों, झीलों, नदियों तथा वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण और सुधार करे और सभी सजीव प्राणियों के प्रति करूणा रखे।' संविधान के अनुच्छेद 21 में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को उन गतिविधियों से बचाया जाना चाहिए, जो उसके जीवन, स्वास्थ्य और शरीर को हानि पहुंचाती हों। पर्यावरण की दृष्टि से अनुच्छेद 252 व 253 काफी महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये पर्यावरण को ध्यान में रखकर कानून बनाने के लिए अधिकृत करते हैं।

ब. प्रदूषण नियंत्रण कानून – भारत में प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए निम्न कानून बनाए गए हैं –

1. **जल (प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974–** यह अधिनियम न केवल विषैले, नुकसानदेह और प्रदूषण फैलाने वाले कचरे को नदियों और प्रवाहों में फैलने पर रोक लगता है बल्कि प्रदूषण नियंत्रण बोर्डो को अधिकार देता है कि मानकों का उल्लंघन होने पर न्यायिक कार्यवाही करें। जल कर अधिनिमय 1977 में यह प्रावधान भी है कि कुछ उद्योगों द्धारा उपयोग किये गये जल पर कर देय होगा।
2. **वायु (प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981–** यह अधिनियम प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को न केवल औद्योगिक इकाइयों की निगरानी की शक्ति देता है, बल्कि प्रदूषित इकाइयों को बंद करने का भी अधिकार प्रदान करता है। वर्ष 1988 में इस अधिनियम में ध्वनि प्रदूषण को भी शामिल किया गया।
3. **वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972–** यह अधिनियम मुख्यत: वन्यजीवन को संरक्षण प्रदान करता है। संकटग्रस्त वन्यप्राणियों के

---

*अतिथि विद्वान (विधि) शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शिकार पर प्रतिबंध लगाना और संकटग्रस्त पौधों व लुप्त होती प्रजातियों को संरक्षण देना इस अधिनियम का प्रमुख उद्देश्य है।

4. **वन संरक्षण अधिनियम,** 1980- वनों के संरक्षण तथा वनों के विकास के लिए भारत सरकार द्वारा पारित इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य वनों का विनाश और वन भूमि को गैर-वानिकी कार्यों में उपयोग से रोकना था।
5. **पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम,** 1986 - इस अधिनियम के अंतर्गत केंद्रीय सरकार को पर्यावरण गुणवत्ता मानक निर्धारित करने, दुर्घटना से बचने के लिए सुरक्षात्मक उपाय निर्धारित करने तथा हानिकारक तत्वों का निपटान करने, प्रदूषण के मामलों की जांच एवं शोध कार्य करने, प्रभावित क्षेत्रों का तत्काल निरीक्षण करने, प्रयोगशालाओं का निर्माण तथा जानकारी एकत्रित करने के कार्य सौंपे गए हैं। इस कानून की एक महत्वपूर्ण बात यह है कि पहली बार व्यक्तिगत रूप से नागरिकों को इस कानून का पालन न करने वाली फैक्ट्रियों के खिलाफ केस दर्ज करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

प्राथमिक शोध प्रक्रियाकरण एवं विश्लेषण - अग्र प्रस्तुत प्रश्न के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों के चयनित न्यादर्श से प्राप्त अभिमत तालिकानुसार प्रदर्शित है।

प्रश्न- क्या वर्तमान परिस्थितियों में पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व निर्मित विधियों को व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए ?

(अ) हाँ। (ब) नहीं।

उत्तरदाताओं की श्रेणी	क्र.अ.	प्रति.	क्र.ब.	प्रति.	कुल योग
न्यायाधीशगण	10	100.00	00	0.00	10
अभिभाषकगण	40	88.88	05	11.11	45
विधि शिक्षक	13	86.66	02	13.33	15
विधि के छात्र	67	83.75	13	16.25	80
सामाजिक कार्यकर्त्ता /समाजसेवी संस्थाएँ	14	70.00	06	30.00	20
कुल योग	144		26		170

तालिका क्र. 01 द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया कि पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व निर्मित विधियों को क्या व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए। 84.70 प्रतिशत उत्तरदाताओं की राय में पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व निर्मित विधियों को व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए। 15.30 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इसके विपरीत मत व्यक्त किया है।

आरेख क्रमांक-01 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

यहां यह ज्ञातव्य है कि सर्वाधिक अभिमत पर्यावरण संरक्षण विधियों को अधिक व्यावहारिक व प्रभावी बनाये जाने के पक्ष में है।

प्रासंगिक अधिनियमों की अपर्याप्तता - हमारे देश में बहुत से पर्यावरण संबंधी कानून बन चुके हैं, जो पर्यावरण के संरक्षण की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं फिर भी वनों द्वारा देश की एक-तिहाई भूमि का आवरण करने का लक्ष्य पूरा करने में हम बहुत पीछे रह गये है। हमारा वन्यजीवन अब भी लुप्त हो रहा है। नदियों का जल अब भी प्रदूषित हो रहा है तथा वायु प्रदूषण अब भी जारी है। हमारे अधिनियमों में अनेक कमियां है, जिनके कारण इनके उचित ढंग से लागू करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जैसे कि -

- वन्यजीवन सुरक्षा अधिनियम, 1972 में स्थानीय लोगों के संरक्षण के उपायों को शामिल नहीं किया गया है। कई पशु-सामग्रियों जैसे बाघ, चीते की खाल आदि के स्वामित्व के सर्टीफिकेट्स की अनुमति है जिससे इनका अवैध व्यापार होता रहता है। वन्य जीवन के लाभों की जानकारी का शिक्षा के माध्यम से पर्याप्त प्रचार नहीं होता है।
- वन संरक्षण अधिनियम, 1980 में स्थानीय आदिवासियों को भागीदार नहीं बनाया गया है। वन-नियंत्रण के अधिकार पूरी तरह से केन्द्र सरकार के पास केन्द्रित कर दिये जाने से कार्य की अधिकता के कारण कई बार केन्द्र सरकार किसी राज्य के अवैध गैर-वानिकी कार्य को रोक नहीं पाती है।
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 में कई बार इसके अनुच्छेद जल तथा वायु संबंधी अधिनियमों के अनुच्छेदों की पुनरावृत्ति मात्र ही है जबकि उनमें दी जाने वाली सजा बहुत कम है। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के अनुच्छेद 24 (2) में कहा गया है कि अपराधी का अपराध यदि दूसरे अधिनियमों में भी आ रहा है, तो उसे उसके अनुसार भी दण्ड दिया जा सकता है। इस प्रकार अपराधी मामूली-सी सजा पाकर पर्यावरण संरक्षण के अधिनियम की अवहेलना करता जाता है।
- अकसर राज्य बोर्ड के पास धनराशि व संसाधनों का अभाव रहता है, जो उसके लक्ष्य पूरा करने में बाधक है।
- मुकदमा दायर करने की प्रक्रिया अपने-आप में ही बड़ी जटिल, लम्बी चलने वाली तथा खर्चीली होती है।
- बहुत बार प्रदूषण फैलाने वाले के साथ अदालत के बाहर ही समझौता कर लिया जाता है।
- प्राय: राजनीतिक दबाव भी कानून की कार्यवाही को कमजोर बना देते है।

पर्यावरण संरक्षण में न्यायालयों की भूमिका - पर्यावरण संरक्षण में न्यायपालिका ने भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके प्रयासों से स्वच्छ पर्यावरण मौलिक अधिकार का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। दिल्ली में प्रदूषित इकाइयों की बंदी तथा स्थानांतरण, सी.एन.जी. का प्रयोग, ताजमहल को प्रदूषण से बचाना, पर्यावरण को शैक्षणिक पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाना तथा संचार माध्यमों के द्वारा पर्यावरण के महत्व का प्रचार-प्रसार आदि न्यायपालिका के सराहनीय प्रयासों की एक झलक है।

शोध के अपेक्षित परिणाम की पुष्टि - पुष्टि की प्रत्याशा में प्राकल्पना की गयी थी कि-वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व निर्मित विधियों को व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए, जिसकी पुष्टि हो रही है। (द्रष्टव्य-तालिका-1)

अत: पर्यावरण संरक्षण विधियों को अधिक व्यावहारिक व प्रभावी बनाना आवश्यक है।

सुझाव -

1. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के कुछ उपबंध जल तथा वायु सम्बन्धी अधिनियमों के उपबन्धों की पुनरावृत्ति मात्र ही है। जबकि उनमें दी जाने वाली सजा बहुत कम है। अत: ऐसी भ्रामक स्थिति को स्पष्ट किया जाय, साथ ही अपराधी मामूली-सी सजा पाकर पर्यावरण संरक्षण के अधिनियम की अवहेलना करता जाता है, अत: सजा की अवधि बढ़ायी जाये।
2. वन्यजीव सुरक्षा अधिनियम, 1972 के अंतर्गत कई पशु-सामग्रियों के स्वामित्व के सर्टीफिकेट्स की अनुमति है, जिससे इनका अवैध

व्यापार होता रहा है, अत: ऐसे अवैध व्यापार को रोकने हेतु शीघ्र कदम उठाए जाएं।

3. वनसंरक्षण अधिनियम, 1980 में वन–संरक्षण हेतु आदिवासियों को भागीदार बनाया जाय, ताकि उनका समर्थन व सहयोग मिलता रहे।
4. ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए देश में विनिर्दिष्ट अधिनियम पारित किया जाये।
5 पर्यावरण प्रदूषण रोकने के लिए शासकीय, अर्धशासकीय और गैर–सरकारी संगठनों के प्रयासों के साथ–साथ जनसाधारण को मिलकर सहयोग करना होगा।

निष्कर्ष – पर्यावरण संरक्षण हेतु उपबंधित विधिक प्रावधान एवं कानून पर्याप्त नहीं है। इसी संदर्भ में अगस्त 2014 में गठित सुब्रमणियन समिति की समीक्षा में भी देश के पर्यावरण की बिगड़ी हुई व्यवस्था को ठीक करने के लिए आवश्यक विनियमों पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। अत: उपर्युक्त सुझावों को ध्यान में रखते हुए पर्यावरण संरक्षण संबंधी पूर्व की विधियों को अधिक व्यावहारिक व प्रभावी बनाना होगा। साथ ही मौजूदा विधिक प्रावधानों का कड़ाई से क्रियान्वयन करना होगा और नए उपायों पर भी विचार करना होगा, तभी प्रदूषण रोकने तथा पर्यावरण को संरक्षित करने की कानून की सार्थकता सिद्ध होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पर्यावरण शिक्षा, डॉ. एम.के.गोयल।
2. भारत संविधान, जयनारायण पांडे, सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।
3. अनिरूद्ध प्रसाद : पर्यावरण एवं पर्यावरणीय विधि की रूप रेखा, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 2009 ।
4. अरविंद कुमार दुबे: पर्यावरण विधियाँ, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।
5. डॉ. सी.पी. सिंह–पर्यावरण विधि, इलाहाबाद लॉएजेन्सी पब्लिकेशन्स।
6. इंडस्ट्रियल इंजीनियरी–सुरक्षा एवं प्रदूषण, डॉ. हेमेंद्र दत्त शर्मा।
7. पर्यावरण अध्ययन, डॉ. रतन जोशी, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
8. योजना पत्रिका, मई 2016.
9. कुरूक्षेत्र पत्रिका जून–2016.

आरेख क्रमांक–01

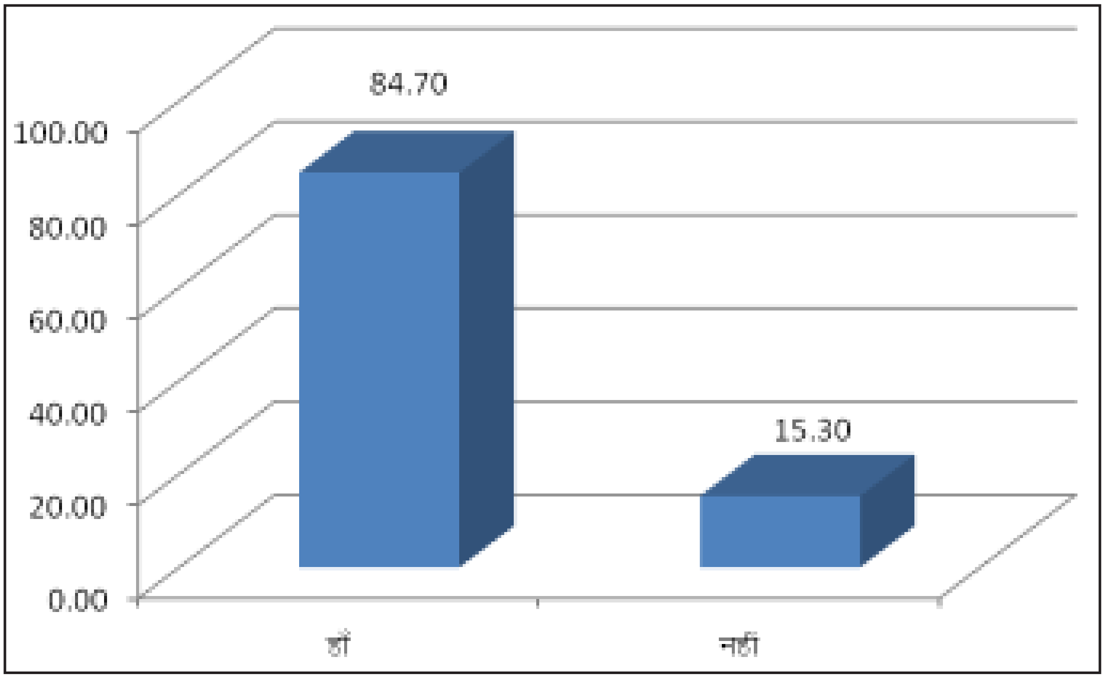

****

प्रतिकर के माध्यम से अपराध पीड़ित महिलाओं को सामाजिक न्याय दिलाने में उच्चतम न्यायालय की भूमिका

कृष्ण वल्लभ विश्वकर्मा *

प्रस्तावना – स्वामी विवेकानंद कहते है कि '**स्त्रियों की अवस्था को सुधारे बिना जगत् के कल्याण की कोई सम्भावना नहीं है। जैसे पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना संभव नहीं है।**' स्पष्ट है महिलाओं की स्थिति में सुधार के बिना सामाजिक न्याय की कल्पना असम्भव है।

किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम मापदंड वहाँ की महिलाओं के साथ होने वाला व्यवहार है। वर्तमान परिदृश्य में महिलाओं एवं बालिकाओं के विरूद्ध विभिन्न अपराधों की घटनाएं सामाजिक न्याय में बाधक है। समाज की आधारशीला महिलाओं के प्रति अपराध न केवल उनकी शारीरिक पवित्रता एवं अखंडता को नष्ट करता है बल्कि व्यक्तिगत सामाजिक संबंधों के उनकी विकास की क्षमता को बाधित कर उनके जीवन व जीविका को भी प्रभावित करता है। उत्पीड़ित महिला को मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक संत्रास से गुजरना पड़ता है ,साथ ही महिला उत्पीड़न का समाज, परस्पर संबंधों व बच्चों पर विशेष रूप से दुष्प्रभाव होता है। अन्य अपराधों ंमें भी बढ़ोतरी महिला उत्पीड़न का ही प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दुष्परिणाम होता है। अत: संविधान कल्पित सामाजिक न्याय की कल्पना साकार करने हेतु इस और ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

भारत का संविधान सभी भारतीय नारियों को समान अधिकार, समान अवसर, समान सुविधाऐं और समान सुरक्षा उपलब्ध कराने की ग्यारंटी देता है। हमारा संविधान महिलाओं गरिमापूर्ण स्थिति और सुरक्षित जीवन का प्रावधान करता है।

महिलाओं के प्रति मैत्रीपूर्ण, दयार्द्र विचार एवं व्यवहार महत्वपूर्ण है। नैतिक मूल्यों को आदर्श संस्कारों में ढालकर महिलाओं के प्रति आदर्श विचारों का पोषण केवल महिलाओं के विरूद्ध ही नहीं, वरन् सभी प्रकार के अपराधों में भी न्यूनता प्रवर्तन कर सकता है। शांन्तिपूर्ण पर्यावरण, वर्तमान समाज की क्रूर प्रवृत्ति को नष्ट कर, सामाजिक न्याय प्राप्त कराने का अमोघ साधन है। वह महिला, जिसके प्रति कोई अपराध कारित किया है, वह उस अपराध परिणति की पीड़ा को साथ लेकर, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा को भोगती रहती है। उसकी पीड़ा में इस बात से कोई अंतर नही आता है कि अभियुक्त को सजा दी गई है या वह दोष मुक्त हो गया है। उसकी समस्या जस की तस रहती है। अत: प्रतिकर के माध्यम से यपीड़ित'महिला की स्थिती में सुधार की अपेक्षा की जा सकती है।

वास्तव में श्रेष्ठतम न्याय प्रणाली का उद्देश्य अपराधी को दंडित करना मात्र ही नहीं है वरन् उसका लक्ष्य समाज में आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक न्याय के माध्यम से समाज के प्रत्येक अंग के मध्य संतुलन एवं शांति बनायें रखना है। न केवल अपराध शास्त्रियों एवं समाज शास्त्रियों ने ही वरन् माननीय उच्चतम न्यायालय ने भी सामाजिक न्याय दिलाने में प्रतिकर को एक अमोघ साधन माना है, जो निम्न निर्णयों में परिलक्षित होता है।

दिल्ली घरेलू वर्किंग महिला फोरम बनाम भारतीय संघ[1] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय महिला आयोग को निर्देश दिया, कि वह ऐसी योजनाओं की शुरूवात करे, जिससे बलात्कार की पीड़ित महिला की परेशानियों समाप्त किया जा सके। इस मामले में सर्वाच्च न्यायालय ने विचार व्यक्त किया कि संविधान के अनु. 38 '1' में निहित दिशा निर्देश सिद्धान्तों में एक आपराधिक क्षतिपूर्ति बोर्ड का गठन किया जाय।

दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 357 के तहत न्यायालय अपराध पीड़ित व्यक्ति कों क्षतिपूर्ति प्रदान कर सकता है। लॉ कमीशन की 41st रिर्पोट के आधार पर प्रतिकर से संबंधित प्रावधान दण्ड प्रकिया संहिता की धारा 357 में प्रावधानित किए गये है। सन् 2008 में सरकार नें महत्वपूर्ण संशोधन दण्ड प्रकिया संहिता में किये एवं पृथक से ही पीड़ित को प्रतिकर दिये जाने के प्रावधान एवं

प्रतिकर संबंधित योजनाओं के लिए शासन को निर्देश दिये। वर्ष 2009 में दण्ड प्रकिया संहिता में एक नयी धारा 357 'ए' जोड़ी गई है। जिसमें राज्य सरकार व केन्द्र सरकार को साथ मिलकर पीड़ितों के लिए क्षतिपूर्ति की योजनाओं का आरंभ करने का निर्देश दिया है। जिसके अनुपालन में राज्य सरकार द्वारा मध्य प्रदेश अपराध पीड़ित प्रतिकर योजना 2015 लागू की गई है।

अपने ऐतिहासिक महत्व के विनिश्चय **रूदलशाह बनाम बिहार राज्य**[1] में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया है कि उसे अनच्छेद. 32 के अधीन राज्यों के कार्यो द्वारा पीड़ित व्यक्ति को प्रतिकर प्रदान करने की शक्ति प्राप्त हैं। प्रस्तुत मामलें में रूदलशाह को किसी अपराध में अभियोजित किया गया था किंतु सेशन न्यायालय द्वारा उसे 30 जून 1968 को विमुक्त किया गया था। किंतु इसके बावजूद भी राज्य प्राधिकारियों के अनुत्तर दायित्व पूर्ण आचरण के कारण 14 वर्ष तक हजारी बाग जेल में सड़ना पडा और उसे 16 जून 1982 को उच्चतम न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने पर जेल से रिहा किया गया। उच्चतम न्यायालय ने बिहार राज्य को निर्देश दिया कि वह रूदलशाह को 35,000 रू. देकर क्षति पूर्ति करें, क्योंकि उसके अधिकारियों के उपेक्षापूर्ण आचरण के कारण उसे 14 वर्ष अवैध रूप से जेल मे रहना पड़ा।

भीमसिहं बनाम जम्मू एण्ड कश्मीर[2] के मामले में न्यायालय ने पिटीशनर को उसके अनु. 21 में प्रदत्त दैहिक स्वाधीनता के अधिकार से अवैध रूप से वंचित किये जाने पर 50 हजार रू. प्रतिकर के रूप में दिलाये। पिटिशनर को विधान सभा के सत्र में भाग लेने से रोकने के उद्देश्य से जानबूझकर या अवैध रूप से गिरफ्तार कर लिया गया था। गिरफ्तारी राजनैतिक उद्देश्य से प्रेरित होकर कराई गई थी।

---

* अतिथि विद्वान (विधि) शासकीय जे.एन. एस. महाविद्यालय, शुजालपुर, जिला-शाजापुर (म.प्र.) भारत

पीपुल्स यूनियन फार डेमोंक्रेटिक राइट्स बनाम पुलिस कमिश्नर दिल्ली हेडक्वार्टर[3] के मामले में एक मजदूर को पुलिस स्टेशन कुछ कार्य के लिए लाया गया था। जब मजदूर ने मजदूरी मांगी तो उसे मारा पीटा गया, जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई। न्यायालय ने निर्देश दिये कि मृतक परिवार को 75 हजार रू. प्रतिकर देने के लिए, राज्य दायी है।

सहेली बनाम पुलिस कमिश्नर[1] के मामले मे 9 वर्ष के बालक की मृत्यु पुलिस के मारने कारण हो गई थी। न्यायालय ने मृतक की मां को 75,000 रू. उदाहरणात्मक प्रतिकर देने का निर्देश दिया।

एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ[2] के ऐतिहासिक निर्णय में प्रतिकर के सिद्धांत को प्रतिपादित करते समय न्यायालय ने यह निर्धारित किया है कि न्यायालय को मूल अधिकारों के उल्लंघन के मामले में अनुच्छेद 32 के अधीन प्रतिकर दिलाने की शक्ति है, किंतु यह साधारण सिविल विधि से नुकसानी पाने के दावें के स्थानापन्न उपचार नही है। इसका प्रयोग केवल उन्ही मामलो में किया जायेंगा जहां मूल अधिकारों का गंभीर रूप से उल्लघंन किया जाता है।

नीलबती वेहरा बनाम उड़ीसा राज्य[3] के महत्वपूर्ण मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि जहां नागरिकों के मूल अधिकारों का राज्य द्वारा या उसके सेवकों या अभिकर्ताओं द्वारा उल्लंघन किया जाता है, वहां अनुच्छेद 32 और 226 के अंतर्गत न्यायालयों को पीड़ित व्यक्ति को प्रतिकर दिलाने की शक्ति प्राप्त है। यह अधिकार प्राईवेट विधि के अधीन प्राप्त प्रतिकर पाने अधिकार के अतिरिक्त है। ऐसे मामलों में संप्रभु की उन्मुक्ति के सिद्धांत का प्रतिवाद लेकर राज्य अपने दायित्व से बच नहीं सकता है। मृतक की मृत्यु पुलिस अभिरक्षा में हुई थी। मृतक की आयु और उसकी मासिक आय को ध्यान में रखकर मृतक की मां को 1,50,000 रू. प्रतिकर और 10,000 रु सुप्रीम कोर्ट लेटिंगेशन कॅमेटी कों देने का निर्देश दिया और कहां कि यह उनके सामान्य विधि के अधीन मिलने वाले के प्रतिकर के अतिरिक्त है। न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 32 के अधीन उसको बहुत व्यापक शक्ति प्राप्त है और वह ऐसे मामलों में पूर्ण न्याय प्रदान करने के लिए नये तरीके ईजाद कर सकता है, जिसमें से एक यह भी है कि पीड़ित व्यक्ति को धनीय प्रतिकर दिलाऐं जाऐं, का लोक विधि में उपचार शीघ्र उपलब्ध है। अंतर्राष्ट्रीय सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों की प्रंसविदा का अनुच्छेद 9 '5' भी यह कहता है कि गारंटी कियें अधिकारोके उल्लघंन के मामलों में संविधान के अधीन प्रतिकर दिलाकर पीड़ित व्यक्ति के साथ न्याय किया जा सकता है।

चिरंजीत कौर बनाम भारत संघ[1] के मामले में एक सैनिक अधिकारी की सेना के अधिकारियों के उपेक्षापूर्ण कार्य के परिणामस्वरूप मृत्यु हो गई थी। न्यायालय ने यह निर्देश दिए कि सरकार उसकी पत्नि को 6 लाख रू. प्रतिकर तथा पारिवारिक पेंशन दोनों दे।

उच्चतम न्यायालय ने **दिल्ली डेमोकेटिक वर्किंग वुमन्स फोरम बनाम भारत संघ**[2] के मामले में महिलाओं के साथ बढ़ते हुए यौन अपराधों के प्रति गम्भीर चिन्ता व्यक्त की और ऐसे मामले के शीघ्र परीक्षण तथा उन्हें प्रतिकर प्रदान करने एवं उनके पुनर्वास के लिए विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किऐ है। न्यायालय ने यह कहा कि हमारे आपराधिक कानून में इस मामले में समुचित उपबन्ध नहीं है। उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायमूर्तियों की खण्डपीठ ने ऐसी महिलाओं को प्रतिकर प्रदान करने एवं उनके पुनर्वास के लिए मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किऐ। न्यायालय ने महिला राष्ट्रीय आयोग को यह निर्देश दिया कि छ: माह के भीतर एक योजना बनाएं और दिऐ गये निर्देशो कों यथाशीघ्र लागू कराने के लिए कदम उठाए।

उच्चतम न्यायालय ने **विशाखा** बनाम **राजस्थान राज्य**[3] के मामले में श्रमजीवी महिलाओं के साथ काम के स्थान पर होने वाले यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए जब तक कि इस प्रयोजन के लिए कानून नहीं बनाया जाता है, विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किया है। न्यायालय ने यह कहा कि देश की वर्तमान आपराधिक विधियाँ या सिविल विधियाँ काम के स्थान पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न से बचाने के लिए पर्याप्त संरक्षण नहीं प्रदान करती हैं और इसके लिए विधि बनाने में काफी समय लगेगा। अत: जब तक विधान मण्डल समुचित विधि नहीं बनाता है, तब तक न्यायालय द्वारा विहित निर्देशों को ही लागू किया जायेगा। न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 32 के अधीन उसे श्रमजीवी महिलाओं के मूल अधिकारो को लागू करने तथा उन्हें उनके उत्पीड़िन को रोकने के लिए मार्ग दर्शक सिद्धान्त विहित करने की शक्ति प्राप्त है। ऐसे मार्गदर्शक सिद्धान्तों को अनुच्छेद 141 के अन्तर्गत विधि माना जायेगा जब तक कि विधान मण्डल समुचित कानून नहीं बना देता है।

पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिवर्टीज बनाम भारत संघ[1] न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पुलिस मुठभेड़ में दो व्यक्तियों को जान से मार डालना अनुच्छेद 21 में प्रदत्त प्राण के अधिकार का सरासर उल्लंघन है और इस मामले में संप्रभु की विमुक्ति का प्रतिवाद लागू नहीं होता है और सरकार इसके लिए उत्तरदायी हैं। न्यायालय ने प्रत्येक मृतक के लिए एक एक लाख रू. नुकसानी प्रदान किया। नीलबती वेहरा के विनिश्चय का अनुसरण करते हुए यह निर्णय दिया कि ऐसे मामले में इन्टरनेशनल कावनेन्ट ऑफ सिविल एण्ड पोलीटिकल राईट्स, 1966 के अनुच्छेद 9 '5' जो ऐसे व्यक्तियों को प्रतिकर दिए जाने का प्रावधान करता है, भारत में भी लागू किया जा सकता है।

अपने एक महत्वपूर्ण निर्णय **बोधिसत्व गौतम बनाम शुभ्रा चक्रवर्ती**[2] में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय को बलात्संग की शिकार महिला को अंतरिम प्रतिकर देने की शक्ति हैं, जब तक की परीक्षण न्यायालय अभियुक्त के ऊपर लगाए आरोप पर अपना निर्णय नहीं देता है। दिल्ली डोमेस्टिक वर्किंग वुमेंस फोरम के मामले का अनुसरण करते हुए उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि यदि न्यायालय प्रथम दृष्टया आरोप की सत्यता के विषय में संतुष्ट हैं, तो वह अंतरिम प्रतिकर देने का आदेश दे सकता है। सर्वोच्च न्यायालय होने के कारण न्यायालय को विभिन्न अधिकारिता प्राप्त है। उच्चतम न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग स्वप्रेरणा से पीड़ित व्यक्ति की और से लोकहितवाद के द्वारा भी कर सकता हैं। उक्त आदेश पारित करते समय भारतीय समाज में स्त्रियों की दोहरी स्थिति पर चिंता व्यक्त की। न्यायालय ने कहा है कि दुर्भाग्यवश एक औरत हमारे देश में ऐसे वर्ग या समूह से संबंधित है, जो अनेक अवरोधों के कारण अलाभकारी स्थिति में है और इसलिए वह पुरूषों की क्रूरताओं की शिकार होती है। जिनके साथ संविधान ने उसे बराबरी का अधिकार प्रदान किया है। स्त्रियों को भी प्राण और स्वतंत्रता का अधिकार है। उन्हें आदर पाने और समानता का अधिकार है। उनकी गरिमा और प्रतिष्ठा का उल्लंघन नहीं किया जा सकता है। उन्हें भी एक सम्मान जनक और शांति पूर्ण जीवन जीनें का हक है। न्याय मूर्ति सग्गीर अहमद ने कहां है कि स्त्रियों के व्यक्तित्व के अनेक पहलू हैं, वह मां, पुत्री, बहन और पत्नि है और वह पुरूष के हाथ की कठपुतली नहीं है। जैसा कि पत्र पत्रिकाओं में आजकल दिखाया जा रहा है। बलात्कार केवल एक स्त्री के विरूद्ध ही नहीं बल्कि के पूरे समाज के विरूद्ध अपराध हैं। अत: इसे रोकने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए।

चेंयरमेन रेलवे बोर्ड बनाम चंद्रिका दास[1] के मामले मे न्यायालय ने

कहा कि जहाँ लोकप्राधिकारियों पर आरोप है और मामला मूल अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित है या लोक कर्तव्य के लागू करने का है। उपचार लोक विधि के अंतर्गत उपलब्ध है। भले ही इसके प्रतिकर के लिए प्राईवेट विधि के अंतर्गत वाद फाईल किया जा सकता है। यह इसलिए भी आवश्यक है कि जहाँ केवल किसी व्यक्ति के साधारण अधिकारों का उल्लंघन होंता है वरन् बलात्संग से पीड़ित एक महिला के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार का उल्लंघन होता है। न्यायालय ने यह भी निर्णय दिया कि अनुच्छेद 21 अंर्तगत एक विदेशी व्यक्ति को भी यह अधिकार प्राप्त होता है और उसे दो कारणों से उपचार पाने का हक है, प्रथम, संविधान के उपबंध और दूसरा 1948 के विश्व मानवाधिकार की घोषणा के आधार पर मानवाधिकार विधि शास्त्र के आधार पर जिसको अंतराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त है।

नीलबाती वहरा बनाम उड़ीसा राज्य^2 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया हैं कि पुलिस अभिरक्षा में गिरफ्तार व्यक्ति तथा जेल में केदियों की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है और यदि पुलिस अभिरक्षा या जेल में उसके मूल अधिकारों का राज्य या उसके सेवकों द्वारा उल्लघंन होता है, तो राज्य को ऐसे नागरिको को प्रतिकर देना होगा।

सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश दीपक मिश्रा के **अनुसार 'पीड़ित को न्याय दिलाने में देरी चिंता का विषय है। पक्षकार परेशान होकर अदालत की सीढ़ियां चढ़ता है और यहां भी उसे कई दिनों तक भटकना पड़ता है। न्यायाधीश को न्यायदान के दैविक कर्तव्य का बोध हमेशा बना रहना चाहिए। विधिक सहायता, पीड़ित को प्रतिकर आदि विषयों पर भी न्यायाधीश को संवेदनशील होने की आवश्यकता है।'**

निश्चित रुप न्यायालय के यह विचार महिलाओं को सामाजिक न्याय दिलाने में न्यायालय की महती भूमिका की और संकेत करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. एन. वी.परांजपे विधि शास्त्र एवं विधि के सिद्धांत।
2. डॉ. जय नारायण पाण्डे भारत का संविधान।
3. डॉ. कपूर अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार।
4. डॉ. बसन्तीलाल बावेल विधि एव सामाजिक परिवर्तन।
5. डॉ. हरिशरण सक्सेना मनव अधिकार।
6. (1995) 1 एस.सी.सी. 14
7. (1983) 4 एस.सी.सी. 141.
8. (1985) एस.सी.सी. 677.
9. (1989) 4 एस.सी.सी. 730.
10. ए.आई.आर. 1990 एस.सी. 513
11. ए.आई.आर. 1987 एस.सी. 1036.
12. (1993) 2 एस.सी.सी. 411
13. (1994) 2 एस.सी..सी. 1
14. (1995) 1 एस.सी.सी. 14.
15. ए.आई.आर. 1997 एस.सी.सी. 3011
16. ए.आई.आर. 1997 एस.सी. 1203
17. (1996) 1 एस.सी.सी. 490
18. (1996) 1 एस.सी.सी. 490
19. (1993) 2 एस.सी.सी. 746

****

Comparison Of Physical Fitness And Academic Achievement Between Government Sports School And Public School Of Rajasthan

Dr. Seema Gurjar * **Gajender Sharma** **

Abstract - The main purpose of the investigation was to comparison of physical fitness and academic achievement between government sports school and public school of Rajasthan.A sample of 40 students from Sport School Bikaner and 40 students from Public Schools of Rajasthan was taken. The age level of the subjects is ranged from 15 to 19 years and classes XI & XII. Physical Fitness was measured by AAPHER Youth Physical Fitness Test and Academic Achievement of the students was obtained from the school annual results. On the basis of analysis the students of Sports School and Public School groups did not differ significantly in Physical Fitness and the students of public schools are good.

Introduction - The world of games and sports has crossed many milestones as a result of different type of researchers. In the modern scientific age sport man are being trained by highly sophisticated scientific equipments for better achievement in their concerned branches of sports. They are being exposed to the exercise and training methods to improve their Physical Fitnessin the terms of improvement of strength, speed, endurance flexibility and agility with the application of different approaches.

Physical fitness is related to scholastic achievement. Research has shown that high school students who are physically fit, tend to get better grades that those who are not. One need physical exercise to supplement one's academic training. If body is physically fit, it will increase the chances of scholastic success.

Physical fitness of school going children and youth in school and colleges has been ignored in our country. There is no sound and broad based physical education programme in school and colleges. Even the Kothari Commission does not go into details of implementing physical education as a curricular subject though a statement has been made that it is wrong to ignore the educational values of physical education, laying too much emphasis on physical value of only physical education.

Generally the people think that a physically fit person cannot be academically bright, since most of his time is wasted on field and therefore, physical education cannot become an academic subject students who are brilliant in studies must be fit but in India where physical education is not valued adequately, people think that participation in physical activities effects the academic achievements.

Samples - Forty (40) School Students were taken as sample who was studying in XI to XII standard of sports school Bikaner and Forty(40) school students from Delhi Public School, Central Public School, were taken as a sample of public school Udaipur. The age of sample was ranging from 15 to 19 yrs. All thesample selected were at random, from the school. Samples were regularly attending morning and evening activities according to the school Physical Education Programme.

Tools - The investigator reviewed the available scientific literature pertaining to the physical fitness, academic achievement from books, periodicals, magazines, journals and research papers; resulting from the review of literature and the discussion with the experts and considering the reliability of the study the following tools were selected:

1. Fitness: - AAHPER Youth Fitness Test.
2. Academic Achievement: - School Annual Result.

Design Of The Study - This was a single group designed involving assessment of selected variables between physically fit and academic achievement at school level.

Findings - For findings the physical Fitness level of Sports School and Public School group students, the AAHPER Youth Fitness Test was conducted. To obtain a single score for the entire fitness test, all the raw scores of the test items were converted into standard scores using 'T' scale. The data, thus, obtained was recorded and analysed statistically. The significance of difference between the means of the Sports School and Public School group in physical fitness was tested by applying "t" test.

The difference between the mean and't' ratio obtained is presented in Table 1 and 2.

Table – 1 The table was shows that data pertaining to main group, Sport School and Public School subjects of Class XII were compared by the AAHPER Youth Fitness Test, the difference in (t-test value 0.170) at df 1 and 34. Which is not significant? The mean difference between Sports School and Public School is 1.95.

---

*Professor, Pacific Physical Education College, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific Physical Education College, Udaipur (Raj.) INDIA

Table 1 - Mean Difference Of Male Students Of Sports School And Public School Of Class Xii Group In "Aahper" Youth Fitness Test

Groups	Mean	SD.	Mean Diff.	't' Ratio
Sports School	302.8	36.34		
And			1.95	0.170
Public School	300.85	35.85		

The mean values of Sports School and Public School group are graphically illustrated in figure 1.

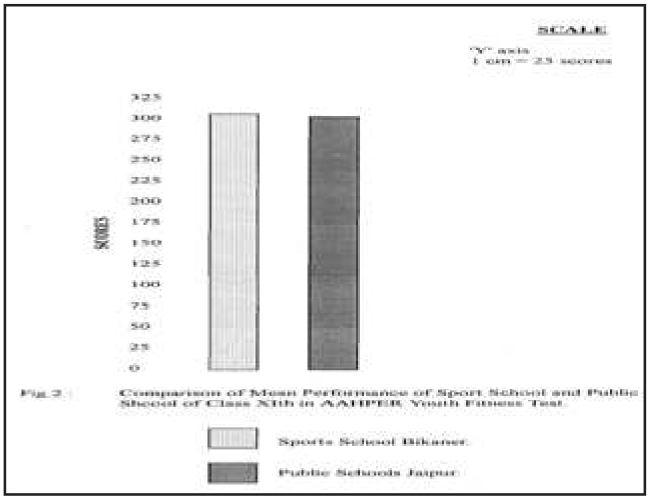

Fig.2 : Comparison of Mean Performance of Sport School and Public Shcool of Class XIIth in AAHPER Youth Fitness Test.

Table- 2 - Mean Difference Of Male Students Of Sports School And Public School Of Class Xii Group In Academic Achievement.

Groups	Mean	SD.	Mean Diff.	't' Ratio
Sports School	48.10	9.05		
And			19.15	7.91
Public School	67.25	5.99		

The mean values of Sports School and Public School group are graphically illustrated in figure 2.

Table – 2 The table shows that data pertaining to main group, Sport School & Public School subjects of Class XII were compared by the Academic Achievement on the basis of Annual Results. The mean value of Public School is very high because they were good in studies also. The mean difference of both groups is 19.15. The difference in (t-test value is 7.91) at df 1 and 76. This is significant.

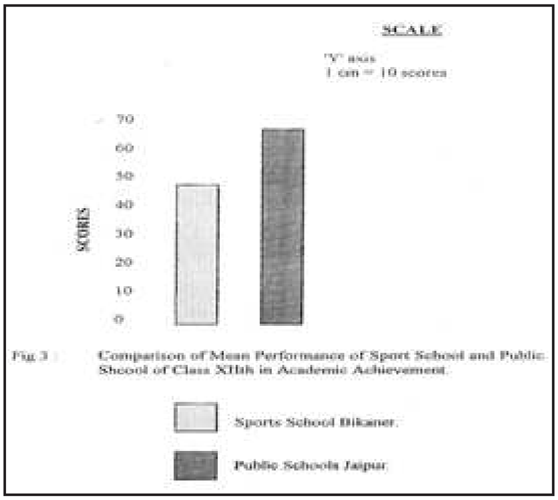

Fig.3 : Comparison of Mean Performance of Sport School and Public Shcool of Class XIIth in Academic Achievement.

Discussion Of Findings - For the purpose of analysis, the study was finally limited to only two academics groups, i.e. Sports School and Public School Group.

The Finding clearly reveal that the students of Sports School and Public School groups and not differ significantly in physical fitness which may be attributed to the fact that both the groups have almost similar conditions of living and work in modern society. As a part of this scheme for promotion of Sports Talent the Students selected for Sports School Sectionsare given free boarding at the School to enable them to get nutrition's diet with liberal grant as per capacity basis given by the Government to the Management of the school. Sports School students were not good in Physical Fitness so thatis the wastage of money.The students of Sports School and Public School group are not in significantly in Academic Achievement. The Public School Students were more good in studies.Even Fahnar made comparison between Physical Fitness and Academic achievement. He found no relationship between Physical Fitness & Academic Achievement.

Discussion On Hypothesis :

1. There would be no significant difference between the Sports School and Public School students in Physical Fitness.
2. There would be significant difference between Sports School and Public School in Academic Achievement.

The findings of the Study show that there was no significance mean difference between Sports and Public School students in Physical Fitness. Hence the first Null Hypothesis was accepted. The second Hypothesis stated that there would be significant difference between Sports and Public School students in (t: 7.91 XII Class) (t – 5.08 XI Class) Academic Achievement. Hence the second Hypothesis is rejected.

Conclusions - On the basis of analysis the following conclusions may be drawn:

1. The students of Sports School and Public School groups did not differ significantly in physical fitness as revealed by the AAHPER Youth Fitness Test.
2. The student of Public School are good in studies.

References:-

1 **Breg James.**1969,"Difference Between Male Participants in a College Intramural Sports Programme in regard to Academic Achievement and Academic and Academic Ability.''

2 **Carl,JFahner.**1960,"Comparison of Physical Fitness with the out of School Fitness Activity, Academic Achievement and Intelligent Quotient of High School Students"

3 **DhaliwalSutindersingh.**1992,**"Physical fitness of 10-18 year Old males living at two selected altitudes".**Ph.D..Edu. Punjabi University

4 **EsmaeelBiabangard.**1997,"Effective factors in Academic Failure of Students.''Tehran.Education Journal,No.10

5 **EsmaeelBiabangard.**2000,Methods to Prevent Academic FailureTehran,Publication of Iran's Parents and Authorities Association.

6 **Hashemi Ahmed.** 2011,"Study the factors Affecting Academic Achievement Motivation of Azad University Students LamardBranch,Scientific-Research Journal, Tehran University No.10

फिल्म गजनी की प्रचार रणनीति और उसका व्यवसाय

लखन रघुवंशी *

प्रस्तावना –हिंदी सिनेमा के प्रचार और बढ़ते व्यवसाय में जनमाध्यमों की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण है। फिल्म के प्रदर्शन से पूर्व विभिन्न जनमाध्यमों पर प्रचार हेतु होने वाले व्यय को निर्माता पहले ही निर्धारित कर लेते हैं। वर्तमान समय में निर्माता 50 प्रतिशत तक फिल्म प्रमोशन पर खर्च करते हैं जिससे फिल्म प्रदर्शन के पहले ही दिन करोड़ों का व्यवसाय कर सके। वर्ष 2008 में प्रदर्शित हुई फिल्म गजनी ने पॉप्यूलर हिंदी सिनेमा में एक ऐतिहासिक आयाम स्थापित किया। फिल्म ने भारत में 100 करोड़ का व्यवसाय कर निर्देशकों और निर्माताओं के सामने एक नया कीर्तिमान रच दिया। इस फिल्म के प्रचार के लिए कई गतिविधियां की गई। फिल्म के अभिनेता आमिर खान के हेयरकट और बॉडी को फिल्म प्रमोशन का हिस्सा बनाया गया और समाचार पत्रों, टेलीविजन चेनल, रेडियो और इंटरनेट पर फिल्म के प्रदर्शन से कई महीनों पहले ही प्रमोशन शुरू कर दिया गया। फलस्वरूप भारत में सर्वप्रथम 100 करोड़ का व्यवसाय करने वाली पहली फिल्म गजनी बनी। इसके बाद फिल्म थ्री इडियट्स, दबंग, बॉडीगार्ड, एक था टाइगर और चेन्नई एक्सप्रेस का भी इसी स्तर पर प्रचार किया गया, फलस्वरूप इन फिल्मों ने 100 करोड़ से भी अधिक का व्यवसाय किया।

गजनी – बॉक्स ऑफिस कलेक्शन

गजनी ने बडे .स्तर पर व्यवसाय किया है। यदि इतनी ही सफलता किन्हीं दो और फिल्मों को मिली है तो वो गदर और हम आपके हैं कौन है।– तरन आदर्श

शोले (1975), हम आपके हैं कौन (1994), दिलवाले दुल्हनिया ले जाएंगे (1995) और गदर: एक प्रेम कथा (2001) के बाद गजनी अब तक के सभी आंकड़ों को पार कर सर्वाधिक व्यापार करने वाली फिल्म बनी। गजनी का निर्माण अल्लू अरविंद और मधु मंटेना ने किया एवं इसका निर्देशन ए.आर. मुरूगोदास द्वारा किया गया। यह फिल्म मुरूगोदास की तमिल फिल्म गजनी का ही हिंदी रीमेक थी। फिल्म ने तमिल में भी उक्त वर्ष सर्वाधिक व्यवसाय किया था। हिन्दी रीमेक में आमिर खान, असिन और जीया खान मुख्य भूमिकाओं में थे। गजनी की सफलता के मूल कारण कुछ इस प्रकार से हैं–

- गजनी 25 दिसम्बर 2008 को 15,00 प्रिंट के साथ विश्वभर में प्रदर्शित की गई। इसमें से 12,00 प्रिंट (एनालॉग एवं डिजीटल) के साथ स्टूडियो 18 के द्वारा भारतीय सिनेमाघरों में प्रदर्शित की गई, जो तुलनात्मक रूप से अधिक थे और इस प्रकार अधिकांश सिनेमाघरों में केवल गजनी का ही प्रदर्शन हो रहा था, विशेष रूप से सिंगल स्क्रीन सिनेमाघरों में।
- रिलायंस एंटरटेनमेंट ने 300 प्रिंट के साथ फिल्म को 22 देशों में प्रदर्शित किया। 112 प्रिंट के साथ यूएसए और कनाडा, यूके में 65 प्रिंट, यूएई में 36 प्रिंट के साथ प्रदर्शित की गई। इन देशों के अतिरिक्त फिल्म नॉर्वे, जर्मनी, डेनमार्क, निदरलैंड, बेल्जियम, साउथ अफ्रीका, हॉन्गकॉन्ग और सिंगापुर में भी प्रदर्शित की गई।
- प्रदर्शन के पहले दिन गजनी ने विश्वभर में कुल 33 करोड़ का व्यवसाय किया, जबकि इसी समय प्रदर्शित हुई दूसरी बड़ी हिट रब ने बना दी जोड़ी ने पहले दिन कुल 18 करोड़ का व्यवसाय किया।
- भारत में प्रदर्शन के पहले दिन फिल्म ने 10 करोड़ की कमाई की जबकि रब ने बना दी जोड़ी ने 7 करोड़ रूपये की कमाई की।
- प्रदर्शन के चौथे दिन तक फिल्म ने कुल 893.60 मिलियन (89.36 करोड़) का व्यवसाय किया। भारत में 28 दिसम्बर तक फिल्म ने 700 मिलियन (70) करोड़ की कमाई की। अन्य देशों में 193.68 मिलियन (19.36 करोड़) का व्यवसाय किया।
- फिल्म ने भारत और विदेशों में लगभग 200 करोड़ का कूल व्यवसाय किया।

टाईम्स ऑफ इंडिया के अनुसार – गजनी ने अब तक के सारे रिकॉर्ड तोड़कर नए कीर्तिमान स्थापित किए। फिल्म ने 200 करोड़ तक का व्यवसाय किया। इसमें से भारत में लगभग 160 करोड़ और विदेशों में लगभग 40 करोड़ का व्यवसाय किया।

गजनी प्रचार रणनीति – 2008 में प्रदर्शित फिल्म गजनी ने न केवल बॉक्स ऑफिस कलेक्शन के नए रिकॉर्ड स्थापित किए अपितु फिल्म ने मार्केटिंग और प्रमोशन के लिए भी कई रचनात्मक और नए तरीकों का उपयोग फिल्म के प्रमोशन के लिए किया गया। गजनी के प्रमोशन से पूर्व यह देखना आवश्यक है कि जिस तरह प्रत्येक प्रॉडक्ट की एक यूएसपी होती है। ठीक उसी तरह आजकल फिल्मों की भी यूएसपी देखी जाती है। फिल्म गजनी में आमिर खान का हेयरकट और 8 पेक एब्स को बतौर फिल्म यूएसपी इस्तेमाल किया गया।

फिल्म मार्केटिंग का खर्च बढ़ गया है। फिल्में् बड़े स्तर पर प्रदर्शित हो रही हैं। यह जरूरी हो गया है कि फिल्म एक से दो सप्ताह के बीच अधिक से अधिक व्यवसाय करे। इसीलिए दर्शकों के बीच फिल्म को लेकर एक अर्जेंसी क्रिएट करना है और उसे एक उत्सव अथवा इवेंट का रूप देना पड़ता है। – मधु मंटेना (निर्माता, गजनी)

फिल्म गजनी के प्रमोशन के लिए ब्रांड एसोसिएशन के साथ ही आमिर खान ने स्वयं भी कई गतिविधियां की। इसके अंतर्गत उन्हों्ने कई शहरों में दर्शकों के बीच जाकर अपनी फिल्म का प्रमोशन किया। इन प्रमोशन गतिविधियों के अंतर्गत उन्होंने अपने दर्शकों का गजनी हेयरकट भी किया। यह बॉलीवुड में पहली ही बार था कि कोई सुपरस्टार अपनी फिल्म के प्रचार के लिए इस तरह की योजनाओं पर भी कार्य करे। गजनी के प्रमोशन और मार्केटिंग के कुछ प्रमुख बिंदु इस प्रकार से हैं–

- फिल्म गजनी के प्रचार के लिए बिग सिनेमाज के 105 कर्मचारियों का

---

* शोधार्थी (फिल्म अध्ययन) महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (गुजरात) भारत

हेयरकट आमिर खान के फिल्म में लुक की ही तरह किया गया।

बिग सिनेमाज के तुषार ढिंगरा के अनुसार– इन गतिविधियों के माध्यम से हम लोगों को फिल्म की नवीनता का अनुभव कराना चाहते थे और इसीलिए कई शहरों में आमिर स्वयं भी हेयरकट करते पाए गए।

- आमिर खान की छवि को लार्जर देन लाइफ बनाने की कोशिश की गई। मल्टीप्लेक्स दर्शकों के साथ ही छोटे शहरों में इस छवि को स्थापित करने के लिए आकाशवाणी और दूरदर्शन का सहारा लिया गया।
- फिल्म के पहले हिस्से में आमिर खान ने एक बिजनेसमैन का किरदार निभाया है, जिसमें उन्होंने फॉर्मल क्लॉथ्स पहने हैं। इन्हीं को देखते हुए आदित्या बिड़ला ग्रुप ने गजनी के डिजाइनर से फॉर्मल कपड़ों की रेंज को मार्केट में उतारा।

  ब्रांड एक्सपीरिएंस के बिजनेस हेड ध्रुव झा के अनुसार– गजनी के फॉर्मल वियर्स की रेंज को तैयार करने में दो वर्ष का समय लगा। इसे आमिर खान की मिस्टर परफेक्शनिस्ट छवि से भी जोड़कर देखा गया और फिल्म के ही डिजाइनर से डिजाइन भी करवाया गया। इसके बाद इसी तरह का प्रमोशन शाहरूख खान की डॉन 2 के लिए भी किया गया।
- सेमसंग मोबाइल ने दो स्पेशल गजनी फोन ङ700 और च200 लॉन्च किए। जिसके साथ गजनी लोडेड फ्री डाटा कार्ड भी दिया गया।
- टाटा इंडिकॉम के साथ प्रमोशनल पार्टनरशिप के अंतर्गत 10 मिलियन उपभोक्ताओं को गजनी के संदेश और एक्सक्लुसिव गजनी कंटेंट दिया गया। साथ ही गजनी हेयरस्टाइल कॉन्टेस्ट का आयोजन भी किया गया।
- टाटा स्काय पर भी इंटरएक्टिव क्वीज और वेलकम स्क्रीन और फिलर्स के स्था्न पर गजनी कंटेंट का ही उपयोग किया गया।
- हैदराबाद की FX लैब्स ने गजनी PC कंसोल गेम्स भी बनाए। यूटीवी ग्रुप की कंपनी इंडियागेम्स ने भी तीन मोबाइल गेम बनाए।
- wallofsuspects.com नाम की वेबसाइट के माध्यम से विजिटर अपनी फोटो इसकी वॉल पर अपलोड कर सकते थे और इसमें से चुनिंदा विजिटर्स को फिल्म निर्माताओं की ओर से उपहार भी दिए गए।
- इसी तरह आमिर खान के प्रेस रिलेशन टिम ने 200 पत्रकारों के फोटो लेकर उस पर आमिर खान के हस्ताक्षर और नोट के साथ भेजे।
- www.findghajini.com नाम से वेबसाइट भी बनाई गई और इसी तरह गजनी की ऑफिशीयल वेबसाइट ghajini.com, हंगामा डॉट कॉम के व्दारा बनाई गई।

गजनी के निर्माण में पूरे दो वर्ष का समय लगा, जिसमें से 135 दिनों की शुटिंग के अतिरिक्त आमिर खान ने लगभग एक महीना फिल्म की मार्केटिंग में भी दिया। – आशु नाइक (गजनी मार्केटिंग टिम के प्रमुख)

नाइक के अनुसार फिल्म के प्रमोशन की योजना प्री–प्रोडक्शन के अंतर्गत ही बना ली गई थी। आमिर खान ने जिस प्रकार फिल्म का प्रमोशन स्वयं दर्शकों से मिलकर किया, इतने बड़े स्तर पर पहले कभी नहीं हुआ। गजनी को हम भारत की पहली इवेंट फिल्म भी कह सकते हैं।

“Stretched over 9 months, Ghajini was the longest PR activity in Bollywood. Since March, every time Aamir Khan appeared on TV in the `Ghajini look’, it helped the film’s cause.' (DNA, Report)

डीएनए की रिपोर्ट के अनुसार– आमिर खान के हेयरकट को टेलीविजन पर लगभग 18 घंटे का कवरेज मिला। टेलीविजन पर इतने प्रचार की कीमत लगभग 129.6 लाख रूपये है। अकेले टीवी न्यूज चैनल पर ही गजनी को 31 घंटे का कवरेज मिला, जिसकी कीमत लगभग 423 लाख रूपये है। इतना ही नहीं आमिर खान के 8 पैक एब्स को 23 घंटे का प्रचार मिला, उसकी कीमत भी लगभग 417 लाख रूपये है।

TAM मीडिया रिसर्च के Eikona PR Measurement विभाग के अनुसार प्रिंट मीडिया ने भी गजनी के प्रमोशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। समाचार–पत्रों और पत्रिकाओं ने गजनी को 33 प्रतिशत तक का कवरेज दिया। यह सब कुछ आमिर के स्वयं व्दारा की गई प्रचार की गतिविधियों से भिन्न था। ये गजनी के फिल्म प्रमोशन का ही प्रभाव था कि गजनी ने कमाई के नए रिकॉर्ड कायम कर सौ करोड़ क्लब की शुरूआत की।

निष्कर्ष – इस प्रकार इस शोध से हमें ज्ञात हुआ कि फिल्म प्रचार में जनमाध्यमों की भूमिका अत्यंत ही महत्वपूर्ण है और फिल्म प्रचार के लिए सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम टेलीविजन ही है। सोशल मीडिया एक उभरता हुआ माध्यम है। संभव है कि आने वाले समय में फिल्म प्रचार की गतिविधियां और भी आधुनिक हो जाए। इस शोध से यह भी स्पष्ट हुआ कि फिल्म के प्रचार में पोस्टर और बैनर के अतिरिक्त जनसंपर्क और लाइव इवेंट्स का भी अत्यधिक महत्व है। फिल्म प्रचार आज मात्र फिल्म् रिलीज की सूचना ही नहीं रहा है अपितु वह फिल्म की आय का भी प्रमुख स्त्रोत हो गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 Adarsh Taran, Ghajini Review, Bollywoodhungama, 23 December 2008. http://www. bollywood hungama.com/ moviemicro/criticreview/id/538494
2 Big picture goes bigger with Ghajini in the overseas market, Reliance News, 22 December 2008. http:// www.rbe.co.in/news-big-pictures-13.html
3 Bollywood top box office collections, Bollywood Movies. https://ilovebollywoodmovies. wordpress. com/2012/10/ 30/bollywood-top-box-office-collections/
4 Bose Derek, Brand Bollywood-A new global entertainment order, Sage publications, New Delhi, 2006
5 Dwyer Rachel, Pinto Jerry, Beyond the Boundaries of Bollywood, Oxford university press, 2011
6 Ghajini: Box office report, Indicine Team, 2008. http:// www.indicine.com/movies/bollywood/ghajini-box-office-report/
7 Khan Tarana, The Marketing of Gajini, Afaqs, January 7, 2009. http://www.afaqs. com/news/story/23031_ The-marketing-of-Ghajini
8 Sarathy Partha V, Indian Film Iindustry: some perspective, The ICFAI University Press, Agartala, 2006

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

Plight Of 1947 Due To Partition

Rachna Mathur*

Introduction - India and Pakistan became independent from the British Empire in 1947. The celebrations were cut short as the partition on religious lines ripped the subcontinent apart. Partition changed millions of lives, and the shape of the world, forever.

No one knows exactly how many were beaten, mutilated, tortured or raped in communal violence between Hindus, Sikhs and Muslims. The death toll has been estimated at 200,000 to two million. Between 10 million and 20 million people were displaced.

Who was to blame? Many in India, Pakistan, Bangladesh (which was East Pakistan until 1971) and Britain have asked that question. There are plenty of candidates. Among the principal players, almost everyone in this story made a decision or misjudgment that contributed to the eventual disaster.

Lord Mountbatten, the last viceroy, was told by the British prime minister, Clement Attlee, in March 1947 to negotiate an exit deal with Indian leaders by October; if he could not, Britain would leave India with no deal by June 1948. The decision to speed this up and leave on Aug. 15 was Lord Mountbatten's. The decision to grant this power to Lord Mountbatten, a naval officer nicknamed the "master of disaster" in the admiralty for his propensity to damage warships by precipitate action, was Mr. Attlee's.Neither Jawaharlal Nehru, the incoming prime minister of India, nor Muhammad Ali Jinnah, the first governor-general of Pakistan, foresaw the scale of the coming violence. Mr. Nehru had told a journalist in 1946 that "when the British go, there will be no more communal trouble in India." Mr. Jinnah had pushed for the partition to create Pakistan, a homeland for Muslims, who would otherwise be a minority in a Hindu-dominated superstate. He was backed by British imperialists, notably Winston Churchill, who believed Pakistan would prove a faithful friend to the West and a bulwark between the Soviet Union and a socialist India.

In 1946, a British Cabinet Mission appointed by Mr. Attlee to negotiate the transfer of power had proposed a 10-year federation in India. This would have given the new Indian authorities a decade's experience of governing before any partition and was probably the last real chance of avoiding it altogether. The plan was accepted by Mr. Jinnah but was wrecked by the revered Mahatma Gandhi.

When Britain took India into the war without consultation in 1939, Congress opposed it; large nationalist protests ensued, culminating in the 1942 Quit India movement, a mass movement against British rule. For their part in it, Gandhi and Nehru and thousands of Congress workers were imprisoned until 1945.

Meanwhile, the British wartime need for local allies gave the Muslim League an opening to offer its cooperation in exchange for future political safeguards. In March 1940, the Muslim League's "Pakistan" resolution called for the creation of "separate states" – plural, not singular – to accommodate Indian Muslims, whom it argued were a separate "nation". Historians are still divided on whether this rather vague demand was purely a bargaining counter or a firm objective. But while it may have been intended to solve the minority issue, it ended up aggravating it instead.

After the war, Attlee's Labour government in London recognised that Britain's devastated economy could not cope with the cost of the over-extended empire. A Cabinet Mission was dispatched to India in early 1946, and Attlee described its mission in ambitious terms:

My colleagues are going to India with the intention of using their utmost endeavours to help her to attain her freedom as speedily and fully as possible. What form of government is to replace the present regime is for India to decide; but our desire is to help her to set up forthwith the machinery for making that decision.

An act of parliament proposed June 1948 as the deadline for the transfer of power. But the Mission failed to secure agreement over its proposed constitutional scheme, which recommended a loose federation; the idea was rejected by both Congress and the Muslim League, which vowed to agitate for "Pakistan" by any means possible.

All the while, communal violence was escalating. In August 1946, the Great Calcutta Killing left some 4,000 people dead and a further 100,000 homeless.

By March 1947, a new viceroy, Lord Louis Mountbatten, arrived in Delhi with a mandate to find a speedy way of bringing the British Raj to an end. On June 3, he announced that independence would be brought forward to August that year, presenting politicians with an ultimatum that gave them

---

***Lecturer (English) M. S. Govt. Girls College, Bikaner (Raj.) INDIA**

little alternative but to agree to the creation of two separate states.

Pakistan – its eastern and western wings separated by around 1,700 kilometres of Indian territory – celebrated independence on August 14 that year; India did so the following day. The new borders, which split the key provinces of the Punjab and Bengal in two, were officially approved on August 17. They had been drawn up by a Boundary Commission, led by British lawyer Cyril Radcliffe, who later admitted that he had relied on out-of-date maps and census materials.

In Pakistan he is known as Quaid-e-Azam or "Great leader". But in India, and beyond, there are those who have considered Mohammad Ali Jinnah as little more than a criminal, a man whose unyielding insistence on a separate country for Muslims led to the brutal division of a nation and the subsequent deaths of hundreds of thousands of people.

Now, however, 62 years after the partition of India, Jinnah's legacy is receiving an overhaul from an unlikely quarter. A controversial new book by a senior politician from India's Hindu nationalist party suggests that Mr Jinnah, a secular man who drank and smoked but rarely visited the mosque, has too long been demonised by Indian society. Furthermore, it argues that he only raised the prospect of a separate Pakistan with independence leaders such as Mahatma Gandhi as a bargaining tool and that it was the inflexibility of Jawaharlal Nehru, the man who became independent India's first prime minister, that ultimately led to the division of the sub-continent.

"I think we have misunderstood him because we needed to create a demon," the book's author, Jaswant Singh, a veteran politician, told the CNN-IBN television channel. "We needed a demon because, in the 20th century, the most telling event in the sub-continent was the partition of the country."

The partition of India in August 1947, when both Pakistan and an independent India won independence from Britain, resulted in one of the largest forced migrations of people in history. As millions of Hindus travelled east into the new India and millions of Muslims travelled West into the new country of Pakistan – there were perhaps 15 million refugees in total – there was also terrible violence. Some estimates suggest that up to one million people may have lost their lives in sectarian killings.

The **partition** also saw the creation of the British **Indian** Army, the Royal **Indian** Navy, the **Indian** Civil Service, the railways, and the central treasury. The **partition** was outlined in the **Indian** Independence Act 1947 and resulted in the dissolution of the British Raj, or Crown rule in **India**.

If we go through the pages of Indian History and Partition Literature many admirable characters will come alive in front of us. About numerous events and disasters we can learn from the books of historians and literary giants who portrayed all the situations, disasters and predicaments faced by the people before, during and after partition. Partition of India is still a darkest period in the history of subcontinent and it has left indelible marks on the pages of Indian history. Many writers have attempted to represent the trauma of partition skilfully through their writings. Britishers before leaving the subcontinent tried to break the unity of religions on the name of partition, many people were shocked as they were aware about the consequences of this division. After partition, the people who earlier were friends, neighbours, colleagues were labelled as Hindus, Muslims, Sikhs and Christians and became thirsty of each others' blood. They acted as savages; they forgot the respect for elders and women, love towards children. To represent the people who on the name of religion killed millions of precious lives, many writers of the Indian subcontinent produced a literature called Partition Literature. The partition led to huge movements and disastrous conflicts across Indo-Pak border. About ten million Hindus and Sikhs were expelled from Pakistan and nearly seven million Muslims from India to Pakistan and thousands of people were killed in this conflict.

References :-

1. Brass, Paul R. 2003. "The partition of India and retributive genocide in the Punjab 1946 – 7: means, methods and purposes," *Journal of Genocide Research* 5:1, 71 – 101
2. Corruccini, Robert S. and Samvit S. Kaul. 1990. *Halla: Demographic consequences of the partition of the Punjab, 1947*. University Press of America.
3. Das, Veena. 1995. *Critical events*. Cambridge: Oxford University Press.
4. Gyanendra, Pandey. 2001. *Remembering partition: Violence, nationalism and history in India*. Vol. 7. Cambridge University Press.
5. Hansen, Anders Bjørn. 2002. "The Punjab 1937-47-A Case of Genocide?" *International Journal of Punjab Studies* 9(1): 1 – 28.
6. Haque, C. Emdad. 1995. "The Dilemma of 'Nationhood' and Religion: A Survey and Critique of Studies on Population Displacement Resulting from the Partition of the Indian Subcontinent" *Journal of Refugee Studies*, 8(2): 185 – 209.
7. Hodson, H. V. 1969. *The Great Divide: Britain-India-Pakistan.* London: Hutchins.
8. Jalal, Ayesha. 1994. *The sole spokesman: Jinnah, the Muslim League and the demand for Pakistan*. Cambridge: Cambridge University Press.

****

कर्मचारियों का कार्यमापन एव नियंत्रण की तकनीक

डॉ. आलोक कुमार यादव*

प्रस्तावना – कार्यालय प्रबंध, सामान्य प्रबंध का एक अभिन्न अंग है। कर्मचारी, साधन, वातावरण एवं उद्देश्य कार्यालय प्रबंध के मुख्य तत्व है। इनमें कर्मचारी कार्यालय प्रबंध की किसी भी योजना में अहम भूमिका निर्वाह करते है। अत: कार्यालय प्रबंधक का यह दायित्व होता है कि वह कार्यालय के लिए उसकी आवश्यकतानुसार सही किस्म के कर्मचारियों का चुनाव करे, उन्हे कार्यालय में उपलब्ध उन साधनों का जिनकी सहायता से काम किया जाता है, सही उपयोग करने का प्रशिक्षण दे। प्रत्येक कर्मचारी को केवल वही कार्य सौपें, जिसके लिए वह सबसे उपयुक्त है ताकि कर्मचारी को ज्यादा कुशलता के साथ काम करने के लिए प्रेरित किया जा सके। परिणाम स्वरुप संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त किया जाना संभव होगा, साथ ही प्रशासनिक लागत भी नियंत्रित हो सकेगी, परंतु यह कार्यमापन एवं नियंत्रण के माध्यम से ही संभव है। कार्यमापन वह क्रिया है, जिसके माधयम से विभिन्न कार्यो के काम करने वाले श्रमिकों की योग्यता के संदर्भ में परस्पर तुलना की जाती है, जिससे यह ज्ञात होता है कि किये जाने वाले कार्य के विभिन्न अंगों का सापेक्षिक मूल्य या महत्व क्या है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र में कर्मचारियों का कार्यमापन एवं नियंत्रण की विभिन्न तकनीको एवं उसके प्रभाव को जानने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रविधि – कार्यालय के कर्मचारियों का कार्यमापन भूतकाल निष्पादन पद्धति, समय विश्लेषण पद्धति, कार्य नमूना पद्धति एवं गति **अध्ययन** पद्धति के द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इसके अतिरिक्त छोटे स्वरुप वाले कार्यालयों में व्यक्तिनिष्ठ निर्णय पद्धति अपनायी जाती है जिसके अंतर्गत प्रबंधक अपने अनुभव के आधाार पर कार्यमापन के प्रमाप निश्चित करते है। इस हेतु द्वितीयक समंको एवं निष्कर्षो का उपयोग किया गया है।

विषय-वस्तु – आधुनिक कार्यालय प्रबंध के कार्यमापन तथा नियंत्रण दोनो ही आवश्यक अंग है, जिनके आधार पर कार्यालय प्रबंधक कार्यालय लागत पर नियंत्रण स्थापित करने में सफल होता है, इसके अतिरिक्त निम्नलिखित कार्यो में भी कार्यमापन महत्वपूर्ण सिद्ध होता है।

1. **मनोबल में वृद्धि –** कार्यालय में कार्य माप एवं कार्यप्रमाप से प्रत्येक कर्मचारी को इस बात का ज्ञान हो जाता है, कि उसे कितना कार्य, किस स्तर का कितने समय में पूरा करना है। इससे उसके मनोबल में वृद्धि होती है तथा उसके कार्य को मान्यता प्राप्त होती है।
2. **प्रशासनिक लागत में मितव्ययिता –** कार्यमापन प्रशासनिक लागत को नियंत्रित करने में उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि इसके अंतर्गत कर्मचारी न केवल पहले की तुलना में अधिक कार्य करते है अपितु कार्यालय सुविधाओं, मशीनों व अन्य साजो – सामान का भी अधिाक एवं सही उपयोग करते है।
3. **प्रेरणात्मक वेतन प्रणाली लागू करने में सहायक –** प्रेरणात्मक वेतन प्रणाली लागू करते समय कर्मचारियों को इस बात की जानकारी दी जाती है कि उनसे कितने कार्य की अपेक्षा है।
4. **कार्य संबंधी गुणों पर उचित बल देना –** कार्यमापन में कार्यसंबंधी गुणों पर विशेष बल दिया जाता है, जब इन्हे किसी कार्य पर लागू किया जाता है तो कार्यमूल्य ज्ञात हो जाता है। और जब इन्हे कर्मचारियों पर लागू किया जाता है तो कार्य निर्देश बन जाते है।
5. **तुलना एवं सर्वेक्षण सुविधा –** कार्यमापन, कार्य विवरण पर निर्भर करता है और कार्य विवरण विभिन्न संस्थाओं के मजदूरी सर्वेक्षण एवं तुलनाओं के लिए आवश्यक सूचना प्रदान करता है।
6. **नई व कुशल कार्य पद्धितियों व परिपाटियों के विकास में सहायक –** कार्यप्रमाप साधनों के द्वारा कार्यालय प्रबंधक कार्यालय में नई व कुशल कार्य पद्धतियों व परिपाटियों को लागू कर सकता है।

कार्यमापन से उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि कार्यालयीन कार्यो पर उचित नियंत्रण हो। नियंत्रण वह प्रबंधकीय कार्य है, जो निर्धारित नीतियों व योजनाओं के उचित क्रियान्वयन के सतत् अनुगमन से संबंध रखता है।

कार्यालय पर नियंत्रण रखने के लिए कार्यालय में हो रहे कार्य का परिमाण व गुणवत्ता की देखरेख करना अति आवश्यक है। कार्य के परिमाण पर नियंत्रण कर्मचारियों द्वारा किये गए कार्य को नाप कर रखा जाता है तथा गुणवत्ता पर नियंत्रण त्रुटियों पर पकड़ द्वारा रखा जा सकता है। कर्मचारियों पर नियंत्रण के लिए संस्था की संगठन संरचना का सुविचारित एवं सुनियोजित होना आवश्यक है जिससे प्रत्येक वरिष्ठ अधिकारी अपने अधिनस्थ कर्मचारियों पर कुशलतापूर्वक नियंत्रण कर सके। नियंत्रण के अंतर्गत कर्मचारियों से श्रेष्ट कार्य प्राप्त करने हेतु कर्मचारियों को कठोरता पूर्वक एवं अभिप्रेरित कर नियंत्रित किया जाता है। अभिप्रेरण वह भावना या इच्छा होती है जो किसी व्यक्ति की इच्छा को इस प्रकार बना देती है कि वह निष्ठा पूर्वक कार्य करने हेतु प्रेरित हो जाता है। कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने के हेतु अभिप्रेरण के मौद्रिक एवं अमौद्रिक रुपों का प्रयोग किया जाता प्रबंधकीय नियंत्रण के माध्यम से कार्यालय के विभिन्न विभागों में समन्वय एवं सांमजस्य स्थापित किया जा सकता है तथा कार्यालय में व्यवस्था एवं अनुशासन का वातावरण बनाया जा सकता है। नियंत्रण चोरी , अनैतिकता व भ्रष्टाचार को रोककर प्रहरी का कार्य करता है।

कार्यमापन एवं नियंत्रण की तकनीक – कार्यमापन के अंतर्गत कर्मचारियों

---

* प्राचार्य, इंदिरा गाँधी शासकीय पॉलिटेक्निक महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

एवं संस्था के अन्य विभागों पर सुगमतापूर्वक नियंत्रण हेतु निम्न तकनीकों को अपनाया जा सकता है, जो कार्यमापन एवं नियंत्रण की चुनौती का का सामना करने के लिए पूर्णत: सक्षम है

1. लागत नियंत्रण लागत – नियंत्रण का प्रमुख उद्देश्य व्यावसायिक व्ययों और उत्पादन लागत को न्यूनतम कर उसकी कार्यक्षमता अधिकतम करना होता है।

2. बजट नियंत्रण – बजट एक वित्तीय वे संख्यात्मक विवरण होता है जो किसी नियत अवधी के पूर्व बनाया जाता है। इस तकनीक में श्रम शक्ति पर कुशलतापूर्वक नियंत्रण किया जाता है।

3. बजटरी नियंत्रण – बजटरी नियंत्रण से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है , जिसके द्धारा वास्तविक कार्यकलापों का पता लगाया जाता है तथा इसके पश्चात् बजट अनुमानों से उनकी तुलना की जाती है।

4. सम विच्छेदन बिंदू तकनीक – सम विच्छेदन बिंदू वह बिन्दू है, जबकि व्यवसायी की कुल आय समान हो। इस सीमा के परे ही कोई व्यापारी लाभार्जन करने की आशा कर सकता है। किसी व्यवसाय में विक्रय की वह मात्रा जिससे प्राप्त आय, कुल उत्पादन लागत के बराबर होती है उसे व्यवसाय का समविच्छेद बिंदु कहते है।

कार्यमापन एवं नियंत्रण में कठिनाईयाँ – वर्तमान प्रतिस्पर्धा के इस युग में कार्यमापन एवं नियंत्रण करना एक कठिन कार्य है। कार्यमापन एवं नियंत्रण की प्रक्रिया संपन्न करते समय कार्यालय प्रबंधक को बहुत सी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। इन कठिनाईयों में से प्रमुख कठिनाईयाँ या दोष निम्नांकित है :-

1. कार्यमापन के संबंध में यह धारणा है कि कार्यालयका कार्य सेवा कार्य है, उत्पादन कार्य नहीं। उत्पादन कार्य के संबंध में प्रमाप निश्चित किये जा सकते है, परंतु सेवा कार्य के प्रमाप निश्चित करना है।
2. कार्यालय में कार्यरत लिपिक स्वयं को कारखाने के श्रमिकों से पृथक एवं श्रेष्ठ समझते है, वे नहीं चाहते है कि उनका कार्य भी श्रमिकों के कार्य की भांति मापा जा सके। क्योंकि योग्यता, विद्धता, निष्ठा, ईमानदारी, लगन से जैसे गुणों को कैसे मापा जा सकता है।
3. कार्यालय में कार्यरत लिपिकों के कार्य का प्रवाह कारखाने में कार्यरत श्रमिकों के समान निश्चित नहीं अपितु अनिश्चित होता है।
4. कार्यालय में कार्यमापन के लिए कार्यो का अध्ययन करने, औसत कर्मचारियों की गति का नापने तथा इनमें विभिन्न प्रकार की छूट जोड़ने के लिए न केवल विशेष रुप से अधिकारियों की आवश्यकता होती है बल्कि कई प्रकार की अप्रत्यक्ष लागतों का सामना करना पड़ता। फलस्वरुप कार्यमापन का कार्य अत्यंत महँगा सिद्ध हो सकता है।
5. कई कार्यालयीन कार्य अमापनीय होते है , जैसे दफ्तर कार्य की योजना बनाने का कार्य, जटिल पत्र या रिपोर्ट ड्राफ्ट बनाने का कार्य। अत: इन्हे मापना व समय तय करना सरल नहीं है।

कार्यमापन एवं नियंत्रण करने हेतु सुझाव – यद्यपि कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों का कार्यमापन एवं नियंत्रण एक कठिन कार्य है, लेकिन असंभव नहीं। कार्यमापन एवं नियंत्रण करते समय निम्न बिंदु सहायक सिद्ध हो सकते है :-

1. कार्यमापन एवं नियंत्रण की उचित तकनीक का चुनाव किया जाना चाहिए। यह विधि ऐसी होनी चाहिए जिसे प्रबंधक में कार्यालय में सरलता पूर्वक लागू कर सके एवं अधिकतम लाभ प्राप्त कर सके।
2. कार्यमापन के कार्य हेतु कार्य मानक का प्रयोग तथा मापे जाने वाले कार्यो का निर्धारण किया जाना चाहिए।
3. कार्यमापन के पूर्व यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि किस कार्य हेतु किन इकाईयों का प्रयोग करना है।
4. इसी प्रकार कार्यालय पर नियंत्रण हेतु सर्वप्रथम योजना बनाई जानी चाहिए, इसके पश्चात् इस योजना को लागू करने हेतु आवश्यक निर्देश दिए जाने चाहिए।
5. नियंत्रण के अंतर्गत कार्यालय में कुशल संगठन ढाँचा बनाया जाना चाहिए, जिससे कर्मचारी अपना कार्य पूर्ण निष्ठा एवं लगन से कर सके।
6. कार्यालय में त्रुटि पूर्ण करने वाले कर्मचारियों के लिए दण्ड तथा त्रुटि रहित कार्य करने वाले कर्मचारियों के लिए पारितोषिक की व्यवस्था की जानी चाहिए। वर्तमान युग प्रतिस्पर्धा का युग है।

निष्कर्ष – वर्तमान युग में प्रत्येक व्यवसायी लाभ एवं संस्था के उद्देश्य प्राप्ति के लिए प्रयत्नरत है। किसी भी संस्था में कर्मचारियों का कार्यमापन एवं नियंत्रण की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यद्यपि कार्यमापन एवं नियंत्रण कार्य एक कठिन एवं महँगा कार्य है, लेकिन असंभव नहीं। यदि कार्यमापन एवं नियंत्रण का कार्य दिए गए सुझावों को दृष्टिगत कर दिया जाए तो यह क्रिया वर्तमान कार्यालय के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है एवं संस्था को उसके उद्देश्यों को प्रदान कर सफलता की ऊँचाईयों तक ले जा सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मामोरिया, मामोरिया एवं दशोरा (1998) – सेविवर्ग प्रबंध एवं औद्योगिक सम्बन्ध, साहित्य भवन (आरएस) आगरा.
2. डॉ. नौलखा, आर.एल. (2007)– औद्योगिक सन्नियम, रमेश बुक डिपो, जयपुर.
3. मंगल एवं सिंघई. (2006)– औद्योगिक सन्नियम आगरा.
4. डॉ. मुंजाल,एस. (2009) रिसर्च मैथठोलोजी, राज पब्लिकेशन हाउस, जयपुर.
5. सुधा जी.एस. (2012-13)– प्रबंध अवधारणायें एवं संगठनात्मक व्यवहार, आर.डी.बी. पब्लिकेशन, जयपुर/नई दिल्ली

****

Post-structuralism According to Jacques Derrida 2016

Dr. Surendra Kumar Sao*

Abstract - Post-structuralism is an eclectic school of thought that significantly influenced literary and cultural theory in the 1970's and 1980s. It emerged as a reaction against the claims of 1960s French structuralism to scientific rigour, objectivity and universal validity. Structuralism convinced many theorists that the key to under-standing culture lay in the linguistics systemization of interrelationships in language. Building on the theories of the Swiss linguist Ferdinand de Saussure, the French anthropologist Claude Levi – Stroyss and Russian formalism, the structuralists found the clue to literary and cultural analysis in the phoneme, a unit of sound meaningful only because of its differences from other phonemes. Phonemes exemplify the elements in a cultural system that derive meaning from relations and contrasts with other elements. Structuralists determine meaning not by correlation to external reality but by analyzing its functions within a self-contained, culturally constructed code. Linguistic meaning is often established through binary opposition, or the contrast of opposites, such as cold versus hot and nature versus culture. A critic who understands the underlying rules or "language" determining individual utterances will understand meaningful combinations and distinctions.

Keywords - Structuralism, non-hierarchical, deconstructionism, logocentric, totalitarianism, imperialism.

Introduction - Post structuralism was in part a reaction to structuralism's claim to comprehensive and objective exploration of every cultural phenomenon. This countermovement denied the objectivity of linguistic and cultural codes, language, and categories of conceptualization. It emphasized the instability of meanings, categories and the inability of any universal system of rules to explain reality. The result was a radically nonhierarchical plurality of inderminate meanings. Central to post-structuralist thought is Jacque's Derrida's deconstructionism. Influential among literary critics at 'YALE UNIVERSITY' in the 1970s and 1980s, deconsturctionism indicts the Western tradition of though for ignoring the limitless instability and incoherence of language. The dominant western logocentric tradition sought a transcendent center of primal guarantee for all meanings. Logocentric thinking, common since plato, attempts to repress the contingency and instability of meaning. Thus, any privileging of some terms as central to is denied as being merely arbitrary. For example, consider male over female and white over black.

In the United States, literary critics used post-structuralist analysis to challenge the boundary between criticism of literature's subjectivity and objectivity, while evaluating figurative language and interpretation. For post — structuralist there is no God, Truth or Beauty, only gods, truths and beauties. In the early 1990s, Post-structuralism underwent an intense critique of moral social justice. Perhaps a part of a hedonistic flight from social responsibility of previous years, the movement seemed to slow down. The trend away from post-structuralism has continued in the twenty-first century, as the gradual tapering off of publications on the topic from its height in the mid-1980s clearly indicates.

"Structure. Sign and Play" Questions the idea of structure in structuralism:

(a) Belief in center and structure seemed unquestioned
(b) Derrida decenters the idea of structure and sign system
(c) Structure of inner and outer (inside content / outside form) speech and writing questioned
(d) Derrida says there is no there , centers are an illusion, a mirage of language.
(e) No secure, transcendental signified (God, truth, being etc) when signs and signification are rigorously examined.
(f) Totalizing system are thus related to totalitarianism and imperialisms (a political move within deconstructive theory.
(g) Signs set up play of signification in chains of supplements and deferrals ("Play" here means slippage, vacillation, substitution, supplements: meaning is generated within a sign system by a "Play" of supplements ^(chain of interpretation or substitution of signs)

The intellect who propounded these illuminating ideas was born in 1930, to Sephardic Jewish parents in Algeria. After military service in France, he began his studies in philosophy at the Ecole Normale Superieure in Paris in 1952. Derrida attended Harvard on scholarship in 1956-57. He was a lecturer in philosophy at the Sorbonne in Paris from 1960-1964, then he was professor of philosophy at the Ecole Normale Superieure from 1965-1984. Derrida was the founding director of the college International de Philosophic in Paris and was mot recently the directeur d'etudes at the

---

* Asst. Professor (English) Late Shri Jaidev Satpathi Govt. College, Basna, Distt. Mahasamund (C.G.) INDIA

Ecole des Hautes Etudes en Sciences Sociales in Paris (2) For more than a decade, a beginning in 1975, Derrida lectured regularly in the United States at John Hopkins, Yale, Cornell and the University of California at Irvine. Derrida's ideas inspired the critical skepticism associated with the so called Yale school of deconstruction.

Derrida is a contemporary French philosopher who inaugurated the school of deconstruction. Deconstructionism a body of ideas closely associated with Post-structuralism and post-modernism, is a strategy of analysis that has been applied primarily to linguistics, literature and philosophy. Derrida published three major works in 1967 which introduced his radical approach to text: Speech and phenomena, of Grammatology, and Writing and Difference. His greatest influence has been in philosophy and literary criticism in the United States where the above works were translated and published in 1970's.

Derrida, like Nietzsche, expresses his theory of signs, language like the structuralists, Derrida uses the vocabulary of the linguist Ferdinand de Saussure. In Derrida's system of differences, each signified is really another signifier which in turn refers to another signifier ad infinitum, without ever arriving at a fixed meaning.

According to "Structuralism'' has had many interpretation, particularly since the birth of the movement in critical theory called "Structuralism' in the 1950's. Structuralism posited that texts, societies and nature are constituted and represented by fixed relationships between signs.

Jacques Derrida, has argued that language not only constructs centered structures that represent relations between signs; it deconstructs these centered structures. Maupassant's narrator constructs and deconstruct centered structures (supernatural, social, psychological) that explains his strange perception and actions.

This process of construction and deconstruction occurs over and over again in historical time or in the cultural spaces of a diverse world. The centers that people construction in order to give stability to their lives. (Such a God. Science, or the Market) are deconstructed when these centers change over historical time or when reality is seen from the point of view of a different culture in a different part of the globe.

In the article cited above, Derrida applies his deconstructive approach to the writing of the ethnologist (anthropologist) Levi-Strauss. Levi-Strauss wanted to put into question "ethnocentrisms" the notion that the system linking all of the world's cultures is a structure with a center, which is western culture. All cultures tend to be ethnocentric: to assume that their culture is at the center of the world and that all other cultures are marginal. The dominant ethnocentric culture has been ours, Western culture (especially Europe and the US). In Western culture, we tend to presuppose that non-Western cultures, such as oriental and African cultures are inferior.

In his writings, Derrida often shows that the binary oppositions with which we construct reality (nature vs. culture, black vs. white, Western vs. non-Western, male vs. female etc.) are really misrepresentations. Pascal performed a similar deconstruction of the binary opposition between part and whole. If man is no more that a point in relation to infinitely large, but if he is a universe in relation to the infinitely small, then he is both part and whole; or rather, he is neither. The rational distinction between part and whole with which philosophy and religion have always described man, like the distinction between part and whole with which philosophy and religion have always described man, like the distinction between nature and culture, is in error.

Language and science for Derrida are infact caught between two interpretations: (1) The sense that they are adding on more and more meaning and getting closer and closer to truth and reality. (2) the sense that they are arbitrarily substituting one sign for another, one theory for another, in a freeplay that never gets any closer to truth or realty.

Conclusion - As a result, when we interpret a text or reality, we can describe objectivity some of their (finite) structures (grammatical, social, etc.) But in our interpretation of texts or of reality as overall systems of difference, we always remain caught between two readings: (1) we are getting closer and closer to the significance of the system, its center: truth or realty; (2) we are simply substituting one reading for another, neither of which is closer to reality or truth, in a freeplay of signs.

References :-

1. Cohen, T. Jacques Derrida and the Humanities : A Critical Rouder. West Nyack USA : Combridge University Press, 2002.
2. Dersida, J. Difference in Speech and Phenomena, Trans. D.B. Allison. Northersferm University Press, 1973.
3. Derrida. J. Of Tramanatology, Trans. Gayatri Chakravorty Spivak, Baltimore : John Hopkim University Press, 1976.
4. Derrida, J. Position. Chicago : Chicago University Press, 1981.
5. Evans, J. Strategies of Deconstruction : Derrida and the myth of the Voice. Minneapolis, USA : University of Minnesota Press, 1991.

****

नयी कविता : युग की मांग

डॉ. जगमोहन सिंह गुर्जर *

प्रस्तावना - कविता वह है जो कविता के धर्म से संयुक्त हो और कविता का धर्म है व्यक्ति की स्वाभाविक अनुभूतियों की सहज सौन्दर्यमयी स्वस्थ अभिव्यक्ति। इस अभिव्यक्ति के लिए केवल शर्त यह है कि यह कृत्रिम न हो, चौकाने या नयी बात कहने की लालसा से सम्पृक्त न हो और व्यर्थ के शब्द जाल अथवा खींच-तान कर लाई गयी उपमाओं से अभिभूत और बोझिल न हो। जिस भाव या प्रसंग की प्रेरणा से कवि के द्वारा काव्य रचना हुई है वही भाव पाठक के मन में ही प्रवाह मान हो जाय। यही काव्य की चरम सफलता है। यदि कविता कवि के मूल भाव को पाठक के मानव में प्रवाहमान नहीं कर सकी है तो निश्चय ही उसमें कही कोई अपूर्णता रह गयी है और वह कविता के उत्कर्ष का लक्ष्य पूरा नहीं कर पाई। इस प्रकार हम कह सकते है कि कविता युग-जीवन और व्यक्तिक अनुभूतियों को सहज अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली वह अर्थमय प्रवाहमान रूचिर रचना है जिसमें साधारणीकरण का वैशिष्टय सन्निहित है।

कविता के स्वरूप को युगीन परिप्रेक्ष्य में समझते हुए जब हम नयी कविता की भूमिका पर उतरते है। तो यह तथ्य सहज ही स्वीकृत हो जाता है कि नयी कविता अपने युग को वाणी देने वाली एक सशक्त काव्यधारा है। इस कविता को स्थापित करने में अनेक महत्वपूर्ण कवियों, समीक्षकों का योगदान रहा है। सर्वश्री अज्ञेय ने तो इसका प्रवर्तन ही किया था। उन्होंने सप्तकों के माध्यम से नयी कविता की स्थापना की। उन्ही का अनुगमन करते हुए जगदीश गुप्त, लक्ष्मीयकांत वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, गिरिजा कुमार माथुर आदि कवियों ने नयी कविता को विकास रूप दिया। धीरे-धीरे सन् 1950 के आस-पास नयी कविता एक प्रतिष्ठित काव्यधारा के रूप में उभरकर सामने आयी। जब हम नयी कविता की बात करते है तो सबसे पहले हमारे मानस में यह प्रश्न उठता है कि आखिर नयी कविता है क्या ? क्या नयी कविता वही है जो नये कवियों द्वारा लिखी गयी और क्या नये कवि वे है जो आजादी के बाद काव्य क्षितिज पर अवतरित हुए। हमारी धारणा है कि स्वातंत्रयोत्तर वर्षो में लिखित समूचा काव्य न तो नयी कविता की परिधि में आता है और न सभी कवित नयी कविता के प्रतिनिधि कवि कहे जा सकते है।'

नये कवि वे है जिनकी संवेदनाऐं नयी है और जिन्होंने परम्परा को आत्मसात करते हुए युग की मांग के अनुरूप नये शिल्प का प्रयोग किया है।

नयी कविता का अभ्युदय और विकास भारतीय जीवन में विकसित होते हुए सामाजिक संघर्षो, बौद्धिक बोझिलता तीव्र मानसिक प्रतिक्रियाओं के परिवेश में ही हुआ है। गत दशकों में हमारा समाज नितान्त भिन्न कोटि का रहा है अत: शैलियों और लेखनियाँ बदली हुई प्रतीत होती है साथ ही यह भी विस्मरणीय है कि अभिव्यक्ति के प्रकारों में विशेष क्रान्ति हुई है। नयी कविता के प्रेरक तत्व भारतीय और अभारतीय मानते है जो उचित नही है कारण यह है कि भारतीय परिवेश में कम बदलाव नहीं आया है, बदलने की प्रक्रिया में न केवल जीवन पद्धतिबदली है, मनुष्य का दृष्टिकोण बदला है उसकी मानसिकता बदली है। मर्यादा टूटी है मूल्य लांछित हुए है।

और नये संघर्ष सापेक्ष मूल्य विकसित हुए है मनुष्य की आत्माऐं और इन सभी का प्रभाव मनुष्य पर पड़ा है। संवेदनशील कवि पर पड़ा है।

ऐसी स्थिति में यह नही कहा जा सकता है। नयी कविता केवल पाश्चात्य प्रभाव लेकर सामने आयी है। इस सन्दर्भ में डॉ. हरिचरण शर्मा का यह मत है कि 'नयी कविता को पश्चिम का अनुकरण भर बताना अनुचित दावा हैं। अनुकरण कुछ व्यक्ति कर सकते है सब नहीं।'

'वास्तव में अनुकरण की गन्ध हमारे यहां पश्चिम की समानान्तर परिस्थितियों के कारण आ रही है। नयी कविता कोई ऐसा पौधा नही है जो पश्चिम से लाकर भारत में लगाया गया है। इसकी जड़ो में तो यहीं की मिट्टी है और यही का खाद-पानी है। अत: इसकी समस्त रंगत और खुशबु भारतीय है। नयी कविता इन परिस्थितियों की देन है जो हमारे देश से संबंध है, चाहे उनमें प्रभाव कहीं से भी आया हो।'

नयी कविता के स्वरूप के विश्लेषण में अनेक विद्धानों ने श्रम किया है। कतिपय प्रमुख विद्धानों के मत दिये जा रहे है।

1. 'नयी कविता वैविध्यमय जीवन के प्रति आत्मचेतस व्यक्ति की संवेदनात्मक प्रतिक्रिया है - नयी कविता का स्वर ही विविध है।'
2. नयी कविता आज की मानव विशिष्टता से उद्‌भव उस लघु मानव के लघु परिवेश की अभिव्यक्ति है जो एक और आज की समस्त रिक्तता और विशमता को तो भोग ही रहा है। साथ ही उन समस्त रिक्तताओं के बीच अपने 'व्यक्तित्व को भी सुरक्षित रखना चाहता है। वह विशाल मानव प्रभाव में बहने के साथ-साथ अस्तित्व के यथार्थ को भी स्थापित करना चाहता हैं।'
3. नयी कविता में मानव को छायावादी सौंदर्य के धडकते हुए पलने से बलपूर्वक उठाकर उसे जीवन समुन्द्र की उल्लास लहरों में वेग करने को छोड दिया है, जहां वह साहस के साथ-साथ सुख-दुख और आशा-निराषा के घात-प्रतिघातों का सामना कर सके, अन्तर्वेदना से मुक्त होकर सामाजिक व्यथा के अनुभवों से परिपक्व बन सके।

'नयी कविता विश्व-वर्चस्व से प्रेरणा ग्रहण करके तथा आज के प्रत्येक पल बदलते हुए युग-पटल को अपने मुक्त छन्दों को संकतो की तीव्र-मन्द गति लय में अभिव्यक्त कर युग मानव के लिए नवीन भावभूमि प्रस्तुत कर रही

---

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा (राज.) भारत

हैं।'

नयी कविता का आदर्श युग जीवन के नये सौन्दर्य-बोध की प्रतिष्ठा के साथ-साथ अनुभूति और अभिव्यक्ति की ताजगी को प्रस्तुत करने में सफल हुआ है।

नये कवियों ने आवाश्यकता के स्थान पर परिष्कृत एवं स्वस्थ बौद्धिक चेतना को सर्वोपरि रखने की बात कही है। नये कवि की घुटन उसकी रचना की अस्पष्टता और दुरूहता तथा उसकी अभिव्यक्ति का सूक्ष्म प्रतीकवादी होना चाहिए जैसे आज के युग वैशम्य की ही देन है। नये कवियों की अपेक्षा यह रही है कि इस वैशम्य को स्वीकार किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. हरिचरण शर्मा : विचार-विमर्श से प्राप्त मत दिनांक 09 जनवरी 1991
2. डॉ. रामकुमार वर्मा : साप्ताहिक हिन्दुस्तान 22 सितम्बर 1965 पृष्ठ 6
3. डॉ. देवेश ठाकुर : नयी कविता के सात अध्याय पृष्ठ - 21-22
4. डॉ. हरिचरण शर्मा : परम्परा और प्रगति की भूमिका पर नयी कविता, पृष्ठ - 92
5. मुक्तिबोध : नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध पृष्ठ-12

****

भारत में अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति की समीक्षा

डॉ. हरिचरण मीना *

शोध सारांश – भारत मे प्राचीन काल से ही सामाजिक संस्तरण की अवधारणा रही है। पहले वर्ण के आधार पर समाज मे संस्तरण की व्यवस्था थी। उसके बाद जाति व्यवस्था के आधार पर संस्तरण की व्यवस्था रही हैं। वर्तमान मे सामाजिक श्रेणी एवं लिंग के आधार पर समाज मे सामाजिक संस्तरण देखा जाता हैं। हिन्दू समाज प्राचीन काल से ही पद सोपानों में बंधा था। समाज में कुछ लोगों को तो उच्च स्थान व अधिकार प्राप्त थे कुछ को निम्न स्थान व कम अधिकार दिये गये थे। हिन्दू समाज चार वर्णों में विभाजित था जिसमें दलित सबसे निम्न स्तर पर थे और अपने से उच्च वर्णों की सेवा का कार्य दलितों को सौपा गया था। दलितों को शिक्षा के अवसर भी न के बराबर थे। इसी प्रकार भारतीय समाज में पुरूष प्रधानता थी। जिसके कारण महिलाओं की स्थिति पुरूषों की तुलना में कमजोर थी और महिलाओं से शिक्षा के अवसर भी छीन लिये गये थे। भारत में वर्षो तक महिलाओं एवं दलितों के अधिकार सीमित थे, उनके कर्त्तव्य असीमित थे। भारतीय संविधान मे दबे, कुचले, शोषित, दलित एवं अस्पृष्य रहे समाजो को अनुसूचित जाति की सूची मे रखा गया हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान के गठन से इस स्थिति में संवैधानिक कानूनों द्वारा परिवर्तन के प्रयास किये गये जिससे दलितों की स्थिति में कुछ सकारात्मक परिवर्तन हुए लेकिन दलित महिलाओं के लिये यह प्रयास पूर्णत: संभव नहीं हुआ। महत्वपूर्ण यह है कि यदि महिला दलित है तो उसके प्रगति के अवसर और भी सीमित कर दिये जाते है। दलित महिलाऐं सामाजिक संस्तरण में सबसे निचले स्थान पर आती है, इस प्रकार दलित महिलाऐं न केवल उच्च जाति की महिलाओं से दयनीय एवं विषम परिस्थितियों का सामना करती है बल्कि दलित वर्ग में भी पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण उनकी स्थिति और भी कमजोर एवं संवेदनशील है। दलित महिलाऐं तिहरे शोषण की शिकार है जिसका आधार जाति, वर्ग एवं लिंग भेद है। अत: दलित महिलाओं को उनके मानवाधिकारों के प्रति जागरूक करने की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – सामाजिक संस्तरण, जाति व्यवस्था ,पद सोपान, भेदभावपूर्ण व्यवस्था, दलित महिलाऐं, शोषण, भारतीय संविधान, मानवाधिकार प्रस्थिति, देवदासी प्रथा, अस्पृष्ता, शोषित।

प्रस्तावना – भारत मे प्राचीन काल से ही सामाजिक संस्तरण की अवधारणा रही है। पहले वर्ण के आधार पर समाज मे संस्तरण की व्यवस्था थी। उसके बाद जाति व्यवस्था के आधार पर संस्तरण की व्यवस्था रही हैं। भारतीय संविधान मे दबे, कुचले, शोषित, दलित एवं अस्पृष्य रहे समाजो को अनुसूचित जाति की सूची मे रखा गया हैं। ऐतिहासिक काल से ही दलित महिलाऐं कई प्रकार के शोषण का शिकार रही हैं तथा भारतीय सामाजिक व्यवस्था में उनके मानव अधिकारों का उल्लंघन होता रहा है। दलित महिलाओं को हिंदू सामाजिक-व्यवस्था में सिर्फ इतना ही स्थान दिया गया है जिससे उनकी सेवाओं का उपभोग उच्च जातियों के लोग कर सकें। ये सेवाऐं मुख्यत: दो रूपों में बाँटकर हम देख सकते हैं- पहला शारीरिक श्रम जैसे मजदूरी, बेगार, मेला ढ़ोना आदि एवं दूसरा उनका शारीरिक शोषण। मनुस्मृति में भी जब दलित महिलाओं के अधिकारों की बात आई तो उन्हें जानवरों के समकक्ष रखा गया। मध्ययुगीन काल से ही कुछ बदलाव की आवाजें बुलंद की गई और आजादी के बाद डॉ.अम्बेडकर के अथक प्रयासों के फलस्वरूप दलितों और उनकी महिलाओं के अधिकारों के लिए संवैधानिक दर्जा इख्तियार किया गया किन्तु हिंदू सामाजिक व्यवस्था के विभिन्न लेखों के आधार पर व्यवस्थित एवं जातिगत पुरानी परम्परागत और भेदभावपूर्ण व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाने और उसमें बदलाव करने की कोशिशों को कभी छूट नहीं प्रदान की गई।

अन्याय पर आधारित मनुवादी समाज में शूद्रों और उनकी महिलाओं को शिक्षा और सम्पत्ति जैसे अधिकार से वंचित रखा गया था। उन्हें पशुवत जीवन जीने को मजबूर किया गया। उनका क्रन्दन सुनने वाला कोई नहीं था। स्वयं बाबा साहेब भी इस व्यवस्था के शिकार हुए। अम्बेडकर से पूर्व छत्रपति शिवाजी, महात्मा ज्योतिबा फूले एवं उनकी पत्नी सावित्री बाई फूले भी इस व्यवस्था के शिकार हुए। ये महापुरूष भी उस समय की सामाजिक व्यवस्था से अछूते न रह सके तो उस समय दलित महिलाओं की स्थिति कैसी होगी, इसी से अंदाजा लगाया जा सकता है जिसका असर वर्तमान में भी इस समुदाय की महिलाओं पर है। आज भी दलित महिलाओं को मात्र उपभोग की वस्तु समझा जाता है। दलित वर्ग की महिलाऐं सामान्य वर्ग की महिलाओं से प्रत्येक अर्थो में भिन्न रही है। उनका कोई भूतकाल नहीं है, वर्तमान भी धुंधला ही है। दलित समाज की महिलाओं की यह स्थिति प्राचीनकाल से ही समाजशास्त्रियों, स्वयंसेवी संस्थाओं, समाजसेवियों, बुद्धिजीवियों एवं सरकार के लिए चिन्ता का विषय रही है। आज जब विश्व के किसी भी देश में मानवाधिकारों का हनन होता है तब उस देश के शिक्षाशास्त्री एवं बुद्धिजीवी भी गलाफाड़ कर चिल्लाते हैं लेकिन जब उसी देश में उनकी नाक के नीचे और पड़ोस में किसी दलित महिला को नंगा कर नचाया जाता है अथवा खुले में उसका बलात्कार और हत्या कर दी जाती है साथ ही उसका शोषण एवं उत्पीड़न किया जाता है तब किसी भी वर्ग के कानों में किसी भी तरह की

---

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाईमाधोपुर (राज.) भारत

आवाजें नहीं गूंजती, चुपचाप तमाशा देखते रहते हैं।

आज दलित महिलाऐं विभिन्न मोर्चो पर शोषण, उत्पीड़न, अनाचार एवं उत्पीड़न का शिकार हो रही है। उनके लिए अधिकारों की बात तो बहुत बार की जाती है लेकिन वास्तविकता के नाम पर उन्हें सिर्फ छला ही जाता रहा है। दलित महिलाओं को हर प्रकार के शोषण का शिकार होना पड़ता है। समाज में उन्हें प्राचीनकाल से ही सभ्यता के नाम पर कलंक समझा जाता रहा है। उन्हें मानव की श्रेणी से बाहर ही रखा जाता है। दलित महिलाओं को समाज में अपने परिश्रम के साथ-साथ अपने जिस्म पर भी कोई अधिकार नहीं है। आज भी इस वर्ग की महिलाओं को उच्च वर्ग के लोगों द्वारा सस्ते श्रम में खरीदा जाता है और जब चाहे, जैसा चाहे उपभोग किया जाता हैं। दलित पुरूषों की आवाज दबाने के लिए भी उनकी महिलाओं पर अत्याचार किये जाते हैं। दलित महिलाओं के साथ प्रत्येक वर्ष बलात्कार की घटनाऐं घटित होती रहती हैं।

आज 21वीं सदी में भी भारतीय समाज वर्ण व्यवस्था से अछूता नहीं है। जातीय शोषण आज भी विद्यमान है चाहे वह धर्म के आधार पर हो या जातिगत आधार पर, वैज्ञानिक युग में भी सामाजिक वर्गीकरण बना हुआ है। दलित महिलाओं की दयनीय स्थिति इसी वर्ण व्यवस्था का परिणाम है।

भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ-साथ ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार करने वाली अनेक धार्मिक संस्थाओं का आगमन हुआ जिनका प्रमुख लक्ष्य मानवीयता को जागृत करना था। शूद्र जो दबे-कुचले थे, सड़कों पर नहीं चल सकते थे उन्होंने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। ईसाई मिशनरियाँ भारत में पश्चिमी सभ्यता का मानवीयता का रूप प्रस्तुत करने में बड़ी भूमिका अदा कर चुकी है। इनका सम्बन्ध समाज सेवा, दलितों, शोषितों का उद्दार एवं महिलाओं सहित समस्त वर्गो के कल्याण से है। भारत में ज्यों-ज्यों अंग्रेजी साम्राज्य विकसित होता गया, त्यों-त्यों दलितों-पिछड़ों एवं महिलाओं के लिए स्कूलों का निर्माण किया गया जिनमें शिक्षा से लेकर दलित बालकों के जीवन की विसंगतियों को भी परखने का अवसर मिला। ब्रिटिश शासन काल में दलित महिलाऐं जातिगत धंधों को त्यागकर कृषि, व्यापार एवं उद्योगों जैसे स्वच्छ व्यवसायों में प्रवेश लेने लगी। दास प्रथा का अन्त हुआ और कॉफी, चाय के बागानों की शुरूआत हुई। जिनमें दलित महिलाऐं काम करने लगी। उनकी आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आने प्रारम्भ हुए। अम्बेडकर के संघर्षशील व्यवहार के कारण ब्रिटिश शासन में ही दलितों को वोट डालने का अधिकार भी प्राप्त हुआ परन्तु यह अधिकार शिक्षा के आधार पर किया गया था जो कि दलित महिलाऐं इस अधिकार से कोसों दूर थी। अंग्रेजी शासन काल में जातिगत भेदभाव पर ध्यान नहीं दिया जाता था, जिस कारण छुआछूत की तरफ अंग्रेजों का ध्यान ही नहीं गया। उच्च वर्ग प्राचीन की भांति ही दलितों पर हावी रहा और उन्हें सार्वजनिक उपयोग की वस्तुओं से दूर ही रखा गया। ब्रिटिश काल में जमींदारी प्रथा का अन्त हुआ परन्तु अब दासों का स्थान श्रमिकों के रूप में दलितों ने ले लिया था और शिक्षा से उन्हें दूर रखा। कुछ समाज सुधारकों ने दलित वर्ग के विकास हेतु प्रयास भी किये परन्तु ये प्रयास पहले दलित समुदाय का विकास करते उसके पश्चात दलित महिलाओं के अधिकारों की बात सम्भव थी। स्वामी दयानन्द, नारायण गुरू, रानाडे, विवेकानन्द, रामास्वामी पेरियार का आन्दोलन, ज्योतिबा फूले का सत्यशोधक समाज एवं सावित्री बाई का महिला शिक्षा आन्दोलन, अम्बेडकर का दलितोत्थान, गाँधी के छुआछूत उन्मूलन आदि आन्दोलनों के द्वारा इन समाज सुधारकों ने दलितों की दशा सुधारने के प्रयास किये। ब्रिटिश काल में दलित महिलाओं का दोहरा शोषण हुआ एक तो हिन्दुओं द्वारा शूद्र एवं दलित मानकर और दूसरा अंग्रेजों द्वारा असहाय एवं कमजोर समाज की महिलाऐं मानकर। इस काल में भी इनको अस्पृश्य ही माना गया, न शिक्षा, न अच्छे वस्त्रों और न अच्छे भोजन पर इनका अधिकार था, इनका सार्वजनिक जलाशयों, कुओं, विद्यालयों एवं सड़कों से गुजरना निषेध था। दलित महिलाऐं उच्च जातियों के घरों में साफ-सफाई का काम करती थी और सड़कों का कूड़ा-कचरा साफ करती थी। विद्यालय जाने का इनका अधिकार नहीं था। काम के बदले इनको फटे-वस्त्र और झूठा भोजन ही मिलता था, अच्छे और साफ-सुथरे वस्त्र पहनने का इनका अधिकार नहीं था। इनके पुरूष जमीदारों के घरों में मजदूरी और मैला ढ़ोने का काम करते थे जो इस समुदाय के लोग इस कार्य को ही अपना पारम्परिक पेशा मानकर करते आ रहे हैं। बहुत से स्थानों पर दलित समुदाय की महिलाओं को अपने स्तन ढ़कने का भी अधिकार नहीं था और आभूषण पहनने पर भी प्रतिबन्ध था। पर्दाप्रथा, सतीप्रथा, देवदासी प्रथा एवं वेश्यावृत्ति इसी काल में सर्वाधिक थी। दलित समुदाय की महिलाओं को अत्यधिक शारीरिक एवं मानसिक शोषण का शिकार होना पड़ता था जो अन्त में दुःखी होकर वैश्यावृत्ति को स्वीकार कर लेती थी। दलित महिलाओं को देवदासी बनने के लिए मजबूर किया जाता था। केरल में प्रथा थी कि दलित समुदाय की महिलाऐं अपने स्तन नहीं ढ़क सकती थी। अपने स्तन ढ़कने पर उन्हें प्रतिबन्ध था उच्च जातियों द्वारा उनके समुदाय की पहचान के लिए यह प्रथा चलायी गयी थी कि यदि कोई दलित महिला अपने स्तन ढ़कना चाहती है तो उसे कर देना पड़ेगा जो कि उनके श्रम का दोगुना था। इस प्रकार दलित महिलाओं को बिना अपने स्तन ढके ही रहना पड़ता था। दलित महिलाओं के लिए अधिकारों की बात करना तो दूर मानवीय समुदाय से भी पृथक समझा जाता है। पुर्नजागरण काल में विभिन्न समाज सुधारकों एवं अम्बेडकर के प्रयासों से इनकी यथास्थिति सुधारने के लिए अनेक संघर्षों एवं आन्दोलनों द्वारा इन्हें जागृत करने के प्रयास किये गये और शिक्षा के महत्व को समझाने की कोशिश की गई।

देश में लगभग दो शताब्दी तक ब्रिटिश राज स्थापित रहा और सन् 1935 में साइमन कमीशन ने अस्पृश्य जातियों के लिए अनुसूचित जाति शब्द का प्रयोग किया जिसे डॉ. अम्बेडकर ने भी स्वीकार किया। 1947 में भारत को ब्रिटिश राज से आजादी मिली और गणतन्त्र भारत के लिए एक स्वतंत्र एवं पृथक संविधान का गठन किया गया। डॉ. अम्बेड़कर के अथक प्रयासों एवं दलित समुदाय के लिए आजीवन संघर्षरत रहने कारण भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों के लिए विशेष अधिकारों को सम्मिलित किया गया। इन अधिकारों में महिलाओं के लिए विशेष एवं समान अधिकारों को भी शामिल किया गया है जिसमें दलित महिलाऐं भी सामान्य महिलाओं की तरह समान एवं गरिमामय जीवन-यापन कर सके। भारतीय संविधान में अन्याय पर आधारित नियमों को समाप्त कर दिया गया, तथा न्याय पर आधारित समतावादी समाज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया गया है।

हर व्यक्ति जन्म से ही अधिकार लेकर आता है, चाहे वह जीने का अधिकार हो या विकास के लिए अवसर प्राप्त करने का मगर इस पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं के साथ लैंगिक आधार पर भेदभाव की वजह से इन अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है। दलित महिलाओं के अधिकारों को सुनिश्चित करने हेतु हमारे संविधान में अलग से कुछ कानून बनाये गये हैं जिससे ये महिलाओं के जीवन में मदद कर सकें और समय-समय पर इनमें संशोधन भी किये जाते रहे हैं -

भारतीय समाज में दलित महिलाओं को आज की निम्न स्तर का समझा जाता है। भारतीय संविधान में सभी को समान अधिकार दिये गये है परन्तु

दलित महिलाऐें समाज में आज भी प्रत्येक स्थान पर स्वयं को असुरक्षित महसूस करती है। भारत में अधिकांश स्थानों पर उच्च वर्ग के लोग अपने घर में किसी की मृत्यु होने पर मृत व्यक्ति की चारपाई और वस्त्र आदि दलित महिलाओं को इस्तेमाल के लिए दे दिये जाते है।

दलित महिलाओं में शिक्षा का अभाव प्राय: बना हुआ है। ये महिलायें स्वयं को असुरक्षित महसूस कर शिक्षा प्राप्त करने हेतु विद्यालय नहीं जा पाती क्योंकि या तो उच्च वर्गों द्वारा इनका उपहास उड़ाया जाता है, या विद्यालय जाने पर भी इसके साथ विद्यालयों में भी भेदभाव किया जाता है। गुजरात के एक गाँव हाल ही में एक अध्ययन में पाया गया है कि वहाँ के बच्चे जब विद्यालय जाते है तो उच्च वर्ग के बच्चों को दलित समुदाय से बच्चों से पृथक बैठाया जाता है, और घर आने पर उच्च वर्ग के बालकों की शुद्धि हेतु उन पर गंगाजल छिड़का जाता है।

दलित महिलाओं के घरों में आज भी शौचालयों का अभाव बना रहता है। दलित महिलाओं को शौच हेतु घरों से दूर जंगलों में जाना पड़ता है। जहाँ इन महिलाओं के साथ छेड़छाड़ एवं शारीरिक हिंसा की जाती है। प्रधानमंत्री द्वारा सम्पूर्ण भारत को शौचमुक्त बनाने का निर्णय लिया गया है और गरीब एवं दलित महिलाओं के घरों में शौचालयों की अनिवार्यता की गयी है। उत्तरप्रदेश के बदांयु जिले के एक गाँव में शौच के लिए गई दलित किशोरियाँ दो सगी बहनों के साथ बलात्कार कर उनको मौत के घाट उतार कर आम के पेड़ पर लटका दिया गया था। आरोपी उच्च जाति से सम्बन्धित थे और आरोप स्पष्ट होने पर प्रशासन द्वारा उन पर केश भी दर्ज नहीं किया गया परन्तु जातिगत आन्दोलन किये जाने पर एस.पी. एवं अन्य अधिकारियों को सस्पेंड भी किया गया और सरकार द्वारा सी.बी.आई. जाँच के आदेश भी दिये गये परन्तु अभी तक केश की गुत्थी सुलझ नहीं पाई और सरकार द्वारा केस को उलझाकर बंद कर दिया गया है।

दलित समुदाय प्राचीनकाल से ही निम्न अवस्था में रहा है। परम्परागत पेशों को अपनाकर ये लोग उसी कार्य में लिप्त रहते है। आज भी इस समुदाय की महिलाऐं मैला ढ़ोने एवं सड़को की साफ-सफाई एवं मजदूरी का काम ही करती है जिस काम के लिए श्रम भी कम मिलता है। कम श्रम मिलने के कारण दलित समाज की महिलाऐं सिर्फ अपने परिवार का पेट भरने में ही रह जाती है। जिस कारण ये आर्थिक एवं सामाजिक विकास के स्तर से सामन्य महिलाओं से पिछड़ी हुई हा।

वर्त्तमान में भी इस समाज की अलग झोपड़िया अथवा मौहल्ले बनाये गये है। प्रत्येक गाँव अथवा कस्बे में दलित समुदाय अन्य वर्गों से पृथक रहते है। शहरों में भी इनकी कॉलोनियां अथवा झुग्गी-झोपड़ियाँ अलग स्थानों पर मिलती है। जहाँ रहन-सहन निम्न स्तर का एवं साफ-सफाई की कमी है। दलित वर्ग के लोग अगर शहर में किराये का मकान लेने जाते है तो उच्च वर्ग के लोगों द्वारा इनकी जाति पूछी जाती है और मकान किराये पर नहीं मिलता है।

ब्राह्मणवादी सोच के कारण दलित महिलाओं में सर्वाधिक रूढ़ीवादी सोच पायी जाती है, क्योंकि युगों तक दबे कुचले शोषित होने के कारण इनकी सोच भी वैसी ही बन गयी है। शिक्षा के अभाव में पिछड़ापन बना हुआ है, और अनेक रूढ़ीवादी प्रथाऐं इनमें आज भी बनी हुई है। पर्दा प्रथा, ऊपरी बातें एवं अनेक स्थानों पर देवदासी, एवं वैश्यावत्ति के धन्धों में सर्वाधिक दलित समुदाय की महिलाऐं ही लिप्त है।

दलित महिलाओं को भारतीय संविधान में समानता का अधिकार दिया गया है और पंचायती राज में उनके स्थान आरक्षित किये गये है। समानता के अधिकार होने पर भी अधिकांश दलित महिलाऐं मतदान भी अपने परिवार की इच्छानुसार अथवा अपने पति की मर्जी से करती है।

दलित महिलाऐं अपना सारा वक्त परिवारिक उत्तरदायित्व निभाने में लगा देती है। जिस कारण इनका ध्यान शिक्षा एवं राजनीति की ओर आकर्षित ही नहीं हो पाता दलित परिवारों में बच्चों की संख्या भी सामान्य परिवारों से अधिक पायी जाती है जो इनकी निम्न आर्थिक स्थिति का कारण है। पूरा समय ये महिलाऐं बच्चों एवं परिवार की देखरेख में लगा देती है और उससे बाहर निकल ही नहीं पाती है।

दलित महिलाओं के घरों में इनका आर्थिक स्तर निम्न होने के कारण प्राय: संसाधनों का अभाव बना रहता है। ये महिलाऐं स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं के लिए किसी नजदीकी सरकारी स्वास्थ्य केन्द्र अथवा झोलाझॉप डॉक्टरों पर ही निर्भर रहती है। जिस कारण इन महिलाओं में अत्यधिक परिश्रम करने एवं अधिक संतानोत्पत्ति के कारण शारीरिक रूप से कमजोरी आने से अनेक बीमारी घर कर जाती है। इन समुदायों में जन्मदर एवं मृत्युदर भी अन्य समुदायों से अधिक है।

निष्कर्ष - अध्ययन के निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता हैं कि वर्तमान मे सामाजिक श्रेणी एवं लिंग के आधार पर समाज मे सामाजिक संस्तरण देखा जाता हैं। आज देश की आजादी को छ के ऊपर दशक गुजर चुके है। लेकिन भारत के सामाजिक परिदृश्य में चार स्तरीय वर्ण व्यवस्था में पूर्णरूप से मौलिक परिवर्तन नहीं आ पाया है और यह व्यवस्था आज भी विद्यमान है। आजाद भारत में दलित महिलाओं के खिलाफ होने वाले अत्याचार एक नयी समस्या बनकर सामने आये है। ऐसी स्थिति में जब दलित समाज की जागरूकता में वृद्धि होने लगी है और उन्होंने आई.सी.एस. सिद्धान्त तथा दासता को अस्वीकार कर दिया तब उनके खिलाफ होने वाले अत्याचार उन्हें दबाने के लिए एक अस्त्र के रूप में सामने आये इससे वे पहले की तरह ही असुरक्षित बने रहे क्योंकि शिक्षा एवं आरक्षण के सहारे सिर्फ गिनी-चुनी दलित महिलाओं का ही विकास हुआ है। राजनीति के क्षेत्र में देश की प्रथम दलित महिला मुख्यमंत्री सुश्री मायावती एवं लोकसभा अध्यक्ष रही मीरा कुमार जैसी संघर्षशील महिलाओं ने अपना परचम लहराया है। परन्तु उनके जीवन में आया यह परिवर्तन एवं बढ़ोतरी भी उच्च वर्ग की आँखों में खटकती है क्योंकि सदियों से दबे-कुचले, दीन-हीन एवं शोषित अवस्था में रही दलित नारियां उसी स्थिति में अभ्यस्त रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आहुजा, राम, 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' रावत प्रकाशन नई दिल्ली, 1999
2. इंडिया नेशनल कमीशन फॉर शिडयूल्ड कास्ट एंड ट्राइब्स नई दिल्ली ए हेन्ड बुक नई दिल्ली 1997
3. अनिरूद्ध, प्रसाद, 'सामाजिक न्याय एवं राजनीतिक सन्तुलन' रावत प्रकाशन जयपुर
4. काजल, नीतू, दलित सशक्तिकरण, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ.सं.-58
5. अम्बेडकर, डॉ. भीमराव, 'अस्पृष्य कौन और क्यों' हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल
6. गुप्ता, दिप्ती, दोहरे शोषण की दास्तांन की शिकार दलितों में भी दलित नारियाँ, विरेन्द्र सिंह यादव, भारत में महिला सशक्तिकरण के उभरते परिदृश्य, ऐल्का पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2013, पृ.सं.-175

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) July to September 2016, Vol. II

A Study of Application of Mobile Ad hoc Networks (MANETs)

Dharmendra Kumar Meena *

Introduction - Data Transmission using radio signals is referred as wireless network. Wireless network introduced in 1800's with the beginning of radio waves. The first Wireless Local Area Network (WLAN) called "Aloha net" was developed in 1971. WLAN was a large discovery but not much capable while in present world wireless network expands with their uses. Sending or Receiving information across the world is possible through wireless network system using satellites and other signals. Wireless network communication has become the most exciting area in communications and networking. During the past few decades the world has become a global village by virtue of the technological revolution. Information Technology (IT) is growing day-by-day. Businesses tend to use more and more complex network environments. Despite the efforts of network administrators and IT vendors to secure the computing environments, the threats posed to personal privacy, company privacy and various assets by attacks upon networks and computers continue unabated. The Mobile Ad hoc Networks (MANETs) are most certainly a part of this technological revolution. A Mobile Ad hoc Network (MANET) is a self-organized wireless short-lived network consisting of mobile nodes. The mobile nodes communicate with one another by wireless radio links without the use of any pre-established fixed communication network infrastructure.

Typical MANET nodes are Laptops, PDAs, Pocket PCs, Cellular Phones, Internet Mobile Phones, and Palmtops. These devices are typically lightweight and battery operated. The mobile nodes are vulnerable to different types of security attacks than conventional wired and wireless networks. Therefore, security in Mobile Ad-Hoc Network is the most important concern for the basic functionality of network. The availability of network services, confidentiality and integrity of the data can be achieved by assuring that security issues have been met. MANETs often suffer from security attacks because of its features like open medium, changing its topology dynamically, lack of central monitoring and management, cooperative algorithms and no clear defense mechanism. These factors have changed the battle field situation for the MANETs against the security threats. MANETs must have a secure way for transmission and communication and this is a quite challenging and vital issue as there is increasing threats of attack on the Mobile Networks. Security is the cry of the day. In order to provide secure communication and transmission, the engineers must understand different types of attacks and their effects on the MANETs. Wormhole attack, Black hole attack, Gray Hole attack, Session Hijacking attack, Sybil attack, flooding attack, Denial of Service (DoS), Location Disclosure attack are kind of attacks that a MANET can suffer from. A MANET is more open to these kinds of attacks because communication is based on common trust between the nodes, there is no central point for network management, no authorization facility, vigorously changing topology and limited resources.

Wireless ad-hoc networks are made out of independent nodes that are self-guided with no foundation. In along these lines, ad-hoc networks have dynamic topology with the end goal that node can simply join or leave the system whenever. They have numerous potential applications, particularly, in military and save ranges, for example, interfacing soldiers on frontline or build up another system setup. Ad-hoc wireless network demonstrates the Route Discovery Process (Khare). The wireless networks are appropriate for the area where that is not possible to make a proper connection a fixed infrastructure. The nodes communications happen to each other without presence of infrastructure, whenever it provides connectivity with forwarding packets over

---

*SBP Government College, Dungarpur (Raj.) INDIA

themselves. For this node connection, in the network used such routing protocols that are mention, AODV (Ad-hoc On-Demand Distance Vector), DSR (Dynamic Source Routing) and DSDV (Destination Sequenced DistanceVector).

Collaborative Attacks: Collaborative attacks (CA) occur when more than one attacker or running process synchronize their actions to disturb a target network. Multiple attacks occur when a system is disturbed by more than one attacker, but not necessarily in collaboration. We have study different types of attacks and then provided the definition of collaborative attacks. On the basis of study we are now going to categorize these attacks into two different categories. First: Direct Collaborative Attacks and Second: Indirect Collaborative Attacks. Here, the attacker nodes are already in existence in the original network or a malicious node joins the network or an internal node is compromised in the network. This kind of collaborative attacks can be referred to as direct collaborative attacks. A Black hole and Wormhole attack belongs to this category. On the other way the attacker uses different non-existent nodes in order to fake other nodes to redirect data packets to malicious node. This kind of collaborative attacks can be referred to as indirect collaborative attacks. A Sybil and Routing table overflow attacks belongs to this category.

References:-

1. Khare S., Sharma M., Dixit N. &Agrawal S, Security in Routing Protocol to Avoid Threat of Black Hole Attack in MANET, VSRDIJEECE, Vol. 2, issue-6, pp. 385-390, 2012.
2. Pal J.S. & Gupta A., “Protocol Stack Based Security Vulnerabilities in MANETs”, International Journal of Computer Applications, Vol. 69, No. 21, 2013.
3. Hu Y., Johnson D. B., &Perrig A., “Secure efficient distance vector routing for mobile wireless ad-hoc networks”, IEEE Computer Society: USA, pp. 3-12, 2002.
4. Wang X, Lin T., & Wong J., “Feature Selection in Intrusion Detection System over Mobile Ad-hoc Network”, Iowa State University, 2005.

****

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना*

प्रस्तावना – न्याय का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति को वह देना जिसके वह पात्र हैं। न्याय और निष्पक्षता निकट से जुड़े हुए शब्द हैं जो कभी-कभी एक दूसरे के स्थान पर उपयोग किए जाते हैं। समाज में समय और प्रगति के आगमन के साथ प्रशासनिक व्यवस्था में न्याय को शामिल करने की आवश्यकता बढ़ गई है जिसके कारण सत्ता में रहने वालों का दृष्टिकोण अधिक सतर्क और व्यवस्थित हो गया है। न्याय की उपस्थिति के बिना वैध समाज का अस्तित्व नहीं हो सकता। किसी भी राष्ट्र के महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक न्याय है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में न्याय की अवधारणा निहित है। अनुच्छेद 14, 15, 16 और 17 भी संविधान की प्रस्तावना में निहित न्याय के विचार को दर्शाते हैं। जो प्रत्येक नागरिक को अधिकार देता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39ए के तहत समान न्याय और मुफ्त कानूनी सहायता से संबंधित प्रावधान निहित हैं। जो प्रत्येक नागरिक को न्यायालय के अधिकारियों से नि:शुल्क कानूनी सहायता प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करते हैं। किसी को भी मुफ्त कानूनी सहायता से वंचित नहीं किया जा सकता है।

सामाजिक न्याय जाति, लिंग या जाति के आधार पर बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत विकास के लिए प्रत्येक व्यक्ति को समान सामाजिक अवसर उपलब्ध हों। इन भिन्नताओं के कारण कोई भी व्यक्ति विकास के लिए आवश्यक सामाजिक परिस्थितियों से वंचित न रहे। सामाजिक न्याय की अवधारणा सामाजिक समानता के अभ्यास पर आधारित है। सामाजिक न्याय केवल उस समाज में लागू किया जा सकता है जहां मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण मौजूद नहीं है। आर्थिक न्याय –आर्थिक न्याय किसी तरह सामाजिक न्याय का ही हिस्सा है; भारतीय संविधान राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के तहत शामिल सामाजिक-आर्थिक न्याय की कल्पना करता है। आर्थिक न्याय आर्थिक अवसर प्रदान करना, आर्थिक समानता प्रदान करना और आर्थिक अक्षमताओं को दूर करना। इसे हमेशा सामाजिक न्याय की छत्रछाया में लागू किया जाता है। आर्थिक न्याय का अर्थ है कि समाज में सबके बीच आर्थिक समानता हो। व्यक्तियों के बीच उनकी आर्थिक स्थिति के आधार पर कोई असमानता नहीं होनी चाहिए। किसी को भी उसकी आर्थिक स्थिति के कारण किसी भी अवसर से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। किसी भी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति उसे प्रदान किए गए अवसरों की कमी के लिए जिम्मेदार नहीं होनी चाहिए। आर्थिक न्याय का राष्ट्रीय धन और संसाधनों को जोड़कर गरीबी उन्मूलन और इस धान को समान रूप से उन सभी के बीच वितरित करना जो इसके उत्पादन में योगदान करते हैं।[01] राजनीतिक न्याय –राजनीतिक न्याय का अर्थ है राजनीतिक मनमानी से मुक्त व्यवस्था। सरकार के कामकाज में राजनीतिक निष्पक्षता होनी चाहिए। किसी भी व्यक्ति की राजनीतिक स्थिति से उसे कोई लाभ नहीं मिलना चाहिए और उसके साथ अन्य सभी नागरिकों की तरह व्यवहार किया जाना चाहिए। हर कानून को हर व्यक्ति पर समान रूप से लागू होना चाहिए चाहे उसकी राजनीतिक स्थिति कुछ भी हो। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के बीच संबंध-तीनों प्रकार के न्याय एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। एक को तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक कि अन्य दो मौजूद न हों। सामाजिक न्याय तभी प्राप्त किया जा सकता है जब आर्थिक और राजनीतिक न्याय मौजूद हो। भारतीय संविधान समानता से संबंधित प्रावधान करके तीनों प्रकार के न्याय को लागू करता है।

न्यायपालिका मौलिक अधिकारों के संरक्षक के रूप में कार्य करती है। यह भारतीय संविधान के तहत दिए गए तीनों प्रकार के न्याय को लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। न्यायपालिका ने देश में न्याय की स्थापना और प्रस्तावना में दी गई न्याय की अवधारणा को साकार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस संबंध में न्यायपालिका का दृष्टिकोण प्रगतिशील रहा है और इसने अपने निर्णयों के माध्यम से दिखाया है कि न्याय एक विकसित और कानून का पालन करने वाले समाज का एक अनिवार्य घटक है।[02]

संविधान का प्रारूप तैयार करना संविधान सभा का कार्य है जो एक लोकतांत्रिक सरकार का ढांचा उपलब्ध करवा सके। वह एक ऐसा सक्षम संस्थागत ढांचा उपलब्ध कराये जो सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की गति को तेज करे, जन मानस की सहभागिता को प्रोत्साहित करे और बढ़ती मांगो के समायोजन हेतु जरूरी संस्थात्मक स्तरों को प्राप्त करने में सक्षम हो। संविधान का निर्माण, इसको अपनाना एवं इसके द्वारा एक संम्प्रभुत लोकतांत्रिक गणतन्त्र के रूप में भारत का राज्य निर्माण स्वतन्त्रता तथा जनसाधारण की आकांक्षाओं के लिये किये गये लम्बे संघर्ष की पराकाष्ठा था। संविधान सभा में भाषण करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने कहा, इस सभा का प्रथम कार्य एक नये संविधान के माध्यम से भारत को स्वतंत्र करना, भूखी जनता को रोटी एवं नंगे लोगों को कपड़ा उपलब्ध कराना तथा प्रत्येक भारतीय को उसकी क्षमता के अनुरूप अपना विकास करने के पूर्ण अवसर प्रदान करना है। एक न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के उद्देश्यों को संविधान की प्रस्तावना में दर्शाया गया है[03] । हम भारत के लोग भारत को एक संम्प्रभु, समाजवादी, धर्मनिपेक्ष, लोकतांत्रिक गणतन्त्र में विधिवत् तौर पर गठित करने का संकल्प करते हैं और इसके सभी नागरिकों के लिये न्याय- सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक ; स्वतंत्रता- विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, निष्ठा तथा पूजा की समानता स्तर तथा अवसर की सुनिश्चित करना और सभी नागरिकों के बीच प्रोत्साहित करना। भ्रातत्व तथा व्यक्तिगत गरिमा को सुनिश्चित करना और

---

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) राजकीय स्नातकोतर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

राष्ट्र की एकता तथा अखण्डता को बनाये रखना।

संविधान निर्माताओं ने स्वतन्त्र भारत में नागरिकों के लिये न्याय, स्वतन्त्रता, समानता तथा भ्रातत्व प्राप्त करने के लक्ष्यों को सुनिश्चित किया।ये तीनों अवधारणात्मक लक्ष्य हमारी संवैधानिक व्यवस्था के आधार हैं। ये इसकी मूल्य व्यवस्था को जीवित रखते हैं एवम् इसकी संस्थाओं और माध्यमों को सजीव करते हैं। ये न केवल राज्य के प्रयासों एंव कार्यो को प्रेरित करते हैं अपितु समाज एंव व्यक्तिगत नागरिकों को भी प्रयासरत रहने की प्रेरणा प्रदान करते है पहले भारत जैसे देश में सामाजिक–आर्थिक न्याय का विचार सकारात्मक होना चाहिए अर्थात् राज्य का कार्य समाज में व्याप्त सामाजिक–आर्थिक विषमताओं को दूर करना है। सामाजिक–आर्थिक न्याय का नकारात्मक अर्थ उन कुछ धानी लोगों के लिये होता है जिनके विशेषाधिकारों में कटौती की जाती है जबकि सकारात्मक रूप में इसका मानना है कि दु:खी, शोषित, गरीब पुरुषों–महिलाओं के पास जीवन में उच्च स्तर तक पहुंचने के लिये पूर्ण अधिकार एवं अवसर होने चाहिये।दूसरे, सामाजिक–आर्थिक न्याय राजनीतिक न्याय की अपेक्षा गुणात्मक रूप में उच्चतर होता है। जैसा कि संविधान सभा में नेहरू ने कहा, 'इस विश्व या देश में तब तक कोई स्वतंत्रता न होगी जब तक एक भी मानव अस्वतंत्र है। तब तक कोई पूर्ण स्वतंत्रता नहीं आ सकेगी जब तक भुखमरी, वस्त्रों का आभाव, जीवन की आवश्यकताओं की अपूर्णता, और प्रत्येक मानव के विकास के लिये अवसर अपर्याप्त है। भारत के संदर्भ में स्वतंत्रता से अभिप्राय है एक न्यायपूर्ण समाज की स्थापना से है, जहां गरीबों को पर्याप्त लाभ प्रदान हो सके, भुखमरी एवं बदकिस्मती से छूटकारा मिल सके। तीसरे, शासन करने वाली सत्ता का औचित्य सामान्य आदमी के लिये सामाजिक–आर्थिक न्याय के लक्ष्य को प्रोत्साहित करने की योग्यता में है। भूखे पेट के लिये मताधिकार एक मजाक के अतिरिक्त कुछ न होगा। यदि सामाजिक–अर्थिक न्याय सामान्य नागरिक तक नहीं पहुंच पाता तो राजनीतिक न्याय भी अर्थविहीन हो जायेगा[04]।'

लोकप्रिय संम्प्रभुता भारत एक संम्प्रभु लोकतान्त्रिक गणतन्त्र है। संविधान की प्रस्तावना के प्रारम्भिक शब्द जनता की सत्ता पर बल देते हैं। जनता ही संविधान का स्रोत है। लोकप्रिय संम्प्रभुता का प्रथम अभिप्राय है कि सभी सरकारी संस्थाओं की अंतिम सत्ता जनता की इच्छा से उत्पन्न होती है जो संविधान में अभिव्यक्त की गयी है। दूसरे, समय–समय पर होने वाले लोकप्रिय चुनावों द्वारा इस सत्ता का नवीनीकरण होता रहता है। जहां इंग्लैण्ड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में मताधिकार लोगों को धीरे–धीरे प्रदान किया गया और लोगों को यह प्राप्त करने में एक शताब्दी से भी अधिक समय लगा वहीं भारत में यह एक ही साथ एवं एक ही समय में सभी को प्रदान कर दिया गया। परिणामस्वरूप गरीबी से ग्रस्त, पिछड़े एवं अशिक्षित भारतीयों को स्वतंत्रता की महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में मत देने का अधिकार प्राप्त हो गया। 1950 के बाद से स्वतंत्र भारत में बहूत आम चुनाव हो चुके हैं और इन चुनावों में गरीबी, व्यापक अशिक्षा तथा अल्प संचार जैसी बाधाओं के बावजूद जनता ने सामान्यत अपने विवेक का प्रयोग करते हुए अपनी पसन्द के प्रतिनिधियों का निर्वाचन किया है और एक लोकतांत्रिक, उत्तारदायी सरकार के गठन में अपनी सर्वोच्च सत्ता की पुष्टि की है। इसलिये यह कहा जा सकता है कि उन विद्यमान परिस्थितियों में भारत में लोकतन्त्र को अपनाना एक अनूठा प्रयोग था और राष्ट्रीय नेतृत्व की ओर से यह एक साहस पूर्ण एवं विश्वसनीय निर्णय की अभिव्यक्ति थी।संसदात्मक सरकार सरकार के प्रारूप भारत में लोकतान्त्रिक संसदात्मक सरकार अपनाई गई जो ब्रिटेन के प्रारूप पर आधारित था। सामान्यत यह विश्वास किया जाता है कि अंग्रेजी शासन के दौरान भारतीय नेताओं ने इस प्रणाली के अन्तर्गत कुछ अनुभव प्राप्त किया था। इसलिये संसदात्मक प्रारूप को अपनाया गया। लेकिन इसको अपनाने के अन्य दो महत्वपूर्ण कारण भी थे। प्रथम कारण यह था कि लोकतांत्रिक कार्यपालिका को दो शर्ते अवश्य पूरी करनी चाहिए[06] स्थायित्व एवं उत्तारदायित्व। संसदात्मक प्रणाली के अन्तर्गत यह अवलोकन मियादी एवं दैनिक दोनों होता है। संसद के सदस्यों द्वारा प्रश्नों, प्रस्तावों एवं अविश्वास प्रस्तावों द्वारा यह अवलोकन निरन्तर किया जाता है।

सभी नागरिकों के लिए न्याय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक ; विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, श्रद्धा एवं पूजा की स्वतंत्रता, स्तर तथा अवसर की समानता इनकी स्पष्ट अभिव्यक्ति धाराओं में की गयी है। इन्हें मौलिक अधिकार तथा नीति निर्देशक सिद्धान्त कहा गया है।मौलिक अधिकारों के अधयाय में संविधान स्वीकार करता है कि प्रत्येक व्यक्ति एक मानव के रूप में कुछ अधिकारों को उपयोग करने का अधिकारी है। इस प्रकार के अधिकारों का उपयोग किसी बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक की इच्छा पर निर्भर नहीं करता। इन अधिकारों में भाषण तथा संगठन की स्वतंत्रता, कानून के सम्मुख समानता एवं कानूनों की समान सुरक्षा, विश्वास की स्वतंत्रता और सांस्कृतिक एवं शैक्षिक स्वतंत्रतायें शामिल हैं। संवैधानिक समाधान के अधिकार की व्यवस्था भी संविधान में है जिसके अनुसार कोई भी पीड़ित व्यक्ति अपने मूलभूत अधिकार की बहाली के लिये उच्चतर न्यायालय के पास जा सकता है।इन अधिकारों का महत्व इस तथ्य में निहित है कि इन स्वतंत्रताओं का अस्तित्व बहुसंख्या की इच्छा पर निर्भर नहीं करता। अस्पृश्यता की समाप्ति (धारा 17), शोषण के विरूद्ध अधिकार (धारा 23,24) तथा समानता और न्याय के अधिकार (धारा 14, 15, 23) विशेष रूप से सामाजिक न्याय को प्राप्त करने से संबंधित है। संविधान द्वारा सुरक्षित किये गये मूलभूत अधिकार असीमित नहीं हैं।[07] दूसरे शब्दों में यद्यपि मूलभूत अधिकार स्वयं में मौलिक हैं, लेकिन वे राष्ट्रीय सुरक्षा एवं सामूहिक लोकहित से ऊपर नहीं है। राष्ट्रीय सुरक्षा के हित में संविधान में ऐसी व्यवस्थायें की गयी हैं जिससे कि मूलभूत अधिकारों को सीमित रखा जा सके। संविधान में यह व्यवस्था भी की गयी है कि जो अपने मौलिक अधिकारों का उपयोग कर रहे हैं वे अपने उत्तारदायित्वों को भी पूरा करें। संसद के पास यह अधिकार भी है कि मूलभूत अधिकारों को सीमित या रद्द करने के लिये संविधान में संशोधन कर सके। मूलभूत अधिकारों के उपयोग को सीमित करने के लिये संविधान में बहुत से संशोधन किये गये हैं।

विकासशील देश में लोकतंत्र जनसाधारण के लिये तभी अर्थपूर्ण हो सकता है जब इसके साथ सामाजिक परिवर्तन भी हो। इसलिये नवीन भारत ने उदित होते लोकतंत्र के मूलभूत आधार के रूप में आर्थिक कार्यक्रमों की योजनाएं तैयार की और इनमें से कई को राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतो के रूप में शामिल किया गया। सामाजिक हित में धान के एकाधिकार तथा संचयन को सीमित करना, बच्चों के लिये मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा जैसे कार्यक्रमों को नीति निर्देशक सिद्धान्तों में शामिल किया गया है। कुछ निश्चित मौलिक सिद्धांतो का अनुसरण करने के लिये नीति निर्देशक सिद्धान्तों को राज्य एवं इसकी प्रत्येक संस्था के लिए मार्ग निर्देशक माना गया है।नीति निर्देशक सिद्धान्तों को मूलभूत अधिकारों की भांति कानून के रूप में लागू नहीं किया जा सकता। लेकिन इसके बावजूद भी देश का शासन संचालित करने के लिये उन्हें आधारभूत घोषित किया गया है। 25 वें संविधान संशोधन के बाद उन्हें मौलिक अधिकारों की अपेक्षा प्राथमिकता भी प्रदान की जाने लगी है।संविधान की प्रस्तावना में उल्लेखित सभी लक्ष्यों को प्राप्त करने की

व्यवस्था की गयी है। आस्टिन का कहना है कि भारतीय संविधान एक सामाजिक दस्तावेज है। इसकी अधिकतर धारायें या तो सामाजिक क्रान्ति को आगे बढाने के लिये आवश्यक परिस्थितियों की स्थापना करती हैं या इस क्रान्ति की गति को और अधिक तीव्र करने का प्रयास करती है। सामाजिक क्रान्ति के प्रति कटिबद्धता मूलभूत अधिकारों तथा नीति निर्देशक सिद्धान्तों में निहित है। ये संविधान के विवेक है। लेकिन समाज की उदार प्रकृति, लोकतंत्र के कुछ विरोधाभासों एवं आधुनिक राज्यों पर पड़ने वाले दबावों के कारण सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने में निश्चित तौर पर कुछ स्पष्ट सीमायें हैं[08]। वास्तविक व्यवहार में भारत में परिवर्तन की प्रक्रिया ने जहां एक ओर पुनर्निर्माण तथा सामाजिक गतिशिलता की एक शानदार प्रक्रिया को जन्म दिया है वहीं इससे सामाजिक व्यवस्था में असंतुलन भी उत्पन्न हुआ है।[08]

धर्मनिरपेक्षता आधुनिक युग में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अवधारणा है। भारतीय लोकतंत्र में इसका महत्व और अधिक हो गया है क्योंकि सामाजिक विविधाता तथा सांस्कृतिक भिन्नताओं के कारण भारत को स्वतंत्रता के समय विशिष्ट समस्याओं का सामना करना पड़ा। ये एक स्वस्थ, उदार, समतावादी अनेकतावादी, लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिये अनूकुल न थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विकास केवल ऐसे वातावरण में ही हो सकता है जबकि सामाजिक स्थिति सौहादपूर्ण हो न कि विनाशकारी। इस प्रसंग में सामाजिक सौहाद तथा सामाजिक शांति के लिये धर्मनिरपेक्ष समाज एवं धर्मनिरपेक्ष राज्य को अनिवार्य माना गया।लेकिन संविधान निर्माण के समय विचित्र भारतीय परिस्थितियों एवं स्थितियों के कारण उस समय धर्मनिरपेक्ष के सिद्धांत के विषय में कुछ संदिग्धता भी व्याप्त थी। इसी कारणवश इसे संविधान की प्रस्तावना में उद्धृत नहीं किया गया। संविधान सभा में कई सदस्यों ने भारत को एक धर्मनिरपेक्ष समाजवादी राज्य घोषित करने की मांग की। परन्तु इस मांग को यह तर्क देते हुए मानने से इंकार कर दिया गया कि धर्मनिरपेक्षता संविधान में अन्तर्निहित है। इसी तरह समाजवाद तत्कालिक लक्ष्य नहीं था। बाद में 1976 में 42 वें संविधान संशोधन द्वारा धर्मनिरपेक्षता तथा समाजवाद दोनों को प्रस्तावना में शामिल कर लिया गया। भारत में धर्मनिरपेक्षता के विचार की उत्पत्ति मूलभूत अधिकारों से होती है और इसका अभिप्राय है धार्मिक पूजा की स्वतंत्रता, धार्मिक सहिष्णुता तथा साम्प्रदायिक सौहाद[09]। इसमें अन्तर्निहित है विद्यमान तथा नवीन धार्मों को समृद्ध होने की स्वतंत्रता, धार्मिक गतिविधियों के प्रति राज्य का तटस्थ बने रहना। निष्ठाओं की एकता के आधार पर नवीन राष्ट्र के निर्माण के लिये धर्मनिरपेक्षता की इस उदारवादी परिभाषा द्वारा भारत की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित एवं रक्षित करने की आशा की गयी थी। जैसा कि नेहरू ने बल देते हुए कहा था कि देश में जहां कहीं भी धार्मिक विविधता विद्यमान है वहां पर सामाजिक स्थायित्व तथा सौहाद को बनाये रखने के लिये धर्मनिरपेक्षता एक व्यवहारिक एवम् आवश्यक दृष्टिकोण है। लेकिन व्यवहार में राजनीतिज्ञों ने सत्ता के स्वार्थ पूर्ण उपयोग हेतु धर्मनिरपेक्षता का दुरूपयोग किया है और चुनावों के लिये लामबन्दी हेतु धर्म का इस्तेमाल किया है। इस प्रकार की गतिविधियों के कारण धार्मिक कट्टरवाद, रूढ़िवाद एवं समाज विरोधी तत्वों का सामूहिक रूप में उद्भव हुआ है। इससे साम्प्रदायिकता बढ़ रही है तथा इसने उदार धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को चुनौती दी है जिसके कारण आर्थिक विकास गम्भीर रूप से प्रभावित हो रहा है।

संघवाद भारत की पृष्ठभूमि बहुभाषायी, बहुसांस्कृतिक एवं बहुजातीय होने के कारण संविधान निर्माताओं ने प्रस्तावना के अन्तर्गत व्यक्तिगत गरिमा सुनिश्चित करते हुए भ्रातृत्व एवं राष्ट्र की अखण्डता तथा एकता प्रोत्साहित करने के लक्ष्य को रखा। इन सामान्य विचारों को न केवल समानता, स्वतंत्रता, नागरिक अधिकारों एवं अल्पसंख्यक अधिकारों की मूलभूत धाराओं द्वारा कार्यशील बनाया गया अपितु सहयोगी एवं अर्ध-संघवाद के माध्यम से भी इनकी सक्रिय भूमिका सुनिश्चित की गयी। उद्देश्य प्रस्ताव में संविधान सभा ने भारत में एक ऐसे संघवाद के निर्माण की घोषणा की जिसके अन्तर्गत राज्य-ईकाईयों के पास अवशिष्ट शक्तियां तथा सरकार संचालित करने के अधिकारों के साथ-साथ स्वायत्ता होगी। परन्तु भारत का विभाजन हो जाने के कारण भविष्य में भारत की एकता के सवाल से नेतृत्व के एक भाग में कुछ संदेह उत्पन्न हो गये थे। नेतृत्व का एक भाग पहले से ही एक शक्तिशाली केन्द्र के पक्ष में था। परिणामस्वरूप संविधान निर्माताओं ने एक ऐसी संघीय व्यवस्था की स्थापना की जिसका झुकाव एक शक्तिशाली केंद्र की तरफ था। संविधान की प्रथम धारा घोषित करती है कि भारत राज्यों का संघ है। राज्यों के 'संघ' शब्द के महत्व की व्याख्या करते हुए बी. आर. अम्बेडकर ने कहा कि इसके अन्तर्गत दो चीजें अन्तर्निहित हैं प्रथम, भारतीय संघ इकाईयों के मध्य एक समझौते का परिणाम नहीं है, द्वितीय किसी भी इकाई को संघ से अलग होने की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है, लचीलापन न तो सामाजिक न्याय की अवधारणा और न ही संविधान अपने आप में कोई स्थायी चीजें हैं। सामाजिक न्याय की अवधारणा को सामाजिक वास्तविकताओं के आधार पर समय-समय पर पुनर्निमित करने की आवश्यकता होती है। सामाजिक वास्तविकतायें विद्यमान असमानताओं के विषय में हमें जागरूक रखती है तथा परिवर्तन द्वारा हम सामाजिक-राजनीतिक संस्थाओं को और अधिक तर्कसंगत बना पाते हैं। संविधान भी एक जीवन्त दस्तावेज होता है जिसे समाज की परिवर्तित होती जरूरतों के अनुरूप अपनी गति को बनाये रखना होता है। इसलिये यह सम्भव है कि किसी युग तथा एक विशिष्ट संदर्भ में तैयार किया गया संविधान दूसरे युग तथा संदर्भ में अनुपयोगी हो जाये। भारतीय संविधान के निर्माता इस तथ्य के प्रति भली-भांति सजग थे कि जिस विकासशील समाज के लिये वे राजनीतिक संस्थाओं की व्यवस्था उपलब्ध कराने जा रहे थे उसमें गतिशीलता तथा तीव्र विकास के लक्षण विद्यमान हैं। सदैव परिवर्तित होती परिस्थितियों के अनुरूप संविधान को ढालना उसके सफलतापूर्वक कार्य करने के लिये महत्वपूर्ण था क्योंकि संविधान को राष्ट्र के विकास की परिवर्तन होती धारा के साथ-साथ कार्य करना था। संविधान में औपचारिक संशोधन की प्रक्रिया समाज में परिवर्तित होती परिस्थितियों के लिये सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली माध्यम है। लगभग सभी संविधानों में किसी न किसी प्रकार से संशोधन किये जाते हैं। यदि यह प्रक्रिया तुलनात्मक दृष्टि से सरल है तो इसको जटिल संविधान की तुलना में लचीला संविधान कहा जाता है क्योंकि जटिल संविधान के अन्तर्गत संशोधनों की प्रक्रिया कुछ मुश्किल होती है। संविधान की धारा 368 में निहित संविधान के औपचारिक संशोधन की प्रक्रिया जटिलता तथा लचीलेपन का मिश्रण है। संशोधन हेतु संविधान की धाराओं को तीन सामान्य शीर्षकों में विभाजित किया गया है। प्रथम शीर्षक के अन्तर्गत वे धारायें आती हैं जिनको संसद के बहुसंख्यक सदस्यों द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है जैसे साधारण कानून को पारित करने के लिये। दूसरे शीर्षक के अन्तर्गत वे धारायें आती हैं जिनमें संशोधन एक विशेष बहुमत द्वारा किया जा सकता है और तीसरे शीर्षक के अन्तर्गत वे मूलभूत धारायें आती हैं जिन्हें अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान की गयी है और उनमें संशोधन तभी किया जा सकता है यदि उन्हें संसद के दोनों सदन दो तिहाई बहुमत से पारित करे तथा कम से

कम आधे राज्यों की विधानसभायें स्वीकार करें।इस प्रकार अधिक जटिलता एवं अधिक लचीलेपन के मध्य संतुलन बनाकर रखा गया है। समाज की बढ़ती एवं प्रसारित होती जरूरतों को पूरा करने के लिये संविधान को कुछ जटिल तथा कुछ लचीला बनाया गया।सामाजिक न्याय विचारधारा सामाजिक न्याय के सन्दर्भ भारतीय संविधान की उपरोक्त विशेषताओं से स्पष्ट होता है कि संविधान निर्माताओं ने सहभागी लोकतंत्र के आदर्शो, नागरिकों के अधिकारों की गारण्टी, धर्मनिरपेक्षता, समतावादी, सहकारी संघवाद तथा सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय प्राप्त करने के लिये स्वतंत्र न्यायपालिका को संविधान में शामिल किया।[10]

संविधान सभा में एक शक्तिशाली गुट ने सामाजिक न्याय की व्याख्या पश्चिमी उदारवाद के अनुसार अवसरों की समानता एवं व्यक्तियों के चुनाव की स्वतंत्रता के संदर्भ में की थी। लेकिन कुछ ऐसे भी सदस्य थे जिनकी दृढ़ मान्यता थी कि जब तक दलितों तथा भारतीय समाज के अन्य शोषित-पीड़ित वर्गों की आकांक्षाओं का सन्तुष्टीकरण नहीं हो जाता तब तक नवीन राष्ट्र के निर्धारित सामाजिक राजनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करना कठिन होगा एवं राज्य प्रक्रिया खतरों से भरपूर मार्गों से होकर गुजरती रहेगी। वैकल्पिक रूप में गांधीवादी परिकल्पना भी थी जिसके अन्तर्गत राज्य की भूमिका कम तथा प्रबंधन की भूमिका अधिकतम थी। पश्चिम के उदारवाद से प्रभावित लोगों के लिये गांधीवादी आदर्श एक उपयोगिता मात्र था। गांधीवादी आदर्श ने दलितों तथा भारतीय समाज के अन्य कमजोर वर्गों में कोई विशेष विश्वास उत्पन्न नहीं किया।

भारत के संविधान को साम्यवाद तथा स्वेच्छाचारी व्यक्तिवाद की अतियों के मध्य एक समझौते के रूप में एक लोकहित राज्य का समर्थक कहा जा सकता है। इसने एक ऐसे मानवीय तथा प्रगतिशील समाज की परिकल्पना की जिसके अन्तर्गत व्यक्तिगत उद्यम के फल को नकारे बिना भरण-पोषण की व्यवस्था हो सके। संविधान में उल्लेखित सामाजिक-आर्थिक न्याय के प्रावधानों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय संविधान मूल रूप से उदारवादी प्रवृत्ति का होने के बावजूद शासन चलाने हेतु शक्ति तथा संस्थाओं की व्यवस्था मात्र नहीं है। अन्य देशों के संविधानों से हटकर, भारतीय संविधान निर्माताओं ने एक नयी सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के लिये एक दृष्टिकोण एवं दिशा उपलब्ध कराने हेतु कुछ लक्ष्य निर्धारित करने का प्रयास किया। यह सामाजिक व्यवस्था न केवल लोकतांत्रिक होगी बल्कि समान एवं न्यायपूर्ण होगी। सम्भवत यह समाजवादी दृष्टिकोण न भी हो लेकिन फिर भी यह मानवीय, लोकतांत्रिक एवं समतावादी दृष्टिकोण है। इससे भी अधिक यह भारतीय राज्य को सामाजिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण, राजनीतिक स्वतंत्रता को सुरक्षित करने तथा आर्थिक व्यवस्था के परिवर्तन में योगदान देने में सकारात्मक भूमिका प्रदान करता है।[11] इसमें एक ऐसे लोकतांत्रिक समाज के निर्माण करने की आशा की गयी थी जिसके अन्तर्गत राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक लोकतंत्र शामिल है। यह अलग बात है कि व्यवसायिक राजनीति के कारण पिछले 75 वर्षो के इतिहास में राष्ट्र इस सामाजिक न्याय की परिकल्पना से बहुत दूर होता चला गया है। न्याय का प्रवर्तन एक राष्ट्र के बेहतर राजनीतिक जीवन के लिए एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है। बेहतर लोकतंत्र के लिए हमें न्याय के बेहतर कार्यान्वयन की आवश्यकता है। न्याय के सभी रूपों की उपस्थिति के बिना कोई भी समाज एक संवैधानिक समाज के रूप में विकसित नहीं हो सकता है इसलिए इसे ध्यान में रखते हुए हमारे संविधान के निर्माताओं ने भारतीय संविधान की प्रस्तावना के साथ-साथ अन्य भागो में इस अवधारणा को शामिल किया। न्यायोचित दृष्टिकोण पर आधारित व्यवस्था स्थापित करने के लिए सरकार के तीनों अंगों में समन्वय की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जैन एवं फड़िया भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2005
2. जैन, हरिमोहन भारतीय शासन एवं राजनीति शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2001
3. जैन, पुखराज भारतीय राज व्यवस्था, साहित्यागार, आगरा, 2010
4. जैन, एस. एन भारतीय संविधान और राजनीति, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1984
5. जैन, एण्ड फड़िया इण्डियन गवरमेंट एण्ड पॉलिटिक्स, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2016
6. जाटव, डी0 आर0 भारतीय समाज एवं संविधान, समता साहित्य सदन, जयपुर, 1992
7. महला, अशोक कुमार भारतीय राजव्यवस्था, अरिहंत पब्लिशिंग हाउउस, जयपुर, 2002
8. जोन्स, मॉरिस द्या गवरमेंट एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया,1950
9. कौशिक, आशा, ग्लोबलाइजेशन, डेमोक्रेसी एण्ड कल्चर सिचुएटिंग गांधीयन ऑल्टरनेटिव्ज, पाइन्टर प्रकाशन, जयपुर, 2002
10. कोठारी, रजनी पॉलिटिक्स इन इण्डिया, औरियन्ट लोंगमेंन लि., न्यू देहली, 1970
11. जोशी, आर. पी. भारतीय सरकार एवं राजनीति, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2007

****

राजस्थान में सूखा व अकाल : समस्या तथा समाधान

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद*

शोध सारांश – राजस्थान की भौगौलिक स्थिति अकाल व सूखे का पर्याय बन गयी है राज्य में अकाल की भीषणता का अन्दाज इसी बात से लगाया जा सकता है कि यहाँ11 वी सदी में लगातार 12 वर्षो तक अकाल चला। यहाँ विभिन्न वर्षो में अकाल व सूखे की स्थिति रही है यह अकाल अनाज, पानी व चारा के रूप में त्रिकाल कहलाता है इससे न केवल मानव बल्कि पशु-पक्षी सभी प्रभावित होते है। सूखा शब्द का अर्थ है वर्षा की कमी। अत: जब-जब राज्य में वर्षा मी कमी होती है। तो मिट्टी में नमी के कम होने से वनस्पति व फसल का उत्पादन नहीं होता है। जिससे पानी अन्न व चारा भी कमी हो जाती है। यह स्थिति अकाल में परिवर्तित हो जाती है। पश्चिमी राजस्थान में सूखा व अकाल स्थायी क्षेत्र है। पूर्वी राजस्थान व दक्षिणी भाग में अस्थाई होता है। इस स्थिति के लिए प्राकृतिक व मानवीय दोनों कारक उत्तरदायी होते है प्राकृतिक कारक: स्थलाकृति, विषम जलवायु, वर्षा की अनियमितता व अनिश्चितता, वनों का अभाव आदि। मानवीय कारक: वनों का दोहन, भूजल दोहन, कृषि भूमि के उपयोग से अपरदन आदि। इस अकाल के अस्थायी व स्थायी दोनों समाधान सरकारी प्रयासों द्धारा ही किये जाते है। अब सरकार के प्रयासों से अकाल में मानव व पशुधन की मृत्यु बहुत कम होती है। अकाल की अपेक्षा अब अभावग्रस्त क्षेत्र ज्यादा पाये जाते हैं।

शब्द कुँजी- अकाल, सुखा, चारा, पानी, अनाज, वनविनाश, प्राकृतिक, आधारभूत सुविधाये, विषम जलवायु।

प्रस्तावना – सूखा व अकाल राजस्थान के पर्याय है विषम जलवायु परिस्थितियों के कारण राज्य में थार मरूस्थल की उत्पत्तिा हुयी। यह मरू भूमि नाम सुनते ही अकाल का परिचय राजस्थान से हो जाता है। राज्यमें सुखाव अकाल लघु व दीर्घ अवधि के लिए राज्य के पूर्वी व पश्चिमी भाग में पड़ता रहता है। 1899 में उत्तरी भारत में सर्वाधिक भीषण अकाल पड़ा। यह अकाल विक्रम संवत वर्ष 1956 में पड़ा अत: यह 'छप्पनिया के अकाल' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। 2002-03 का अकाल भी सर्वाधिक भीषण रहा है। राज्य में लगातार तीन वर्ष अर्द्धअकाल व प्रति आठवें साल भंयकर अकाल आता है इसके लिए एक कहावत है-

पग पूंगल, धड़ कोटड़े, ठावों बाढ़मेर।
जाये लादे जोधपुर, ठावों जैसलमेर।।

इसका अर्थ है कि अकाल के पैर पूंगल (बीकानेर) धड़ कोटड़ा (मारवाड़) में, भुजा बाढ़मेर में स्थायी रूप से रहती है लेकिन तलाशने पर यह जोधपुर में भी मिल जाता है जैसलमेर में तो स्थायी रूप से निवास करता है। ये कहावत ये सिद्ध करती है कि राजस्थान में अकाल व सूखा लघु व दीर्घ अवधि के लिए सदैव बना रहता है। सरकारी प्रयासों से अब अनाज, पानी, चारे की समस्या नहीं आती है। वरना प्राचीन समय में त्रिकाल की स्थिति के कारण मानव, पषु-पक्षी सभी काल के ग्रास बन जाते थे।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध पत्र में प्राथमिक आँकड़े साक्षात्कार व प्रश्नावली द्धारा तैयार किये गये हैं जबकि द्धितीयक आँकडे सरकारी व गैर सरकारी संस्थानों से प्रकाशित का उपयोग किया गया है।

शोध परिकल्पना:

1 यदि वर्षा की अनियमितता व अनिश्चितता होगी तो सूखा व अकाल की स्थिति रहेगी।

2. कृषि भूमि का आवश्यकता से अधिक दोहन तथा वनस्पति के विनाश से मृदा में नमी कम होगी जिससे सूखा व अकाल पड़ेगा।

शोध का उद्देश्य – राज्य में बार-बार पड़ने वाले सूखे व आकल का अध्ययन कर इसके दृष्परिणामों पर रोक लगाने हेतु लघु व दीर्घ उपायों को बताना। जनधन की हानि को अकाल में कम करना। साथ ही सरकारी योजनाओं को आमजन तक पहुँचाना है।

सूखा व अकाल – सूखा शब्द कम वर्षा का प्रतीक है सूखा लगातार होने से भूमि की नमी खत्म हो जाती है। तथा भू-जल भी नीचे चला जाता है इसके कारण वनस्पति का आवरण कम हो जाता है फसलों का उत्पादन नहीं होता है जब वनस्पति, फसलें व जल की स्थिति खराब होने लगती है तो यह स्थिति अकाल का रूप ले लेती है। अकाल लगातार वर्षा की कमी का परिणाम होता है। कुछ मानवीय गतिविधियों का भी होता है। लेकिन वर्तमान में तीव्र यातायात साधनों के कारण अब दूसरे राज्यों या देशों से अन्न, जल, चारे का आयात कर अकाल को अभावग्रस्त क्षेत्रों में बदल देता है। तथा पषु, पक्षी, मानव काल के ग्रास राजस्थान में नहीं बनते है राजस्थान में जलवायु की विषमता, वनों के स्वरूपों, धरातलीय स्वरूप तथा अरावली श्रृंखला की दिषा मानसूनी हवाओं के समानान्तर होने के कारण भी अकाल एवं सूखे की स्थिति रहती है। 1987 का अकाल 20 वीं सदी का सबसे भंयकर अकाल था। इस अकाल ने त्रिकाल का रूप धारण कर लिया था।

अकाल के प्रकार

1. **अन्नकाल-** इसमें कृषि उपज नहीं होती है।
2. **जलकाल-** इसमें पानी का अभाव रहता है।
3. **त्रिकाल-** इसमें अन्न, जल व चारे तीनों का अभाव होता है।

सन् 2009-10 में राजस्थान के 27 जिलें अकाल से प्रभावित हुए है।

---

* व्याख्याता (भूगोल) श्री प्र.सिं.बा. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाहपुरा (भीलवाड़ा) (राज.) भारत

पष्चिमी राजस्थान के 12 जिले हनुमानगढ़, गंगानगर, बीकानेर, चूरू, सीकर, झुन्झुनूं, नागौर, पाली, जोधपुर, जैसलमेर, बाढ़मेर, जालौर मरूस्थलीय जिले है। जो राज्य का 61 प्रतिशत क्षेत्रफल व 40 प्रतिशत जनसंख्या रखते है यहाँ करीब 66 प्रतिशत भूमि बंजर व अकृषित है। जो सूखे व अकाल का प्रतीक है। पश्चिमी राजस्थान में वर्षा की मासिक व वार्षिक अनियमितता, भू-जल का अभाव, वाष्पीकरण की अधिकता, वनस्पति का अभाव सूखे व अकाल के विनाशकारी प्रभाव को उत्पन्न करते है। थार का मरूस्थल में अन्य मरूस्थलों की अपेक्षा अधिक जनसंख्या घनत्व पाया जाता है जिस कारण अकाल का प्रभाव अधिक पड़ता है। अरावली प्रदेश में अधिक वर्षा व भू-जल की स्थिति अच्छी होने से कम सूखा व अकाल पड़ता है। हाड़ौती व पूर्वी राजस्थान में भी अच्छी वर्षा व नदियों के प्रवाह के कारण सूखे व अकाल का प्रभाव कम रहता है।

सूखे व अकाल के कारण – इस आपदा के लिए प्राकृतिक व मानवीय दोनों कारक जिम्मेदार है–

(1) प्राकृतिक कारक

1. शुष्क जलवायु–राज्य में कम वर्षा के कारण मरूस्थलीय स्थिति बन गयी है तापमान ग्रीष्मकाल में 480 से.ग्रे तक चला जाता है। औसत वर्षा 57 से.मी. है। वाष्पीकरण अधिक होता है। इस के कारण सूखे की स्थिति बन जाती है।

2. वर्षा की अनियमितता व अपर्याप्तता–राजस्थान के पश्चिम भाग में वर्षा 12 से.मी. जैसलमेर, बाढ़मेर में रहती है। अरावली के पश्चिमी भाग में औसत 50 से.मी. से कम वर्षा होती है अरावली प्रदेश में 50 से 70 से.मी., मैदानी भागों में 60 से 85 से.मी. द. पूर्वी भाग में 90 से.मी. से अधिक रहती है। राज्य में यह वर्षा कभी कम व कभी अधिक होती है। इस अनिश्चितता के कारण सूखे व अकाल की स्थिति बन जाती है।

3. धरातलीय संरचना–राज्य में अरावली पर्वतमाला दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर है जो मानसूनी पवनों को रोकने में असमर्थ है जिस कारण राज्य में वर्षा नहीं होती है तथा अकाल की स्थिति बन जाती है। राज्य का पष्चिमी भाग मरूस्थलीय है।

4. नियतवाही नदियों का अभाव–राज्य मे सदानिरा नदियों का अभाव पाया जाता है। वर्षा काल में वर्षा का जल आने पर ये प्रवाहित होती है। अधिकांश भाग आन्तरिक प्रवाह क्षेत्र का है। चम्बल, बनास, लूनी, माही प्रमुख नदियाँ है। ग्रीष्मकाल में वर्षा जल का इन नदियों में अभाव हो जाता है।

5. मिट्टी अपरदन की समस्या–उपजाऊ कृषि भूमि का जल व वायु द्वारा अपरदन होने से बंजर भूमि में बदल जाती है। इससे नमी के अभाव से फसलों व चारे का उत्पादन न होने से सूखे की स्थिति बन जाती है।

6. वनस्पति आवरण का अभाव–सघन वनस्पति न होने के कारण भूमि की नमी सूख जाती है वर्षा भी नहीं होती है इस कारण से भी अकाल की स्थिति बन जाती है। अरावली क्षेत्र में वनों का खनिज दोहन के कारण अधिक विनाष हुआ है। जलाऊ लकड़ी के लिए वनस्पति, वृक्ष ग्रामीणों द्वारा काटे जाते है। मरूस्थल में अति पशुचारण से वनस्पति आवरण कम है। ये परिस्थितियाँ भी सूखे व अकाल को जन्म देती है। वन न केवल वर्षा को आकर्शित करते है बल्कि तापमान को नियन्त्रित करते है आर्द्रता बढ़ाते है यदि वन नहीं होगे तो वर्षा कम होगी तापमान बढ़ेगा जिस कारण सूखे व अकाल की स्थिति उत्पन्न होगी।

(2) मानवीय कारण – प्राकृतिक कारणों के अलावा मानवीय कारक भी शक्त रूप से सूखे व अकाल के लिए जिम्मेदार है वनों का तेजी से विनाश करने के कारण मृदा की नयी खत्म हो जाती है। जिस कारण फसल उत्पादन नहीं होता है। साथ ही वनस्पति आवरण कम होने से पशुओं के लिए चारा भी कम उत्पन्न होता है वर्षा जल का सही उपयोग न करना तथा भू-जल का आवष्यकता से अधिक दोहन करने से भी अकाल जैसी परिस्थितियाँ पैदा हो जाती है।

(3) आर्थिक कारण – अकाल का कारण आर्थिकता से भी जुड़ा है मरू प्रदेश की स्थिति के कारण राज्य पिछड़ा हुआ है स्वतन्त्रता के पश्चात् अनेक योजनाएँ चलाई गयी लेकिन वे लघु समय के लिए थी उनका लाभ दीर्घकाल तक नहीं होने से हर दो-चार वर्ष पश्चात् सूखे व अकाल की परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती है।

राज्य का रियासती काल से पिछड़ा होना, गरीबी का पाया जाना। विदेशी व सामन्ती शोषण भी इन परिस्थितियों के लिए जिम्मेदार रहे है। हमारे राज्य की कृषि मानसून पर आधारित है इस का प्रभाव लघु, कुटीर व ग्रामीण उद्योगों पर भी पड़ता है। ये उद्योग वैकल्पीक रोजगार के साधन है। इस कारण अकाल व सूखे के समय स्थिति ओर भी गम्भीर हो जाती है जब-जब कृषि फसल की पैदावार कम होती है। हमारे किसान को आजीविका चलाने के साथ-साथ पशुपालन को रखना भी मुश्कील हो जाता है। सरकारे अकाल व सूखे के नाम पर सड़क निर्माण, पाठशाला, कुओं व तालाबों का निर्माण करवाती है। जो स्थायी समाधान नहीं है।

(4) राजनैतिक कारण – जब-जब भी सूखा व अकाल पड़ता है सरकार अस्थायी राहत कार्यो को चलाती है। इस कारण स्थायी व उत्पादक परिस्थितियों का निर्माण नहीं हो पाता है जिस कारण अकाल व सूखे भी समस्या बनी रहती है। सरकारी योजनाओं का पैसा सही दिशा में न लगकर गलत दिशा में व्यक्ति चला जाता है जब-जब सूखे व अकाल की समस्या राज्य में उत्पन्न होती है तो उसका रूप क्षेत्रीय हो जाता है प्रभावशाली लोग योजनाएँ व योजना के पैसे अपने क्षेत्र में ले जाते है। जिस कारण इस समस्या का स्थायी समाधान नहीं हो पाता है अकाल जैसी समस्या का राजनीतिकरण हो जाता है राजनैतिक इच्छा शक्ति की कमी के कारण आज भी पश्चिमी राजस्थान में आधारभूत सुविधाओं का अभाव पाया जाता है। सूखे व अकाल का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धी इच्छा शक्ति से भी रहा है। राज्य सरकार की इस सम्बन्धी योजना मद की राशि राहत कार्यो में लगाना राजनीतिक इच्छा शक्ति पर निर्भर करता है।

सूखे व अकाल के दुष्परिणाम : अकाल के कारण जैव जगत पर बहुत गम्भीर प्रभाव पड़ते हैं जो निम्न है–

1. बेरोजगारी– अकाल के कारण रोजगार खत्म होने से बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो जाती है।
2. खाद्यान्नव चारे की समस्या– जब-जब भी अकाल पड़ता है तो मनुष्य को खाद्यान्न व पशुओं को चारे के लिए झुझना पड़ता है। ये परिस्थितियाँ विशेषकर मरू प्रदेश में ओर भी गम्भीर हो जाती है।
3. उद्योगों के लिए कच्चे माल का संकट उत्पन्न हो जाता है।
4. श्रमिकों की कार्यक्षमता में कमी तथा जनता की क्रय-शक्ति कम हो जाती है।
5. वस्तुओं की माँग में कमी तथा औद्योगिक उत्पादन में गिरावट हो जाती है।

अकाल व सूखे के प्रभाव को कम करने के उपाय – अकाल व सूखे का सम्बन्ध वर्षा आधारित है अत: इससे सम्बन्धी उपाय अल्पकालीन व दीर्घकालीन दोनों जरूरी है। इस अल्पकालीन व दीर्घकालीन समाधान के

लिए सरकार द्वारा सरकारी कार्यक्रम जैसे- सूखा संभाव्य क्षेत्र कार्यक्रम (1974-75 में राज्य के 11 जिलों में 32 खण्ड़ों में) चलाया गया, मरू विकास कार्यक्रम (1977-78 में 16 जिलों के 85 खण्डों में) चलाया गया, प्राकृतिक आपदा सहायता कोष (1990-91) का गठन, जलग्रहण विकास योजना (1995), मरूगोचर योजना (2003-04), प्राकृतिक आपदा कोष (1995) का गठन आदि क्रियान्वित किये गये है।

अल्पकालीन उपाय:

1. खाद्यान्न का आयात करना तथा पशुओं के लिए चारा डिपो बना।
2. पेयजल व्यवस्था के लिए ट्यूबेल व नलकूप, कुऐं खोदना।
3. सरकार की वार्षिक योजनाओं में बजट का अनिवार्य प्रावधान करना।
4. राहत कार्यो में जनसहयोग लेना।
5. राहत कार्य क्षेत्रीय आधार पर संचालित करना।

दीर्घकालीन उपाय:

1. वृक्षारोपण कार्यक्रम को सतत रूप से चलाना चाहिये जिससे वर्षा होगी, मिट्टी में नमी भी बनी रहेगी।
2. सिंचाई योजनाओं का विस्तार कर उपलब्ध जल संसाधनों का दीर्घकालीन व उचित प्रबन्धन करना।
3. कृषिवानिकी एवं चारा भूमि विकास कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देना व मरूभूमि के विस्तार को रोकने के उपाय करना।
4. आपदा प्रबन्धन विभाग को ओर अधिक सशक्त बनाया जावे।
5. चारागाह भूमि का ग्रामीण स्तर पर स्थायी प्रबन्धन किया जाना चाहिये।
6. स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहित करना तथा सरकार की जबावदेही सुनिश्चित करना प्रशासन को हर समय देख-रेख करना अति आवश्यक है।
7. सरकारी योजनाओं का सही क्रियान्वयन कर अकाल व सूखे से छुटकारा पाया जा सकता है।

निष्कर्ष- राज्य की शुष्क व अर्द्धशुष्क जलवायु के कारण यहाँ पर वर्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। जब-जब मानसूर विफल होता है। सूखा व अकाल की स्थिति बन जाती है। अन्न, जल व चारे की कमी का प्रभाव मानव समुदाय के साथ पशुओं व जीव-जन्तुओं पर पड़ता है। सूखे व अकाल के प्रभाव को कम करने के लिए लघु व दीर्घकालीन उपाय किये जाते हैं। कुशल यातायात प्रबन्धन के कारण अकाल की अपेक्षा अभावग्रस्त क्षेत्र अधिक होते हैं। चारे, पानी व खाद्यान्नों का सरकार अन्य राज्यों या देशों से अर्थव्यवस्था कमजोर हो जाती है। प्रशासनिक दृष्टि से इसके स्थायी समाधान हेतु योजनाएँ बनाकर क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. गुर्जर आर.के., शुक्ला लक्ष्मी (1998) : 'जल संसाधन, पर्यावरण एवं लोग', पोईन्टर पब्लिकेशन, जयपुर।
2. साईवाल, स्नेह, 'राजस्थान का भूगोल', कॉलेज बुक हाउस-जयपुर।
3. शर्मा, एच.एस., शर्मा एम.एल., 'राजस्थान का भूगोल' पंचशील प्रकाशन, जयपुर
4. मोघे, बंसत (1984) : राजस्थान की मृदाऐं एवं प्रबन्धन, राजस्थान ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
5. केन्द्रीय भू-जल बोर्ड, पश्चिमी क्षेत्र, जयपुर (2006) सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन, भूमिगत जल परिदृष्य।
6. Singh A.L. (1985): The Problems of waste lands in India, B.R. Poblishing company, Delhi.
7. Jha. B.N (1979): Problems of land utilization, classical publication, New Delhi

****

Photocatalytic Properties of Titanium Dioxide

Mukesh Kumar Mehta *

Introduction - The photochemical degradation of p-dichlorobenzene on titanium dioxide was carried out in the presence of Fenton's re-agent, and progress of the reaction was observed spectrophotometrically. The effects of the variation of various parameters, such as pH, concentration of p-dichlorobenzene, Fe^{3+} ion concentration, amount of photocatalyst, amount of photocatalyst, amount of hydrogen peroxide, light intensity etc. on the photodegradation of p-dichlorobenzene were observed. A tentative mechanism for this degradation has also been proposed.

Results and Discussion: The optical density of the solution was found to decrease with increasing time intervals, which indicates that the concentration of p-dichlorobenzene decreases with increasing time of exposure. A plot of 1 + log O.D. against time was linear and followed pseudo-first order kinetics. The rate constant was calculated from the expression, k = 2.303 x slope.

Effect of pH: The effect of pH on the photocatalytic degradation was investigated in the pH range 1.0–3.5. The data reveal that the rate of photocatalytic degradation of p-dichlorobenzene increases with increase in pH upto 3.0 and then, the rate decreases with increasing pH. At pH > 3.5, some turbidity appeared, therefore, the effect of pH was studied up to 3.5 only. The photocatalytic degradation depends strongly on the pH of the reaction medium. The hydroxyl radicals are generated by three steps: (i) reaction between ferrous ions and hydrogen peroxide, (ii) photo-chemical reaction of ferric ions and water, (ii) reaction between holes and water. The increase in pH of the medium will favor step (i) where OH^- ions are formed alongwith hydroxyl radicals, whereas protons are generated in steps (ii) and (iii). Thus it may be concluded that step (i) dominates over steps (ii) and (iii) in the pH range below 3.0. However, retardation of the reaction above pH 3.0 suggests the dominance of steps (ii) and (iii) over the (i).

Effect of p-dichlorobenzene concentration: The effect of p-dichlorobenzene concentration [in the range (1.0–7.0) x 10^5 M] on the rate of its photocatalytic degradation was studied. The rate of photocatalytic degradation was found to increase with increasing concentration of p-dichlorobenzene upto 5.0 x 10^{-5} M (k = 2.50 x 10^4 S^{-1}). On further increase, a sudden decrease in the rate was observed. This may be explained on the basis that on increasing the concentration of p-dichlorobenzene, the reaction rate increases as more molecules of p-dichlorobenzene are available for degradation. However, on increasing the concentration above 5.0 x 10^{-5} M, the movement of p-dichlorobenzene molecules towards semiconductor surface is hindered because of its large concentration, and hence, a decrease in the rate of degradation was observed.

Effect of ferric ion concentration: The effect of concentration of Fe^{3+} ion [in the concentration range (3.0–11.0) x 10^5 M) on the rate of photocatalytic degradation of p-dichlorobenzene was observed by keeping all other factors identical.

The results reveal that the rate of photodegradation increases on increasing concentration of Fe^{3+} ions upto 9.0 x 10^{-5} M (k = 2.50 x 104 S^{-1}), while a reverse trend was observed beyond this limit. This may be explained on the basis that on increasing the Fe^{3+} ions in the reaction mixture, the concentration of Fe^{2+} ions also increases accompanied by enhanced generation of the active species $OH^\bullet$ radicals and as a consequence, the rate of photocatalytic degradation also increases. However, on increasing the concentration of Fe^{3+} ions further, the rate was found to decrease. This is because of the fact that the increasing concentration of Fe^{3+} ions imparts a yellow colour to the solution, and at large concentrations, it may act as a filter to the incident light and the desired light intensity will not reach the surface of the semiconductor and, therefore, a decrease in the rate of reaction was observed.

Effect of hydrogen peroxide: The effect of amount (0.10–1.30 ml) of hydrogen peroxide on the photocatalytic degradation of p-dichlorobenzene was also investigated. It was observed that the rate of the reaction increases as the amount of H_2O_2 is increased and it attained an optimum value at 1.1 ml (k = 2.51 x 10^4 s^{-1}). Thereafter, the rate of degradation becomes virtually constant. This saturation like behavior can be explained on the basis that the surface of semiconductor titanium dioxide is completely covered by hydrogen peroxide molecules. Any further amount of hydrogen peroxide will remain in the bulk of the solution and

---

***SMB P.G. College Nathdwara (Raj.) INDIA**

in turn, will not add to the rate of the reaction.

Effect of amount of semiconductor: The effect of amount (0.01–0.08 g) of semiconductor on the photocatalytic degradation of p-dichlorobenzene was investigated. The rate of photodegradation of p-dichlorobenzene increases with an increase in the amount of semiconductor upto 0.06 g (k = $2.51 \times 10^{4}\ s^{-1}$), and on further increase of amount, the rate of reaction becomes almost constant. This may be attributed to the fact that the number of exposed semiconducting particles will increase as the amount of semiconductor power was increased and as a result, the number of electron-hole pairs will also increase. This will result into a corresponding increase in the rate of the reaction. On further increasing the amount of semiconductor, the number of exposed semiconducting particles will not increase as the exposed surface area will limit the number of particles directly exposed to the light source and the reaction rate remains almost constant after this limit.

Effect of light intensity: The effect of light intensity (in the range 20.0–80.0 m W cm^{-2}) on the photocatalytic degradation of p-dichlorobenzene was investigated. A linear plot between the rate constant and light intensity was observed, which indicates that an increase in the light intensity will increase the rate of reaction. This may be attributed to the increased number of photons striking TiO_2 particles per unit area per second and as a result, more electron-hole pairs are generated. This, in turn, will increase the number of active species, the hydroxyl radicals. As a consequence, an overall increase in the rate of the reaction has been observed.

Mechanism: On the basis of the experimental observations and corroborating the existing literature, a tentative mechanism has been proposed for the photocatalytic degradation of chlorobenzene with photo-Fenton's reagent in the presence of semiconducting TiO_2 powder (Scheme 1).

The aqueous solution of ferric ions on exposure to light dissociates water molecule into a proton and $OH^{Ÿ}$ radical and itself reduces to ferrous ions. These ferrous ions will decompose H_2O_2 into hydroxyl ion and hydroxyl radical, while ferrous ions undergo oxidation to ferric ions. TiO_2 on exposure generates an electron-hole pair. This hole may dissociate the H_2O_2 adsorbed on the semiconductor surface into oxygen and proton whereas a hole may decompose water into a proton and a hydroxyl radical. The hydroxyl radical will degrade the chlorobenzen adsorbed on semiconductor surface into products.

$$Fe^{3+} + H_2O \xrightarrow{h\nu} Fe^{2+} + OH^{\bullet} + H^{+} \qquad (1)$$

$$Fe^{2+} + H_2O_2 \longrightarrow Fe^{3+} + OH^{-} + OH^{\bullet} \qquad (2)$$

$$TiO_2(S.C) \xrightarrow{h\nu} h^{-}(VB) + e^{-}(CB) \qquad (3)$$

$$H_2O_2(ads) + 2h^{+} \longrightarrow O_2 + 2H^{+} \qquad (4)$$

$$h^{-}(VB) + H_2O \longrightarrow OH^{\bullet} + H^{+} \qquad (5)$$

$$p\text{-}Cl_2C_6H_4 + OH^{\bullet} \longrightarrow \text{products} \qquad (6)$$

Scheme 1

Experimental: The photochemical degradation of p-dichlorobenzene (SDS) was studied in the presence of titanium dioxide, Fentions' reagent and light. Stock solution of p-dichlorobenzene (1.0×10^{-2} M) was prepared in double-distilled water. The photochemical degradation of p-dichlorobenzene was observed by taking 5.0×10^{-5} M of solution, 9.0×10^{-5} M ferric ions, 1.10 ml hydrogen peroxide, and 0.06 g semi-conductor was added and irradiated with a 200 W tungsten lamp (Philips: light intensity 60 m W cm^{-2}). The intensity of light at various distances from the lamp was measured using a solarimeter (SM CEL 201). A water filter was used to cut off thermal radiation. pH of the solution was measured using a Systronics 324 pH meter. pH of the solution was adjusted by adding H_2SO_4 and NaOH solutions. The necessary condition for the correct measurement of the optical density was that the solution was free from semiconductor particles and other impurities, and a centrifuge (Remi 1258) was used to remove these species. A Jasco 7800 spectrophotometer was used to measure the optical density.

Reference:-

1. Presonal Research

****